अमेरिका में प्रजातंत्र

("Democracy in America" by Alexis de Tocqueville)

मूल लेखक

अलेक्सिस डि टोकवील

पर्ल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई-१

मूल्य : ७५ नये पैसे

मूल पुस्तक का प्रथम हिंदी अनुवाद

प्रथम सस्करण : १९५८

प्रकाशक : जी. एल. मीरचदानी, पर्ल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड,
१२, वाटरलू मेन्शन (रीगल सिनेमा के सामने), महात्मा गाधी रोड, बम्बई–१.

मुद्रक : वि. पु. भागवत, मौज प्रिंटिग ब्यूरो, खटाववाडी, गिरगाम, बम्बई–४.

२८ व्यक्तिवाद के प्रभावों का प्रतिकार अमरीकी स्वतन्त्र संस्थाओं द्वारा करते है २५१
२९ नागरिक जीवन मे सार्वजनिक सघों का प्रयोग २५६
३० सार्वजनिक सघो एव समाचार-पत्रो के सम्बन्ध २६२
३१ नागरिक और राजनीतिक सघों का सम्बन्ध २६६
३२ अमरीका में भौतिक कल्याण के प्रति रुचि २७२
३३ किन कारणो से लगभग समस्त अमरीकी औद्योगिक वृत्तियाँ ग्रहण करते है २७७
३४ उत्पादनो (उद्योग) द्वारा कुलीनतन्त्र की सृष्टि किस प्रकार हो सकती है २८१
३५ प्रजातन्त्र अमरीकियो के स्वभावगत सम्बन्ध को .. २८६
३६ अमरीकी स्वय अपने देश मे इतने कम और यूरोप मे इतने अधिक भावुक २८९
३७ मजदूरी पर प्रजातन्त्र का प्रभाव २९३
३८ परिवार पर प्रजातन्त्र का प्रभाव २९६
३९ प्रजातन्त्र मे नवयुवतियाँ ३०२
४० अमरीका मे सदाचार की रक्षा मे स्थिति की समानता का योग-दान ३०८
४१ अमरीकी पुरुष-नारी की समानता को किस प्रकार समझते है ३१५
४२ किस प्रकार समानता का सिद्धान्त स्वभावत' अमरीकियों को... ३२०
४३ अमरीकी व्यवहारो के विषय मे कतिपय विचार ३२२
४४ अमरीकियों का राष्ट्रीय अहकार अंग्रेजों की अपेक्षा अधिक अशान्त ३२७
४५ अमरीका मे समाज का पहलू एक साथ ही गतिशील और अपरिवर्तनशील ३३०
४६ अमरीका मे इतने अधिक महत्त्वाकाक्षी व्यक्ति ३३२
४७ कतिपय प्रजातान्त्रिक देशो मे स्थान की खोज का व्यापार ३४०
४८ क्यो महान क्रांतियाँ भविष्य मे कम हुआ करेंगी ३४२
४९ क्यों प्रजातान्त्रिक राष्ट्र स्वभावत शाति की ओर प्रजातान्त्रिक सेनाएँ . ३५८
५० किन कारणो से प्रजातान्त्रिक सेनाएँ युद्ध के आरम्भ मे...... ३६६
५१ प्रजातान्त्रिक समुदायों मे युद्ध पर कतिपय विचार ३७१
५२ समानता स्वाभाविक रूप से मनुष्यो मे स्वतन्त्र सस्थाओं के लिए . ३७७
५३ प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो की सरकार सम्बन्धी धारणाएँ . ३७८
५४ प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो के भाव अपने विचारों के अनुकूल... ३८२
५५ कतिपय विशिष्ट और आकस्मिक कारण ३८६
५६ किस प्रकार की निरकुशता से प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो को भयभीत होना चाहिए ३९२
५७ विषय का सामान्य सर्वेक्षण ४१०

उपोद्घात

लेक्सिस डि टोकवील मई, १८३१ ई मे सयुक्त राज्य अमरीका मे आया था, और केवल नौ महीने बाद फरवरी, १८३२ मे पुनः स्वदेश (फ्रास) लौट गया था। फिर भी उसकी पुस्तक 'अमेरिका मे प्रजातंत्र' एक शताब्दी से बहुत अधिक समय तक अपने पाठको को अमरीकी जीवन के लगभग प्रत्येक पहलू के विषय मे वर्णन, विवेचना और भविष्यवाणी की अतुलनीय प्रचुरता प्रदान करती रही है।

इस नवयुवक फ्रासीसी की उत्कृष्ट समीक्षा के प्रथम भाग मे, संक्षेप मे, नयी दुनिया के भौतिक विस्तार, आग्ल-अमरीकियो की उत्पत्ति तथा अमरीका की सर्वप्रधान विशिष्टता, प्रजातंत्र और जनता की अबाव सार्वभौमता का वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् अमरीकी सरकार की कार्य पद्धतियो का सक्षिप्त परिचय दिया गया है, जो कुछ अशो तक पुराना पड़ गया है और इसके बाद पुस्तक के प्रधान विषय, सयुक्त राज्य अमरीका मे बहुमत की नृशसता की विवेचना की गयी है।

'अमेरिका मे प्रजातंत्र' के द्वितीय भाग मे अमरीकी समाज के स्वरूप और गतिशीलता पर, अमरीकियो के विचार, अनुभव और कार्यपद्धति पर, हमारी स्वतंत्रताओ के सारभूत स्वरूप पर, प्रजातंत्र अथवा बहुमत के शासन के प्रभाव का वर्णन किया गया है। वास्तव मे यही टोकवील ने समसामयिक विचार मे अपना अत्यन्त अभूतपूर्व और भावी सत्यो से पूर्ण योग प्रदान किया है, क्योकि टोकवील स्वतंत्रता और प्रजातत्र दोनो के विकास एवं अस्तित्व-रक्षा के लिए जितना चिन्तित था, उतना वह अन्य किसी बात के लिए चिन्तित न हुआ, और आज बीसवी शताब्दी के मध्य मे अमरीकियो के लिए तथा प्रत्येक स्थान की स्वतंत्र जनता के लिए निश्चय ही इतना अर्थगम्भीर अथवा इतना महत्वपूर्ण दूसरा कोई विषय नही है।

सन् १८३५ ई और सन् १८४० मे प्रथम बार प्रकाशित 'अमेरिका मे प्रजातंत्र' हमारे युग के लिए एक महत्वपूर्ण पुस्तक है।

I

सन् १८२० और सन् १८३० के दशको में जैक्सनवादी प्रजातंत्र के उदय के बाद से ही अमरीका की राजनीतिक विचारधारा पर जिस अयथार्थ

बात का व्यापकतम आधिपत्य रहा है, वह यह है कि हम अज्ञानपूर्वक और गलत ढंग से समानता और स्वाधीनता को, प्रजातत्र (बहुमत-शासन) और स्वतंत्रता को समान समझते रहे है। यह ठीक है कि जैक्सन के युग के बहुत पहले थामस जेफर्सन ने स्वतंत्रता के घोषणा-पत्र के दार्शनिक आधार के रूप में यह सिद्धान्त निर्धारित किया था कि 'सभी मनुष्य समान उत्पन्न हुए है' और तथाकथित १८००ई की क्रान्ति के समय ही अमरीका में बहुमत-शासन की विजय हो गयी थी, जब बहुसख्यक जेफर्सनवादी डेमोक्रेटो ने 'धनी और अभिजात' व्यक्तियो के अल्पसख्यक दल 'फेडरलिस्ट पार्टी' को सदा के लिए राष्ट्रीय सत्ता के पद से च्युत कर दिया था। फिर भी हमारे प्रारम्भिक नेताओ का, यहाँ तक कि जेफर्सनवादियो का दृष्टिकोण भी वास्तविक समानतावादी दृष्टिकोण से बहुत पीछे था। वे जनता की और जनता के लिए सरकार में तो विश्वास करते थे, किन्तु जनता द्वारा शासन मे उनका विश्वास नही था, और इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि व्यक्तिगत स्वतत्रता और स्वाधीनता के सिद्धान्तो ने उनके मन मे इतनी गहरी जड जमा ली थी कि वे कभी आवश्यक और अपरिवर्तनीय रूप से समानता और प्रजातंत्र के साथ उनका समीकरण नही कर सकते थे।

इस प्रकार जैक्सन के समय से पूर्व समानतावाद, जिसमे बहुमत का शासन सर्वाधिक सुविधाजनक तथा अत्यन्त व्यावहारिक माना जाता था, अमरीकी जीवन का सर्वोपरि विषय नही बन पाया था। तब अमरीकी राजनीतिक विचारधारा और सस्थाओ के रूप मे अत्यन्त व्यापक परिवर्तन हुआ, क्योकि राजनीतिक नियत्रण तीव्र गति से शिक्षा, स्थिति और सम्पत्ति के एक प्राचीनतर कुलीनतंत्र के हाथो से 'साधारण जन' औसत अमरीकी के हाथो मे जा रहा था। बहुमत के निर्बाध शासन के लिए मताधिकार पर लगाये गये प्रतिबन्धो को हटा दिया गया, पद के लिए सम्पत्ति विषयक अर्हताओ को समाप्त कर दिया गया, पद की अवधियो को सीमित कर दिया गया तथा नियुक्ति-मूलक अथवा अनिर्वाचनात्मक पदो की सख्या मे अत्यधिक कमी कर दी गयी। साराश यह है कि शीघ्र ही 'बहुसख्या' सर्वोच्च शासक बन गयी और बहुमत-शासन की धारणा मे जन-भावना का लगभग पूर्णरूप से समावेश हो गया।

सार्वजनिक पदो के विषय मे नये समानतावाद का अर्थ यह था कि सारतः समस्त व्यक्तियो मे समान प्रतिभा होती है। प्रत्येक अमरीकी किसी भी सरकारी पद पर आरूढ होने की क्षमता रखता है तथा प्रजातत्र के लिए

आवश्यक है कि पदारूढ व्यक्तियो मे परिवर्तन होता रहे, जिससे एक अस्पृश्य नौकरशाही उच्चवर्ग अथवा कुलीनतंत्र के विकास को रोका जा सके। जिन पदाधिकारियो की पार्टी परास्त हो गयी थी, उनके स्थान पर उन व्यक्तियो को, जिन्हे स्पष्टता के साथ 'जनता ने चुना' था, नियुक्ति करने के लिए इस सरल प्रजातान्त्रिक अतःप्रेरणा की सर्वाधिक स्पष्ट अभिव्यक्ति इस सिद्धान्त के रूप मे हुई कि 'लूट का माल विजेताओ का होता है'। एण्ड्र्यू जैक्सन के राष्ट्रपति बनने के उपलक्ष्य मे आयोजित स्वागत-समारोह मे सुरापात्रो से टकराता, शीशो को तोडता, श्वेत भवन की मेजो और कुर्सियो को कीचड से सने हुए बूटो से रौदता हुआ जो जनसमूह उमड पडा था, उसने इस बात को अत्यधिक स्पष्ट कर दिया था कि अततोगत्वा समता अमरीकी जीवन का प्रधान अग बन गयी है।

प्रजातत्र और समानता की इसी उपद्रवात्मक प्रारम्भिक अशाति के बीच अलेक्सिस डि टोकवील ने संयुक्त-राज्य अमरीका की अपनी महान यात्रा की थी और निश्चय ही अन्य किसी निरीक्षक ने आज व्यापक रूप से स्वीकृत अमरीकी जीवन के युगल विषयो को कभी इतनी बारीकी से नही देखा या इतनी खूबी से उनका वर्णन नही किया। वस्तुतः 'अमेरिका मे प्रजातत्र' के उपोद्घात मे ही टोकवील ने लिखा था कि–

सयुक्त-राज्य अमरीका मे लोगो मे पायी जाने वाली परिस्थिति की सामान्य समानता से बढकर अन्य किसी विलक्षण वस्तु ने मेरा ध्यान इतना अधिक आकर्षित नही किया। अमरीकी समाज का जितना ही अधिक मैने अध्ययन किया, उतना ही मुझे स्पष्टत ज्ञात हुआ कि परिस्थिति की समानता मूलभूत तत्व है, जिससे अन्य बातो का उद्भव दिखायी पडता है ।

प्रजातत्र (या बहुमत-शासन) के सम्बन्ध मे इस युवक फ्रासीसी ने अपनी पुस्तक मे आगे चल कर लिखा कि 'अमरीकी राजनीतिक जगत मे प्रजा उसी तरह शासन करती है, जैसे ईश्वर जगत पर शासन करता है।'

फिर भी, टोकवील ने जो कुछ लिखा, वह रिपोर्ट के रूप मे था, स्वीकृत सिद्धान्त के रूप मे नही। 'अमेरिका मे प्रजातंत्र' मे समानतावाद और बहुमत-शासन के गुणो की स्तुति नही है। इसके विपरीत यह शास्त्रीय ग्रन्थ अमरीका के एक शताब्दी से अधिक पुरानी स्वतन्त्रता के साथ समानता की और स्वाधीनता के साथ प्रजातंत्र की चमत्कारिक सभ्यता को अस्वीकार करता है और इसी तथ्य के कारण आज वह हमारे लिए इतना उत्तेजक

और मूल्यवान है। कोई भी इस बात से इन्कार नही करेगा कि जैक्सन के युग मे अमरीकियों ने बडी निर्दयता से विशेषाधिकारो और सिद्धियों के बन्धनों को छीन लिया था और अल्पसख्यक के शासन के स्थान पर बहुमत के शासन को स्थापित किया था। परन्तु क्या समानतावाद और बहुमत शासन विशुद्ध वरदान सिद्ध हुए हैं ! टोकवील के विचार से नही। वस्तुतः राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे व्याप्त समानतावादी सिद्धान्त का जो कुछ रूप उसने देखा, उससे उसके मन मे शंका पैदा हुई कि क्या अमरीकियों की स्वाधीनता, व्यक्तिगत मतभेद और स्वतन्त्रता सम्बन्धी उनकी प्राचीन अभिरुचि, समानता और प्रजातंत्र के लिए अपने नये झुकाव को वस्तुतः दीर्घकाल तक जीवित रख सकेगी। क्योंकि परिस्थिति ज्यों-ज्यों समान होती गयी, त्यों-त्यो अमरीकी अपने व्यक्तित्व, व्यक्तिगत स्वाधीनता और अपनी स्वतंत्रता के स्थान पर अपनी एकरूपता में अधिकाधिक गौरव अनुभव करने लगे। इसी कारण टोकवील ने लिखा —"प्रत्येक नागरिक शेष लोगो के साथ घुलमिल जाता है, भीड़ मे खो जाता है और कोई भी विशिष्टता दिखायी नही देती, अतिरिक्त इसके कि लोगों की महान और प्रभावशाली प्रतिच्छाया चारो ओर घूमती हुई दिखायी पड़ती है।"

इस प्रकार अमरीकियो ने व्यक्ति की स्वाधीनता और स्वतन्त्रता के प्रति अपनी अभिरुचि को, अधिकाधिक बहुमत के प्रति अपने नये आदर या उसके प्रति भय के आश्रित कर दिया है जो लोगो की महान् और प्रभावशाली स्वतंत्र प्रतिच्छाया है। यह स्पष्ट प्रतीत होता था कि समानता और प्रजातत्र ने स्वाधीनता और स्वतंत्रता के साथ साथ चलने के स्थान पर बहुमत के पवित्र नाम पर, मनुष्यो के मस्तिष्क पर इतना दमनकारी और भयंकर अत्याचार किया, जिसकी तुलना इतिहास के किसी भी अत्याचार से की जा सकती है और इसी कारण टोक्वील को यह लिखना पड़ा—"मैं अमरीका को छोड़कर ऐसे किसी देश से परिचित नही हूँ, जहाँ मस्तिष्क की स्वाधीनता और विचारो की वास्तविक स्वतंत्रता इतनी कम हो।"

* * *

अलेक्सिस चार्ल्स हेनरी क्लेरेल डि टोक्वील का अमरीकी प्रजातत्र का इतना कटु आलोचक होना कि वह उसकी मूलभूत धारणाओ पर इतनी उग्रता से प्रहार करने लगे — हर प्रकार से उपयुक्त था। इसका कारण यह था कि यह बुद्धिजीवी फ्रासीसी हर दृष्टि से कुलीन था। वह सम्भ्रान्त परिवार, पुरातनवाद

और बौद्धिक पृथकत्व और व्यक्तिवाद की विशिष्ट परम्परा का, जिसका उस उग्र समानतावाद से कोई सादृश्य नही था, उत्तराधिकारी था, जो 'जैफ़र्सो-नियन' अमरीका का विशिष्ट लक्षण माना जाता है।

टोकवील का जन्म २९ जुलाई, १८०५ को एक सम्मानित पुराने नार्मन परिवार मे हुआ था, जिसकी गणना अनेक पीढियो तक सामान्य कुलीनो में होती रही थी। इस प्रकार प्राचीन शासन की क्रूरताओ ने बिना विशेष परिश्रम के टोकवील को प्रारम्भ मे ही बहुमत-शासन के प्रति अविश्वासी बना दिया था। फ्रास की राज्यक्राति के समानतावादी सिद्धान्त ने पहले से ही उसके स्वय के परिवार और मित्र-मण्डली के अनेक सदस्यो का सफाया कर दिया था। क्राति के समय उस के माता-पिता को जेल की यातनाएँ सहनी पडी और उसके नाना को 'स्वाधीनता, समानता और भ्रातृत्व' के नाम पर फॉसी दे दी गयी थी। यद्यपि नेपोलियन के पतन के बाद उसके पिता को वही पुरानी श्रेणी और पद प्राप्त हो गया था, परन्तु टोकवील के बाल्यकाल को, इन प्रारम्भिक बहुमत के अत्याचारो की स्मृतियो ने आक्रान्त कर दिया था। इस प्रकार अमरीका मे प्रजातंत्र के विरोधी आलोचक का पार्ट अदा करने के लिए वह जन्म और परिस्थिति दोनो से आदर्श रूप मे योग्य था।

फिर भी टोकवील की अमरीका की प्रासिद्ध यात्रा की तैयारी के विपय मे सब कुछ इतना ही नही कहा जा सकता, क्योकि यदि इतना ही सही हो, तो हम उसकी आलोचना के अधिकाश भाग को व्यक्तिगत रोष और प्रतिशोध का वास्तविक परिणाम मानने के लिए विवश हो जायंगे। परन्तु हमारा यह फ्रासीसी युवक वस्तुतः प्रतिक्रियावादी कुलीन नही था और न केवल उस अनाश्रित कुलीन की तरह ही था, जो प्राचीन व्यवस्था से बुरी तरह चिपट कर रहता है और शीघ्रता से फैलने वाली नयी प्रजातान्त्रिक भावना का निरादर करने की व्यर्थ इच्छा रखता है। वस्तुत हमे यह पता चलता है कि यद्यपि टोकवील ने कभी उनका, जिन्हे वह अपनी कुलीन परम्परा के श्रेष्ठ आदर्श और गरिमाएँ समझता था, परित्याग नही किया, फिर भी उसकी ईमानदारी और न्याय की कोमल भावना ने प्रजातान्त्रिक आदशो के प्रति उसमे अत्यन्त सहानुभूति जाग्रत कर दी थी। उसने गहरा अध्ययन किया और प्रजातंत्र की अनिवार्य प्रगति के अर्थपूर्ण सकेतों से वह बहुत ही प्रभावित हुआ।

स्वयं फ्रास मे सन् १८३० ई० की राज्य-क्रान्ति ने उसे इस बात का और विश्वास दिला दिया कि उसके युग की सारी भावना अधिक समान और

लोकतान्त्रिक परिस्थितियो और सस्थाओं की ओर झुकती जा रही है। ऐसी स्थिति मे टोकवील का कार्य लोकतत्र की निन्दा करने का नही, प्रत्युत इस आन्दोलन की, जो भविष्य में अत्यन्त प्रभावशाली वन जाने की सम्भावनाओ से ओत-प्रोत था, दुर्वलताओ और शक्तियो को खोज निकालना था। उन दुर्वलताओं और शक्तियो को खोज निकालने के पश्चात् टोकवील सम्भवत उनका मेल प्राचीन व्यवस्था के सर्वोत्तम पहलुओ के साथ वैठाता। टोकवील ने लिखा कि हमारे युग की महान् राजनीतिक समस्या विनाश की नही, अपितु ईसाइयत मे लोकतत्र के सगठन और स्थापना की है। अमरीकियो ने निश्चय ही इस समस्या का समाधान नही किया है, परन्तु उन लोगो के लिए, जो उसे हल करना चाहते है, उपयोगी तथ्य प्रस्तुत किये है।

टोकवील और उसका साथी गुस्ताव डि ब्यूमोट प्रत्यक्षत अमरिका मे मई, सन् १८३१ मे यहाँ की जेल-व्यवस्था का अध्ययन करने के लिए ही आये थे। दोनो कुलीन युवक मजिस्ट्रेट थे, और अन्ततोगत्वा जेल-सर्वेक्षण ने उन्हे नयी दुनिया देखने का पर्याप्त अवसर प्रदान किया। फिर भी, वास्तविकता यह थी कि टोकवील और ब्यूमोट के आने का मुख्य कारण यह था कि वे लोकतत्र का प्रत्यक्षतः अध्ययन करने और समानतावादी लोकतान्त्रिक सिद्धान्तो की वास्तविक कार्यपद्धति को, जो फ्रास मे भी निश्चित रूप से प्रचलित होनेवाली थी, स्वयं देखने के लिए बहुत ही उत्सुक थे। लोकतंत्र अनिवार्यत उनके प्रिय फ्रास और विश्व के अन्य भागों मे आनेवाला था, परन्तु यदि ये दोनो युवक अमरीका मे लोकतत्र के दोषो और त्रुटियो का पता लगा सकते, तो कम-से-कम वे अपने देश मे इस अनिवार्यता के लिए पर्याप्त सुरक्षा कर पाते। स्वयं टोकवील ने लिखा है कि—

> मैने अपनी केवल सहज जिज्ञासा को शान्त करने के लिए ही अमरीका की चर्जो-पडताल नहीं की है, मेरी इच्छा वहॉ की उन अच्छाइयों को ढूंढने की थी जिससे हम लोग लाभ उठा सकें। मै स्वीकार करता हूँ कि अमरीका जो कुछ है उससे अधिक मैने अमरीका मे देखा। मैने वहॉ स्वयं लोकतंत्र की प्रतिच्छाया को, उसकी प्रवृत्तियो, उसकी प्रकृति, उसके पूर्वाग्रहो और उसकी भावनाओ को ढूंढने की कोशिश की, जिससे हम यह सीख सके कि हमे उसकी प्रगति से कितना भयभीत होना चाहिए, अथवा उससे कितनी आशा करनी चाहिए।

और जार्ज डब्ल्यू पियर्सन ने अपनी अत्यधिक अध्ययन-पूर्ण पुस्तक 'अमेरिका मे टोकवील और ब्यूमोट' मे इन कुलीन युवको की अमरीका-यात्रा के

उद्देश्य के विषय मे लिखा है कि 'वे लोकतन्त्र को विश्व के लिए सुरक्षित रखेंगे।'

II

इस बात में लेशमात्र भी सन्देह नही है कि अमरीका मे लोकतन्त्र के सामान्य सिद्धान्तो को ढूँढने और उन्हे अपने देश फ्रांस मे लागू करने के सम्बन्ध मे टोकवील मे जो एकाग्रचिन्तता थी, उसने उसके अध्ययन एव परिशीलन को एक ऐसी चिरतनता और दार्शनिकता प्रदान की, जिसका महत्व हमारे युग के लिए भी उतना ही अधिक है जितना उसके युग के लिए था। यहाँ पाठक को एक शताब्दी से अधिक पूर्व के अमरीकी जीवन से सम्बन्धित असख्य असम्बद्ध तथ्यो के जजाल मे कदाचित् ही फँसना पडता है। इसके बदले वह एक सुवर्णित सामान्यीकरण से दूसरे सामान्यीकरण तक लगातार पहुँचता रहता है और जो सामान्यीकरण उसके निजी हितो के निकटतम होते है, उनका और अधिक अनुसंधान करने के लिए स्वतंत्र रहता है। टोकवील ने जो चित्र प्रस्तुत किया है वह अपने पूर्व रूप से सुसम्बद्ध, सुसगठित और अर्थपूर्ण है।

फिर भी चूँकि टोकवील अपने मस्तिष्क मे इस प्रकार का एक निश्चित उद्देश्य लेकर अमरीका आया था, इसीलिए वह एक बुनियादी पद्धतिवादी जाल में फँस गया। वह जिसे 'प्रजातत्र की प्रतिच्छाया' कहता था, 'जिससे हम यह सीख सके कि उसकी प्रगति से हमें कितना भय और कितनी आशा है' उसका सामान्यीकरण करने की उत्सुकता के वशीभूत होकर टोकवील बहुधा अभद्र प्रकार की पूर्वाग्रह-पूर्ण तर्क-पद्धति का आश्रय ले लिया करता था। अमरीका के लिए नया होने तथा उसकी रीति-नीतियो एवं सस्थाओं से अपरिचित होने के कारण टोकवील अल्पतम ठोस प्रमाणो के आधार पर ही अवास्तविक सिद्धान्त गढ लिया करता था और तब पर अपने आगे के पर्यवेक्षणो का उपयोग और अधिक यथार्थवादी निष्कर्षो के आधार के रूप में नही, प्रत्युत अपने इन कुछ कुछ भ्रान्त स्फुरणात्मक सामान्यीकरणो के प्रमाण के रूप में ही करता था। अमरीकी घटनाक्रम के एक ब्रिटिश पर्यवेक्षक लार्ड ब्राइस ने, जिन्होंने टोकवील के आधी शताब्दी पश्चात सुचारु रूप से 'अमरीकी राष्ट्रमण्डल' का निरीक्षण किया था, शिकायत की कि यद्यपि महान निरीक्षक टोकवील ने जान-बूझ कर कभी ऐसे तथ्य की उपेक्षा नहीं की जिससे उसके सिद्धान्तो का खण्डन होता, तथापि उसके मस्तिष्क पर

'तथ्यों का प्रभाव उसी प्रकार नही पड़ता, जिस प्रकार अक्षत भूमि पर बीजो के गिरने का प्रभाव नही पड़ता।'

निश्चय ही टोकवील की समीक्षा की सामान्य उत्कृष्टता को कुछ अश तक कम कर देनेवाली अन्य सीमाएँ भी थी। कभी-कभी वह अपनी अन्तर्मुखी प्रवृत्ति तथा अमरीका मे प्रजातन्त्र के व्यापक परिणामो के प्रति अत्यन्त उत्कण्ठा के कारण उसकी सूक्ष्मताओ को सही-सही रूप में और स्पष्टतापूर्वक नही देख पाता था तथा मूलतः शुद्ध प्रजातात्रिक विचार एव कार्य-पद्धतियो और केवल निरन्तर सीमान्त अनुभव तथा अग्रेजी उत्तराधिकार से उत्पन्न विचार एव कार्य-पद्धतियो मे भेद नही कर पाता था। कभी-कभी टोकवील सामान्यीकरण के प्रति अपने अत्यधिक झुकाव के कारण उन अनेक मूलभूत परिवर्तनो को भी नही देख पाता था, जो उसके लिखने के समय भी अमरीकी जीवन मे घटित होने लगे थे। इस प्रकार टोकवील को अमरीकी राष्ट्रपति का पद एक अधिकारहीन पद के रूप मे प्रतीत हुआ। उसने उन शक्तियो का बड़ा लम्बा-चौड़ा वर्णन किया है, जिन्होने प्रधान शासनाधिकारी को निर्बल बना दिया था तथा उसके प्रभाव को गम्भीर रूप से सीमित बना दिया था। और इस बात के प्रति उपेक्षा प्रदर्शित की कि भविष्य मे कोई राष्ट्रपति निडरता और नेतृत्व की शक्ति ग्रहण कर सकता है। परन्तु यह सब ठीक उस समय हुआ, जब अत्यन्त कठोर वृद्ध एण्ड्र्यू जैक्सन व्हाइट-हाउस मे बैठकर सर्वोच्च न्यायालय को चुनौती दे रहा था, कॉंग्रेस से अपनी इच्छाओ को बलपूर्वक मनवा रहा था तथा राष्ट्रपति के सुदृढ नेतृत्व के एक स्वरूप की स्थापना कर रहा था, जिसका अनुगमन अन्ततः थियोडोर रूजवेल्ट, वुडरो विल्सन और फ्रैंकलिन डी रूजवेल्ट ने किया था।

एक और भी बड़ा महत्वपूर्ण क्षेत्र था, जिसमे अमरीकी जीवन के महत्वपूर्ण परिवर्तनो को टोकवील नही पहिचान सका। इसका कारण यह था कि वह विभिन्न राज्यो की शक्ति से और राष्ट्रीय सरकार की स्वाभाविक प्रतीत होने वाली निर्बलता से बहुत ही अधिक प्रभावित था। उसने सोचा कि एक समय ऐसा आयेगा जब ४० राज्यो मे लगभग दस करोड़ अमरीकी हो जायेगे और ऐसे विकास एव विस्तार के विघटनकारी और विकेन्द्रीकारक प्रभावो का परिणाम यह होगा कि सघ के बन्धन और अधिक शिथिल हो जायेंगे। चूँकि राष्ट्रीय सरकार सामान्य नागरिक से और भी अधिक दूर हो जायगी, इसलिए राष्ट्रीय आस्था पूर्णत. हट जायगी और उसका स्थान पृथक्-पृथक् राज्यो के प्रति या

अधिक-से-अधिक राज्यों के प्रादेशिक मण्डलो के प्रति आस्था ग्रहण कर लेगी। टोकवील ने संयुक्त-राज्य अमरीका की यात्रा निश्चय ही ठीक उसी समय की थी जब कि सामुदायिकता का उदय हो रहा था और दक्षिण 'राज्यो के अधिकारो' की माँग कर रहा था। वह उस समय आया जब कि पूर्व और पश्चिम तथा उत्तर और दक्षिण के बीच विरोध के भाव विशेष रूप से कटु और स्पष्ट हो गये थे। अतः टोकवील के लिए यह कल्पना करना स्वाभाविक ही था कि राष्ट्रीय सरकार की शक्ति और प्रतिष्ठा मे और अधिक कमी हो जायगी तथा राज्य एवं वर्ग के प्रति वफ़ादारी निरन्तर बढती रहेगी।

फिर भी सामान्यीकरण सम्बन्धी अपनी इस खोज मे टोकवील ने संगठन और राष्ट्रीयता की भावना को प्रोत्साहित करने वाली उन अनेक शक्तियो पर ध्यान नही दिया, जो अन्ततोगत्वा एक समस्त महाद्वीप मे फैले हुए ४८ राज्यो मे १६ करोड अमरीकियो को भी एकता के सूत्र मे आबद्ध करने वाली थी। औद्योगिक क्रान्ति, दूर तक फैली हुई फैक्ट्रियाँ, विस्तृत अन्तरमहाद्वीपीय रेलवे-प्रणाली, अनन्त राजमार्ग, सामूहिक संचार-साधन, अमरीकी भोजन, वस्त्र, घर तथा विचारो के भी प्रतिमानीकरण इन सबने टोकवील के समय की अपेक्षा अमरीकियो को और अधिक दृढता से एकता के सूत्र मे बाँध रखा है। हमारा सघ बृहद् राष्ट्रीय अधिकारो की निरन्तर वृद्धि तथा राज्यीय एवं प्रादेशिक निष्ठाओ के उल्लेखनीय ह्रास से वस्तुतः शक्तिशाली बना है, न कि उसका विघटन हुआ है अथवा वह निर्बल बन गया है। टोकवील ने यह अनुभव किया कि गृहयुद्ध मे संघ का पतन आवश्यक है, परन्तु १८६१ से १८६५ तक के गृहयुद्ध की प्रचण्ड अग्नि से वह सही सलामत निकला और सदा की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली हो गया।

इसके अतिरिक्त, जैसा कि लार्ड ब्राइस ने कहा था कि 'जो लोग किसी राष्ट्र की राजनीतिक एवं सामाजिक विशिष्ट घटनाओ के मूल तक पहुँचना सरल कार्य समझते है, उनके लिए यह तथ्य एक स्वस्थ चेतावनी के समान है कि टोकवील जैसा एक सूक्ष्मदर्शी और परिश्रमी पर्यवेक्षक भी, जिसने अमरीकी राजनीति की अनेक छोटी-छोटी बातो को अप्रतिम तीव्रता से ग्रहण किया है और पूर्ण कलात्मक रूप से उनका वर्णन किया है, अनेक ऐसी बातो को नही देख सका, जिन्होने उसके समय मे पहले से ही सिर उठाना प्रारम्भ कर दिया था और जो उसके बाद सर्वाधिक महत्वपूर्ण बन गयी है।'

ब्राइस ने ऐमी बातो मे राजनीति मे धन के बढते हुए प्रभाव, पार्टी-प्रतिद्वन्द्विता के व्यवस्थित और सगठित रूप और सुधार-आन्दोलन के उदय को सम्मिलित किया है (यद्यपि टोकवील और ब्यूमोट यहाँ के जेल सुधारो का अध्ययन करने के कथित उद्देश्य से ही आये थे।)

'अमेरिका मे प्रजातत्र' और भी कई दृष्टियो से दोषपूर्ण है। उसमे अनेक बाते छूट गयी है और अनेक बातो की गलत व्याख्या की गयी है, जिसका प्रत्यक्ष कारण यह है कि लेखक अत्यन्त सरलतापूर्वक धारणाएँ बना लिया करता था तथा वह घटनाओ का वर्णन करने की अपेक्षा संक्षिप्तीकरण, व्याख्या और सामान्यीकरण के लिए अधिक उत्सुक था।

III

टोकवील की समस्त प्रत्यक्ष अपर्याप्तताओ और उसके अन्तर्मुखी दृष्टिकोण के बावजूद, जो बहुधा क्षोभकारी था, प्रजातान्त्रिक अमरीका मे राजनीति, धर्म, सरकार, कला और यहाँ तक कि साहित्य के विषय मे भी उसके अनेक सामान्यीकरण वस्तुतः आश्चर्यजनक रूप से चतुरतापूर्ण और पर्यवेक्षणपूर्ण है। इसी गुण के कारण 'अमेरिका मे प्रजातंत्र' एक महान् पुस्तक है। उन विषयों मे भी, जहाँ समकालीन घटनाचक्र का विवरण प्रस्तुत करते समय उसके निरीक्षण स्थूलरूप से विश्वसनीय और सही नही ठहरे हैं, टोकवील आज भी सिद्धहस्त भविष्यवक्ता और राजनीतिक वैज्ञानिक की श्रेणी मे गिना जाता है। १९वीं शताब्दी के प्रजातान्त्रिक जीवन की गतिशीलता के विषय मे उसके अनेक कुशाग्र सूक्ष्म निरीक्षण हमारे युग के लिए भी सही ठहरते है। इतिहास उसके अनेक अत्यन्त पूर्णार्थक अनुमानों का जिस ढंग से समर्थन करता है, उससे हरेक को बार-बार आश्चर्य होता है।

उदाहरणार्थ, यह स्पष्ट है कि टोकवील ने अमरीकी राष्ट्राध्यक्ष की तात्कालिक शक्ति और महत्ता का गलत अनुमान लगाया था। फिर भी, उसी समय इस फ्रासीसी ने कुशलता से यह सही अनुमान लगा लिया था कि अमरीकी जीवन के वे कौन-से तत्व है जो अन्ततोगत्वा राष्ट्राध्यक्ष के प्रभाव और शक्ति मे जैक्सन की गहन आशाओ से भी बढकर वृद्धि कर देगे। टोकवील ने लिखा था—"किसी राष्ट्र की कार्यकारिणी सत्ता को मुख्यत उसके वैदेशिक सम्बन्धों मे ही अपने कौशल और अपनी शक्ति को काम मे लाने का सुअवसर उपलब्ध होता है"। परन्तु स्वय उसके समय मे सभी व्यावहारिक दृष्टियो से अमरीका लगभग पृथक् था, और उसके कोई वैदेशिक

सम्बन्ध नही थे। महासागरो से अमरीका शेष जगत् से पृथक् होने के कारण विदेशी आक्रमणो से सुरक्षित था। उस समय विदेशो मे उसके हित तुलनात्मक रूप से कम और महत्वहीन थे, दूसरे राष्ट्रो के साथ उसके व्यवहार प्राय. नही के बराबर थे। यद्यपि राष्ट्राध्यक्ष के हाथो में ऐसे विशेषाधिकार थे जो 'प्राय: शाही विशेषाधिकारो' का रूप धारण कर सकते थे, तथापि उस समय भौतिक पृथक्करण और वैदेशिक सम्बन्धो के अभाव ने इन परमाधिकारो को व्यवहार मे लाने के लिए कार्यकारिणी के अवसरो को पूर्णतः सीमित कर दिया।

इस प्रकार कानून अथवा संविधान ने नही, प्रत्युत केवल परिस्थिति ने राष्ट्राध्यक्ष के अधिकारो को निर्बल बना दिया था, और एक विवेचक एवं भविष्यवक्ता के रूप मे टोकवील को इस बात का श्रेय है कि उसने स्पष्टतः अनुमान लगा लिया था कि भविष्य मे ऐसी कौन-सी नयी परिस्थितियाँ होगी जो निश्चय ही कार्यपालिका के प्रभाव मे क्रातिकारी परिवर्तन कर देगी। यदि अमरीका को विश्व की महान् शक्ति का केन्द्र बनना है और उसके पूर्व समय की पृथक्ता को भूत की बात बनना है तो शासकीय सत्ता का विभाजन बहुत कुछ भिन्न होगा। 'यदि सघ का अस्तित्व निरंतर खतरे मे बना रहेगा, यदि उसके मुख्य हितो का दैनिक सम्बन्ध अन्य शक्तिशाली राष्ट्रो के साथ रहेगा,' तो कार्यपालिका-सरकार से जिन कार्यों की आशा की जायगी और जो कार्य वह करेगी, उससे उन्ही के अनुपात में उसका महत्व भी बढ जायगा। आज केवल थोडे-से अमरीकियो को इस बात मे सन्देह होगा कि हमारे राष्ट्रपति के हाथो मे स्वयं अत्यधिक अधिकारो के केन्द्रित हो जाने का परिणाम यह हुआ कि प्रथम विश्व-युद्ध के बाद के वर्षों मे अमरीका कम-से-कम अधिकाश रूप मे एक महान् विश्व-शक्ति के रूप मे प्रकट हुआ है। बीसवी शताब्दी के मध्य मे हमारे यहाँ वैदेशिक सम्बन्धो मे विस्तार और महत्व की दृष्टि से अपार वृद्धि हुई है। हमारी कार्यपालिका को अपनी कुशलता और शक्ति के प्रदर्शन का पर्याप्त अवसर मिलता है। परिणामत. राष्ट्राध्यक्ष के 'प्राय: राजकीय परमाधिकार' अब व्यापक रूप से महसूस किये गये है, जो टोकवील की भविष्यवाणी से बहुत-कुछ मिलते है।

टोकवील ने अमरीका के आर्थिक अनुसन्धानो मे भी—अमरीकियो के धन के प्रति प्रगाढ प्रेम के विषय मे, कृषि की अपेक्षा वाणिज्य और उद्योग के लिए उनकी बढती हुई अधिमान्यता, तथा उनकी विशाल भौतिक सफलता की भावी सम्भावनाओ के विषय में—अनेक बुद्धिमत्तापूर्ण निरीक्षण किये है। उसने

लिखा कि अमरीकी अपनी अत्यधिक महत्वाकाक्षा और लाभकारी प्रवृत्तियों के प्रति प्राय. अपनी एकमात्र आस्था के कारण ही उद्योग मे प्रगति करते हैं। इसके अलावा अभी तो विशाल समृद्धि बाकी है। टोकवील ने नृशस औद्योगिक कुलीनतंत्र अर्थात्, १९वी शताब्दि के उत्तरार्द्ध में 'राबर बैरन्स' के उदय का अनुमान कर लिया था। फिर भी, यहाँ टोकवील ने अमरीकी आर्थिक जीवन की मूलभूत असगतियो का पता पा लिया था, जिनको बाद के मार्क्सवादी आलोचक कभी वस्तुत ग्रहण नही कर सके थे–वह यह कि 'उत्पादक वर्ग की कुलीनता, जो हमारी ऑखो के सामने वृद्धि कर रही है, इतनी कठोर है कि ऐसी विश्व मे अब तक स्थापित नही हुई है–साथ-ही-साथ वह अत्यन्त परिसीमित और कम-से-कम खतरनाक है।' इसका कारण यह था कि उसकी सम्पत्ति पर एकाधिपत्य नही था और उसकी सफलता के साथ न तो व्यापक दरिद्रता की उग्रता, और न समाज का, केवल बहुत अमीर और बहुत गरीब, इन दोनो वर्गो मे ध्रुवीकरण हुआ था।

टोकवील ने एक असाधारण विचारपूर्ण परिच्छेद 'महान क्रान्तियॉ क्यों अधिक दुर्लभ हो जायेगी' मे यह लिखा है कि क्रान्तियॉ प्राकृतिक असमानताओ को नष्ट करने के लिए होती है और यह स्वीकार किया है कि प्रजातान्त्रिक अमरीका में व्यवसाय और सम्पत्ति का प्रेम कुछ ही बडे अमीरों को जन्म देगा, परन्तु ऐसे लोगो की भी सख्या कम होगी, जो अत्यन्त गरीब होगे और ऐसे लोगो का, जो न अधिक अमीर और न अधिक गरीब होगे, विशाल बहुमत हमेशा उनके बीच सतुलन रखेगा।

अमरीका में अमीर लोग एक स्थान पर केन्द्रित न होकर चारो ओर फैले हुए हैं और अमरीकी वर्ग प्रणाली की विशेषता–जिसे मार्क्सवादी कभी देख अथवा स्वीकार नही कर सकते–स्तरीकरण नही, अस्थिरता है। ऐसे वर्ग मे 'न तो वस्तुत अमीर ही होते हैं और न गरीब,' इसलिए अधिकाश पुरुषो के पास 'जीवनयापन की इच्छापूर्ति के लिए पर्याप्त सम्पत्ति है, परन्तु वह ईर्ष्या उभाडने के लिए पर्याप्त नही है। इस प्रकार के मनुष्य हिसक आन्दोलनो के स्वाभाविक शत्रु होते है, उनकी शान्ति उनके नीचे और ऊपर की सब वस्तुओ को प्रशात रखती है और समाज के स्वरूप का सन्तुलन बनाये रखती है।' ऐसे देश मे तब कल्याण से पोषित रूढिवाद मे वस्तुतः क्रान्ति की सम्भावना नही रहेगी।

*

उपोद्घात

अमरीकियो की कतिपय मूलभूत चरित्र-सम्बन्धी विशेषताऐं और सामाजिक आदर्श टोकवील की दृष्टि मे नही आये थे, जैसे—अमरीकियो की सैद्धान्तिक विज्ञान की अपेक्षा व्यावहारिक-विज्ञान की ओर आसक्ति, उनका उन्नत और पूर्ण के स्थान पर शीघ्र और उपयोगी ('वे स्वभावतः सुन्दरता की अपेक्षा उपयोगिता को महत्व देगे और चाहेगे कि सुन्दर उपयोगी हो') कार्यो के प्रति आग्रह, और उनकी स्वाभाविक व्यग्रता और आकाक्षा, उनकी पारस्परिकता और अनवरत शीघ्रगामी क्रियाशीलता (अमरीकियो का सारा जीवन संयोग के खेल, क्रान्तिमय सघर्ष या युद्ध की तरह व्यतीत होता है) और साधनो तथा छोटे मार्गों को ढूँढने के लिए उनकी अनन्त खोज (वह व्यक्ति जो केवल सासारिक कल्याण की ओर प्रवृत्त होता है, वह हमेशा घबराहट में रहता है, क्योकि उस तक पहुँचने के लिए, उसे ग्राह्य करने के लिए और उसका उपभोग करने के लिए उसके पास सीमित समय रहता है)।

टोकवील ने विशेष रूप से द्वितीय भाग मे बुद्धि, प्रथाओ और भावनाओ पर प्रजातंत्र या समानता के पडने वाले प्रभावो की एक लम्बी तालिका दी थी, जो आज करीब-करीब यथार्थ प्रतीत होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि टोकवील को खुद के समय के सर्वातिशय सिद्धान्तवादी सर्वथा दृष्टिगोचर नही हुए, परन्तु अमरीकी प्रजातंत्र में साहित्य के भविष्य के विषय मे वह पूर्णतः निश्चित था, और बहुत कुछ सही था। प्रजातंत्र के व्यापार और व्यवसायकी भावना साहित्य मे कैसे प्रविष्ट होगी, इस पर अपने विचार व्यक्त करते हुए टोकवील ने भविष्यवाणी की कि उसके व्यावसायिक लोगों की पहुँच अधिकाधिक लोगो तक हो जायगी। उच्च योग्यताओं के कुछ ही लेखक अपनी कुशाग्रता और कला-प्रतिभा रख पायेगे। अधिकाश लेखक स्वयं व्यापारी हो जायँगे।

शैली प्राय काल्पनिक, असत्य, बोझिल और शिथिल हो जायगी—प्राय लगातार उग्र और अशिष्ट रहेगी। लेखक सूक्ष्मताओ की पूर्णता के स्थान पर शीघ्रता से कार्य पूर्ण करने पर ध्यान देगे ..पाण्डित्य-प्रदर्शन के स्थान पर कल्पना-शक्ति का बाहुल्य होगा; गम्भीरता की अपेक्षा कल्पना अधिक होगी, और साहित्यिक अनुष्ठानो मे विचारो की अपरिष्कृत और अपरिपुष्ट मानसिक शक्ति के लक्षण दिखायी पड़ेंगे। लेखको का ध्येय आनन्द की उपलब्धि के स्थान पर आश्चर्यान्वित कर देना और अभिरुचि को मोहित करने के स्थान पर भावों को उत्तेजित कर देना रह जायगा।

साहित्य मे जैसा कि अन्य कलाओ की उन्नति मे हुआ है, तथाकथित प्रजातात्रिक युग के कौशल ने गुणो के स्थान पर परिमाण को, पूर्णता के स्थान पर लाभ को महत्व दिया है।

धर्म पर भी प्रजातत्र का प्रभाव पड़ना चाहिए। उसका रूप और उसके बन्धनो की कठोरता कम हो जाती है, यद्यपि उन लोगो के लिए वह विश्वास और आत्मज्ञान के आधारभूत तत्व अनवरत रूप से प्रदान करता रहता है, जिनकी कृत्रिम राजनीतिक स्वतंत्रता अन्यथा उनके जीवन और विचारो को असह्य रूप से अत्यन्त सूक्ष्म और क्षीण बना देगी। यहाँ तक कि प्रजातान्त्रिक प्रवृत्तियो का, जो किसी सयोग या अकेले महापुरुषो और नेताओ के एकमात्र कार्यों और सफलताओ को महत्व देने के बदले जन आन्दोलनों और सामान्य हितो पर जोर देती है, प्रभाव इतिहास पर भी पड़ना चाहिए। निश्चय ही अमरीकी इतिहास लेखन-कला ने जिस पर टोकवील के समय से दीर्घ काल तक एक अथवा दूसरे प्रकार के नियतिवादियो का, जो सभी समाज का निर्माण करने वाले व्यक्तियो की अपेक्षा समाज की दिशा मे परिवर्तन करने वाली प्रचण्ड शक्तियो से अधिक सम्बन्धित थे, पर्याप्त रूप से प्रमाणित कर दिया है कि यह कथन कितना दूरदर्शितापूर्ण था।

टोकवील ने इसके अलावा प्रजातान्त्रिक अमरीका के अनेक अन्य विषयो का उसी कुशलता के साथ वर्णन किया है और तत्सम्बधी भविष्यवाणियाँ भी की है। उसने कानूनी व्यवसाय, विशेषत न्यायपालिका, स्वतंत्र प्रेस की शक्ति और निन्दा करने की क्षमता तथा सामान्यतः प्रजातान्त्रिक आचरणों की अतिशयता की विशिष्ट महत्ता पर प्रकाश डाला है। उसने अमरीका के राजनीतिक हितो की अबाधना और गहनता पर विचार प्रकट किये है। ('वह आपसे ऐसे बोलता है, जैसे वह किसी सभा मे भाषण कर रहा है और यदि उसे वादविवाद मे तेजी लाने का अवसर मिले, तो वह उस व्यक्ति को जिसके साथ वह बातचीत कर रहा होगा, सम्बोधित करेगा, भद्र पुरुषो!') उसने युद्ध के विषय मे दीर्घकाल से अभिव्यक्त घृणा और उसके लिए की जाने वाली धीमी तैयारी और फिर भी अन्तत राष्ट्र को पूर्ण तथा, विजय-मंडित युद्ध मे जुटाने की योग्यता और हब्शियो तथा श्वेतागो के मध्य स्वामी-दास सम्बन्धो मे अन्तर्निहित गृह-युद्ध के खतरो का भी वर्णन किया है और उनके सम्बन्ध मे भविष्यवाणियाँ की है।

युवक फ्रासीसी ने सार्वजनिक सस्थाओ के बाहुल्य की ओर ध्यान खीच कर, विशेषत. सारगर्भित अमरीकी सिद्धान्त का पिष्टपेषण भी किया है ('सभी आयु, सभी स्थितियो और सभी मनोवृत्तियो के ये अमरीकी, मनोरजन प्रदान के लिए, स्कूलो की स्थापना करने के लिए, धर्मशालाओं और चर्चों का

निर्माण करने के लिए, शिक्षा का प्रसार करने के लिए, पादरियो को विरोधी स्थानो पर भेजने के लिए धार्मिक, नैतिक, गम्भीर, निरर्थक, सामान्य, सं संकुचित, विशाल और लघु सभी प्रकार के असोसियेशनो का निरन्तर निर्माण करते है।') इस प्रकार वे निजी समूह के व्यक्तियो को शक्ति और छोटी-छोटी बातो मे सहायता देते हैं और विस्तृत उत्तरदायित्वो का बोझा उठाने के लिए तैयार करते है और ऐसे कायो को करते है, जो अन्यथा सरकार द्वारा किये जाते।

अन्त मे निश्चय ही टोकवील की भविष्यवाणियो मे सबसे अधिक सही उसका वह सूक्ष्म अनुमान था, जो उसने एक अन्य शक्तिशाली राष्ट्र के साथ अमरीका के भावी सम्बन्ध के विषय मे लगाया था।

विश्व में इस समय दो महान् राष्ट्र है जो विभिन्न दिशाओ से उठे परन्तु जो एक ही उद्देश्य की ओर बढते हुए दिखायी पड़ते है। रूसियो और अमरीकियो का मैने प्रकारान्तर से उल्लेख किया है, दोनो का एकाएक विकास हुआ है, जब मानवता का ध्यान अन्य दिशा की ओर केन्द्रित था, उन्होने राष्ट्रो के बीच एकाएक अपने को प्रथम श्रेणी मे प्रतिष्ठित कर दिया और विश्व को उनके अस्तित्व और उनकी महानता का ज्ञान एक साथ ही हुआ।

अन्य राष्ट्रो की अपनी प्राकृतिक सीमाऍ प्रायः निश्चित हो चुकी है और अब उन्हे केवल अपनी शक्ति को बनाये रखना है, परन्तु इन राष्ट्रो का विकास अब तक गतिशील है। अन्य सबका विकास अवरुद्ध हो चुका है या वे अत्यन्त कठिनाई के साथ आगे बढ रहे है, परन्तु ये दोनो अकेले उस पथ की ओर सरलता और वेग के साथ अग्रसर हो रहे है जिसकी कोई सीमा दिखायी नही दे सकती। अमरीकी अपने प्राकृतिक अवरोधो से संघर्ष कर रहा है, परन्तु रूसी के मार्ग मे रुकावटे डालने वाले शत्रु भी मनुष्य है। अमरीका जंगली और असभ्य जीवन से लड रहा है और रूस को अपने सारे शस्त्रो से सभ्यता के साथ लडना पड रहा है। इसलिए अमरीकियो की विजय हलो के द्वारा प्राप्त होती है और रूसियो की तलवार के द्वारा। आंग्ल-अमरीकी अपने उद्देश्यो की पूर्ति के लिये व्यक्तिगत हितो पर विश्वास करता है और लोगो की अनिर्देशित शक्ति और साधारण बुद्धि को स्वतंत्रता प्रदान करता है, किन्तु रूसी, समाज की सारी सत्ता, एक व्यक्ति के हाथो में केन्द्रित करता है। अमरीका का मुख्य अस्त्र स्वतंत्रता है और रूस के लिए दासता। उस दोनो का मूल स्रोत और दोनो का मार्ग भिन्न है; फिर भी

उनमे से प्रत्येक के हाथो मे दुनिया की आधी जनसख्या का भाग्य ईश्वरीय इच्छा से सुरक्षित लगता है।

हम देख चुके हैं कि अलेक्सिस डि टोकवील ने अमरीकी जीवन के प्राय· प्रत्येक विषय के प्रति अभिरुचि प्रकट की थी। फिर भी, स्वय उसी के अनुमान से एक विषय—अन्यो की अपेक्षा विशेष रूप से प्रमुख था। वह विषय था बहुमत का बढता हुआ अत्याचार, विचार-स्वातंन्य के मार्ग मे उत्पन्न की गयी निरन्तर बढती हुई और अत्यन्त शक्तिशाली बाधाएँ, जिनके परिणामस्वरूप अमरीकी विचारधारा मे भयानक एकरूपता आ गयी, असामान्यता का तथा रूपवैविध्य का अभाव हो गया। टोकवील ने कहा कि 'अमरीका मे जब तक बहुमत की सार्वभौमता अपने मार्ग को निश्चित नही कर लेगी, तब तक वहाँ बुद्धि की पूर्ण स्वतंत्रता का अस्तित्व बना रहेगा; परंतु जब बहुमत अन्तिम रूप से निश्चय कर लेगा, तब समस्त विरोधी विचार और मतभेद समाप्त हो जायेंगे। यह कार्य मृत्यु या शारीरिक-यातना के खतरे द्वारा न होकर, बहिष्कार, अपने साथियों द्वारा परित्याग तथा समाज द्वारा अस्वीकृत किये जाने की सूक्ष्म एवं अधिक असह्य प्रक्रिया द्वारा होगा।'

सारे इतिहास मे ऐसा उदाहरण कही नही मिलता, जब सम्राटो और राजाओ ने विचारो को नियंत्रित करने मे, जो सब शक्तियों मे अत्यन्त गतिमान और अदृश्य है, सफलता प्राप्त कर ली हो। फिर भी जहाँ निरकुश राजतंत्र असफल रहा, वहाँ प्रजातंत्र ने सफलता प्राप्त कर ली। इसका कारण यह है कि बहुमत की शक्ति असीमित और सर्वव्यापक है और समानता तथा बहुमतशासन के सिद्धान्तो ने बहुमत के ऊपर अल्पमत के अत्याचार का स्थान, अल्पमत के ऊपर बहुमत के अत्याचार को, जो अपेक्षाकृत अधिक पूर्ण, अभेद्य और व्यापक रूप से मान्य है, प्रदान कर दिया।

टोकवील ने पूर्वकालीन अमरीकी समाज के व्यक्तिवाद के विपरीत समरूपता, अनुरूपता और समानता को वर्तमान प्रजातंत्र का लक्षण बताया है। मूल रूप से मनुष्य ने पुराने राजतत्रो और कुलीनतत्रों द्वारा निर्मित असमानता की क्रूर शृंखलाओ को तोडने के लिए स्वतंत्रता अर्जित की थी, परन्तु 'जब समाज में मनुष्यों की परिस्थितियॉ समान बनती है, व्यक्ति का महत्व कम हो जाता है और समाज का महत्व बढ जाता है,' तब धीरे-धीरे प्रजातत्र मे मनुष्य विभिन्नता के स्थान पर समानता और समरूपता पर अधिक बल देने लगते है और वही स्वतंत्रता भिन्न होकर असह्य हो जाती है। इसके अतिरिक्त समतावादी

प्रजातत्र में मनुष्य अपने सहप्राणियो की भीड मे खो जाने के लिए उद्यत हो जाते हैं, वे अपने स्वयं की स्वतंत्रता और व्यक्तित्व का सम्मान खो बैठते है और इसलिए वे अन्य सभी की ओर से व्यक्तिगत विचार, अभिरुचि और इच्छा की स्वतंत्र अभिव्यक्ति के प्रति अत्यन्त उदासीन हो जाते है। सक्षेप मे, प्रजातंत्र और समानता सबको एक स्तर पर लाने वाले महान् तत्व है। इस प्रकार वे एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियो द्वारा अनेको का दमन किया जाना असम्भव कर देते है। परन्तु इसके विपरीत, समान रूप से वे अनेको के अत्याचार से एक व्यक्ति के लिए मुक्ति पाना भी असम्भव कर देते है। परिणामतः प्रजातात्रिक बहुमत सबसे अधिक शक्तिशाली और अत्यन्त निरंकुश बन सकता है।

* * *

टोकवील ने बहुमत के बढते हुए अत्याचार के सम्बध मे जो चिन्ता प्रकट की थी, वह आज निश्चित रूप से विशेष बल के साथ परिलक्षित होती है। यह सही है कि 'अमेरीका मे प्रजातंत्र' के पहली बार प्रकट होने के अर्द्धशताब्दी पश्चात् लार्ड ब्राइस ने लिखा था कि टोकवील की "बहुमत की निरंकुशता आज के अमरीका मे एक गम्भीर बुराई के रूप मे परिलक्षित नही होती। राजनीति, धर्म या सामाजिक पहलुओ मे जिस विचारभिन्नता की असह्यता का उल्लेख उसने बढा-चढा कर किया है, उसके जो चिह्न रह गये है वे अत्यन्त क्षीण हैं। परन्तु लार्ड ब्राइस की आलोचना का मूल्याकन करते समय कोई भी यह सदेह कर सकता है कि चूँकि उसमे टोकवील जैसी प्रखर और दूरदर्शी दृष्टि नही थी, इसलिए वह फ्रासीसी के अनुमान की गहनता तक नही पहुँच पाया। इसके साथ जैसा कि स्वयं ब्राइस ने सन् १८८७ मे लिखा था, पूर्णतः बहुमत द्वारा परिपुष्ट प्रजातंत्र ने, जिसकी कल्पना टोकवील ने की थी, और जिसे आज हम अपनी ऑखो के सामने देख रहे हैं, वस्तुत· अभी तक अमरीकी जीवन के धरातल को नही छुआ था। आज यद्यपि उसने और आधुनिक, सीमारहित, औद्योगिक अमरीका ने अपनी फैक्ट्री से निर्मित, प्रतिमानित भोजन, वस्त्रो, घरो और संचार-साधनो और यहाँ तक कि मनोरजनों के साथ समानता और अधीनस्थ व्यक्तिवाद को अधिक महत्व प्रदान किया है और उसे परिपूर्णता प्रदान की है, जिसे समकालीन समाज शास्त्रियो ने विशेष रूप से 'समानुरूपता के युग' के नाम से पुकारा है। एक अपेक्षाकृत विशिष्ट 'उद्देश्य-साम्य' की दिशा मे कार्यरत शीत और उष्ण युद्धो के समस्त तनावो के साथ राजनीतिक तद्रूपता समाप्त हो गयी सी प्रतीत होती है, और सामान्यत कहा जा सकता

है कि आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विषमताएँ जो वाशिंग्टन और जेफर्सन के समय विशेष रूप से प्रमुख थी, हमारे युग के जन प्रजातंत्र में अधिकाशत. लुप्त हो गयी लगती है।

टोकवील की भयानक भविष्यवाणियाँ हमारे युग मे इतनी यथार्थ हो जायेगी, यह जानकर किसी भी प्रकार का आश्चर्य नही होता, यहाँ तक कि बढती हुई निरकुशता को शान्त करने वाले उन तथ्यो के प्रकाश मे भी, जिनकी कि कल्पना उसे हुई थी , क्योकि टोकवील ने अमरीकियो के दैनिक जीवन मे सरकार के हस्तक्षेप के प्राय पूर्ण अभाव मे इस प्रकार का एक तथ्य देखा था। सन् १८३० के दशक मे उसने लिखा कि 'संयुक्त-राज्य अमरीका में यूरोपीय यात्री को अत्यधिक आश्चर्य इस बात पर होगा कि जिसे हम सरकार कहते है, उसका वहाँ अभाव है।' फिर भी आज हमे सरकार की छाप हर स्थान पर दिखायी पड़ती है।

टोकवील ने केन्द्रित सरकार और केन्द्रित प्रशासन के मध्य के अन्तर को भी प्रकट किया है। केन्द्रित सरकार जिसके द्वारा राष्ट्र की सर्वोपरि नीति का निर्धारण होता है, आवश्यक और वस्तुत अनिवार्य है, परन्तु प्रशासन ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा इस प्रकार की सर्वोपरि नीति का क्रियान्वय किया जाता है, जिसका टोकवील के समय पृथक् और विकेन्द्रित अस्तित्व था, जिसका अधिकार मुख्यतः राज्य और उन स्थानीय अभिकरणो मे निहित था, जो व्यक्तिगत व्यवहारो का निर्णय करते थे। फिर भी टोकवील ने सुझाव प्रस्तुत किया था कि यदि केन्द्रित सत्ता सरकार के सामान्य सिद्धान्तो की स्थापना करने के पश्चात् उनके प्रयोग की विस्तृत बातो का प्रतिपादन करे और यदि देश के महान् हितो को नियमित करने के पश्चात् व्यक्तियो के हितो के क्षेत्रो मे पदार्पण करने लगे तो नयी दुनिया से शीघ्र ही स्वतत्रता का लोप हो जायगा। आज इस बात से कौन इन्कार कर सकता है कि पिछली अर्द्ध शताब्दी से अधिक समय से हमारी सघीय सरकार ने न केवल सरकार के सामान्य सिद्धान्तों का निरूपण किया है, प्रत्युत उनके प्रयोग के विस्तारो मे भी प्रवेश किया है, उसने न केवल देश के महान् हितो को नियमित किया है, अपितु व्यक्तिगत हितो के क्षेत्र मे भी प्रवेश किया है ?

उस समय भी जब टोकवील ने आगे चल कर बहुमत के अत्याचार को, जिसके प्रति उसने भय प्रकट किया था, कम करनेवाली अमरीकी शक्तियो पर प्रकाश डाला, तब उसने जान-बूझ कर प्रेस की स्वतत्रता को, जिस सरलता से कोई भी अपना समाचार-पत्र प्रारम्भ कर सकता है, तथा केन्द्रित प्रेस-मत के नितान्त अभाव को बिल्कुल अलग रखा। फिर भी, आज अमरीकी प्रेस की

विशिष्टता यह है कि अनेक स्वतंत्र प्रकाशनो का निरन्तर लोप हो रहा है, बडे-बडे पत्रो की शृंखलाओ के उदय और सामान्यत सार्वजनिक आदान-प्रदान के विभिन्न साधनो के माध्यम द्वारा जनमत निर्माण पर साधारणतया आकर्षक बल से स्वतंत्र प्रकाशनो की सख्या निरन्तर घटती जा रही है।

टोकवील के समय स्वतंत्रता की स्वाभाविक भौतिक बुनियाद के अतिरिक्त स्वतंत्र व्यक्तियों के लिए आर्थिक अवसरो की जो खुली सीमाएँ और व्यापक क्षेत्र था, उनका हमारे युग मे लगभग पूर्ण लोप हो चुका है। और यह पूर्ण रूप से स्पष्ट है कि हमारे भौतिक वातावरण मे भी, विचारो का स्वतंत्र विनिमय टोकवील के समय की भाँति, अब तक अपनी जडो को गहराई तक नही जमा सका है। परिणामतः 'अमेरिका मे प्रजातंत्र' मे जो समस्याएँ खडी हो गयी है, वे आज अधिक दबाव जानने वाली और चुनौती देने वाली है, बनिस्बत उस समय के जब टोकवील और ब्यूमोट अमरीका मे 'प्रजातंत्र की वास्तविक प्रतिमूर्ति को, उसकी प्रवृत्तियो, लक्षणो, पूर्वाग्रहो और उसके आवेगो सहित,' ढूँढने के लिए आये थे, 'ताकि वे यह सीख सके कि उसकी प्रगति से हम कितना भय या आशा रखे।'

* * *

यह सही है कि अलेक्सिस डि टोकवील की यह महान् पुस्तक तब तक पूर्ण रूप से समझ मे नही आ सकती, जब तक कोई यह महसूस न कर ले कि यह फ्रासीसी युवक अमरीका मे फैले प्रजातंत्र से वस्तुतः कभी निराश नही हुआ, यद्यपि उसने बहुमत की निरन्तर बढती हुई निरकुशता का अनुभव किया था। उसने अमरीकी सभ्यता के अनेक तथ्यो का दृढता और बारीकी से विश्लेषण किया, जो उसे स्वतंत्र लोकतांत्रिक समाज की समरूपता और दबाव की ओर उन्मुख कर रहे थे और उसे इस बात का निश्चय हुआ कि यदि अमरीकियो को उनके स्वयं के साधनो पर आश्रित कर दिया गया, तो वे सहज ही अपने पूर्वजो के व्यक्तिवाद को शिथिल कर देगे। फिर भी, यदि समरूपता प्रजातान्त्रिक युग मे मनुष्यो का नैसर्गिक भाग्य निर्दिष्ट करती हुई प्रतीत होती है, तो टोकवील उसके बदले मे व्यक्तिवाद, स्वाधीनता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को 'कला' की उपज मानेगा। यदि अमरीका के लिए भविष्य स्वतंत्रता के प्राकृतिक आधारो को समाप्त कर देनेवाला प्रतीत होता है, तो टोकवील उतना ही कृतसंकल्प था कि उनके स्थान पर नये आधारो का निर्माण कर दिया जाय।

उसने लिखा कि निश्चय ही किसी को यह धारणा एकदम नही बना लेनी चाहिए कि प्रजातत्र में स्वतंत्रता खुले क्षेत्र की भौतिक परिस्थिति पर पूर्णत निर्भर है—

यदि वे राष्ट्र, जिनकी सामाजिक स्थिति प्रजातात्रिक है, केवल उसी दशा में स्वतत्र रह सकते है जब वे बजर क्षेत्रो मे बसेगे तो हमें मानव जाति के भविष्य के सम्बन्ध में निराश होना पडेगा, क्योकि प्रजातत्र निरन्तर अधिक विस्तृत क्षेत्रो में तेजी से फैल रहा है और जगली क्षेत्र भी लोगो द्वारा धीरे-धीरे बसाये जा रहे है।

कोई भी उचित ढंग से प्रजातंत्र का परित्याग नही कर सकता, उसकी सीमाओं मे स्वतत्रता की आशा नही छोड सकता और उसके बदले मे समाज और सरकार के अधिक कुलीनवादी स्वरूप को नही अपना सकता, जिनमे स्वतत्रता परम्परानुगत अधिक सुरक्षित रही है ('इस प्रकार प्रश्न यह नही है कि कुलीन समाज को किस प्रकार पुनर्संगठित किया जाय, अपितु समाज की उस प्रजातात्रिक स्थिति मे, जिसे ईश्वर ने हमे प्रदान किया है, स्वाधीनता को किस प्रकार आगे बढाया जाय')। स्वतत्रता और प्रजातत्र मनुष्य के भावी उद्देश्य होने चाहिए और उस मार्ग मे चाहे जितनी भयङ्कर बाधाएँ उपस्थित क्यो न हो, मनुष्य का कौशल आज भी स्वतत्रता के साथ समानता और स्वाधीनता के साथ प्रजातंत्र (या बहुमत का शासन) के विचारशून्य और अपेक्षाकृत चमत्कारपूर्ण समीकरण को सार्थक बना सकता है। टोकवील का ऐसा ही दृढ विश्वास था, क्योकि उसने लिखा कि यदि ऐसा न होता:

तो मुझे यह पुस्तक नही लिखनी चाहिए थी, अपितु अपने आपको मानवता के भाग्य पर मन-ही-मन आँसू बहाने तक सीमित कर देना चाहिए था। समानता के सिद्धान्त से मानव की स्वाधीनता के लिए जो खतरे उत्पन्न हुए है, उन्हे सामने रखने के लिए मैने प्रयत्न किया है, क्योकि मेरा यह दृढ विश्वास है कि ये खतरे अत्यन्त प्रबल है और भविष्य के गर्भ में जो खतरे छिपे है, उन सब की अपेक्षा इन्हे बहुत कम देखा जाता है, किन्तु मै ऐसा नही सोचता कि वे अजेय है।

इसलिए टोकवील ने अनुभव किया कि—'प्रजातात्रिक सरकार का सार बहुमत की निरकुश सार्वभौमता मे निहित है। फिर भी उस फ्रासीसी की दृष्टि मे ऐसी व्यवस्था थी, जिसके द्वारा प्रजातात्रिक देश, उन खतरो पर जो बहुमत मे अन्तर्निहित है, विजय पा सकते है। उसने ऐसे उपकरणो का पता लगाया जिनका निर्माण स्वतत्र मनुष्य अपनी प्राचीन स्वतत्रता को सशक्त बनाने के लिए कुशलता कर सकते हैं और हमारे स्वय के समानुरूपता के युग मे टोकवील ने स्वतत्रता लिए जिस किलेबन्दी का सुझाव दिया है, उसका और भी अधिक महत्व है।

प्रेस की स्वतंत्रता अकेली ही व्यक्ति को ऐसी आवाज प्रदान करती है जिसके माध्यम से वह बलात्कार के विरुद्ध सारे राष्ट्र या सम्पूर्ण मानवता से अपील कर सकता है।

विकेन्द्रीकरण निरंकुश अधिकार को उस सीमा तक घटा देता है जहाँ तक सम्भव है।...और स्थानीय स्वशासन तथा अन्य सामाजिक, आर्थिक और बौद्धिक संगठन या समूह स्वतंत्र व्यक्तियो को अपने समाज मे रहने के लिए एक कुंजी प्रदान करते है, उत्तरदायित्व और आत्मसम्मान की भावना जगाते है और वह भावना उन्हे भीड मे नही खोने देती और अपनी स्वाधीनता के प्रति उन्हे अधिक ईर्ष्यालु बना देती है।

आदर्श, आचरण और परम्पराएँ, जिन्हे मनुष्य प्रजातात्रिक युग मे अवमान की दृष्टि से देखते है किन्तु जो हमारी स्वतंत्रता के लिए सुरक्षापूर्ण दीवार की रचना करती हैं, यहाँ तक कि उस युग मे वे और भी सशक्त हो जाती है, जब बहुमत की इच्छा हिसा का रूप धारण कर लेती है। इसी कारण कानूनी व्यवसाय और न्याय-व्यवस्था सीधे तौर से इन आदर्शो को बनाये रखने, पोषण करने और उनकी सुरक्षा करने का कार्य करती है।

नागरिको के संगठनो का निर्माण हमेशा अपने सहप्राणियो के अधिकारो और हितो की सुरक्षा करने के लिए होता है और वे निरन्तर इस बात से सजग रहते है कि उनकी स्वतत्रता उस सीमा तक ही सुरक्षित है, जहाँ तक वे अपने अन्य नागरिको की सुरक्षा करेगे।

ये है कुछ उपाय जिनका निर्माण स्वतंत्र मनुष्य स्वयं कर सकते है और जिनके द्वारा वे अनवरत अपनी स्वाधीनता और स्वतत्रता को बहुमत की निरंकुशता से बचाये रख सकते है। हमारे प्रजातान्त्रिक युग मे इस प्रकार की निरकुशता के विरोध मे यथासम्भव प्रबल अभियान का खडा होना अनिवार्य है, परन्तु उसके सामने झुकना नही। पीको और प्राचीन मानववादियो की भाँति टोकवील ने मनुष्य के भाग्य मे अपने ही भाग्य को देख लिया था और उसका भविष्य स्वयं उसके निर्माण के लिए रुका रहा।

मै इस बात से अवगत हूँ कि मेरे बहुत-से समकालीन व्यक्तियों का यह विचार है कि राष्ट्र कभी भी स्वयं अपने निर्माता नही रहे हैं और वे अनिवार्य रूप से पूर्ववती घटनाओं से अपनी जाति से या अपने देश की भूमि और जलवायु से उत्पन्न किसी अजेय और अगोचर शक्ति की आज्ञा का पालन करते है। ऐसे सिद्धान्त मिथ्या और भीरुतापूर्ण होते हैं; ऐसे सिद्धान्त दुर्बल व्यक्तियों और दीन राष्ट्रो के सिवाय कुछ भी उत्पन्न नहीं कर सकते। ईश्वर

ने मानव जाति को पूर्णत स्वाधीन या पूर्णत स्वतत्र उत्पन्न नहीं किया है। यह सही है कि प्रत्येक मनुष्य के चारो ओर एक घातक वृत्त खीचा हुआ है जिसे वह लॉघ नहीं सकता, परन्तु वह उस वृत्त की विस्तृत सीमा के भीतर शक्तिशाली और स्वतत्र रहता है। यह बात मनुष्यो की भॉति समुदायो के लिए भी लागू होती है। हमारे युग के राष्ट्र मनुष्यो की परिस्थिति को समान होने से नही रोक सकते, परन्तु समानता का सिद्धान्त उन्हे किस ओर प्रवृत्त करता है— दासता या स्वतत्रता की ओर, ज्ञान अथवा असभ्यता की ओर, समृद्धि या दीनता की ओर, यह स्वयं उन्हीं पर निर्भर है।

इसलिए मनुष्य स्वतंत्र इच्छा और बुद्धिमत्ता की सहायता से, लोकतान्त्रिक युग ने उनके सामने जो अन्धकूप फैलाये है, उन्हे देख सकते है। और, इस प्रकार वे इन अन्धकूपो मे, जिनमे अत्यन्त खतरनाक बहुमत की निरंकुशता द्वारा स्वतत्रता का विनाश निहित है, गिरने की अपेक्षा बुद्धिमतापूर्ण मार्ग को, जो स्वतंत्रता और प्रजातंत्र का मार्ग है, चुन सकते हैं।

× × ×

'अमेरिका मे प्रजातत्र' की दो बडी जिल्दो का सक्षितीकरण करते समय टोकवील की इस शास्त्रीय पुस्तक की न केवल भावना या उसके वास्तविक अभिप्राय को बनाये रखने का हर प्रकार से प्रयत्न किया गया है, अपितु उसके अत्यन्त महत्वपूर्ण वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक अशो को भी उद्धृत किया गया है। सामान्य और साथ-ही-साथ बौद्धिक वर्ग की आवश्यकताओ और उद्देश्यो को प्रथमतः दृष्टि मे रखकर सभी कालों मे इस पुस्तक के कुछ अश छोड दिये गये थे या उनमे परिवर्तन कर दिये गये थे। तदनन्तर ही उसके सस्ते कागज की जिल्द मे सस्करण निकालने के लिए उसके आवश्यक कलेवर पर विचार किया गया। अतः यद्यपि राजनीतिक और सामाजिक साहित्य की हमारी इस महान् उत्कृष्ट कृति मे कॉट-छॉट करना और उसे घटाना सरल कार्य नही था, फिर भी उसके उत्कृष्ट अश कुछ हेर-फेर के साथ, हेनरी रीव के मूल अनुवाद मे से जिसका परिशोधन, फ्रासिस बोवेन द्वारा किया गया, यहॉ दिये जा रहे है।

अलेक्सिस डि टोकवील और उसके ग्रन्थो का अत्यन्त गहन और विद्वत्तापूर्ण अध्ययन करने के लिए पाठक को उत्साह से जार्ज पियर्सन की पुस्तक 'अमरीका मे टोकवील और ब्यूमेट' का नामोल्लेख किया जाता है।

न्यूयार्क सिटी
रिका

रिचार्ड डी हेफनर

लेखक की प्रस्तावना

संयुक्त-राज्य अमरीका मे मेरे प्रवास के समय जिन नयी वस्तुओं ने मेरा ध्यान आकृष्ट किया, उनमे जनता की स्थिति की सामान्य समानता ने मुझे सर्वाधिक रूप से प्रभावित किया। इस मूल तथ्य का समाज की समस्त गतिविधियो पर जो विलक्षण प्रभाव पडता है, उसकी जानकारी मुझे शीघ्र ही हो गयी। यह जनमत के लिए विशिष्ट मार्ग-निर्देश करता है और कानूनो के लिए विशिष्ट आशय निर्धारित करता है। यह शासन करने वाले अधिकारियो के लिए नये उद्देश्य और शासित के लिए विचित्र आदतो की रचना करता है।

मैने शीघ्र ही देख लिया कि इस तथ्य का प्रभाव राजनीतिक स्वरूप और देश के कानूनो से परे अत्यन्त व्यापक हो गया है, और उसका जितना प्रभाव सरकार पर है उससे तनिक भी कम नागरिक समाज पर नही है। वह जनमत का निर्माण करता है, नये भाव उद्रेक करता है नयी रीतियॉ चलाता है और जिन बातो की सृष्टि नही कर सकता, उनमे परिवर्तन करता है। अमरीकी समाज का अध्ययन मैने जितनी गहराई से किया, उतना ही मुझे अधिक ज्ञान हुआ कि परिस्थितियो की यह समानता वह मौलिक तत्व है, जिससे, प्रतीत होता है कि अन्य बातो का उद्भव हुआ है और यह एक ऐसा केन्द्र बिन्दु है जिसके चारों ओर अन्य बाते परिभ्रमण करती हुई दिखलायी पड रही है।

जब मै स्वयं अपने गोलार्द्ध की ओर अपने विचारो को केंद्रित करता हूँ, तो वहॉ भी नयी दुनिया से कुछ मिलती जुलती परिस्थिति दृष्टिगोचर होती है। प्रतीत होता है कि परिस्थिति की समानता यद्यपि उस उच्च सीमा तक नही पहुँची है, जो संयुक्त-राज्य अमरीका मे दिखायी पडती है, फिर भी उस सीमा तक पहुँचने के लिए निरंतर गतिशील है। और इसी के साथ प्रजातन्त्र, जो अमरीकी समाज को पूर्ण नियंत्रित किये हुए है, यूरोप मे भी बडी शक्ति से उठता हुआ प्रतीत होता है। अत. इन्ही बातो से मै यह पुस्तक, जो इस समय पाठक के सामने है, लिखने के लिए प्रेरित हुआ हूँ।

सबको यह समान रूप से ज्ञात है कि हमारे बीच एक प्रजातान्त्रिक क्रान्ति का उदय हो चुका है, परन्तु सभी लोग उसको समान दृष्टि से नही देखते। कुछ लोगों को यह क्रान्ति एक विलक्षण परन्तु आकस्मिक घटना प्रतीत होती है और इसलिए वे ऐसा विश्वास करते है कि भविष्य मे उसे नियन्त्रित किया

जा सकेगा। दूसरो की दृष्टि मे यह चूँकि अत्यन्त एकरूप, अत्यन्त प्राचीन और इतिहास में पायी जाने वाली अत्यन्त स्थायी प्रवृत्ति है, इसलिए यह अदम्य है।

मै फ्रास की सात सौ वर्ष पुरानी परिस्थिति पर क्षण भर के लिए विचार करता हूँ, जब उसका समस्त क्षेत्र परिवारो की एक छोटी सी संख्या में बंटा हुआ था, जो देश के मालिक और उसके निवासियों के शासक थे। उनके शासन का यह अधिकार पारिवारिक उत्तराधिकार के साथ पीढी दर-पीढी चलता रहा। बल ही केवल ऐसा माध्यम था, जिससे एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति पर प्रभुत्व रख सकता था। इस बल का एक मात्र स्रोत भू सम्पत्ति थी। इसके उपरान्त शीघ्र ही पादरियों की राजनीतिक शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ और वह निरन्तर वृद्धि करने लगी और उन पादरियो ने अपनी श्रेणियों को गरीब और अमीर, रैयत और लार्ड सभी वगो के लिये खोल दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि चर्च के माध्यम से समानता ने शासन मे प्रवेश किया और शाश्वत बन्धनो मे जकड़े दासों ने भी उच्च व्यक्तियो के समक्ष पादरी का स्थान ग्रहण किया और बहुधा राजाओ के ऊपर अपने को प्रतिष्ठित किया।

आगे चलकर, समाज ज्यो-ज्यो अधिक स्थायी और सुसभ्य होता गया, मनुष्यो के पारस्परिक विभिन्न सम्बन्ध अधिक जटिल और विभिन्न रूपवाले होते गये। इसीलिए नागरिक कानूनो की आवश्यकता महसूस की गयी और विधि के नियन्ता विशिष्ट पोशाके धारण किये हुए सामन्ती लार्डों के साथ सम्राट के दरबार मे उपस्थित होने के लिए अनिश्चित न्यायाधिकरणों और अपने अव्यवस्थित कार्यालयो से शीघ्र ही बाहर निकल कर आये। उस समय जबकि नरेश अपने साहसिक कार्यों मे अपनी बर्बादी कर रहे थे और सामन्त निजी सघर्षों मे अपने साधनो का अपव्यय कर रहे थे, निम्न श्रेणी के लोग व्यापार द्वारा अपने को समृद्ध बना रहे थे। राज्य के मामलों मे धन का प्रभाव दिखायी पड़ने लगा। व्यापार के कारोबार ने सत्ता के लिए एक नया मार्ग प्रशस्त कर दिया और महाजन राजनीतिक प्रभाव के दायरे में प्रतिष्ठित हो गये, जहाँ कभी उनसे चापलूसी के साथ घृणा भी की जाती थी।

धीरे-धीरे बुद्धि का विकास हुआ और साहित्य और कला के प्रति अभिरुचि मे वृद्धि हुई, जिसका परिणाम यह हुआ कि ज्ञान और प्रतिभा सरकार के लिए आवश्यक माध्यम बन गये। मानसिक योग्यता ने सामाजिक शक्ति का निर्माण किया और साहित्यिक मनीषियो ने राज्य के कार्यों मे भाग ।। शक्ति के नये साधनो की जितनी तेजी से खोज की गयी, उतनी ही

तेजी से उच्च कुल के जन्म को दी जाने वाली महत्ता कम हो गयी। ग्यारहवी शताब्दी में कुलीनता अमूल्य थी और तेरहवी शताब्दी मे उसका मोल किया जा सकता था। सन् १२७० ई० मे कुलीनता उपहारस्वरूप पहली बार प्रदान की गयी और इस प्रकार शासन मे समानता का प्रवेश स्वयं कुलीन-तंत्र के हाथो हुआ।

इन सात सौ वर्षों मे कभी-कभी ऐसा हुआ कि सामन्तो ने राजा की शक्ति का प्रतिरोध करने के लिए या अपने प्रतिद्वन्द्वियो की शक्ति को घटाने के लिए सामान्य लोगो को कुछ राजनीतिक अधिकार सौप दिये। अथवा बहुधा ऐसा भी हुआ कि कुलीनतत्र का दमन करने के उद्देश्य से राजा ने निम्नश्रेणी के लोगो को शासन मे भाग लेने की अनुमति प्रदान की। फ्रास मे राजा सर्वदा समाज के भेद मिटाने मे अत्यन्त सजग और क्रियाशील रहे हैं। जब वे शक्तिशाली और महत्वाकाक्षी थे, तब उन्होंने सामान्य व्यक्तियो को कुलीन व्यक्तियो के स्तर तक उठाने मे कोई कसर नही बाकी रखी थी और जब वे शिथिल और कमजोर थे, तब लोगों को उन्होने अपने से भी ऊँचा उठने के लिए अनुमति दे दी। कुछ ने अपनी प्रतिभा से और दूसरो ने अपने पापों से प्रजातंत्र की सहायता की। लुई ग्यारहवे और लुई चौदहवे ने सिंहासन के नीचे समस्त श्रेणियो को पराधीनता के समान स्तर तक पहुँचा दिया था और अत मे लुई पन्द्रहवॉ अपने दरबारियो सहित नीचे उतरकर धूल मे मिल गया।

जैसे ही भू-स्वामित्व सामन्तो के हाथो से निकलकर अन्य किसी भी व्यक्ति के हाथों मे आने लगा और उसके स्थान पर निजी सम्पत्ति अपना प्रभाव और प्रभुत्व जमाने मे समर्थ हुई, वैसे ही कला के क्षेत्र मे होनेवाले प्रत्येक अनुसन्धान ने और व्यवसाय और उत्पादन मे होनेवाले हर विकास ने मनुष्यों मे समानता के अनेक नये तत्वों का निर्माण किया। इसके बाद प्रत्येक नया आविष्कार उसकी प्रासगिकता से उत्पन्न होने वाली हर नयी आकाक्षा और सन्तुष्ट होने के लिए उत्कठित हर इच्छा सामान्य समानता की दिशा मे उठाया गया प्रगति का नया चरण था। भोग-विलास की अभिलाषा, युद्ध का प्रेम, फैशन का प्रभुत्व और मानव-हृदय के अत्यन्त प्रगाढ और साथ ही-साथ अत्यन्त गहन भावो ने मानो गरीबों को धनी और अमीरो को निर्धन बनाने के लिये सयुक्त रूप से योगदान दिया।

जब बुद्धि का प्रयोग शक्ति और धन की प्राप्ति का स्रोत बना, उसी समय से हम देखते हैं कि विज्ञान के क्षेत्र मे की गयी प्रत्येक नयी खोज, प्रत्येक नये सत्य, प्रत्येक नये विचार ने उस शक्ति के मूल को जन्म दिया, जो सामान्य लोगो के बीच प्रतिष्ठित की गयी। काव्य, भाषण और स्मृति, बुद्धि का स्वाभाविक गुण, कल्पना की लौ, विचारो की गहराई और वे सभी स्वाभाविक गुण जो ईश्वर द्वारा बिना किसी उद्देश्य से सब लोगो मे बिखेर दिये गये, सयुक्त रूप से प्रजातत्र के हित के अनुकूल हो गये। यहाँ तक कि उसकी प्रतिकूलताओ से युक्त होने के उपरान्त भी उन्होने मनुष्य की स्वाभाविक महानता को बन्धनो से मुक्त कर उसके हित की रक्षा की। इसलिए सभ्यता और ज्ञान के साथ उसकी विजय का विस्तार हुआ और साहित्य का शस्त्रागार सभी लोगो के लिये खुल गया, जहाँ प्रतिदिन गरीब और निर्बल व्यक्ति अपने शस्त्रो को प्राप्त करने के लिए आश्रय लेने लगे।

अपने इतिहास के सात सौ वर्ष के पृष्ठों को उलटने पर, हमे एक भी ऐसी महान् घटना देखने को नही मिलती, जिसने परिस्थिति की समानता का प्रतिपादन न किया हो। जेहादो और आग्ल-युद्धो ने सामन्तो को बडी क्षति पहुँचायी और उनकी सम्पत्ति को विभाजित कर दिया। नगर-निगमो ने सामन्ती निरकुशता के अन्तरतम मे स्वाधीनता का प्रवेश किया हथियारो के आविष्कार ने दासो और कुलीनो को युद्धभूमि पर समान कर दिया, मुद्रण की कला ने सभी वर्गो के ज्ञान की वृद्धि के लिए समान अवसर प्रदान किया, पोस्ट आफिसो ने झोपडी और महल के द्वारो पर एक ही प्रकार से ज्ञान की सृष्टि की और प्रोटेस्टेट मत ने उद्घोषित किया कि स्वर्ग तक जाने के मार्ग की खोज करने के लिए सभी व्यक्ति समान रूप से योग्य है। अमरीका की खोज ने भाग्य के सैकडो नये मार्गो को प्रशस्त कर दिया और निम्नवर्ग के साहसिक व्यक्तियो को धन और शक्ति अर्जित करने के लिए प्रोत्साहित किया

यदि हम ग्यारहवी शताब्दी के प्रारम्भ से इस बात का परीक्षण करे कि फ्रास मे एक अर्द्धशताब्दी से लेकर दूसरी अर्द्धशताब्दी तक क्या घटित हुआ, तो हमे यह अवश्य ज्ञात होगा कि ऐसे हर युग के अन्त मे समाज की स्थिति मे द्विमुखी क्राति हुई। कुलीन लोग सामाजिक स्थिति से नीचे गिरे और सामान्य लोग ऊँचे उठे–एक ऊँचा उठा, तो दूसरा नीचे गिरा। प्रत्येक अर्द्धशताब्दी दोनो को निकट ले आती है और एक दिन उन दोनो का मिलाप हो जायेगा।

यह प्रवृत्ति केवल फ्रांस के लिए ही विशिष्ट प्रकार की हो, यह बात नही है। जिस ओर भी हम दृष्टि उठाते है, ईसाई जगत मे सर्वत्र इसी क्रान्ति के दर्शन होते है। राष्ट्रीय अस्तित्व की अनेक घटनाओ से सर्वत्र प्रजातत्र के अनुकूल परिस्थितियो का निर्माण हुआ। उन सभी लोगो ने जिन्होने उसके हित के लिए स्वेच्छा से श्रम किया और उन लोगो ने जिन्होने अज्ञान से उसकी सहायता की — दोनो ने अपने अथक प्रयत्नो से उसकी सेवा की। जिन्होने उसके लिए सघर्ष किया और जिन्होने अपने को उसका विरोधी उद्घोषित किया, सभी एक ही मार्ग की ओर बढे और सभी ने एक ही उद्देश्य के लिए श्रम किया — कुछ ने अज्ञान से और कुछ ने अनिच्छा से। सभी ईश्वर के हाथों मे बुद्धिहीन कठपुतली की तरह रह गये।

इसलिए, समानता के सिद्धान्त का उत्तरोत्तर विकास दैविक घटना है। उसमे इस प्रकार के तथ्यो के सभी मुख्य लक्षण देखने को मिलते है। वह सर्वव्यापक है, वह चिरस्थायी है, और समस्त मानवीय हस्तक्षेप से सर्वदा मुक्त रहता है और सभी घटनाएं एवं सभी मनुष्य उसकी प्रगति मे अपना योगदान देते है।

तब फिर क्या इस प्रकार की कल्पना करना बुद्धिमत्ता होगी कि सामाजिक गतिविधि को, जिसका कारण इतना सुदूर रहस्य मे छिपा है, एक पीढी द्वारा नियन्त्रित किया जा सकता है? क्या यह विश्वास किया जा सकता है कि प्रजातंत्र, जिसने सामतशाही को उतार फेंका और राजाओ को लुप्त कर दिया, व्यापारियो और पूजीपतियो के सामने हार जायगा? क्या उसके इतने शक्तिशाली हो जाने के बाद और उसके विरोधी तत्वो के इतने निर्बल हो जाने के बाद उसकी गति अवरुद्ध हो जायगी? तब क्या हम उसे आघात पहुंचाना चाहते है? कोई कुछ भी नही कर सकता; क्योकि तुलनात्मक अध्ययन करने मे हम पहले ही असफल हो चुके है। ईसाई देशो में या विश्व के किसी भाग मे इस समय मनुष्यो की परिस्थितियो की समानता पूर्व काल की अपेक्षा अधिक समान है — इसलिए जो कुछ हो चुका है, वह इतना वृहद् है कि हम उससे इस बात की कल्पना नही कर सकते कि अभी कितना होना शेष है। यह सारी पुस्तक, जो जनता के सामने प्रस्तुत है, लेखक के मस्तिष्क मे उत्पन्न एक प्रकार के धार्मिक आतंक की अभिव्यक्ति से लिखी गयी है। यह आतंक लेखक के मस्तिष्क मे उस अदम्य क्रान्ति के विचार से है, जो शताब्दियो से हर कठिनाई का सामना करते हुए आगे बढी है और आज भी जो अपने द्वारा किये गये विध्वंस के

बीच निरन्तर आगे बढ रही है, पैदा हुआ था। यह आवश्यक नहीं कि ईश्वर स्वय सम्भाषण करे, जिससे हम उसकी इच्छा के असंदिग्ध लक्षणों को ज्ञात कर सके। प्रकृति की स्वाभाविक गति और घटनाओ की स्थिर मनोवृत्ति क्या है—इतना मालूम करना पर्याप्त होगा। विशिष्ट अलौकिक शक्ति के बिना, मै यह जानता हूँ कि ग्रह, ईश्वर के हाथो निर्धारित, अपने पथ में परिभ्रमण करते है।

यदि हमारे युग के मनुष्य सतर्क निरीक्षण और निष्कपट गूढ विचार से सहमत हो जॉय कि सामाजिक समानता का क्रमिक और प्रगतिशील विकास उनके इतिहास का एक साथ ही भूत और भविष्य है, तो एकमात्र यही अनुसधान परिवर्तन को ईश्वरीय आदेश का पवित्र स्वरूप प्रदान कर देगा। उस स्थिति मे प्रजातत्र को नियत्रित करने का प्रयत्न ईश्वरीय इच्छा का विरोध करना होगा और तब राष्ट्र ईश्वर द्वारा निर्धारित सामाजिक भाग्य को सर्वश्रेष्ठ बनाने के लिए विवश हो जायेंगे।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे युग के ईसाई राष्ट्र अत्यन्त भयावह अधिदृश्य उपस्थित करते है। उन्हे प्रोत्साहित करनेवाली क्रिया पहले से ही इतनी सशक्त है कि उसे रोका नही जा सकता—परन्तु फिर भी वह अब तक इतनी तीव्रगामी नही हुई है कि उसका मार्गदर्शन न किया जा सके। अभी तक भाग्य उन्ही के हाथों मे है, परन्तु है थोडे समय के लिए ही—और जो अब और अधिक उनके पास सम्भवत नही रह सकेगा।

वर्तमान समय मे उन लोगो का, जो हमारे कार्यों का निर्देशन करते है, यह प्रथम कर्त्तव्य हो जाता है कि वे प्रजातत्र को शिक्षित करे, यदि सम्भव हो तो उसके धार्मिक विश्वास को फिर से जाग्रत करे, उसके नैतिक आचरण को शुद्ध करे, उसकी गतिविधियो को नियमित करे, उसकी अनभिज्ञता को कार्य-व्यापार के ज्ञान की उत्तरोत्तर वृद्धि से और उसके अन्धविश्वासो को उसके वास्तविक हितों की जानकारी से प्रतिस्थापित करे, और समय तथा स्थान के अनुकूल अपनी सरकार का निर्माण करे और युग की घटनाओ और व्यक्तियो के अनुरूप उसका रूप निर्धारित करे। अत: नये विश्व के लिये एक नये राजनीतिक विज्ञान की आवश्यकता है।

तथापि हम इन्ही बातो पर बहुत कम सोचते है। गति के तीव्र प्रवाह मे बहते हुए हम अपनी दृष्टि बडे हठपूर्वक उन अवशेषो पर गड़ाये रखते है, जिन्हे

सम्भवतः हम अपने पीछे सुदूर किनारो पर छोड आये हैं—जबकि धारा बडी तेजी से बहाते हुए हमे गहरे भँवर मे पीछे की ओर खीच कर ले जाती है।

यूरोप के किसी भी देश में ऐसी महान् सामाजिक क्रान्ति ने, जिसका मैंने अभी अभी वर्णन किया है, इतनी द्रुतगति से प्रगति नही की, जितनी कि फ्रास मे; परन्तु उसका विकास विना किसी मार्गदर्शन के हुआ है। राज्य के प्रमुखो ने इसके लिए किसी प्रकार की तैयारी नही की और इसने विना उनकी सहमति और विना उनके ज्ञान के प्रगति की है। राष्ट्र की अत्यन्त शक्तिशाली, अत्यन्त बौद्धिक और अत्यन्त नैतिक जातियो ने कभी उसका मार्गदर्शन करने के उद्देश्य से उस पर नियंत्रण नही रखा। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रजातन्त्र को उसकी उग्र अन्तः प्रवृत्तियो के ऊपर छोड़ दिया गया और उसका विकास उन बच्चों की भाँति हुआ जिन्हे माता-पिता का मार्गदर्शन नही मिलता, जो सार्वजनिक गलियो मे अपनी शिक्षा प्राप्त करते है और जो केवल समाज के अवगुणो और बुराइयो से परिचित है। उसका अस्तित्व प्रत्यक्षतः अज्ञात था, जब उसने एकाएक उच्च क्षमता प्राप्त कर ली। तब हरेक ने उसकी इच्छाओ के सम्मुख अपने को समर्पित कर दिया और शक्ति के देवता के रूप मे उसकी पूजा की गयी। तत्पश्चात् जब अपनी ही ज्यादातियों से क्षीण होगयी तो विधायको ने उसको सुधारने और उसकी बुराइयो का निराकरण करने के स्थान पर उसका विनाश करने के लिये अधीरता से कदम उठाया। उसको शासन के योग्य बनाने का प्रयत्न कभी नही किया गया, परन्तु सभी उसको सरकार से बाहर रखने पर तुले हुए थे।

इसका परिणाम यह हुआ है कि कानूनो, विचारो, रीतियों और आचारो मे, परिवर्तन के विना ही, जो इस प्रकार की क्रान्ति को लाभदायक बनाने के लिए आवश्यक था, समाज में प्रजातान्त्रिक क्रान्ति घटित हो गयी है। अतः हमारे समाज मे ऐसे प्रजातंत्र की स्थापना हुई जिसमें न तो उसकी बुराइयो का शमन हुआ, और न उसके स्वाभाविक गुणों का प्रादुर्भाव और यद्यपि हम उसकी बुराइयो से परिचित हैं, तथापि उससे हमे जो लाभ मिलते हैं, उससे हम अनभिज्ञ हैं।

जिस समय यूरोप के राष्ट्रों पर कुलीनतंत्र द्वारा समर्थित राज-सत्ता शान्ति-पूर्वक शासन कर रही थी, समाज के पास, उसकी दारुण दशा में, सुख के ऐसे अनेक स्रोत थे, जिनकी कल्पना अथवा सराहना अब, मुश्किल से की जाती है। राजा की प्रजा के एक भाग की शक्ति उसके अत्याचार के विरुद्ध एक अलंघ्य बाधा के रूप में थी और राजा को, जो उस स्वरूप का अनुभव करता था, जो

जनता की दृष्टि मे प्राय दैवी स्वरूप था, जिस सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था, उसी के कारण वह अपनी सत्ता का न्यायोचित प्रयोग करता था। कुलीन व्यक्ति, जो जनसाधारण के ऊपर प्रतिष्ठित थे, उन लोगो के प्रति स्थिर और कल्याणकारी अभिरुचि प्रकट करने के लिए बाध्य थे, जिस प्रकार कोई गडरिया अपनी भेडो के प्रति रुचि महसूस करता है। वे लोग गरीबो को अपने समकक्ष रखे बिना उनके भाग्यो की चिन्ता अवश्य करते थे, क्योकि उनकी धारणा थी कि ईश्वर ने उनके कल्याण की देख-रेख का कार्य उन्हे सौप रखा है। लोग स्वयं अपनी सामाजिक स्थिति से भिन्न किसी अन्य सामाजिक स्थिति की कल्पना किये बिना, नेताओ के समकक्ष होने की आशा रखे बिना तथा अपने अधिकारो की चर्चा किये बिना उनसे लाभ प्राप्त करते थे। वे उन पर आसक्त हो गये जब वे विनम्र और न्यायी थे और उन्होंने बिना प्रतिरोध या दासता के अपने अधिकारो को समर्पित कर दिया जैसे कि वे ईश्वर को अनिवार्य रूप से प्रसाद चढाते है। इसके अलावा युग की रीति और रिवाजो ने भी अन्यायपूर्ण कार्यो के लिए कतिपय सीमाएँ निश्चित कर दी और हिंसा पर एक प्रकार का कानूनी प्रतिबन्ध निर्धारित कर दिया।

चूँकि कुलीन व्यक्ति को कभी भी यह आशंका नही हुई कि कोई भी व्यक्ति उसे विशेषाधिकारो से. जिन्हे वह वैधानिक समझता है, वचित कर सकता है और चूँकि गुलाम ने अपनी खुद की हीनता को हमेशा प्रकृति की अपरिवर्तनीय व्यवस्था के परिणाम के रूप मे स्वीकार किया, अत यह सहज ही कल्पना की जा सकती है कि दोनो वर्गो के मध्य कुछ पारस्परिक सद्भाव का विनिमय भाग्य द्वारा प्रदान किये गुणो के आधार पर विभिन्न रूप मे कैसे हुआ! तब समाज मे असमानता और दुराचारिता देखने को मिली, परन्तु किसी भी श्रेणी के मनुष्यो की आत्माओ का पतन नही हुआ। मनुष्य शक्ति के प्रयोग से भ्रष्ट नही होते और न वे आज्ञाकारिता के स्वभाव से पतित, परन्तु ऐसा तभी होता है जब वे ऐसी शक्ति का प्रयोग करते है और उस शासन की आज्ञा मानते है, जिन्हे वे शोषक और उत्पीडक समझते है।

एक ओर धन, शक्ति और अवकाश के साथ विलास की परिष्कृति, रुचि का लालित्य, विनोद का आनन्द और कलाओ की सस्कृति थी और दूसरी ओर श्रम, मूर्खता और अज्ञान था। परन्तु इस अशिष्ट और अज्ञानी जनसमूह मे भी सशक्त उद्वेगो, उदार विचारो, गहरे धार्मिक विश्वासो और प्रखर गुणो का मिलना असामान्य नही था।

इस प्रकार सघ्रठित सामाजिक स्थिति अपने स्थायित्व, अपनी शक्ति और इन सबसे ऊपर अपने गौरव का दावा कर सकती थी।

परन्तु अब स्थिति बदल चुकी है। धीरे-धीरे श्रेणियो के भेद समाप्त हो गये ह। वे दीवारे, जिन्होने कभी मनुष्यो को एक दूसरे से अलग किया था, ढह रही है, सम्पत्ति विभाजित हो गयी है, शक्ति अनेको मे बंटी है, बुद्धि की ज्योति फैली है और सभी श्रेणियो की योग्यताएँ समान रूप से निर्मित हुई है। राज्य प्रजातान्त्रिक हुए है और प्रजातन्त्र के साम्राज्य ने धीरे-धीरे और शान्ति के साथ सस्थाओ और राष्ट्र की रीतियो और आचारो मे प्रवेश पा लिया है।

मै ऐसे समाज की कल्पना कर सकता हूँ, जहाँ सारे व्यक्ति कानूनो के प्रति स्वयं को उनका रचियता समझकर एक-सा प्रेम और आदर समर्पित करेगे, जिसमे सरकार की सत्ता के प्रति सम्मान का भाव आवश्यकता के बतौर प्रकट किया जायगा न कि दैविक रूप मे, जिसमे मुख्य मैजिस्ट्रेट के प्रति प्रजा की राज्यभक्ति कोई उत्तेजक उद्वेग न होकर शात और विवेकपूर्ण समझौता होगा। हर व्यक्ति के पास उसके अधिकार रहेगे, जिन्हे यथापूर्ण बनाये रखने की उसमे आस्था होगी और सभी वर्गो के बीच एक प्रकार का मानवीय विश्वास और पारस्परिक सद्व्यवहार बना रहेगा तथा इसी प्रकार वे अहमन्यता और समान रूप से दासता से मुक्त रहेगे। लोग अपने खुद के वास्तविक हितो से पूर्ण परिचित होगे और उन्हे इस बात का ज्ञान होगा कि समाज की सुविधाओ से लाभ उठाने के लिए उसकी आवश्यकताओ की पूर्ति करना आवश्यक है। तब ऐसे समाज मे नागरिको के स्वैच्छिक सगठन कुलीन व्यक्तियो के निजी प्रयत्नो का स्थान ग्रहण कर लेगे और उसी प्रकार समाज की निरंकुशता और क्रूरता से रक्षा की जायगी।

मै स्वीकार करता हूँ कि इस प्रकार निर्मित प्रजातान्त्रिक राज्य मे समाज की गति स्थिर नही होगी, परन्तु सामाजिक संघटन की अन्त प्रेरणा को नियमित किया जा सकेगा और उसे प्रगतिशील बनाया जा सकेगा। यदि ऐसे समाज मे कुलीनतंत्र जैसी तडक-भडक नही मिलेगी, तो उसकी तुलना मे अवसाद भी कम होंगे, आनन्दोपभोग कम हो सकते है, परन्तु आराम के आनन्द अधिक सामान्य होगे, विज्ञान अपूर्ण रूप से विकसित होगे, परन्तु अज्ञान भी कम देखने को मिलेगा, भावनाओ की तीव्रता का शमन होगा और राष्ट्र की प्रवृत्ति कोमल हो जायगी। ऐसे समाज मे पाप अधिक होगे, परन्तु महान अपराध कम होगे

उत्साह और दृढविश्वास के अभाव मे किसी राष्ट्रमण्डल के सदस्यों से, उनकी बुद्धि और उनके अनुभवों को अपील करके, महान् त्याग प्राप्त किये जा सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी निर्बलता की सुरक्षा के लिए अपने सहयोगियो के साथ मिलकर सघ निर्माण करने की एक सी आवश्यकता महसूस करेगा और चूँकि वह समझता है कि औरो की सहायता केवल इसी शर्त पर उसे मिल सकती है, जब वह खुद सबको सहायता देना स्वीकार कर ले। इसलिए वह शीघ्र ही समस्त समाज के हितो के साथ अपने निजी हितो को मिला देने के लिए तत्पर हो जायगा। यद्यपि समाज समष्टि रूपसे कम प्रतिभाशाली, कम गौरवपूर्ण, और सम्भवत कम शक्तिशाली होगा, परन्तु नागरिको का बहुमत अधिक मात्रा मे समृद्धि का उपभोग करेगा और लोग शान्त रहेगे । इसलिए नही कि अच्छी स्थिति के लिए होने वाले परिवर्तन के प्रति वे निराश है, परन्तु इसलिए कि उन्हे इस बात की चेतना है कि वे पहले से ही सम्पन्न है। यदि ऐसी स्थिति के सारे परिणाम अच्छे या उपयोगी नही होते है, तो कम से कम समाज उन सब को, जो अच्छे और उपयोगी होगे, उपयुक्त बना लेगा। एक बार और अन्तिम रूप से कुलीनतत्र की सामाजिक उपयोगिताओ का त्याग करने पर मानवता उन समस्त लाभों से, जो प्रजातत्र से प्राप्त हो सकते है, मुक्त हो जायेगी।

परन्तु यहाँ यह प्रश्न किया जा सकता है कि हमारे पूर्वजो की उन सस्थाओ, उन विचारो और उन रीति-रिवाजो के स्थान पर, जिनका हमने परित्याग कर दिया है, हमने नया क्या अपनाया है? राजा के प्रति जो लगाव था, वह अब नही रहा, परन्तु उसके स्थान पर कानूनो मे शाहीपन नही आया है। लोगो ने उस राजशाही सत्ता का तिरस्कार करना तो सीख लिया है, परन्तु उसका भय उन्हे अब भी है और यह भय, पूर्व में आदर और प्रेम से जितना दिया जाता था, उससे अधिक बलात् छीन लेता है। मेरा ऐसा विचार है कि हमने उस वैयक्तिक शक्ति को नष्ट कर दिया है, जो अकेली ही स्वेच्छाचारिता का सामना करने के लिए पर्याप्त थी, परन्तु परिवारो, निगमो और व्यक्तियो को जिन विशेषाधिकारो से वंचित किया गया है वे अब सरकार मे सन्निहित है। थोड़े-से व्यक्तियो की सत्ता का, जो कभी-कभी दमनकारी होते हुए भी बहुधा पुरातनवादी थी, स्थान समस्त समुदाय की निर्बलता ने ग्रहण कर लिया है।

सम्पत्ति के विभाजन ने अमीरो और गरीबो की पारस्परिक दूरी को कम कर दिया है, परन्तु ऐसा प्रतीत होगा कि दोनो को एक दूसरे के जितना अधिक ... लायेगे, उतनी ही अधिक घृणा एक दूसरे के प्रति होगी और वे

अधिक उग्रता से एक दूसरे से ईर्ष्या करेंगे और अधिक भयानकता से शक्ति प्राप्ति के अपने अधिकारो के लिए संघर्ष करेंगे। अधिकार की कल्पना दोनो मे से किसी पक्ष के लिए नही है और शक्ति दोनो को वर्तमान के लिए केवल तर्क और भविष्य के लिए केवल आश्वासन प्रदान करती है।

गरीब व्यक्ति अपने पूर्वजो के पूर्वाग्रहो को बिना उनके विश्वास के और अज्ञान को बिना उनके गुणो को अंगीकार किये, बनाये रखता है। उसने कार्यों का निरूपण करने के लिए व्यक्तिगत स्वार्थों के सिद्धान्त को, बिना उसकी उपयोगिता के विज्ञान को समझे, अंगीकार कर लिया है। उसकी स्वार्थपरता उतनी ही अंधी है, जितनी पूर्व मे दूसरो के प्रति उसकी भक्ति। यदि समाज मे शान्ति है, तो वह इसलिए नही कि वह अपनी शक्ति और अपने कल्याण के लिए सजग है, परन्तु इसलिए कि वह अपनी दुर्बलताओ और क्षीणताओ से भयभीत है और इस बात को जानता है कि उसका एक प्रयत्न ही समूचे जीवन को नष्ट कर सकता है। प्रत्येक को इस दुर्बलता का ज्ञान है, परन्तु किसी के पास इसे दूर करने का साहस या पर्याप्त शक्ति नही है। वर्तमान समय की अभिलाषाएँ असन्तोष, दुःख और आनन्द कोई प्रत्यक्ष या स्थायी परिणाम प्रदान नही करते, जैसे वृद्ध पुरुषो की कामुकता, जो नपुंसकता मे परिणत हो जाती है।

इसलिए हमने पुरानी परिस्थितियो से प्राप्त समस्त लाभो का अपनी वर्तमान स्थिति से कुछ भी क्षतिपूर्ति पाये बिना परित्याग कर दिया है। हमने कुलीन-तन्त्र को नष्ट कर दिया है और लगता है, जैसे हम बड़ी प्रसन्नता से उसके अव-शेषो का सर्वेक्षण करने और उनके बीच अपना झण्डा गाड़ने के लिए आतुर है।

बौद्धिक जगत जो असाधारण चित्र प्रस्तुत करता है, वह कम शोचनीय नही है। फ्रास के प्रजातंत्र ने, जिसके मार्ग मे बाधा उपस्थित की गयी या जिसे अराजक भावनाओ के सम्मुख परित्यक्त कर दिया गया, अपने मार्ग मे आने-वाली सभी वस्तुओ को फेक दिया और उसने जिसका विनाश नही किया, उसको हिला दिया। उसके साम्राज्य की धीरे-धीरे या शान्तिपूर्वक स्थापना नहीं हुई, परन्तु अव्यवस्थाओं और संघर्षमय आन्दोलनोके मध्य उसका अविरत विकास हुआ। संघर्ष की उत्तेजना मे प्रत्येक पक्षावलम्बी अपने विरोधियो के सिद्धान्तो और ज्यादतियो द्वारा अपने विचारो की स्वाभाविक सीमाओं से परे चला जाता है और अन्त मे अपने प्रयत्नो के उद्देश्यों का भी परित्याग कर देता है और ऐसी भाषा धारण करता है, जो उसकी

वास्तविक भावना या गुप्त अन्त प्रेरणाओ को अभिव्यक्त नही करती । अत. विचित्र गडबडी पैदा हो जाती है और विवश होकर हमे उसको देखना पडता है।

हमारी दृष्टि के सम्मुख जो घटनाएँ घटित हो रही है, उनसे बढकर कोई दु खद और दयनीय उदाहरण हमारे इतिहास मे है, ऐसा मुझे याद नही पडता । इन घटनाओ से ऐसा लगता है मानो वे स्वाभाविक बन्धन, जो मनुष्य के विचारों को उसकी अभिरुचि के साथ और उसके कार्यों को उसके सिद्धान्तों के साथ जोडते है, अब टूट चुके है, वह सहानुभूति, जो सर्वदा मानवता की भावनाओ और विचारो के बीच दिखायी पड़ती थी, समाप्त हो गयी है और समस्त नैतिक कानूनो की समरूपता समाप्त कर दी गयी है।

कुछ उत्साही ईसाई लोग आज भी हमारे बीच मौजूद हैं, जिनके मस्तिष्क भावी जीवन सम्बन्धी विचारो का पोपण करते है, और जो तत्परता से यह स्वीकार करते है, कि मानव स्वाधीनता का मूल ही समस्त नैतिक महानता का स्रोत है। ईसाई धर्म, जिसने उद्घोषित किया कि सारे मनुष्य ईश्वर की दृष्टि में समान है, यह मानने से इनकार नही करेगा कि सारे नागरिक, कानून के समक्ष बराबर है, परन्तु घटनाओ के विचित्र सयोग से, यह सिद्ध हो चुका है कि धर्म कुछ समय के लिए, प्रजातंत्र द्वारा निन्दनीय ठहरायी गयी सस्थाओ मे फँसा रहा और उसके द्वारा निरन्तर उस समानता का निषेध किया गया, जिसके प्रति उसका प्रेम था । यही नही, उसने शत्रु की तरह स्वाधीनता के मूल पर प्रहार किया, जिसे वह परम पूजनीय मानता था ।

इन धार्मिक मनुष्यो के साथ ही मैने कुछ ऐसे लोगो को देखा, जिनकी दृष्टि स्वर्ग की अपेक्षा इस पृथ्वी की ओर रहती है । ये लोग स्वाधीनता के समर्थक है, जो यह मानते है कि स्वाधीनता न केवल उच्च गुणो का स्रोत है, परन्तु अधिक विशेष रूप से समस्त ठोस गुणो की जड़ है और वे लोग उसके अधिकारों को सुरक्षित रखने की तथा मानव समाज को उसकी अनुकम्पा प्रकट करने की सदिच्छा रखते है । यह स्वाभाविक है कि वे धर्म की सहायता माँगने के लिए उत्प्रेरित हो जायँगे, क्योकि उन्हे इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि बिना नैतिकता के स्वाधीनता की और बिना विश्वास के नैतिकता की स्थापना नही हो सकती । परन्तु उनकी दृष्टि मे धर्म, विरोधियों के हाथों में रहा है और इसलिए वे और आगे जॉच न करके मौन रह जाते

है। उनमे से कुछ उस पर खुले रूप से प्रहार करते हैं और शेष उसकी रक्षा करने से भयभीत है।

पुराने समय मे दासता का समर्थन नीच और दास मनोवृत्ति के लोगो द्वारा किया जाता था, जब कि स्वतंत्र और दयालु लोग मानवता की स्वाधीनता की रक्षा करने के लिए बिना किसी आशा के निरन्तर संघर्ष करते रहे। परन्तु आज भी ऐसे उच्च और उदार चरित्र के व्यक्ति मिलते है जिनके विचार उनकी अभिरुचि से भिन्न है और जो दास-प्रथा की सराहना करते है, जिससे स्वयं उनको कभी वास्ता नही पडा। इसके विपरीत दूसरे लोग स्वाधीनता की बाते करते है, मानो वे इसकी पवित्रता और इसकी महानता का अनुभव करने मे समर्थ हो गये हो और पुरजोर शब्दो मे मानवता के लिए उन अधिकारो की माँग करते है, जिनको मान्यता देने से उन्होने हमेशा इन्कार किया है।

कुछ लोग गुणी और शान्त स्वभाव वाले होते है, जिनकी शुद्ध नैतिकता, शात स्वभाव, ऐश्वर्य और प्रतिभा उन्हे आस-पास की जनसंख्या का नेतृत्व करने के योग्य बनाती है। देश के प्रति उनका प्रेम निष्कपट होता है और वे उसके कल्याण के लिए बडे-से-बडा उत्सर्ग करने के लिए तैयार रहते है, परन्तु सभ्यता उन्हे हमेशा अपने विरोधियो के बीच पाती है। ये लोग उसकी बुरी बातो को उसकी अच्छाइयो के साथ मिला देते है और उनके मस्तिष्क मे यह बात जमी रहती है कि बुराई को उसकी विशिष्टता से विलग नही किया जा सकता। इन्ही लोगो के निकट मै ऐसे लोगो को देखता हूँ, जिनका उद्देश्य मानवता को सार्थक करना, बिना यह देखे कि क्या न्यायोचित है, लाभ उठाने के लिए प्रयत्न करना, बिना विश्वास के ज्ञान प्राप्त करना और गुणों के बिना समृद्धि पाना है। ये लोग अपने को आधुनिक सभ्यता के सिरमौर समझते है, अपने को उद्द-ण्डता से उसका अगुआ बना लेते है, और ऐसे स्थान पर अपना अधिकार कर लेते है जिसके लिए वे पूर्णतः अयोग्य है।

तब हम कहाँ है?

धार्मिक लोग स्वाधीनता के शत्रु है और स्वाधीनता के मित्र धर्म पर प्रहार करते है, बुद्धिमान और कुलीन व्यक्ति पराधीनता का समर्थन करते है और अत्यन्त निकृष्ट और नीच व्यक्ति स्वतत्रता का उपदेश देते है, ईमानदार और जागरूक नागरिक प्रगति के विरुद्ध है, जब कि बिना देशभक्ति और सिद्धान्तो वाले पुरुष अपने को सभ्यता और बुद्धि का देवदूत मानते है। क्या हमारी पिछली शताब्दियो मे यही स्थिति थी? और क्या मनुष्य हमेशा वर्तमान की

भॉति ऐसे ससार मे ही रहे हैं, जहॉ सारी वस्तुओं के स्वाभाविक सम्बन्ध छिन्न-भिन्न है, जहॉ बिना प्रतिभा के गुण है और बिना आदर के प्रतिभा है, जहाँ व्यवस्थित जीवन का प्रेम दमन की प्रवृत्ति से और स्वतंत्रता के पवित्र सिद्धान्त कानून के अपमान से मिल गये है, जहॉ मानव-क्रियाओ पर विवेक द्वारा डाला जाने वाला प्रकाश मंद है और जहॉ कभी यह मालूम नहीं होता कि क्या निषिद्ध या अनिषिद्ध है, क्या आदरणीय या लज्जाजनक है, क्या सत्य या झूठ है।

मै ऐसा विश्वास नही कर सकता कि ईश्वर ने मनुष्य की रचना उन मानसिक पीडाओ से, जो हमे घेरे हुई है, अविराम सघर्ष करने के लिए की है। ईश्वर ने यूरोप के समुदायों के लिए शात और अधिक निश्चित भविष्य बनाया है। मै उसकी मंशा से अनभिज्ञ हूॅ, परन्तु चूॅकि मै उसकी गहराई तक नही जा सकता इसलिए उस पर विश्वास न करूॅ, ऐसा नही होगा। मैने उसके न्याय की अपेक्षा स्वय अपनी योग्यता पर अविश्वास किया है।

विश्व मे एक ऐसा देश है, जहॉ ऐसा प्रतीत होता है कि महान सामाजिक क्राति, जिसके सम्बन्ध मे मै चर्चा कर रहा हूॅ, अपनी स्वाभाविक सीमाओ तक पहॅुच चुकी है। वह सरलता और शान्ति के साथ कार्यान्वित की गयी है अथवा कहना यह चाहिए कि देश बिना निजी क्रान्ति के ही उस प्रजातान्त्रिक क्रान्ति का जिसके मध्य से होकर हम गुजर रहे है, फल काट रहा है।

सत्रहवी शताब्दी के प्रारम्भ मे अमरीका के तटो पर उपनिवेश बसाने वाले उत्प्रवासियों ने किसी तरह प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त को उन समस्त सिद्धान्तो से, जिन्हे अपनाकर यूरोप के प्राचीन समुदायों से उन्हे टक्कर लेनी पडी थी, विलग करके उसका बीजारोपण केवल नयी दुनिया मे किया। इसी कारण वही पर यह सिद्धान्त पूर्ण स्वतंत्रता के साथ फैल सका और शाति के साथ देश के रीति-रिवाजों को प्रभावित कर वहॉ के कानूनो को नया रूप दे सकने मे समर्थ रहा।

मुझे यह बात असन्दिग्ध प्रतीत होती है कि किसी-न-किसी समय अमरीकियों की भॉति हम लोग प्राय: पूर्णत परिस्थिति की समानता प्राप्त कर लेगे, परन्तु इससे मेरा तात्पर्य यह नही है कि हमे भी आवश्यक रूप से उन्ही राजनीतिक परिणामो को प्राप्त करना होगा जो अमरीकियों ने समान सामाजिक संघटन से प्राप्त किये हैं। मैं यह नही मानता कि उन्होंने जिस प्रकार की शासन-पद्धति को ---ा है, वह प्रजातंत्र की एक मात्र शासन-पद्धति है, परन्तु चूॅकि दोनो देशों

के कानूनो और रीति-रिवाजो का मूल स्रोत एक ही है, इसलिए हमारे लिए यह ज्ञात करना कि दोनो देशो ने क्या परिणाम निकाले है, अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

इसलिए यह बात नही है कि मैने केवल स्वाभाविक जिज्ञासा को शात करने के निमित्त ही अमरीका का अध्ययन किया है, परन्तु मेरी इच्छा वहाँ की शिक्षापूर्ण बातो की जानकारी प्राप्त कर लेने की रही है, जिससे हम स्वयं लाभ उठा सके। जो कोई यह कल्पना करेगा कि मैने प्रशंसा करने के उद्देश्य से लिखा है, वह असाधारण रूप से गलती करेगा और यह पुस्तक पढ़ने पर उसे मालूम होगा कि इस प्रकार का उद्देश्य मेरा नही था। और न मेरा उद्देश्य किसी प्रकार की शासन-पद्धति का विशेषतः समर्थन करना रहा है, क्योकि मेरा यह मत है कि नितान्त श्रेष्ठता शायद ही कानूनो की किसी पद्धति मे देखने को मिल सकती है। वह सामाजिक क्रान्ति, जिसे मै अवश्यंभावी समझता हूँ, मानवता के लिए लाभदायक है या हानिकारक, यह बताने तक का मैने प्रयत्न नही किया। मैने इस क्रान्ति को उस तथ्य के रूप मे, जो पहले से पूर्ण हो चुका है या पूर्ण होने को है, मान्यता प्रदान की है और मैने उन देशो मे से जहाँ यह क्राति हो चुकी है, उस देश का चुनाव किया है, जहाँ यह अत्यन्त शान्ति और अत्यन्त परिपूर्णता से हुई है, ताकि हम उसके स्वाभाविक परिणामो को स्पष्टतया समझ सके और यदि सम्भव हो तो उन साधनो को ढूँढ सके, जो मानवता के लिए लाभकारी सिद्ध हो। मै यह स्वीकार करता हूँ कि अमरीका मे, मैने अमरीका से अधिक देखा है, मैने प्रजातंत्र की साक्षात् प्रतिमूर्ति को उसकी प्रवृत्तियो, उसके लक्षण, उसके पूर्वाग्रहो और उसके भावावेगो के साथ ढूँढने का प्रयत्न किया है, जिससे हम यह सीख सके कि हमे उसकी प्रगति से कितना भय या कितनी आशा रखनी है।

इस पुस्तक के प्रथम भाग मे अमरीका के प्रजातंत्र द्वारा, जिसे बिना किसी नियंत्रण के उसकी अन्तर्निहित प्रवृत्तियो के सम्मुख छोड दिया गया है, कानूनो को प्रदान की गयी दिशा को, उस मार्ग को, जो वह सरकार के लिए निर्देशित करता है तथा कायो पर उसके प्रभाव को दिखाने का मैंने प्रयत्न किया है। मैने यह भी ढूँढने का प्रयत्न किया है कि उससे क्या हानि और लाभ है। अमरीकियो द्वारा उसका मार्ग निर्देशन करने के लिए जो सतर्कता रखी जाती है और जिन बातो की ओर ध्यान नही दिया जाता है, उसका मैंने परीक्षण किया है मैने उन कारणो पर भी प्रकाश डाला है, जो प्रजातंत्र को समाज पर शासन करने के लिए समर्थ बनाते हैं। मै यह नही जानता कि

अमरीका मे मैंने जो कुछ देखा, उसे पूर्ण रूप से स्पष्ट करने मे सफल रहा हूँ, परन्तु मुझे पूर्ण निश्चय है कि यही मेरी सद्‌भावना रही है और जानबूझ कर मैने विचारो को तथ्यो मे परिणत करने के स्थान पर तथ्यो को विचारो मे वदलने का प्रयत्न नही किया है।

जव कभी किसी विषय का प्रतिपादन लिखित दस्तावेज द्वारा हो सकता था, मैने मूल पुस्तक और अत्यन्त विश्वसनीय और स्वीकृत ग्रन्थो की सहायता ली। जब कभी उस देश के विचारों, राजनीतिक प्रथाओ या रीति-रिवाजो के सम्बन्ध मे प्रकाश डालने की आवश्यकता हुई, मैने इस सम्बन्ध मे मिलनेवालो मे अत्यन्त जागरूक लोगो से विचार-विमर्श करने का प्रयत्न किया। यदि किसी समस्या का पहलू महत्वपूर्ण या सदेहात्मक हुआ, तो मुझे एक प्रमाण से सतोष नही हुआ, बाल्कि अनेक साक्षियो के विचारो के आधार पर मैंने अपना मत वनाया। यहाँ पाठक को अनिवार्यतः मेरे शब्दो पर विश्वास करना चाहिए। जो कुछ मैने कहा है उसके प्रमाण के रूप मे मै ऐसे लोगों का नाम प्रायः उद्‌धृत कर सकता था, जो उससे परिचित है या जिनसे परिचित होना वाछनीय है, परन्तु मै बडी सतर्कता से इस प्रणाली से दूर रहा हूँ। नवागन्तुक प्राय· अपने आतिथेय (मेजबान) के पास बैठकर उन महत्वपूर्ण घटनाओ को सुनता है, जिन्हे सम्भवतः वह मेजबान अपने साथियो से छिपाकर रखता है। मेजवान को अतिथि के सयमित मौन से बडी तसल्ली होती है और चूँकि नवागन्तुक थोड़े दिनो के लिए ही रहता है, इसलिए उसे अपने अविवेक का सारा भय जाता रहता है। मैने बडे ध्यान से इस प्रकार के वार्तालाप को तत्काल लिख लिया, परन्तु ये नोट मेरे सग्रह से वाहर कभी नही आयेगे। मै उन नवागन्तुको की तालिका मे, जो उदार आतिथ्य-सत्कार का बदला उससे उत्पन्न मानसिक वेदना और क्रोध से चुकाते है, नाम लिखाने की अपेक्षा अपने वक्तव्यो की सफलता को हानि पहुँचाना अधिक पसन्द करूँगा।

मै अच्छी तरह जानता हूँ कि मेरे द्वारा हर प्रकार की सतर्कता रखे जाने पर भी, यदि कोई इस पुस्तक की आलोचना करना चाहेगा, तो उसके लिए इससे सरल कोई वात नही होगी।

मैं समझता हूँ कि इस पुस्तक का सूक्ष्म अध्ययन करने वाले पाठक सारी पुस्तक मे एक मुख्य विचार पायेगे, जो उसके अनेक भागो को एक श्रृंखला मे बॉधता है। परन्तु विषयो की विभिन्नता, जिन पर मुझे विचार पडा है, वहुत ज्यादा है और मै जिन तथ्यो का उद्धरण देता हूँ, उनमे से

एक असम्बद्ध तथ्य को अथवा मेरे द्वारा प्रस्तुत किये गये विचारो मे से एक सम्बद्ध विचार का विरोध करना कठिन नही होगा।

मुझे आशा है कि जिस भावना से मैने श्रम किया है उसी भावना से यह पुस्तक पढ़ी जायगी और सामान्य दृष्टि से उसका मूल्याकन किया जायगा; क्योकि मैने स्वय अपना मत किसी एक विशेष कारण के आधार पर नही, परन्तु सामान्य प्रमाणो के आधार पर बनाया है।

यह नही भूल जाना चाहिए कि जो लेखक यह चाहता है कि उसे ठीक तरह से समझा जाय, वह अपने विचारो को उच्चतम सैद्धान्तिक परिणामो की ओर ढकेल देता है और प्रायः उन्हे असत्य और अव्यावहारिक सीमा पर लाकर छोड देता है, क्योकि कभी-कभी कार्य मे तर्क के नियमो का उल्लंघन करना पडता है। सम्भाषण मे ऐसा नही होता और मनुष्य के लिए अपनी भाषा के प्रतिकूल रहना उतना ही कठिन है, जैसे अपने आचरण के अनुकूल रहना।

उपसंहार मे, मै स्वय अपने उस दृष्टिकोण को प्रकट कर देना चाहता हूँ जिसे अधिकाश पाठक इस पुस्तक का मुख्य दोष बतायेगे। यह पुस्तक किसी भी विशेष दृष्टिकोण के पक्ष मे नही लिखी गयी है और न इस पुस्तक के लिखने का उद्देश्य किसी दल की सेवा या उस पर आक्रमण करने का रहा है। मैने इस कार्य का बीड़ा दूसरो से भिन्न अपना मत बनाने के लिए नही, परन्तु उन लोगो से कुछ और आगे की ओर विचार करने के लिए उठाया है। जबकि वे लोग केवल आनेवाले कल के कायो मे व्यस्त है, मैने सारे भविष्य का विचार किया है।

प्रथम भाग

१. आंग्ल अमरीकियों का मूल

जन्म लेने के बाद मनुष्य के प्रारम्भिक वर्ष अव्यक्त रूप से बाल्यकाल की चेष्टाओ और आनंद मे बीत जाते है। ज्यो–ज्यो वह बडा होता है, त्यो–त्यो उसकी सासारिकता बढती है, उसमे पुरुषोचित प्रौढता आती है और वह अपने हमजोलियो के सम्पर्क मे आने लगता है। उसी समय पहली बार हमारा ध्यान उसकी ओर आकर्षित होता है और अनुमान किया जाने लगता है कि अब उसमे परिपक्व अवस्था के दुर्गुणो और सद्गुणो का समावेश होने लगा है। मेरे ख्याल से यह बहुत बडी भूल है। हमे यह कार्य बहुत पहले शुरू कर देना चाहिए। हमे बच्चे की ओर तभी से ध्यान देने लगना चाहिए जब वह अपनी माँ की गोद मे पल रहा हो। उसके मस्तिष्क के धुंधले दर्पण पर पडनेवाले बाहरी दुनिया के प्रारम्भिक प्रतिबिम्बो और घटनाओ का हमे अवलोकन करना चाहिए। उसके विचारो की सुप्त शक्ति को जाग्रत करनेवाले प्रथम बोलों को सुनना चाहिए और उसकी प्रारम्भिक क्रियाओ को निकट से समझना चाहिए। इस प्रकार हम उसके जीवन को अनुशासित करनेवाले पूर्वाग्रह, स्वभाव और आसक्तियो को समझ सकेगे। कहने का तात्पर्य यह है कि समूचे मनुष्य को जानने के लिए 'पूत के पाँव पालने' मे ही देखने चाहिए।

राष्ट्रों का विकास भी लगभग इसी प्रकार होता है। उन सब पर उनके मूल उद्भव की कुछ-न-कुछ छाप रहती है। जो परिस्थितियाँ उनके जन्म के समय विद्यमान रहती है और उनके विकास मे योग प्रदान करती है, वे उनके सम्पूर्ण काल को प्रभावित करती है। यदि हम राज्यो के मूल तत्त्वो का ज्ञान प्राप्त करने और उनके इतिहास के प्राचीनतम स्मारको का परीक्षण कर लेने मे समर्थ हो, तो मुझे कोई सदेह नही कि हम उनके पूर्वाग्रह, स्वभाव तथा प्रबल आसक्तियो

का मूल कारण ढूँढ लेगे—अर्थात् उन समस्त तत्वो को खोज निकालेगे जिनसे राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण होता है। तभी ऐसे कतिपय रीतिरिवाजो का, जो आज के व्यवहारो से मेल नहीं खाते, ऐसे नियमो का, जो मान्य सिद्धान्तो के प्रतिकूल है और किसी टूटी हुई शृंखला के उन टुकड़ो की तरह, जो किसी प्राचीन प्रासाद के गुम्बद से बेमानी लटकते हुए कभी-कभी दिखायी देते है, तथा समाज मे यत्र-तत्र बिखरे हुए असम्बद्ध मन्तव्यो का हमे स्पष्टीकरण मिल जायगा। इससे कुछ राष्ट्रो के भवितव्य का ज्ञान भी हो सकेगा, जो किसी अज्ञात शक्ति से प्रेरित होकर ऐसे लक्ष्यो की ओर अग्रसर होते है, जिनका उन्हे स्वय कुछ पता नही होता। परन्तु अभी तक इस प्रकार की गवेषणाओ के लिए तथ्यो का सर्वथा अभाव रहा है और जन-समुदाय मे शोध की भावना का उदय काफी बाद मे हुआ और अन्ततोगत्वा जब लोगो ने अपने मूल उद्भव के बारे मे विचार करना प्रारम्भ किया तब पता चला कि काल-प्रवाह ने उसे पहले ही धुँधला कर दिया है अथवा अज्ञान और अहंकार ने सत्य पर पर्दा डालने वाली गाथाओ से उसे अलंकृत कर दिया है।

अमरीका ही एकमात्र ऐसा देश है, जहाँ समाज के स्वाभाविक और सुस्थिर विकास का प्रत्यक्ष दर्शन सम्भव हो सकता है और जहाँ राज्यो की भावी स्थिति पर उनके मूल उद्भव के प्रभाव को स्पष्टतः पहचाना जा सकता है। परिणामतः अमरीका मे उस वैशिष्ट्य के दर्शन स्पष्ट रूप से मिलते है, जिसे अन्य स्थानो पर पूर्ववर्ती काल के अज्ञान और असंस्कार ने हमारी गवेषणाओ से अब तक छिपा रखा है। जिस समय अमरीकी राज्यो की स्थापना हुई थी, उस समय से पर्याप्त निकट होने के कारण, जिससे उनके मूल तत्त्वो का सही-सही ज्ञान प्राप्त होता है और उस अवधि से पर्याप्त दूर होने के कारण, जिससे उनके कतिपय परिणामो के विषय मे निर्णय किया जा सकता है, ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे युग के व्यक्ति मानवीय घटनाओं की शृंखलाओ को अपने पूर्वजो की अपेक्षा अधिक दूर तक देख सकेगे। दैव कृपा से हमे एक ऐसी मशाल मिली है जो हमारे पूर्वजो को नसीब नही थी। इस प्रकार हमे विश्व-इतिहास के आधारभूत कारणो को, जिन्हे पूर्ववर्ती काल ने धुँधला बना दिया है, दीर्घ दृष्टि से देखने का अवसर प्राप्त हुआ है। यदि हम अमरीका के इतिहास का अध्ययन कर लेने के पश्चात् उसकी सामाजिक और राजनीतिक स्थिति का ध्यानपूर्वक पर्यवेक्षण करे तो हमे इस बात का पूर्ण विश्वास हो जायगा कि वहाँ कोई ऐसी धारणा, प्रथा और कानून नही

है, बल्कि मै तो यहाँ तक कहूँगा कि कोई ऐसी अभिलिखित घटना भी नही है, जिसका स्पष्टीकरण वहाँ की जनता के मूल उद्‌भव द्वारा न किया जा सकता हो। इस पुस्तक के पाठक प्रस्तुत अध्याय मे उन सभी बातो का, जिनका आगे उल्लेख आयेगा, साराश और लगभग पूरी पुस्तक की कुजी पा सकेगे।

वे प्रवासी, जो समय–समय पर उस क्षेत्र मे बसने के लिए आये और जो अब अमरीकी सघ मे है, अनेक बातो मे एक दूसरे से भिन्न थे, उनके उद्देश्य एक जैसे नही थे और वे भिन्न-भिन्न सिद्धान्तो के माननेवाले थे। फिर भी उन लोगो की कई बाते समान थी और उन्हे एक जैसी परिस्थिति मे रहना पडा था। भाषा का बन्धन सम्भवत सबसे अधिक शक्तिशाली और स्थायी है, जो मानवजाति को एक सूत्र मे आबद्ध रख सकता है। सभी प्रवासी एक ही भाषा बोलते थे। वे एक ही जाति के लोगो की सन्तान थे। वे उस देश मे पैदा हुए थे, जो शताब्दियो से गुटो के सघर्षो से आन्दोलित था और अन्त मे सभी दल स्वतः नियमो के अधीन रहने के लिए बाध्य हुए थे। उनकी राजनीतिक शिक्षा-दीक्षा ऐसी ही असस्कारी शाला मे हुई थी और वे अधिकार की अवधारणा और वास्तविक स्वाधीनता के सिद्धान्तो से अपने अधिकाश समकालीन यूरोप निवासियो की अपेक्षा अधिक परिचित थे। प्रथम निष्क्रमण के समय ही नगर निर्माण-पद्धति तथा स्वतंत्र सस्थाओ का फलदायक अकुर अग्रेजो के स्वभाव मे गहराई तक पैठ चुका था और उसी के साथ जन-सार्वभौमता का सिद्धान्त ट्यूडर राजवंश के मानस मे अपना घर कर चुका था।

दूसरी बात, जिसका उल्लेख बाद मे अनेक बार किया जायगा, न केवल अग्रेजो पर, अपितु उन सभी यूरोप-निवासियो पर लागू होती है जो नयी दुनिया मे एक के बाद दूसरे बसते गये। इन सभी यूरोपीय उपनिवेशो मे सपूर्ण लोकतंत्र के तत्व विद्यमान थे–भले ही तब तक उनका विकास न हुआ हो। इसके दो कारण थे। सामान्यत यह कहा जा सकता है कि अपनी मातृभूमि छोडने पर प्रवासियो मे एक दूसरे से श्रेष्ठ होने की भावना सामान्यतः नही रही थी। सुखी और शक्तिशाली लोगो को निर्वासन का दण्ड भोगना नही पड़ता और मनुष्यो के मध्य समानता स्थापित करने के लिए गरीबी तथा दुर्भाग्य से बढकर अन्य कोई वस्तु नही होती। फिर भी अनेक अवसरो पर उच्च श्रेणी के लोगों को राजनीतिक और धार्मिक सघर्षो का शिकार होकर अमरीका आना पडा। तब श्रेणियो की क्रमबद्धता के लिए कानून बने, परन्तु शीघ्र ही अनुभव

किया गया कि अमरीका प्रादेशिक कुलीनतंत्रता के लिए उपयुक्त नही है। उस ऊसर भूमि को कृषि-योग्य बनाने के लिए स्वयं भूस्वामी के अथक और अभिरुचिपूर्ण श्रम की आवश्यकता थी और जब भूमि तैयार हुई तो उसकी उपज एक साथ ही भूस्वामी और कृषक दोनो को समृद्ध बनाने के लिए अपर्याप्त सिद्ध हुई। तब भूमि, सहज ही छोटे–छोटे खण्डो मे विभाजित हो गयी, जिस पर भूस्वामी स्वयं खेती करता था। भूमि ही कुलीनतंत्र का आधार है, जिसकी जडे उस मिट्टी से चिपटी रहती है, जो उसका पोषण करती है, क्योकि कुलीनतंत्र का निर्माण न तो विशेषाधिकार से और न जन्म से, बल्कि भू-संपदा के पीढी-दर-पीढी हस्तान्तरित होने से ही होता है। किसी राष्ट्र मे अपरिमित सम्पदा और दरिद्रता हो सकती है, परन्तु सम्पत्ति जब तक भूसम्पत्ति नही होगी, तब तक वास्तविक कुलीनता नही हो सकती, बल्कि उसे केवल अमीरो और गरीबो के दो वर्ग कह सकते है।

जिस समय ब्रिटिश उपनिवेश बसे, उस समय उन सब मे अत्यधिक पारिवारिक एकरूपता थी। प्रारम्भ से ही ऐसा प्रतीत होता था कि उनमे उनकी मातृभूमि की कुलीनतात्रिक स्वतंत्रता का नही, प्रत्युत मध्यम और निम्नतर वर्गो की उस स्वतंत्रता का विकास होने वाला है, जिसका पूर्ण उदाहरण अभी तक विश्व के इतिहास मे नही मिलता। फिर भी उस सामान्य समरूपता मे अनेक महत्त्वपूर्ण भेद सुस्पष्ट थे, जिन्हे बता देना आवश्यक है। उस महान आग्ल अमरीकी परिवार मे दो शाखाएँ देखी जा सकती है, जो अब तक आपस मे पूरी तरह से मिश्रित हुए बिना पनपती रही हैं; उनमे से एक दक्षिण मे है और दूसरी उत्तर मे।

वर्जीनिया मे अग्रेजो का प्रथम उपनिवेश बसा, जिस पर १६०७ मे प्रवासियो ने अधिकार जमाया। सोने और चॉदी की खाने राष्ट्रीय सम्पत्ति के स्रोत है, ऐसी धारणा उस समय व्यापक रूप से सारे यूरोप मे फैली हुई थी। यह भ्राति बड़ी घातक थी। यूरोप के वे देश, जिन्होने इस भ्राति को प्रश्रय दिया, तबाह हो गये और उससे अमरीका मे जितनी जन-हानि हुई उतनी युद्ध और बुरे कानूनो के कारण भी न हुई होगी। जिन लोगो को वर्जीनिया भेजा गया था, वे लोग स्वर्ण की खोज करने वाले, साधन और चरित्र से हीन, केवल दुष्कर कार्यो मे रुचि रखनेवाले थे, जिनकी फसादी और अशान्त मनोवृत्ति ने नवजात उपनिवेश के लिए खतरा उत्पन्न कर दिया और उसकी प्रगति को अनिश्चित बना दिया। शिल्पकार और किसान बाद मे आये। यद्यपि वे

अधिक सदाचारी और व्यवस्थित जाति के लोग थे, परन्तु वे किसी भी दशा मे इग्लैण्ड की निम्न जातियो से बढ-चढ कर नही थे। इन नयी बस्तियो की स्थापना के पीछे न तो ऊँचे आदर्श थे, न आध्यात्मिक भावना थी। उपनिवेश अभी पूरी तरह से जम भी नही पाया था कि दास-प्रथा प्रारम्भ हो गयी। यह मुख्य तथ्य आचरण, कानूनो और दक्षिण के सम्पूर्ण भविष्य को अत्यन्त गहरे रूप से प्रभावित करने वाला था। दासता ... श्रम का निरादर है। इससे समाज मे आलस्य फैलता है और आलस्य के साथ–साथ अज्ञान, अहमन्यता, विलासिता और क्लेश पनपते है। इसीसे मानसिक शक्ति का ह्रास होता है और लोगो की क्रियाशीलता सुन्न हो जाती है। आग्ल आचरण से सयुक्त इस दास प्रथा के प्रभाव से ही दक्षिणी राज्यो की रीतियो और सामाजिक परिस्थितियो का पता चलता है।

उत्तर में इसी आग्ल चरित्र ने नितान्त भिन्न स्वरूप ग्रहण किया। वर्तमान सयुक्त–राज्य अमरीका की सामाजिक व्यवस्था के मूल मे जो दो या तीन मुख्य विचार है, उनका सम्मिलन सर्वप्रथम यही हुआ था। अब उनका प्रभाव समस्त अमरीकी जगत मे व्याप्त हो गया है। न्यू इग्लैण्ड की सभ्यता पहाडी पर प्रज्ज्वलित उस प्रकाशस्तम्भ के समान रही है, जो तुरन्त ही अपने आसपास उष्णता फैलाने के साथ-साथ सुदूरवर्ती क्षितिज को भी अपने प्रकाश से आलोकित कर देता है।

न्यू इंग्लैण्डके किनारो पर बसने वाले लोग अपने देश के अधिक स्वाधीन वर्गो मे से थे। अमरीका की भूमि पर उनके मिलन से समाज के एक नये रूप का उद्भव हुआ। उस समाज मे न तो लार्ड थे और न साधारण जन, बल्कि हम यो भी कह सकते है कि उस समाज मे न तो अमीर थे और न गरीब। आज के किसी भी यूरोपीय राष्ट्र के निवासियो की अपेक्षा उन लोगो मे अपनी जन-सख्या के अनुपात मे बुद्धि की मात्रा अधिक थी। सभी लोगो ने प्रायः बिना किसी अपवाद के, अच्छी शिक्षा-दीक्षा ग्रहण की थी। उनमे से अनेक अपनी प्रतिभा और गुणो के कारण यूरोप मे प्रसिद्ध हो चुके थे। अन्य उपनिवेशो की स्थापना बिना परिवारवाले साहसिक लोगो द्वारा की गयी थी। न्यू इग्लैण्ड के प्रवासी अपने साथ व्यवस्था और सदाचार के उच्च तत्वो को ले कर आये थे। वे अपनी पत्नियो और बाल-बच्चो सहित निर्जन तट पर उतरे थे, किन्तु अन्य सभी प्रवासियों से उनके मध्य जो विशेष अन्तर था, वह था, अपने कार्य मे निहित

उनका उद्देश्य। किसी आवश्यकता से देश छोड़ने के लिए वे विवश नही हुए थे। उन्होने जिस सामाजिक स्थिति का परित्याग किया, वह एक दुःख की बात थी और उनके जीविकोपार्जन के साधन निश्चित थे। निर्वासन की अवश्यम्भावी आपदाओ को सहन करने मे उनका लक्ष्य यही था कि वे किसी आदर्श की पूर्ति करना चाहते थे।

प्रवासी, जो अपने-आप को तीर्थयात्री कहा करते थे और जो उचित भी था, अग्रेजो के उस वर्ग के व्यक्ति थे, जिन्हें अपने सिद्धान्तो की कड़ी नैतिकता के कारण 'प्यूरिटन' (विशुद्धतावादी) की सज्ञा प्राप्त हो गयी थी। यह 'प्यूरिटनवाद' एक धार्मिक सिद्धान्त मात्र नही था, प्रत्युत वह अनेक बातो मे परिपूर्ण लोकतंत्र और गणतन्त्र के सिद्धान्तो से मेल खाता था। उसके प्रचण्डतम शत्रु उसकी इसी प्रवृत्ति के कारण उत्पन्न हुए थे। स्वदेश की सरकार द्वारा प्रपीड़ित किये जाने और समाज की आदतो से, जिनकी वे अपने सिद्धान्तों की कठोरता द्वारा निन्दा करते थे, संत्रस्त होने के कारण 'प्यूरिटन' विश्व के किसी उजाड़ और निर्जन स्थान की खोज मे चले, जहाँ वे अपने विचारो के अनुकूल जीवन निर्वाह कर सके और स्वतंत्रता के साथ भगवान की आराधना कर सके। 'प्यूरिटनवाद' धार्मिक सिद्धान्त से तनिक भी कम राजनीतिक सिद्धान्त नही था। प्रवासी ज्योही किसी निर्जन तट पर उतरते, उसी क्षण निम्न-प्रतिज्ञा के साथ समाज निर्माण करना उनका मुख्य कर्तव्य हो जाता ...

"हम ईश्वर को साक्षी करते है, एवमस्तु! हम निम्नांकित लोग शक्तिशाली सार्वभौम लार्ड सम्राट जेम्स, आदि-आदि की राजभक्त प्रजा है। ईश्वर के गौरव तथा ईसाई मत की उन्नति के लिए और सम्राट तथा राष्ट्र के सम्मान के लिए वर्जीनिया के उत्तरी भागो मे प्रथम उपनिवेश बसाने के उद्देश्य से हमने यह यात्रा की है। ईश्वर तथा एक-दूसरे की साक्षी मे हम उपस्थित लोग पवित्र भाव से और मिलजुलकर अपनी उन्नति और सुरक्षा के लिए तथा उपर्युक्त उद्देश्यो की पूर्ति के लिए एक नागरिक-राजनीतिक संघटन का निर्माण करते हैं। इसी हेतु हम समय-समय पर ऐसे उचित और समान कानूनो, अध्यादेशों, अधिनियमो, संविधानो और पदो का निर्देश, निर्माण और रचना करते हैं, जिन्हे सामान्य हित के लिए, जिसके प्रति पूर्ण रूप से आज्ञाकारी बने रहने का हम वचन देते हैं, अत्यन्त उपयुक्त और सुविधाजनक समझा जायगा।"

यह घटना १६२० मे हुई। तब से यह प्रवास निरन्तर चलता रहा। चार्ल्स प्रथम के सम्पूर्ण शासनकाल मे जिन धार्मिक और राजनीतिक उन्मादो ने ब्रिटिश साम्राज्य को उजाड बना दिया था, उनके कारण अमरीका के तट पर प्रति वर्ष सम्प्रदायो के नये-नये समुदाय आने लगे। इंग्लैण्ड मे मध्यम वर्गों पर 'प्यूरिटनवाद' का गहरा प्रभाव निरन्तर बना रहा। अधिकाशत प्रवासी इन्ही मध्यम वर्गों मे से आये थे। न्यू इग्लैण्ड की जनसख्या मे तीव्रगति से वृद्धि हुई और जब कि स्वदेश के निवासियो को पद की महंतशाहीने मनमाने ढग से वर्गो मे "विभाजित" कर दिया था, उपनिवेश के सभी भागों मे अधिकाधिक सर्वांगीण एकरूपता का नूतन दृश्य दिखायी देने लगा। प्राचीन सामान्तवादी समाज के मध्य से एक ऐसे पूर्ण प्रजातत्र का प्रारम्भ हुआ, जिसकी कल्पना प्राचीन व्यवस्था ने स्वप्न मे भी करने का साहस नही किया था।

अग्रेजी सरकार नये उपद्रवो और भावी क्रान्तियो के तत्वो को दूर करने वाले इस विशाल देशान्तरवास से अप्रसन्न नही थी। इसके विपरीत उसने इसको हर तरह से बढावा दिया। ऐसा जान पड़ता था कि उस के क़ानूनो के शिकजो से मुक्त होकर अमरीका की भूमि पर बसने वालो के सम्बन्ध मे उसे कोई परेशानी नही थी। न्यू इंग्लैण्ड मानो कल्पनाओ के स्वप्नो का देश और नयी खोज करने वालो के अपरिमित प्रयोगो का स्थल बन चुका था। ब्रिटिश उपनिवेशो ने हमेशा अन्य राष्ट्रो के उपनिवेशो की अपेक्षा अधिक आन्तरिक स्वाधीनता और अधिक राजनीतिक स्वतन्त्रता का उपभोग किया था और यही उनकी समृद्धि का एक प्रमुख कारण था। स्वाधीनता के इस सिद्धान्त को न्यू इग्लैण्ड के राज्यो मे जितने व्यापक रूप से व्यवहार मे लाया गया, उतना अन्यत्र कही भी नही।

इन नये उपनिवेशो मे लोगो को बसाने के लिए ब्रिटिश शासन द्वारा विभिन्न पद्धतियो से काम लिया गया। कभी सम्राट अपनी पसन्द का गवर्नर नियुक्त कर देता था, जो नयी दुनिया के किसी एक भाग पर सम्राट के नाम से और उस के तात्कालिक आदेशो के अन्तर्गत प्रशासन करता था। यह औपनिवेशिक पद्धति यूरोप के अन्य राष्ट्रो द्वारा भी अपनायी गयी। दूसरा तरीका यह भी था कि सम्राट द्वारा कोई विस्तृत भूखण्ड किसी एक व्यक्ति को या किसी कम्पनी को सुपुर्द कर दिया जाता था। ऐसी स्थिति मे समस्त दीवानी और राज-
…क अधिकार एक या एक से अधिक व्यक्तियो के हाथो मे रहते थे, जो सम्राट

के निरीक्षण और नियंत्रण के अधीन भूमि का विक्रय करते और शासन चलाते थे। अन्त मे एक तीसरी पद्धति यह थी कि प्रवासियो की निश्चित जनसंख्या को स्वदेश के संरक्षण के अधीन किसी राजनीतिक सस्था का निर्माण करने और स्वदेश के कानूनो के अनुसार अपना शासन-संचालन स्वयं करने की अनुमति दे दी जाती थी। उपनिवेश की यह पद्धति, जो स्वाधीनता के लिए अत्यन्त अनुकूल थी, केवल न्यू इंग्लैण्ड मे अपनायी गयी।

सन् १६२८ मे इस प्रकार का अधिकार-पत्र चार्ल्स प्रथम द्वारा उन उत्प्रवासियोको दिया गया था, जो मैसाचुसेट्सका उपनिवेश बसाने के लिए गये थे, परन्तु सामान्यतः न्यू इग्लैण्ड के उपनिवेशो को नही दिये गये थे, जब तक उनके अस्तित्व को आम तौर से मान नही लिया गया। प्लीमाउथ, प्रोवीडेन्स, न्यू हेवन, कनेक्टीकट और रोड द्वीप मातृभूमि की सहायता के बिना और प्रायः उसकी जानकारी के बिना ही स्थापित किये गये थे। उन उपनिवेशो मे नये-नये बसने वाले लोगों ने साम्राज्य के प्रधान से अपने अधिकारो को हासिल नही किया था, यद्यपि उन्होने उसकी सर्वोच्चता को मानने से इनकार नही किया। उन्होने अपने-आप को एक समाज के रूप मे संगठित किया और उसके तीस या चालीस वर्षों के बाद चार्ल्स द्वितीय के समय मे उनके अस्तित्व को राजकीय अधिकारपत्र द्वारा वैधानिक मान्यता दी गयी।

न्यू इंग्लैण्ड के अत्यन्त प्रारम्भिक समय के ऐतिहासिक एवं विधान सम्बन्धी अभिलेखो का अध्ययन करने मे इससे उस कडी को ढूंढने मे बहुधा कठिनाई होती है, जो उत्प्रवासियो का सम्बन्ध उनके पूर्वजो की भूमि के साथ जोड़ती थी। उन्होंने निरन्तर सार्वभौमिकता के अधिकारों का प्रयोग किया, अपने मजिस्ट्रेटो को नियुक्त किया, शान्ति स्थापित की या लडाई की घोषणा की, पुलिस व्यवस्था के नियम बनाये और कानून लागू किये, मानो उनकी वफादारी केवल ईश्वर के प्रति ही थी। इस समय के विधान से अधिक विलक्षण और साथ-ही-साथ अधिक शिक्षापूर्ण और कोई वस्तु नही हो सकती। उसी मे उस महान सामाजिक समस्या का, जिसे संयुक्त-राज्य अमरीका ने अब विश्व के सामने पेश किया है, हल निहित है।

विधायको का मुख्य कार्य समाज मे सुव्यवस्थित व्यवहार और सदाचरण को बनाये रखने का था। इस प्रकार हम देखते है कि उन्होने निरन्तर उन क्षेत्रो मे हस्तक्षेप किया, जिनका सम्बन्ध अन्तःकरण से था और

लगाये। न्यू इंग्लैण्ड के नगर मे प्रतिनिधित्व का कानून लागू नहीं हुआ था, परन्तु समाज के कार्यों पर विचार-विमर्श एथेन्स की तरह साधारण सभा द्वारा बाजार मे हुआ करता था।

अमरीकी गणतन्त्रो के इस प्रारम्भिक युग मे लागू किये गये कानूनो का अध्ययन करते समय शासन-विज्ञान एवं विधान–निर्माण के प्रगतिशील सिद्धान्त की उल्लेखनीय जानकारी से प्रभावित हुए बिना रहना असम्भव है। वहाँ समाज के सदस्यों के प्रति समाज के कर्तव्यों के सम्बन्ध में जो धारणाएँ बनायी गयी थीं, वे स्पष्टत. उस समय के यूरोपीय विधायको की अपेक्षा अधिक ऊँची और अधिक व्यापक है। वहाँ समाज पर ऐसे उत्तरदायित्व लाद दिये गये थे, जिनका वह अन्य स्थानों पर उपहास करता था। न्यू इंग्लैण्ड के राज्यों मे प्रारम्भ से ही गरीबों की स्थिति सुधारने के लिए व्यवस्था की गयी थी। उनकी देखरेख के लिए कड़े अधिनियम लागू किये गये थे। प्रत्येक नगर मे अभिलेख रखे जाने की व्यवस्था की गयी, जिसमे सार्वजनिक विचारों और नागरिको के जन्म, मृत्यु और विवाह को दर्ज किया जाता था। कर्मचारियों को उन अभिलेखों को रखने का आदेश दिया गया था। लावारिस पैतृक सम्पत्ति और सीमा-सम्बन्धी झगडों की मध्यस्थता और बहुत से दूसरे विभागों का प्रशासन अधिकारियों के हाथों सौंपा गया, जिनका मुख्य कर्तव्य समाज मे सार्वजनिक व्यवस्था बनाये रखना था। अनेक सामाजिक अभावों का, जिनका अनुभव फ्रास में आज भी अत्यन्त अपर्याप्त रूप से किया जाता है, पता लगाने और उन अभावों की पूर्ति करने के लिए विभिन्न प्रकार की हजारों छोटी–छोटी बातों के विषय मे कानून बनाये गये।

परन्तु अमरीकी सभ्यता के मूल स्वरूप के स्पष्ट दर्शन सार्वजनिक शिक्षण सम्बन्धी समादेशों से प्राप्त होते हैं। कानून मे घोषणा की गयी है ..“मनुष्यों को अशिक्षित रखकर, भाषा के प्रयोग से अलग रखकर बाइबिल के ज्ञान से वंचित रखना–यह उस दुष्ट छली शैतान का एक कार्य रहा है, परन्तु ज्ञान हमारे पूर्वजों की कब्रों मे गडकर न रह जाय, इस उद्देश्य से चर्च और कामनवेल्थ मे ईश्वर हमारे प्रयत्नों को योगदान देता है।” यही से प्रत्येक जिले मे पाठशालाएँ खोलने और उनकी सहायता के लिए इस नियम का उल्लंघन करने पर निवासियों पर भारी जुर्माना लगाने की धाराएँ निकलती हैं। उच्च श्रेणी के स्कूल इसी तरीके से अधिक जनसंख्यावाले जिलों मे खोले गये। म्यूनिसिपल संस्थाओं द्वारा अभिभावकों के लिए अपने बच्चों को स्कूल मे भेजना अनिवार्य था। इस नियम का

उल्लंघन करनेवाले सब लोगो पर जुर्माना लगाने का उन्हे अधिकार था और निरन्तर प्रतिरोध किये जाने पर समाज अभिभावक का स्थान ग्रहण कर बच्चे पर अधिकार कर लेता था तथा वह पिता से उन प्राकृतिक अधिकारो को छीन लेता था, जिनका प्रयोग वह ऐसे बुरे उद्देश्य के लिए करता था। पाठक इन कानूनो की प्रस्तावना के रूप मे अवश्य ही कहेगा कि अमरीका मे धर्मज्ञान का मार्ग है और धार्मिक कानूनो का पालन करने से मानव राजनीतिक स्वतंत्रता की ओर अग्रसर होता है।

१६५० मे अमरीकी समाज की जो स्थिति थी, उस पर सरसरी निगाह दौडाने के बाद यदि हम उस समय की यूरोप की स्थिति पर और अधिक विशेषता से महाद्वीप की स्थिति पर विचार करे, तो हमे आश्चर्य हुए बिना नही रह सकता। यूरोप के महाद्वीप पर सत्रहवी शताब्दी के प्रारम्भ मे निरंकुश राजतत्र ने प्रत्येक स्थान मे मध्यकुलीन और सामंती स्वाधीनता के अवशेषो पर आधिपत्य कर लिया था। यूरोप की शान-शौकत और साहित्य के मध्य अधिकार की भावना की जितनी पूर्ण रूप से उपेक्षा की गयी, उतनी अधिक उपेक्षा शायद कभी नही की गयी थी। जनता के मध्य इतनी कम राजनीतिक गतिविधि कभी देखने मे नही आयी, वास्तविक स्वतंत्रता के सिद्धान्तों को इतने कम व्यापक रूप से कभी प्रचारित नही किया गया और ठीक उसी समय यूरोप के राष्ट्र जिन सिद्धान्तो से घृणा करते थे अथवा जिन सिद्धान्तो से वे अपरिचित थे, वे सिद्धान्त नयी दुनिया के मरुस्थलो मे एक महान जनता के भावी धर्म के रूप मे घोषित और मान्य किये गये। मानव—मस्तिष्क के अत्यन्त साहसपूर्ण सिद्धान्तों को एक इतने तुच्छ समुदाय ने कार्यरूप मे परिणत किया कि किसी भी राजनेता ने उनकी ओर ध्यान देने का कष्ट नही किया और मनुष्यो की कल्पनाओ की नैसर्गिक मौलिकता ने विधान-निर्माण की एक अभूतपूर्व प्रणाली की सृष्टि की।

आग्ल अमरीकी सभ्यता के यथार्थ स्वरूप पर प्रकाश डालने के लिए मैं काफी कह चुका हूँ। वह दो भिन्न तत्वो का परिणाम है (और यह बात हमेशा ध्यान में रहनी चाहिए) जिनके बीच अन्य स्थानो पर बहुधा शत्रुता बनी रही है, परन्तु जो अमरीका मे सराहनीय रूप से एक दूसरे के साथ सम्बद्ध और सयुक्त कर दिये गये है। अब मैं धर्म-भावना और स्वतंत्रता की भावना का प्रकारान्तर से उल्लेख करता हूँ।

न्यू इग्लैण्ड मे बसनेवाले लोग साथ-ही साथ कट्टर सम्प्रदायवादी और नयी रीति-नीतियों को प्रारम्भ करनेवाले साहसिक व्यक्ति थे। यद्यपि उनके कतिपय धार्मिक विचारों की सीमाएँ सकीर्ण थी, तथापि वे समस्त राजनीतिक पूर्वाग्रहों से मुक्त थे। फलस्वरूप दो प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हुई, जो देश के आचरणों और कानूनो मे सर्वत्र दिखायी देती है। ये प्रवृत्तियाँ एक दूसरे से पृथक तो थीं, किन्तु एक दूसरे की विरोधिनी नही थीं।

कोई भी व्यक्ति यह सोच सकता है कि जिन व्यक्तियों ने एक धार्मिक विश्वास के लिए अपने मित्रो का, अपने परिवार का और अपनी मूल भूमि का परित्याग कर दिया था, वे उस कोष के अनुसधान मे ही पूर्णतया लगे रहेगे, जिसे उन्होंने इतने ऊँचे मूल्य पर खरीदा था। फिर भी हम देखते है कि वे समान उत्साह के साथ, धरती पर कल्याण और स्वतंत्रता लाने के लिए और स्वर्ग मे मुक्ति पाने के लिए भौतिक सम्पदा और नैतिक आचरण, इन दोनो की प्राप्ति मे जुटे है। उन्होने स्वेच्छा से सभी राजनीतिक सिद्धान्तो, सभी मानवीय कानूनो तथा संस्थाओ का रूपान्तरण और परिवर्तन किया। उन्होने समाज की उन सीमाओ को तोड दिया, जिनमे उन्होने जन्म लिया था। उन्होने उन पुराने सिद्धान्तो की, जिन्होने कई युगो तक विश्व का नियंत्रण किया था, अवज्ञा कर दी। उनके सामने सीमारहित जीवन-क्षेत्र और बिना क्षितिज के कार्यक्षेत्र खुला था। वे स्वत उसमे कूद पडे और प्रत्येक दिशा की ओर अग्रसर हुए। परन्तु राजनीतिक विश्व की सीमा पर पहुँच कर वे अपने आप ही रुक गये और उन्होंने भय के मारे अपनी प्रबलतम क्षमताओं के प्रयोग को अलग कर दिया। वे अब न तो सशय करते हैं और न नयी रीति-नीतियाँ प्रारम्भ करते है। वे पवित्र स्थल पर से पर्दा हटाने से भी दूर ही रहते है और उन सत्यो के समक्ष, जिन्हे वे बिना किसी वाद-विवाद के स्वीकार कर लेते है, पूर्ण श्रद्धा के साथ झुक जाते है।

इस प्रकार नैतिक विश्व मे प्रत्येक वस्तु वर्गीकृत, प्रणालीबद्ध, पूर्व-दृष्ट और पूर्व-निर्णीत है। राजनीतिक विश्व मे प्रत्येक वस्तु के लिए आन्दोलन किया जाता है, विवाद किया जाता है और प्रत्येक वस्तु अनिश्चित है। नैतिक विश्व मे निष्क्रिय आज्ञापालकता होती है, यद्यपि वह ऐच्छिक होती है, राजनीतिक विश्व मे अनुभव से घृणा करने वाली और समस्त सत्ता से द्वेष रखने वाली स्वाधीनता होती है। प्रत्यक्षतः परस्पर विरोधी ये दोनो प्रवृत्तियाँ एक दूसरे के विरुद्ध सघर्षरत होने से बहुत दूर है, वे एक साथ आगे बढती है और

एक दूसरे का समर्थन करती है। धर्म मे यह धारणा है कि नागरिक स्वतंत्रता मनुष्य की क्षमताओ को एक पुनीत कार्यक्षेत्र प्रदान करती है और राजनीतिक विश्व एक ऐसा क्षेत्र है, जो स्रष्टा द्वारा मस्तिष्क के प्रयत्नो के लिए तैयार किया गया है। स्वयं अपने क्षेत्र मे स्वतत्र और शक्तिशाली, अपने लिए सुरक्षित स्थान से सन्तुष्ट धर्म जब अपनी मूल शक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी भी वस्तु से असमर्थित मनुष्यों के हृदय पर शासन करता है, तब वह जितने निश्चित रूप से अपने साम्राज्य की स्थापना करता है, उससे अधिक निश्चित रूप से वह अपने साम्राज्य की स्थापना कभी नही करता।

स्वतंत्रता अपने समस्त सघर्षो और अपनी विजयो मे धर्म को अपना सहचर मानती है। वह उसे अपने शैशव का पालना और अपने अधिकारो का पुनीत स्रोत मानती है। वह धर्म को नैतिकता के लिए सरक्षण के रूप मे और नैतिकता को कानून की सर्वोत्तम सुरक्षा के रूप मे तथा स्वाधीनता के स्थायित्व के लिए दृढतम प्रतिज्ञा के रूप मे मानती है।

२—आंग्ल अमरीकियों की प्रजातांत्रिक सामाजिक स्थिति

सामाजिक स्थिति का निर्माण सामान्यतः परिस्थितियो, कभी—कभी कानूनो और बहुधा इन दोनो कारणो के मिलने के फलस्वरूप होता है, परन्तु जब एक बार उसकी स्थापना हो जाती है, तो उसे राष्ट्र के आचरण को नियमित रखने वाले सभी कानूनो, रीतियो और विचारो का वास्तविक उद्गम माना जा सकता है और वह जिस वस्तु को उत्पन्न नही करती, उसका रूपान्तरण करती है। यदि हम किसी राष्ट्र के विधान और आचरण से परिचित होना चाहते है, तो हमे उसकी सामाजिक स्थिति के अध्ययन से ही श्रीगणेश करना चाहिए।

'आंग्ल अमरीकियों की सामाजिक स्थिति का अनोखा लक्षण उसका सारभूत प्रजातंत्र है!'

अमरीकियों की सामाजिक स्थिति प्रधानत लोकतान्त्रिक है। उपनिवेशों के निर्माण के समय यह उसकी विशिष्टता थी और आज वह और भी अधिक उल्लेखनीय बन गयी है। ...न्यू इंग्लैण्ड के तटो पर बसने वाले उत्प्रवासियो

मे अत्यधिक समानता विद्यमान थी। सघ के उस भाग मे कभी कुलीनतत्र का अकुर तक पैदा नही हुआ था। वहाँ एक मात्र प्रतिभा का प्रभाव ही व्याप्त था। वहाँ के लोग ज्ञान और सद्गुण के प्रतीक के रूप में कुछ नामों की पूजा करने के अभ्यस्त थे।

हडसन के पूर्व मे इसी प्रकार की स्थिति थी, परन्तु उस नदी के दक्षिण-पश्चिम मे और फ्लोरिडा तक स्थिति भिन्न थी। हडसन के दक्षिण-पश्चिम मे स्थित अधिकाश राज्यो मे कुछ बडे सम्पत्तिशाली अग्रेज बस गये थे, जो अपने साथ कुलीनतंत्र के सिद्धान्त और इंग्लिश उत्तराधिकार-कानून लेकर आये थे। अमरीका मे शक्तिशाली कुलीनतत्र की स्थापना के असम्भव होने के कारणो का स्पष्टीकरण मैं कर चुका हूँ। ये कारण हडसन के दक्षिण-पश्चिम मे अपेक्षाकृत कम शक्तिशाली थे। दक्षिण मे एक आदमी गुलामो की मदद-से देश के विस्तृत भूखण्ड पर खेती कर सकता था और इसलिए आमतौर से वहाँ धनी भूस्वामी देखे जाते थे, परन्तु यूरोप मे कुलीनतत्र का जैसा अर्थ समझा जाता है, उस अर्थ मे उनका प्रभाव बिल्कुल ही कुलीनतात्रिक न था, क्योकि उनके पास विशेषाधिकार नही थे और चूँकि उनकी जमीन पर खेती का कार्य गुलामों द्वारा किया जाता था, इसलिए उनके ऊपर आश्रित रहने वाले काश्तकार नहीं थे और परिणामस्वरूप किसी पर उनका सरक्षण नही था। फिर भी हडसन के दक्षिण मे भूस्वामियो का एक उच्च वर्ग था, जिसके अपने खुद के विचार और दृष्टिकोण थे और जिसने अपने को राजनीतिक गतिविधियो का केन्द्र बना लिया था। इस प्रकार के कुलीनतत्र की सहानुभूति ऐसे लोगो के समाज से हो गयी थी, जिनके आवेगो और हितों को उसने सुगमता से अगीकृत कर लिया था। परन्तु यह कुलीनतत्र अत्यन्त निर्बल और अत्यन्त अल्पजीवी था और इसी कारण वह प्रेम अथवा घृणा, किसी को भी उत्तेजित करने के लिए काफी नही था। यह वह वर्ग था, जिसने दक्षिण मे विद्रोह का नेतृत्व किया था और जिसने अमरीकी राज्यक्रान्ति के सर्वश्रेष्ठ नेताओं को जन्म दिया था।

इस समय समाज की मूल भित्ति हिल उठी। जनता ने, जिसके नाम पर सघर्ष प्रारम्भ हुआ था, उस अधिकार का प्रयोग करना चाहा, जिसे उसने प्राप्त किया था। उसकी लोकतात्रिक प्रवृत्तियाँ जाग्रत हो उठीं और मातृभूमि के जुए को फेक चुकने के पश्चात् उसकी महत्वाकाक्षा हर प्रकार की स्वाधीनता

प्राप्त करने की हुई। व्यक्तियों का प्रभाव शनैः-शनैः कम पड़ता गया और प्रथा तथा कानूनों ने सयुक्त रूप से इसी प्रकार का परिणाम पैदा कर दिया।

परन्तु उत्तराधिकार कानून समानता के लिए अन्तिम चरण था। मुझे इस बात से आश्चर्य होता है कि प्राचीन और आधुनिक न्यायवेत्ताओ ने इस कानून को मानव कार्यो पर महान प्रभाव डालने वाला बताया है। यह सही है कि ये कानून नागरिक कार्यो से सम्बन्धित है, फिर भी इन कानूनो को समस्त राजनीतिक सस्थाओं के शीर्ष पर रखा जाना चाहिए था; क्योंकि वे सामान्य मनुष्य की सामाजिक स्थिति पर आश्चर्यजनक प्रभाव डालते है, जब कि राजनीतिक कानून केवल यह बताते है कि यह स्थिति कैसी है ! इसके अतिरिक्त समाज पर उनकी क्रिया की निश्चित और एक सी पद्धति होती है, जिसका प्रभाव किस न किसी प्रकार भावी संतति पर पड़ता है। अपने साधनो से मनुष्य अपने जाति-भाइयो की भावी स्थिति पर एक प्रकार की विलक्षण एवं असाधारण शक्ति प्राप्त कर लेता है। विधायक एक बार उत्तराधिकार कानून को विनियमित करने के बाद अपने काम से छुट्टी पाकर आराम कर सकता है। मशीन चलने के बाद कई युगो तक चलती रहेगी और पूर्व निर्देशित बिन्दु की ओर बढती रहेगी मानो वह स्वयं संचालित हो। जब इस कानून की किसी विशिष्ट प्रकार से रचना की जाती है, तब वह सम्पत्ति और शक्ति दोनो को कुछ ही लोगो के हाथो मे एकत्र करता है, एक साथ संयुक्त करता है और तत्सम्बन्धी अधिकार सौपता है और कहा जा सकता है कि वह कुलीनतंत्र की सृष्टि करता है। यदि उसकी रचना विरोधी सिद्धान्तो पर की जाती है, तो उसकी क्रिया और भी अधिक तेज हो जाती है। वह सम्पत्ति और शक्ति दोनो का विभाजन, वितरण और लोप करता है। उसकी प्रगति की तीव्रता से भयभीत होकर जो लोग उसकी गति को रोकने मे हताश हो जाते हैं, वे और कुछ नही, तो कठिनाइयॉ और बाधाएँ उत्पन्न कर के ही उसे अवरुद्ध करने का प्रयास करते है। वे विरोधी प्रयत्नो से उसके प्रभाव को समाप्त करने की व्यर्थ चेष्टाएँ करते है। वह प्रत्येक बाधा के टुकडे-टुकडे करके उसे चूर्ण-विचूर्ण कर डालता है और अन्त मे हमे गतिशील और अतिसूक्ष्म धूल के बादलो के सिवाय कुछ भी दिखाई नही दे सकता, जो हमे लोकतंत्र के आगमन की सूचना देता है।

विभाज्य उत्तराधिकार के कानून के अन्तर्गत प्रत्येक मालिक की मृत्यु उसकी सम्पत्ति की स्थिति मे एक प्रकार की क्रान्ति ला देती है। उसके परिणाम-

स्वरूप न केवल उसकी जायदाद दूसरे लोगों के हाथों मे चली जाती हैं, बल्कि उसका मूल रूप ही बदल जाता है; क्योंकि वह जायदाद टुकडे-टुकडे होकर कई हिस्सो मे विभक्त हो जाती है और ये हिस्से प्रत्येक विभाजन के समय छोटे होते जाते हैं। यह कानून का प्रत्यक्ष और एक प्रकार से उसका भौतिक प्रभाव है। तब इससे यह परिणाम निकलता है कि उन देशो मे, जहाँ उत्तराधिकार की समानता कानून से स्थापित है, सम्पत्ति की, विशेषतया भूमि-सम्पत्ति की, प्रवृत्ति निरन्तर छोटे-से-छोटे भागों मे विभाजित होने की होनी चाहिए. परन्तु समान विभाजन का कानून अपना प्रभाव न केवल जायदाद पर ही डालता है, अपितु वह उत्तराधिकारियों के मस्तिष्क को भी प्रभावित करता है और मनोवेगो को कार्यरत कर देता है। अप्रत्यक्ष परिणाम अत्यन्त शक्तिशाली रूप से विशाल सम्पत्तियो, विशेषत बडी रियासतो को नष्ट कर देता है।

उन राष्ट्रों मे, जहाँ उत्तराधिकार कानून ज्येष्ठतम सतान के अधिकार पर आधारित होता है, भू-सम्पत्ति प्राय बिना विभाजित हुए एक पीढी से दूसरी पीढी को हस्तान्तरित होती रहती है। उसका परिणाम यह होता है कि पारिवारिक भावना कुछ अशों मे जायदाद के साथ जुडी रहती है। परिवार जायदाद का प्रतिनिधित्व करता है और जायदाद परिवार का, जिसका नाम उसके मूल, उसके गौरव, उसकी शक्ति और उसके गुणों के साथ भूतकाल के अनश्वर स्मारक और भविष्य की निश्चित सुरक्षा के रूप मे चिरस्थायी हो जाता है। जब सम्पत्ति का समान विभाजन कानून द्वारा स्थापित हो जाता है तब पारिवारिक भावना और पैतृक सम्पत्ति के सरक्षण के बीच जो प्रगाढ सम्बन्ध रहता है, वह नष्ट हो जाता है। फिर जायदाद परिवार का प्रतिनिधित्व नही करती, क्योंकि उसका विभाजन चूँकि एक या दो पीढियों के बाद अनिवार्य रूप से हो जायगा, इसलिए स्पष्टत. उसकी प्रवृत्ति निरंतर घटती जाने की हो जाती है और अत मे यह पूर्णत छिन्न-भिन्न हो जाती है। यदि किसी बडे भू-स्वामी के लडको की संख्या कम है या यदि भाग्य उनकी सहायता करता है तो वे निश्चय ही अपने पिता की तरह धनी होने की आशा कर सकते है, परन्तु वे उसी सम्पत्ति के स्वामी होने की आशा नही कर सकते, जो सम्पत्ति उनके पिता के पास थी, उनकी सम्पत्ति आवश्यक रूप से उनके पिता की सम्पत्ति से भिन्न तत्वों से निर्मित होगी। अब भूस्वामी को सम्बन्ध, परम्परा और पारिवारिक गर्व से अपनी भू-सम्पत्ति के संरक्षण में जो अभिरुचि प्रात होती है, उस अभिरुचि से आप उसे ज्योंही वंचित कर देंगे, त्योंही वह निश्चित रूप से अपनी सम्पत्ति को बेच डालेगा, क्योंकि विक्रय के

पक्ष मे धन सम्बन्धी शक्तिशाली स्वार्थ रहता है, क्योकि चलपूंजी पर अचल सम्पदा की अपेक्षा अधिक व्याज मिलता है और क्षणिक वासनाओं की तृप्ति के लिए अधिक शीघ्रता से धन सुलभ हो जाता है।

जो बडी भू-सम्पत्तियॉ एक बार विभाजित हो जाती है, वे दुबारा कभी सयुक्त नही होती; क्योकि छोटा भूस्वामी अपनी भूमि से आनुपातिक दृष्टि से बड़े भूस्वामी की अपेक्षा अधिक राजस्व प्राप्त करता है और निश्चय ही वह उसे अधिक ऊँची दर पर बेचता है। अतः लाभ की जो गणनाएँ धनी व्यक्ति को अपना भूक्षेत्र बेचने के लिए प्रेरित करती है, वे और भी अधिक प्रबलता के साथ उसे छोटी-छोटी भू-सम्पत्तियॉ खरीद कर उन्हे बडी भू सम्पत्ति के रूप मे सयुक्त करने के विरुद्ध प्रभावित करती है। जिसे पारिवारिक गर्व कहा जाता है, वह बहुधा आत्म प्रेम की एक भ्रान्ति पर आधारित होता है। कहा जा सकता है कि मनुष्य अपने पौत्र प्रपौत्रो मे अपने को शाश्वत एवं अमर बन जाने की इच्छा रखता है। जब पारिवारिक गर्व अपना कार्य करना बन्द कर देता है तब व्यक्तिगत स्वार्थपरता कार्यरत हो जाती है, जब परिवार की भावना अस्पष्ट और अनिश्चित हो जाती है, तब मनुष्य अपनी वर्तमान सुविधाओ का ध्यान करता है, वह केवल अपनी अगली पीढी के लिए व्यवस्था करता है, उसके बाद के लिए नही। या तो मनुष्य अपने परिवार को चिरस्थायी बनाने का विचार छोड देता है या फिर वह किसी भी तरह भू-सम्पत्ति के अतिरिक्त अन्य साधनो द्वारा उसे पूर्ण करने की कोशिश करता है।

इस प्रकार विभाज्य उत्तराधिकार कानून न केवल परिवारो के लिए अपने पूर्वजो की भू-सम्पत्ति को पूर्ण रूप से सुरक्षित रखना कठिन कर देत है, बल्कि वह उन्हे इस प्रकार का प्रयत्न करने की प्रवृत्ति से भी वचित कर देता है और उन्हे कुछ हद तक स्वयं अपने विनाश मे कानून के साथ सहयोग करने के लिए बाध्य कर देता है। इन दोनो तरीको से कानून भू-सम्पत्ति की जडो पर प्रहार करने मे और परिवारो तथा समृद्धि दोनो को शीघ्रता से नष्ट करने मे सफलता प्राप्त कर लेता है। विभाजन के कानून के प्रभाव मे संशय करने का काम निश्चय ही उन्नीसवी शताब्दी के हम फ्रासीसियो का नही है, जो इस कानून के फलस्वरूप होने वाले राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तनो को प्रति दिन देखते रहते है। वह हमारे घरो की दीवारो को तोड़ता हुआ, हमारी खेती की सीमाओ को भंग करता हुआ, हमारे देश मे निरन्तर स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता रहता है; किन्तु यद्यपि फ्रास पर उसका बहुत बडा प्रभाव पडा है, अभी उसके द्वारा

बहुत-कुछ किया जाना शेष है। हमारी स्मृतियॉ, विचारधाराऍ और आदते उसकी प्रगति के मार्ग मे प्रबल बाधाऍ उपस्थित करती है।

सयुक्त-राज्य अमरीका मे इस कानून ने अपने विनाश-कार्य को लगभग समाप्त-सा कर लिया है और हम वहॉ उसके परिणामों का सर्वोत्तम रीति से अध्ययन कर सकते हैं। राज्यक्राति के समय प्राय सभी राज्यो मे सम्पत्ति-हस्तानान्तरण सम्बन्धी अग्रेजी कानून समाप्त कर दिये गये। भू-सम्पत्ति-विषयक उत्तराधिकार कानून मे, जिसके द्वारा तत्काल भू-सम्पत्ति का विक्रय नही किया जा सकता, इस प्रकार परिवर्तन किया गया, जिससे सम्पत्ति के स्वतंत्र परिचालन मे कोई विशेष बाधा न होने पाये। पहली पीढी के समाप्त होने के बाद जायदाद के टुकडे होने आरम्भ हुए और यह परिवर्तन समय की गति के साथ अधिकाधिक वेगवान बनता गया और अब साठ साल से कुछ अधिक वर्षों के बाद समाज का पहलू पूर्णत बदल चुका है और बडे भूस्वामियो के प्रायः समी परिवार सामान्य जनो के साथ मिल चुके है। इन अमीर नागरिको के पुत्र व्यापारी, वकील और डाक्टर हो गये है। उनमे से अधिकाश का पता-ठिकाना नही रह गया है। पैतृक पद और प्रतिष्ठा के अन्तिम चिन्ह समाप्त हो गये है और विभाजन के कानून ने सब को एक ही स्तर पर ला दिया है।

मेरे कहने का यह अभिप्राय नही है कि सयुक्त-राज्य अमरीका मे धनी व्यक्तियो का किसी प्रकार का अभाव है। मै अमरीका को छोडकर अन्य किसी ऐसे देश को नही जानता, जहॉ वस्तुतः रुपयो—पैसो के प्रेम ने मनुष्यों के हृदय को इतनी बुरी तरह जकड लिया हो और जहॉ सम्पत्ति की स्थायी समानता के सिद्धान्त के प्रति इतनी प्रगाढ घृणा प्रकट की जाती हो। परन्तु धन इतनी शीघ्रता से परिचालित होता है कि उसकी कल्पना तक नही की जा सकती और अनुभव बताता है कि ऐसी दो पीढियो का मिलना दुर्लभ ही है, जिन्होने लगातार पूर्ण रूप से धन का उपभोग किया हो।

यह चित्र सम्भवतः अतिशयोक्तिपूर्ण प्रतीत हो सकता है। फिर भी पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम के नये राज्यों मे जो कुछ घटित हो रहा है, उसके सम्बन्ध मे यह अत्यन्त अपूर्ण ज्ञान प्रदान करता है। पिछली शताब्दी के अन्तिम चरण मे समृद्धि की तलाश मे निकले कतिपय साहसी व्यक्तियो ने मिस्सीसीपी घाटी मे प्रवेश करना प्रारम्भ किया और शीघ्र ही जनसख्या के बडे भाग ने उस दिशा मे बढ़ना प्रारम्भ कर दिया, उस समय तक जिन समुदायो का नाम तक नही सुना गया था, वे आकस्मिक रूप

से रेगिस्तान मे प्रकट हो गये। कुछ वर्षो पूर्व तक जिन राज्यो के नाम का कोई अस्तित्व नही था, उन्होने अमरीकी संघ मे स्थान ग्रहण कर लिया और पश्चिमी उपनिवेशो मे हम प्रजातंत्र को अपनी चरमसीमा पर पहुँचा हुआ देख सकते है। इन राज्यो के, जिनकी स्थापना आकस्मिक रूप से अथवा यो कहा जा सकता है कि संयोगवश हुई थी, निवासी अभी कल के ही है। एक दूसरे से मुश्किल से परिचित, निकटतम पडोसी भी एक दूसरे के इतिहास को नही जानते। इसलिए अमरीकी महाद्वीप के इस भाग की जनसख्या न केवल बड़े नामो और प्रचुर वैभव के प्रभाव से, अपितु ज्ञान और गुण की स्वाभाविक कुलीनता से भी वचित रही है। वहाँ कोई भी उस सम्माननीय सत्ता का अधिकारी नही है, जिसे मनुष्य स्वेच्छा से, अपनी आँखो के सामने अच्छे कृत्य करने वालो की याददाश्त मे प्रदान कर देते है। पश्चिम के नये राज्य पहले ही बस चुके हैं, परन्तु उनमे समाज का कोई अस्तित्व नही है।

अमरीका मे मनुष्यो की समृद्धि ही केवल समान नही है, प्रत्युत उन्होने प्रयास द्वारा जो कुछ प्राप्त किया है, उसमे भी किसी अश तक वही एकरूपता दिखायी देती है। मैं यह विश्वास नही करता कि संसार मे और भी कोई ऐसा देश है, जहाँ जनसंख्या के अनुपात मे इतने कम लोग अशिक्षित हो और साथ-ही-साथ इतने कम विद्वान हो। वहाँ प्राथमिक शिक्षण प्रत्येक के लिए सुलभ है, उच्च शिक्षा शायद ही किसी के द्वारा प्राप्त की जाती है। इसमे कोई आश्चर्य की बात नही है। वास्तव मे जो कुछ हमने ऊपर उल्लेख किया है, यह उसी का आवश्यक परिणाम है। प्रायः सारे अमरीकी सुगम परि-स्थितियो मे रहते है और इसलिए वे मानव ज्ञान के प्राथमिक तत्वो की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

अमरीका मे समृद्धिशाली व्यक्तियो की संख्या कम है, लगभग सभी अमरीकियो को कोई-न-कोई पेशा अख्तियार करना पडता है और प्रत्येक पेशे के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। अमरीकी केवल जीवन के प्रारम्भिक वर्षों मे ही सामान्य शिक्षा प्राप्त कर सकते है। पन्द्रह वर्ष की आयु मे वे अपने पेशे मे प्रवेश करते हैं और इस प्रकार उनकी शिक्षा सामान्यतः उस आयु मे समाप्त हो जाती है, जिस आयु मे हमारी शिक्षा प्रारम्भ होती है। बाद मे जो कुछ भी किया जाता है, वह किसी विशेष और भारी लाभ के उद्देश्य से किया जाता है। विज्ञान को एक व्यवसाय के रूप मे

हाथ मे लिया जाता है और उसकी उसी शाखा पर ध्यान दिया जाता है, जिसका कोई तात्कालिक व्यावहारिक उपयोग हो सके।

अमरीका मे अधिकाश अमीर पहिले गरीब थे। अधिकाश लोग, जो आज आराम का जीवन व्यतीत करते हैं, अपनी युवावस्था मे व्यापार मे लगे हुए थे। इसका परिणाम यह हुआ कि जब उन्हे अध्ययन के प्रति रुचि हो सकती थी, उस समय उनके पास उसके लिए कोई समय नही था और अब जब कि समय उनके पास है, उनमे अध्ययन की रुचि नहीं रही। अतः अमरीका मे ऐसा कोई वर्ग नही है, जिसे पैतृक सम्पत्ति एवं सुख के साथ बौद्धिक आनंद की अभिरुचि प्राप्त हुई हो और जिसके द्वारा बौद्धिक श्रम को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता हो। तदनुसार इन उद्देश्यों के प्रति इच्छा और व्यवहार की शक्ति का समान रूप से अभाव है। अमरीका मे मानव ज्ञान के लिए एक निम्न कोटि का स्तर निश्चित है। सभी लोग, कुछ उत्थान-काल मे और कुछ ह्रास-काल में उस स्तर के उतने निकट पहुँचते हैं, जितने निकट वे जा सकते हैं। निश्चय ही बहुत से ऐसे व्यक्ति मिलेगे, जो धर्म, इतिहास, विज्ञान, राजनीतिक अर्थशास्त्र, विधान और सरकार के सम्बन्ध मे उतने ही विचार रखते हैं, जितनी उनकी संख्या होती है। बुद्धि का उपहार सीधे ईश्वर से प्राप्त होता है और मनुष्य उसके असमान वितरण को रोक नही सकता, किन्तु हमने अभी जो कुछ कहा है, उसी का कम-से-कम यह एक परिणाम है कि यद्यपि मनुष्यो की योग्यताएँ भिन्न-भिन्न है, जैसा कि ईश्वर ने उनको बनाया है, तथापि अमरीकी समान रूप से उनका उपयोग करने का साधन ढूँढ निकालते है।

अमरीका मे कुलीनतत्र का तत्व अपने जन्मकाल से ही सदा दुर्बल रहा है और यद्यपि इस समय वास्तविक रूप से उसका विनाश नही हुआ है, फिर भी वह ऐसा अपग हो चुका है कि वह मुश्किल से घटनाओं की गति को किसी भी अश मे प्रभावित करने का कार्य कर सकता है। इसके विपरीत, लोकतान्त्रिक सिद्धान्त ने समय, घटनाओ और विधान से इतनी शक्ति अर्जित कर ली है कि वह न केवल सर्वप्रधान, प्रत्युत सर्वशक्तिमान भी बन गया है। वहाँ कोई परिवार अथवा नियमित सत्ता नही है और व्यक्तिगत चरित्र के प्रभाव का स्थायित्व भी मुश्किल से मिलता है। इसलिए अमरीका अपनी सामाजिक स्थिति मे असाधारण लक्षण प्रकट करता है। वहाँ मनुष्यों मे सम्पत्ति और बुद्धि की दृष्टि से अधिक समानता दिखाई देती है अथवा दूसरे

शब्दो में विश्व के अन्य किसी राष्ट्र या किसी युग की तुलना मे, जिसकी स्मृति को इतिहास ने सुरक्षित रखा है, उनकी शक्ति मे अधिक समानता है।

सामाजिक लोकतंत्र का राजनीतिक परिणाम

इस प्रकार की सामाजिक स्थिति के राजनीतिक परिणामो के विषय मे सरलता के साथ निष्कर्ष निकाला जा सकता है। यह विश्वास करना असम्भव है कि जिस प्रकार समानता अन्य सभी स्थानों मे प्रवेश करती है, उसी प्रकार अन्ततोगत्वा वह राजनीतिक जगत मे भी नही प्रवेश कर जायगी। ऐसे मनुष्यो की कल्पना कर सकना असम्भव है, जो अन्य सब बातो मे समान रहते हुए भी एक बात मे हमेशा असमान बने रहे। उन्हे अन्त मे समान होना ही पड़ेगा।

राजनीतिक जगत मे समानता स्थापित करने के केवल दो ही तरीकों से मै परिचित हूँ—प्रत्येक नागरिक को उसके अधिकार प्रदान किये जाये या किसी के पास अधिकार न रहे। इसलिए उन राष्ट्रो के लिए, जो सामाजिक अस्तित्व की उसी अवस्था मे पहुँच चुके है, जिसमे आग्ल अमरीकी पहुँच चुके हैं, सब की सार्वभौमिकता और एक व्यक्ति की निरंकुश सत्ता के बीच एक माध्यम ढूंढ निकालना बहुत ही कठिन है और इस बात से इनकार करना निरर्थक ही होगा कि मैने जिस सामाजिक अवस्था का वर्णन किया है, उसका उसी प्रकार इन परिणामों मे से एक परिणाम हो सकता है, जिस प्रकार कि दूसरा। वास्तव मे समानता के लिए वहाँ एक ऐसी पुरुषोचित और वैधानिक उत्कट अभिलाषा है, जो मनुष्यो को यह कामना करने के लिए प्रेरित करती है कि सभी शक्तिशाली हो और सभी का सम्मान किया जाय। यह उत्कट अभिलाषा तुच्छ व्यक्तियो को महान व्यक्तियो की कोटि मे पहुँचा देती है, किन्तु मानव हृदय मे समानता के लिए एक कलुषित भावना का भी अस्तित्व रहता है, जो दुर्बलो को शक्तिशालियो की स्थिति को नीचे गिरा कर अपने स्तर पर लाने का प्रयत्न करने के लिए प्रेरित करती है और मनुष्यों को इतने निम्न स्तर पर ला देती है कि वे स्वतंत्रतासहित असमानता की अपेक्षा पराधीनतायुक्त समानता को अधिक पसन्द करने लगते है। यह बात नही है कि वे राष्ट्र, जिनकी सामाजिक स्थिति लोकतान्त्रिक है, स्वाभाविक रूप से स्वाधीनता का तिरस्कार करते हैं, इसके विपरीत उनमे उसके प्रति सहज

प्रेम होता है, परन्तु स्वाधीनता सदा उनकी इच्छाओं का मुख्य एवं निरन्तर उद्देश्य नहीं रहती, जब कि समानता उनका इष्ट रहती है। वे स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए तीव्र गति से एवं आकस्मिक प्रयत्न करते हैं और यदि वे अपने उद्देश्य मे असफल हो जाते हैं, तो निराश होकर बैठ जाते हैं, परन्तु बिना समानता के उन्हे कोई सतोष नहीं दे सकता और उसे खोने की अपेक्षा विनष्ट हो जाना वे अधिक पसन्द करेगे।

दूसरी ओर, जिस राज्य के सभी नागरिक लगभग समान होते हैं, वहाँ उनके लिए शक्ति-प्रहारों के विरुद्ध अपनी स्वाधीनता को बनाये रखना कठिन हो जाता है। चूँकि उनमे कोई भी व्यक्ति इतना शक्तिशाली नही होता कि वह अकेला ही लाभदायक रीति से सघर्ष कर सके, इसलिए वहाँ सामान्य एकता के अतिरिक्त अन्य कोई भी वस्तु उनकी स्वाधीनता की रक्षा नहीं कर सकती। अब इस प्रकार की एकता हमेशा सम्भव नहीं है। तब उसी सामाजिक स्थिति से राष्ट्र दो महान राजनीतिक परिणामों मे से एक या दूसरा परिणाम निकाल सकते हैं। ये परिणाम एक दूसरे से नितान्त भिन्न होते हैं. परन्तु वे दोनों एक ही कारण से उत्पन्न होते है। आग्ल अमरीकी राष्ट्र ऐसा प्रथम राष्ट्र था, जो अपने समक्ष इस दुर्दान्त विकल्प के उपस्थित होने पर भी इतना भाग्यशाली रहा कि निरंकुश सत्ता के आधिपत्य से बच निकला। वे अपनी परिस्थितियों, अपने उद्गम, अपनी बुद्धि और विशेषतः अपनी नैतिकता द्वारा जनता की सार्वभौमिकता की स्थापना और रक्षा कर सकने मे समर्थ हुए है।

३ – अमरीका में जनता की सार्वभौमता

जब कभी सयुक्त-राज्य अमरीका के राजनीतिक कानूनों पर विचार करना हो, तो हमे जनता की सार्वभौमता के सिद्धान्त से ही प्रारम्भ करना चाहिए।

जनता की सार्वभौमता का सिद्धान्त, जो प्राय समस्त मानवीय संस्थाओं के मूल मे सदैव पाया आता है, सामान्यत. दृष्टि से ओझल रहता है। उसका पालन उसके साक्षात्कार के बिना ही किया जाता है अथवा यदि क्षण भर के लिए वह प्रकाश मे आता है, तो उसे शीघ्र ही पुन पवित्रता के अन्धकार मे फेंक दिया जाता है।

'राष्ट्र की इच्छा' उन लोकोक्तियो मे से एक है, जिसका दुरुपयोग प्रत्येक युग के धूर्तों और स्वेच्छाचारियो द्वारा अत्यन्त व्यापक रूप से किया जाता रहा है। कुछ लोगों ने सत्ता के थोड़े से अनुचरो के खरीदे गये मताधिकार में और कुछ लोगो ने कायर अथवा स्वार्थरत अल्पसंख्यक समुदाय के मतो मे इसकी अभिव्यक्ति को देखा और कुछ लोगो ने इस अनुमान से कि आत्मसमर्पण की वास्तविकता प्रभुत्व के अधिकार को प्रतिष्ठित करती है, इसे जनता की चुप्पी मे भी खोज निकाला।

अमरीका मे जनता की सार्वभौमता का सिद्धान्त न तो जड़ (निष्क्रिय) है और न प्रच्छन्न है, जैसा कि कुछ अन्य राष्ट्रो मे देखा जाता है। वह रीति-रिवाजो द्वारा मान्य किया गया और कानूनो द्वारा उद्घोषित किया गया है। वह स्वतत्रता-पूर्वक विस्तृत होता है और बिना किसी रुकावट के अपने अत्यन्त दूरवर्ती परिणामो की प्राप्ति कर लेता है। संसार मे यदि कोई ऐसा देश हो, जहॉ जनता की सार्वभौमता के सिद्धान्त का समुचित रूप से मूल्याकन किया जा सकता हो, जहॉ समाज के प्रकायो मे उसके प्रयोग का अध्ययन किया जा सकता हो और जहाँ उसके खतरो और उसकी उपयोगिताओ को तौला जा सकता हो, तो वह देश निश्चित रूप से अमरीका है।

मै पहिले ही बता चुका हूँ कि अमरीका-स्थित अधिकाश ब्रिटिश उपनिवेशो के प्रारम्भकाल से ही जनता की सार्वभौमता का सिद्धान्त उनका मूलभूत सिद्धान्त था। फिर भी समाज के शासन पर उसका इतना अधिक प्रभाव नही पड़ा था, जितना आजकल है। दो बाधाओ ने – एक वाह्य और दूरी आन्तरिक – उसकी तीव्र प्रगति के मार्ग को अवरुद्ध कर दिया था।

वह उन उपनिवेशो के कानूनो मे, जो अभी तक मूल देश की आज्ञाओं का पालन करने के लिए विवश थे, प्रत्यक्ष रूप से अपने-आप को प्रकट नही कर सकता था। अतः उसे प्रान्तीय धारा-सभाओ और विशेषत. जिलो मे गुप्त रूप से शासन करने के लिए विवश होना पड़ा।

उस समय तक अमरीकी समाज उसे, उसके समस्त परिणामो सहित अपना लेने के लिए तैयार नही था। न्यू इंग्लैड मे ज्ञान ने और हडसन के दक्षिण प्रदेश मे धन ने (जैसा कि मैंने पिछले अध्याय मे बतलाया है) दीर्घकाल तक एक प्रकार के कुलीनवर्गीय प्रभाव को जमाये रखा, जिसकी प्रवृत्ति सामाजिक शक्ति का नियंत्रण थोडे-से व्यक्तियो के हाथो मे सौंप देने की रही थी। सभी सार्वजनिक अधिकारियो का चुनाव जनता के मत से नही होता था और न सभी नागरिक

मतदाता ही थे। निर्वाचनात्मक मताधिकार सभी स्थानो पर किसी अश मे सीमित और कतिपय योग्यताओ पर निर्भय करता था। ये योग्यताएँ उत्तर मे बहुत कम और दक्षिण मे अधिक विचारणीय थी।

अमरीकी राज्यक्रान्ति प्रारम्भ हुई और जनता की सार्वभौमता का सिद्धान्त जिलो से निकल कर बाहर आया और उसने राज्य पर अधिकार प्राप्त कर लिया। उसके लिए प्रत्येक वर्ग आगे आया, लड़ाइयाँ लडी गयी और विजय प्राप्त की गयी। वह कानूनो का कानून बना।

समाज के भीतर प्रायः तीव्र गति से परिवर्तन हुआ, जहाँ उत्तराधिकार विधान ने स्थानीय प्रभावो को परिपूर्ण रूप से समाप्त कर दिया था।

ज्योही प्रत्येक व्यक्ति के सामने कानूनो और राज्यक्रान्ति का यह प्रभाव स्पष्ट हुआ, त्योही लोकतंत्र की चिरस्थायी विजय की घोषणा कर दी गयी। वस्तुतः सारी सत्ता उसके हाथो मे थी और अब प्रतिरोध सम्भव नही रह गया। उच्चतर व्यवस्थाओ ने बिना किसी चीं-चपड़ और सघर्ष के एक ऐसी बुराई के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया, जो अब अनिवार्य हो गयी थी। पतनोन्मुख शक्तियो का सामान्य भाग्य उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। उनका प्रत्येक सदस्य अपने ही हित की ओर देखता था और ऐसी जनता के हाथो से सत्ता छीन सकना असम्भव था, जिससे वे इतनी अधिक घृणा नही करते थे कि उसका वीरतापूर्वक सामना कर सके और उनका एकमात्र उद्देश्य किसी भी मूल्य पर उसकी सद्भावना प्राप्त करना था। परिणामत अत्यन्त लोकतात्रिक कानूनो का समर्थन उन्ही व्यक्तियो द्वारा किया गया, जिनके हितो पर उन्होने कुठाराघात किया था और इस प्रकार यद्यपि उच्चतर वगो ने अपनी व्यवस्था के विरुद्ध लोगो के मनोवेगो को उत्तेजित नही किया, तथापि उन्होने स्वय नयी व्यवस्था की विजय की गति को तीव्र बना दिया, जिससे एक परिवर्तन से ही उन्ही राज्यो में लोकतात्रिक प्रेरणाएँ अत्यत अदम्य सिद्ध हुई जहाँ कुलीनतंत्र का आधिपत्य सबसे अधिक था। मेरीलैण्ड का राज्य, जिसकी स्थापना उच्च वर्ग के लोगो द्वारा की गयी थी, सार्वजनीन मताधिकार की घोषणा करने वाला और सरकार के सम्पूर्ण ढाँचे को परिपूर्ण रूप से लोकतात्रिक बना देने वाला प्रथम राज्य था।

जब राष्ट्र निर्वाचनात्मक अर्हता का रूपान्तरण प्रारम्भ करता है तब बडी सुगमता से भविष्यवाणी की जा सकती है कि किसी न-किसी समय वह अर्हता पूर्णतः समाप्त हो जायगी। समाज के इतिहास मे इससे बढकर अपरिवर्तनीय

नियम कोई नही है। निर्वाचन अधिकारो को जितना अधिक विस्तृत किया जाता है, उनको विस्तृत करने की आवश्यकता उतनी ही अधिक होती है; क्योकि प्रत्येक सुविधा के बाद लोकतंत्र की शक्ति मे वृद्धि होती है और शक्ति वृद्धि के साथ ही उसकी माग मे भी वृद्धि होती है। निर्धारित मान से ऊपर के व्यक्तियो की संख्या जितनी अधिक होती है, उतने ही अधिक अनुपात मे निर्धारित मान से नीचे रहने वाले व्यक्तियो की महत्वाकाक्षाओ को उत्तेजन मिलता है। अत मे अपवाद नियम बन जाता है, सुविधा के बाद सुविधा चली आती है और जब तक सार्वजनीन मताधिकार नही मिल जाता, तब तक उसकी गति को कोई रोक नही सकता।

सम्प्रति सयुक्त-राज्य अमरीका मे जनता की सार्वभौमता का सिद्धान्त व्यावहारिक विकास की उस चरमसीमा पर पहुँच गया है, जिसकी कल्पना की जा सकती है। वह उन गल्पो के बोझ से मुक्त है, जो अन्य राष्ट्रो मे उस पर थोप दी जाती हैं और वे अवसर की आवश्यकता के अनुकूल प्रत्येक सम्भव स्वरूप में प्रकट होती है। कभी जनता सस्थाबद्ध होकर कानूनो का निर्माण करती है, जैसा कि एथेन्स मे होता था और कभी सार्वजनीन मताधिकार द्वारा निर्वाचित जनता के प्रतिनिधि उसके नाम पर और उसके तात्कालिक पर्यवेक्षण के अन्तर्गत कार्य करते है।

कुछ देशो मे ऐसी सत्ता का अस्तित्व रहता है, जो कुछ अशों मे सामाजिक संस्था के लिए अपरिचित होते हुए भी उसका परिचालन करती है और किसी निश्चित मार्ग का अनुसरण करने के लिए उसे बाध्य करती है। अन्य देशों मे शासन करने वाली सत्ता विभाजित है और अशत. जनता के वर्गों के भीतर और अशतः बाहर होती है, परंतु इस प्रकार की कोई भी बात संयुक्त-राज्य अमरीका मे देखने को नही मिलेगी। वहाँ समाज स्वयं अपने ऊपर अपने लिए शासन करता है। सारी सत्ता उसके अन्तर मे केन्द्रित है और शायद ही कोई व्यक्ति ऐसा मिलेगा जो उसे अन्यत्र पाने की बात सोचता हो, इस प्रकार के विचार की अभिव्यक्ति करने का साहस तो वह और भी नही कर सकता। राष्ट्र अपने कानूनो के निर्माण मे अपने विधायकों की इच्छा द्वारा और उनके परिपालन मे शासन-कार्यकारिणी के अभिकर्ताओ की इच्छा द्वारा भाग लेता है। प्रशासन के पास इतना कम और सीमित भाग रह जाता है, अधिकारी अपने मूलस्रोत जनता को तथा जिस सत्ता से उनका उद्भव होता है, उस सत्ता को इतना कम विस्मृत करते है कि लगभग यही कहा जा सकता है कि राष्ट्र अपने ऊपर स्वयं शासन करता है।

अमरीकी राजनीतिक जगत मे जनता उसी तरह से शासन करती है जैसे परमात्मा इस जगत का परिपालन करता है। वह सारी वस्तुओ का कारण और उद्देश्य है, सारी वस्तुओ का उद्भव वही से होता है और समस्त वस्तुओ का समावेश भी उसी मे हो जाता है।

४. स्वायत्त शासन

जन-सार्वभौमता का सिद्धान्त आग्ल-अमरीकियो की समस्त राजनीतिक पद्धति को नियंत्रित करता है। इस पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ मे उस सिद्धान्त के नये व्यवहारो पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया जायगा। जिन राष्ट्रों मे जनता की सार्वभौमता अगीकार कर ली गयी है, वहॉ हर व्यक्ति सत्ता मे समान रूप से भागीदार होता है और राज्य के शासन में समान रूप से भाग लेता है। तब प्रश्न यह उठता है कि वह सरकार की आज्ञा का पालन क्यो करता है और इस आज्ञापालन की प्राकृतिक सीमाऍ क्या हैं? प्रत्येक व्यक्ति से हमेशा यह आशा रखी जाती है कि वह अपने अन्य किसी भी सह-नागरिक की भॉति पूर्ण जानकारी रखता है तथा वैसा ही गुणी और वैसा ही शक्तिशाली है। वह सरकार की आज्ञा का पालन इसलिए नही करता है कि जो सरकार चलाते है, उनसे वह हीन है या इसलिए नही कि वह अपने पर शासन करने के लिए अन्य व्यक्तियो की अपेक्षा योग्यता मे कम है, अपितु इसलिए कि वह अपने साथियो के साथ संघ-बद्ध रहने की उपयोगिता को समझता है और यह जानता है कि एक नियामक शक्ति के बिना सघबद्धता अस्तित्व मे नही आ सकती। नागरिको के एक दूसरे के प्रति जितने कर्तव्य होते है, उन सबका उसे पालन करना पडता है और जिन बातो का स्वय उससे सम्बन्ध होता है, उनमे वह स्वतंत्र है और केवल ईश्वर के प्रति उत्तरदायी होता है। अतः इस स्वयंसिद्धि की सृष्टि होती है कि हर व्यक्ति अपने व्यक्तिगत हित का सर्वश्रेष्ठ और एकमात्र निर्णायक होता है और समाज को किसी मनुष्य के कार्यो का नियंत्रण करने का अधिकार नही है, जब तक सामान्य हित पर उन कार्यो का कोई प्रतिकूल प्रभाव न पडता हो या जब तक कि सामान्य हित के लिए उसकी सहायता की आवश्यकता न हो। यह सिद्धान्त सयुक्त-राज्य अमरीका मे सर्वत्र स्वीकार कर लिया गया है। इसके

पश्चात् मै जीवन के साधारण कायो पर पड़ने वाले उसके सामान्य प्रभाव की परीक्षा करूँगा। अब मै म्युनिसिपल सस्थाओ के सम्बन्ध मे कुछ कहता हूँ।

नगर सम्पूर्ण रूप से और केन्द्रीय सरकार के प्रसग मे ऐसे किसी भी अन्य व्यक्ति की भाँति एक व्यक्ति मात्र है, जिसके सम्बन्ध मे वह सिद्धान्त लागू होता है, जिसका मैने अभी वर्णन किया है। इसलिए सयुक्त-राज्य अमरीका मे म्युनिसिपल स्वतंत्रता जन-सार्वभौमता के सिद्धान्त का ही स्वाभाविक परिणाम है। समस्त अमरीकी गणराज्यो ने न्यूनाधिक रूप मे उसे मान्यता दी है; परन्तु न्यूइंग्लैड मे इसके विकास को परिस्थितियो के कारण अनुकूलता प्राप्त हुई है।

संघ के इस भाग मे राजनीतिक जीवन का प्रारम्भ नगरो से हुआ है और प्रायः यह कहा जा सकता है कि उनमे से प्रत्येक का मूलरूप से स्वतंत्र राष्ट्र की तरह निर्माण हुआ था। बाद मे जब इंग्लैड के बादशाहो ने अपनी सर्वोच्चता घोषित की, तब उन्होंने राज्य की केन्द्रीय शक्ति को धारण करने मे संतोष कर लिया। उन्होने नगर-प्रशासनो को वही छोड दिया जहाँ वे पहले थे और यद्यपि वे आज राज्य के अधीन है, तथापि पहले वे ऐसे नही थे या मुश्किल से ऐसे थे। उन्होने केन्द्रीय सत्ता से अपने अधिकारो को प्राप्त नही किया था, परन्तु इसके विपरीत उन्होंने अपनी स्वतंत्रता का कुछ अश राज्य को दे दिया। यह एक महत्वपूर्ण और ऐसा अन्तर है, जिसे पाठक को निरतर याद रखना चाहिए। नगर-प्रशासन सामान्यतः केवल उन हितो मे राज्य के अधीन है, जिन्हे मै 'सामाजिक' कह कर पुकारूँगा, क्योकि वे अन्य सभी के लिए सामान्य है। वे उन सब बातो मे पूर्ण स्वतंत्र है, जिनका सम्बन्ध केवल उनसे होता है और मेरा ऐसा विश्वास है कि न्यूइंग्लैड के निवासियों मे कोई भी आदमी ऐसा नही मिलेगा जो इस बात को स्वीकार करे कि राज्य को उनके नगर के कायो मे हस्तक्षेप करने का कुछ भी अधिकार है। न्यूइंग्लैड के नगर-प्रशासन स्वयं ही क्रय-विक्रय करते हैं, अभियोग लगाते है या अभियुक्त बनते है, अपने करो मे वृद्धि करते है या उन्हे घटाते है और कोई भी प्रशासनिक अधिकारी कभी किसी प्रकार का विरोध करने का साहस नही करता।

फिर भी कुछ ऐसे सामाजिक कर्तव्य है, जिन्हे पूरा करने के लिए वे बाध्य होते है। यदि राज्य को धन की आवश्यकता है, तो नगर-प्रशासन उसकी पूर्ति के साधनो को नही रोक सकता। यदि राज्य सड़क-निर्माण का कार्य हाथ मे लेता है, तो नगर-प्रशासन अपनी सीमा मे से होकर उस सड़क को जाने से रोक नही सकता। यदि राज्य द्वारा पुलिस-व्यवस्था सम्बंधी कोई नियम बनाया

जाता है, तो नगर-प्रशासन को उसे अपने यहाँ लागू करना ही पड़ता है। यदि सार्वजनिक शिक्षण की कोई सामान्य पद्धति लागू की जाती है, तो प्रत्येक नगर-प्रशासन कानून के अनुसार स्कूल खोलने के लिए बाध्य होता है। जब मैं संयुक्तराज्य अमरीका मे कानून के प्रशासन के विषय पर प्रकाश डालूँगा, तब मैं बताऊँगा कि कैसे और किन उपायों से नगर-प्रशासन इन विभिन्न परिस्थितियो में आज्ञा मानने के लिए बाधित होते हैं। यहाँ मै केवल उस बाध्यता का अस्तित्व दिखा रहा हूँ। यह बाध्यता बडी कडी होती है, परन्तु राज्य की सरकार उसे केवल सिद्धान्त के रूप मे लागू करती है और उसके परिपालन मे नगर-प्रशासन अपने समस्त स्वतंत्र अधिकारों को पुन ग्रहण कर लेते हैं। इस प्रकार राज्यों द्वारा कर-सम्बन्धी निर्णय किया जाता है, किन्तु नगर-प्रशासन द्वारा उन्हे लागू किया जाता है और उनका संग्रह किया जाता है। राज्य द्वारा स्कूल की स्थापना करना अनिवार्य करार दिया जाता है, परन्तु नगर-प्रशासन उसका निर्माण करते हैं, उसका व्यय उठाते हैं और उसकी देखरेख करते है। फ्रास मे राज्य-संग्रहकर्ता स्थानीय कर वसूल करते हैं, अमरीका मे नगर-प्रशासन के सग्रहकर्ता राज्य के करों को वसूल करते है। इस प्रकार फ्रास की सरकार अपने एजेंटो को 'कम्यून' को सौंपती है और अमरीका में नगर-प्रशासन अपने एजेंटों को सरकार को सौंपते है। केवल इसीसे पता चल जाता है कि दोनों राष्ट्रो में कितनी व्यापक विभिन्नता है

न्यूइंग्लैंड के नगर-प्रशासनों की भावना

अमरीका मे न केवल म्युनिसिपल सस्थाओं का अस्तित्व है, अपितु उन्हे नगर की भावना से जीवित रखा जाता है और सहायता प्रदान की जाती है। न्यूइंग्लैड के नगर-प्रशासन के पास दो सुविधाएँ है, जो मानवजाति की अभिरुचि को प्रबलरूप से जाग्रत करती है—वे है स्वाधीनता और अधिकार। निश्चय ही उसका क्षेत्र सीमित है, परन्तु उस क्षेत्र के भीतर उसके कार्य असीमित है। केवल यह स्वतंत्रता ही उन्हे यथार्थ महत्व प्रदान करती है, जो महत्ता उन्हे अपने विस्तार और जनसख्या से भी प्राप्त नहीं हो सकती।

यह बात भी ध्यान मे रहनी चाहिए कि मनुष्यो का प्रेम सामान्यत. शक्ति की ओर प्रवृत्त होता है। विजित राष्ट्र मे देशभक्ति स्थिर नही रहती। न्यूइंग्लैण्ड का निवासी अपने नगर-प्रशासन से जो प्रेम रखता है, वह इसलिए नही कि उसका वहाँ जन्म हुआ है, परन्तु इसलिए कि नगर एक स्वतंत्र और शक्तिशाली समाज है, जिसका वह सदस्य है और जो उस सावधानी का अधिकारी है, जो उसके प्रबन्ध

मे बरती जाती है। यूरोप मे सत्तारूढ व्यक्ति स्थानीय लोकभावना के अभाव पर निरन्तर खेद प्रकट करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति इस बात से सहमत है कि व्यवस्था और शान्ति के लिए इससे बढकर कोई निश्चित 'गारंटी' नही है। फिर भी इस भावना को उत्पन्न करने जैसा कठिन कार्य कोई नही है। यदि म्युनिसिपल संस्थाओ को शक्तिशाली और स्वतंत्र बना दिया जाय, तो यह भय रहता है कि वे बहुत अधिक शक्तिशाली हो जायेगी और राज्य मे आतक फैला देगी। तथापि बिना शक्ति और स्वतंत्रता के भी नगर में अच्छी प्रजा हो सकती है, परन्तु वहाँ सक्रिय नागरिको का अभाव रहेगा। एक दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि न्यूइंग्लैंड के नगरो का सगठन इस रूप से हुआ है कि उनसे मानव हृदय के महत्वाकाक्षापूर्ण भावो को जगाये बिना अत्यन्त हार्दिक मानवीय प्रेम जाग्रत होता है। काउंटी के अधिकारियों का चुनाव नही होता और उनकी सत्ता बडी सीमित रहती है। यहाँ तक कि राज्य भी केवल मध्यम कोटि का समाज है, जिसका शान्त और निम्न कोटि का प्रशासन लोगों में इतना पर्याप्त उत्साह पैदा नही करता कि वे अपने घरो के हितो को छोड़कर सार्वजनिक कार्यों के भँवर में कूद पड़े। जो व्यक्ति सघीय सरकार का सचालन करते है, उन्हे वह अधिकार और प्रतिष्ठा प्रदान करती है, परन्तु ऐसे लोगों की सख्या कभी अधिक नही हो सकती। प्रेसिडेंट के उच्च पद तक प्रौढता में ही पहुँचा जा सकता है और उच्च श्रेणी के अन्य संघीय अधिकारी प्राय: वे ही लोग होते हैं, जिनके सौभाग्य ने साथ दिया हो या जिन्होने जीवन के अन्य विशिष्ट क्षेत्र मे दक्षता प्राप्त की हो। महत्त्वाकाक्षापूर्ण व्यक्तियो का इस प्रकार का स्थायी उद्देश्य नही हो सकता, परन्तु जीवन के सामान्य सम्बन्धो के मध्यबिंदु पर नगर प्रशासन सार्वजनिक सम्मान की इच्छा, उत्तेजक अभिरुचि की आवश्यकता और सत्ता तथा लोकप्रियता के स्वाद के लिए एक क्षेत्र का काम करता है और जो उत्कट भावनाएँ सामान्यत: समाज को जकडे रहती है, उन्हे जब घर एवं पारिवारिक क्षेत्र के इतने निकट अभिव्यक्ति का अवसर मिल जाता है, तब उनका स्वरूप परिवर्तित हो जाता है।

सामान्य हित में यथासम्भव अधिकतम व्यक्तियो को रुचि लेने के लिए प्रेरित करने के उद्देश्य से अमरीकी नगरों मे अधिकार का वितरण प्रशंसनीय कौशल के साथ किया गया है। मतदाताओं ने, जिन्हे समय-समय पर कार्य करने के लिए कहा जाता है, स्वतंत्र रूप से अधिकार का वितरण असंख्य कर्मचारियों और अधिकारियों में किया गया है, जो सभी अपने विभिन्न

क्षेत्रो मे उस शक्तिशाली समाज का प्रतिनिधित्व करते है, जिसके नाम पर वे कार्य करते है। इस प्रकार स्थानीय प्रशासन असख्य लोगो के लिए निरन्तर लाभ और हित का साधन बना हुआ है।

इतने अधिक नागरिको मे स्थानीय सत्ता का वितरण करने वाली अमरीकी पद्धति नगर-अधिकारियो के कार्यो को बढाने मे आगा-पीछा नही करती, क्योंकि सयुक्त-राज्य अमरीका में ऐसा विश्वास किया जाता है और वह भी सच्चाई के साथ कि देशभक्ति एक प्रकार की उपासना है, जो कट्टरता से पालन किये जाने पर अधिक परिपुष्ट होती है। इस तरीके से नागरिक स्वशासन की गतिविधि निरन्तर बनी रहती है और कर्तव्य के निष्पादन मे या अधिकार के प्रयोग मे हमेशा प्रत्यक्षतः दृष्टिगोचर होती है। इस प्रकार समाज मे अविराम, किन्तु शान्त गति बनी रहती है, जो बिना किसी हलचल के उसमें चेतना का स्फुरण करती है।

जिस प्रकार एक पर्वतारोही अपनी शिलाओ से चिपटा रहता है, उसी प्रकार अमरीकी स्वयं को अपने छोटे समुदाय के साथ बॉधकर रखता है, क्योंकि उसी मे उसे अपने देश के विशिष्ट लक्षणो के दर्शन होते है और प्रकृति का बोध होता है।

न्यूइंग्लैड मे नागरिक स्वशासनो का अस्तित्व सामान्यतः मागलिक है। वह शासन लोगो की रुचि के अनुकूल और उन्ही की पसन्द का है। पूर्ण शान्ति और व्यापक सुखो से सम्पन्न अमरीका मे म्युनिसिपल जीवन सम्बन्धी आन्दोलन बहुत कम होते है। स्थानीय कारोबार का सचालन सुगमता से होता है। जनता की राजनीतिक शिक्षा पहले से ही पूरी हो चुकी है, बल्कि यह कहना चाहिए कि यह शिक्षा तभी पूरी हो चुकी थी, जब पहली बार लोगो ने इस भूमि पर पैर रखे थे। न्यूइंग्लैड मे श्रेणीगत भेद की परम्परा नही है। समुदाय का कोई भाग अन्य लोगो को दबाने के लिए प्रवृत्त नही होता और अन्यायो को, जो एकाकी व्यक्तियो के लिए घातक हो सकते है, चारो ओर फैले हुए सामान्य सतोष के बीच भुला दिया जाता है। यदि सरकार के कुछ दोष होते है (और निस्सदेह कुछ दोषों को बताना सहज होगा) तो उनकी ओर ध्यान नही दिया जाता, क्योकि सरकार का वस्तुत निस्सरण उन्ही से होता है जिन पर वह शासन करती है। वह सरकार अच्छा करे या बुरा, उसके अवगुण इस लिए ढँक जाते है, क्योकि उसके प्रति जनता का अभिभावक जैसा भाव होता है। इसके अतिरिक्त लोगों के पास ऐसी कोई चीज नहीं है, जिससे उस शासन

की तुलना की जा सके। इग्लैण्ड पहले से ही अनेक उपनिवेशो पर शासन कर चुका था, परन्तु जनता अपने नागरिक प्रशासन मे हमेशा सार्वभौम थी। उसका शासन न केवल प्राचीन है, वल्कि आदिकाल की दशा मे है।

न्यूइंग्लैण्ड के निवासी को अपने नगर का स्वशासन इसलिए प्रिय है कि वह स्वाधीन और हस्तक्षेपरहित है। शासन-कार्य मे उसका यह सहयोग उसके हितों से उसको जकड़ रखता है; उससे प्राप्त सुख-सुविधाओ के कारण उसके प्रति उसका स्नेह बराबर बना रहता है और उसकी इच्छा तथा उसके भावी प्रयत्न नागरिक स्वशासन की भलाई से परिलक्षित होते है। वह प्रत्येक स्थानीय घटना मे भाग लेता है, इस प्रकार वह अपनी पहुँच के सीमित क्षेत्र में शासन-कला का अभ्यास करता है। वह उन परिस्थितियो मे अपने को ढालता है, जिनके बिना स्वाधीनता केवल क्रान्ति द्वारा ही आगे बढ सकती है, वह उनकी भावनाओ को हृदयंगम करता है. वह अपने भीतर व्यवस्था के प्रति अभिरुचि जाग्रत करता है, वह शक्ति सतुलन को समझता है और अपने कर्तव्यो की प्रकृति और अपने अधिकारो के विस्तार के सम्बन्ध मे स्पष्ट और व्यावहारिक धारणाएँ ग्रहण करता है . . . ।

५. अमरीका में विकेन्द्रीकरण और उसके प्रभाव

अमरीका में किसी यूरोपीय भ्रमणार्थी का ध्यान सबसे पहले इस बात की ओर जाता है कि जिसे हम सरकार या प्रशासन कहते हैं, उसका वहाँ अभाव है। अमरीका में लिखित कानून मौजूद हैं और हर व्यक्ति उनका पालन होते देखता है, किन्तु यद्यपि प्रत्येक वस्तु नियमित रूप से गतिशील है, उसका नियामक कहीं भी नजर नहीं आता। सामाजिक यन्त्र को नियंत्रित रखने वाले हाथ अदृश्य ही रहते हैं। इतना होने पर भी अपने विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए जिस प्रकार सभी लोगों को व्याकरण के कुछ स्वरूपों का, जो मानवीय भाषा के मूलाधार हैं, आश्रय ग्रहण करना पड़ता है, उसी प्रकार समस्त समुदायों को अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए किसी हद तक सत्ता स्वीकार कर लेनी पड़ती है। ऐसा न होने पर वे अराजकता के शिकार हो जाते हैं। यह सत्ता विभिन्न रूपों में विभाजित हो सकती है, परन्तु हर हालत में कहीं न कहीं उसका अस्तित्व रहना ही चाहिए।

किसी राष्ट्र मे सत्ता की शक्ति को कम करने के दो तरीके है। प्रथम तरीका यह है कि कतिपय निश्चित परिस्थितियो के अन्तर्गत समाज को अपनी सुरक्षा करने से रोक कर या मनाकर सर्वोच्च सत्ता को उसके मूल रूप मे ही निर्वल वना दिया जाय। इस प्रकार सत्ता को निर्वल वनाकर स्वतंत्रता की स्थापना करना यूरोपीय ढग है।

सत्ता के प्रभावो को घटाने के दूसरे तरीके मे न तो समाज को उसके कतिपय अधिकारो से वंचित किया जाता है और न उसकी सुरक्षा को पंगु वनाया जाता है, प्रत्युत विभिन्न व्यक्तियो को उसके अधिकारों का प्रयोग करने का अधिकार प्रदान किया जाता है, अधिकारियो की सख्या वढा दी जाती है और प्रत्येक अधिकारी को उतनी सत्ता सौंप दी जाती है, जो उसके कर्तव्यपालन के लिए आवश्यक होती है। कई ऐसे राष्ट्र हो सकते है, जहॉ सामाजिक सत्ता का इस प्रकार का वितरण अराजकता उत्पन्न कर सकता है, परन्तु वह स्वय अराजकतापूर्ण नही है। वास्तव मे इस प्रकार विभाजित सत्ता की अदम्यता कम हो जाती है और वह कम खतरनाक हो जाती है, परन्तु उसका नाश नही होता।

सयुक्त राज्य अमरीका की क्रान्ति स्वतन्त्रता के प्रति एक परिपक्व एव विचारपूर्ण अधिमान्यता का परिणाम थी, न कि उसके लिए किसी अस्पष्ट और गलत ढग से की गयी किसी लालसा का परिणाम। अराजकता के उग्र मनोविकारो के साथ उसका कोई सम्बन्ध नही था, परन्तु इसके विपरीत व्यवस्था और कानून के प्रेम से उसका मार्ग प्रशस्त रहा।

सयुक्त-राज्य अमरीका मे यह धारणा कभी नही रही कि किसी स्वतंत्र देश के नागरिक को स्वेच्छापूर्वक कोई भी कार्य करने का अधिकार होता है। इसके विपरीत वहॉ उस पर अन्य स्थानो की अपेक्षा और अधिक सामाजिक प्रतिवन्ध लगाये गये। सिद्धान्त पर कुठाराघात करने अथवा समाज के अधिकारो का विरोध करने की धारणा को कभी मान्य नही किया गया, किन्तु समाज के अधिकारो का प्रयोग विभाजित था, ताकि अधिकार शक्तिशाली और अधिकारी नगण्य रह सके और समाज एक साथ ही नियमबद्ध और स्वतत्र, दोनो रह सके। ससार के किसी भी देश मे कानून की ऐसी परिपूर्ण परिभाषा नही की गयी, जैसी कि अमरीका मे और न किसी देश मे उसका प्रयोग करने का अधिकार इतने अधिक लोगो के हाथो मे सौपा गया। प्रशासकीय सत्ता अपने विधान के अनुसार न तो केन्द्रित है और न आनुवंशिक। यही कारण है कि वह अदृश्य

रही है। सत्ता का अस्तित्व तो है, परन्तु उसका प्रतिनिधित्व कहीं भी दिखाई नहीं पड़ता।

केन्द्रीयकरण प्रतिदिन और सामान्य रूप से व्यवहृत होने वाला एक शब्द है जिसका किसी विशेष अर्थ में प्रयोग नहीं होता। फिर भी केन्द्रीयकरण के स्पष्टतः दो स्वरूप हैं। इन दोनों के भेद को सही-सही जान लेना आवश्यक है।

कुछ हित ऐसे होते हैं जो राष्ट्र के सभी भागों के लिए सामान्य होते हैं, जैसे उसके सामान्य कानूनों का अभिनिर्धारण और उसके विदेशी सम्बन्धों की देखभाल। कुछ हित ऐसे भी होते हैं जो राष्ट्र के कुछ भागों के लिए ही विशिष्ट होते हैं; उदाहरणार्थ अनेक नगरों का व्यापार। जब पूर्वोक्त या सामान्य हितों का निर्देशन करने वाली सत्ता एक स्थान पर या व्यक्तियों के एक समूह में ही केन्द्रित हो जाय तो उसे हम केन्द्रित सरकार कहेंगे। इसी तरीके से दूसरे या स्थानीय हितों का निर्देशन एक ही स्थान पर केन्द्रित हो तो उसे हम केन्द्रित प्रशासन कहेंगे।

था और उसका यह कहना ठीक ही था, फिर भी लुई चौदहवें के समय का प्रशासन वर्तमान समय की अपेक्षा बहुत ही कम केन्द्रित था।

इंग्लैंड मे सरकार का केन्द्रीकरण अत्यन्त परिपूर्णता के साथ सम्पन्न हुआ है। राज्य के पास एक पुरुष की संयोजित शक्ति है और उसकी इच्छा विशाल जन-समूह को क्रियाशील बना देती है और जहाँ इच्छा होती है, उधर ही वह अपनी सारी शक्ति को लगा देता है। परन्तु इंग्लैंड ने, जिसने गत पचास वर्षों में इतने महान कार्य किये है, अपने प्रशासन का केन्द्रीयकरण कभी नही किया। वास्तव मे मैं इस बात की कल्पना भी नही कर सकता कि कोई राष्ट्र सरकार का शक्तिशाली रूप से केन्द्रीयकरण किये बिना जीवित रह सकता है और समृद्धिशाली बन सकता है। परन्तु मेरी धारणा है कि जिन राष्ट्रों मे प्रशासन केन्द्रित होता है, वहाँ वह स्थानीय भावनाओं का निरन्तर ह्रास करता रहता है और इस प्रकार उन राष्ट्रों की शक्ति को क्षीण कर देता है। इसके अतिरिक्त वह दूसरा कुछ कर ही नही सकता। यद्यपि इस प्रकार का प्रशासन किसी खास अवसर पर किसी खास विषय के लिए राष्ट्र के सभी उपलब्ध साधनों को एक साथ जमा कर सकता है, परन्तु वह उन साधनों की पुनरावृत्ति के लिए घातक सिद्ध होता है। वह किसी संघर्ष की घडी मे विजय को सुनिश्चित बना सकता है, परन्तु धीरे-धीरे वह शक्ति के स्नायुओ को निर्बल कर देता है। वह मनुष्य की अस्थायी महानता मे प्रशासनीय सहायता प्रदान कर सकता है, परन्तु किसी राष्ट्र की स्थायी समृद्धि मे सहायक नहीं हो सकता।

इस बात को ध्यान मे रखिए कि जब कभी यह कहा जाता है कि केन्द्रित न होने के कारण राज्य कोई कार्य सम्पन्न नही कर सकता तो इसका अर्थ यह होता है कि सरकार का केन्द्रीयकरण नही हुआ है। बारम्बार कहा जाता है और हम भी इस बात को स्वीकार कर लेते हैं कि जर्मनी का साम्राज्य अपनी समस्त शक्तियो को एक साथ काम मे नही ला सका। इसका कारण यह था कि राज्य अपने सामान्य कानूनों का पालन करा सकने मे कभी समर्थ नहीं हुआ। इस महान संस्था के अनेक सदस्य हमेशा सामान्य सत्ता के प्रतिनिधियो को सहयोग न देने के अधिकार का दावा करते थे अथवा इसके लिए कोई-न-कोई उपाय ढूँढ निकालते थे, यहाँ तक कि साधारण जनता से सम्बन्धित मसलो पर भी वे ऐसा करते थे। दूसरे शब्दों मे कह सकते है कि वहाँ सरकार का कोई केन्द्रीयकरण नही था। यही बात मध्यकालीन युग के लिए भी लागू होती है। सामन्ती समाज के सभी दु:खो का मूल यह था कि न केवल प्रशासन

का, अपितु सरकार का नियंत्रण हजारो लोगो के बीच मे हजारो तरीको से बॅटा हुआ था। केन्द्रित सरकार के अभाव ने यूरोप के राष्ट्रो को किसी भी सीधे मार्ग पर सामर्थ्य के साथ आगे बढने से रोक दिया।

हम यह दिखा चुके है कि संयुक्त-राज्य अमरीका मे न तो कोई केन्द्रित प्रशासन है और न सार्वजनिक अधिकारियो की आनुवांशिकता। अमरीका मे स्थानीय सत्ता को इतना आगे बढाया गया, जितना यूरोप का कोई भी राष्ट्र बिना बडी असुविधाओ के नहीं कर सकता। इससे अमरीका मे कुछ हानिकारक परिणाम भी हुए है। परन्तु वहाँ सरकार का केन्द्रीयकरण परिपूर्ण रूप से हुआ है और यह आसानी से सिद्ध किया जा सकता है कि राष्ट्रीय शक्ति का केन्द्रीयकरण वहॉ इतना अधिक है कि यूरोप के प्राचीन राष्ट्रो मे ऐसा कभी नही हुआ। वहॉ न केवल प्रत्येक राज्य मे एक ही विधानसभा है, न केवल वहॉ राजनीतिक सत्ता का एक ही स्रोत है, प्रत्युत जिलो और काउटियो मे अनेक विधानसभाओ की संख्या मे सामान्यतः वृद्धि नही की गयी है, जिससे कही वे अपने प्रशासकीय कर्तव्यो का परित्याग कर सरकार मे हस्तक्षेप न करने लगे। अमरीका मे प्रत्येक राज्य का विधान-मण्डल सर्वोच्च है और कोई भी वस्तु – न तो विशेषाधिकार और न स्थानीय स्वतंत्रता, न व्यक्तिगत प्रभाव और न तर्क का साम्राज्य ही उसकी सत्ता के मार्ग में बाधक बन सकता है, क्योकि वह सत्ता उस बहुमत का प्रतिनिधित्व करती है, जो विवेक का एकमात्र अधिकारी होने का दावा करता है। अतः विधानसभा का संकल्प ही उसके कार्यों की एक मात्र सीमा होती है। इसके सान्निध्य मे और इसके तात्कालिक नियंत्रण के अन्तर्गत अधिशासित सत्ता का प्रतिनिधि रहता है। इसका कर्तव्य सर्वोच्च सत्ता द्वारा अनियन्त्रितो को आज्ञा-पालन के लिए बाध्य करना होता है। निर्बलता का एक मात्र लक्षण सरकार के कार्य की कतिपय सूक्ष्मताओ मे निहित रहता है। अमरीकी गणतन्त्रो के पास किसी क्षुब्ध अल्पसंख्यक समुदाय को दबाने के लिए सेनाऍ नही है, परन्तु चूॅकि अब तक किसी भी अल्पसंख्यक समुदाय को ऐसा नही दबाया गया कि वह खुले रूप से लडाई की घोषणा करने के लिए बाध्य हो, इसलिए फौज रखने की कोई आवश्यकता ही महसूस नही हुई। राज्य प्रायः नगर या जिले के अधिकारियों की नियुक्ति करता है। इस प्रकार, उदाहरणार्थ, न्यूइंग्लैड मे नगर आय-कर अधिकारी करो की दर निर्धारित करता है, नगर-संग्राहक उनको वसूल करता है और नगर कोषाध्यक्ष धनराशि को सार्वजनिक खजाने

मे जमा करा देता है तथा जो विवाद उत्पन्न होते है उन्हे साधारण न्यायालयो मे पेश किया जाता है। कर-सग्रह की यह पद्धति धीमी और साथ-ही-साथ असुविधाजनक भी है। ऐसी पद्धति इस सरकार के लिए, जिसकी खर्च की मॉगे बडी है, हमेशा के लिए बाधक सिद्ध होगी। सरकार के अस्तित्व पर जिन बातो का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है, उन बातों की देखभाल ऐसे ही अधिकारियो द्वारा होनी उचित है, जिनकी नियुक्ति स्वयं सरकार करे, जिन्हे वह अपनी इच्छा के अनुसार हटा सके और जो शीघ्रतापूर्वक कार्य करने के अभ्यस्त हो, परन्तु अमरीका मे जिस प्रकार की केन्द्रीय सरकार का गठन हुआ है, उसके लिए अपनी आवश्यकताओ के अनुसार कार्य करने को अधिक उत्साहपूर्ण एव प्रभावशाली पद्धतियो को प्रचलित करना सदा सरल रहेगा।

ऐसी स्थिति मे केन्द्रित सरकार का अभाव नयी दुनिया के गणतन्त्रों के विनाश का कारण नही होगा, जैसी कि बहुधा आशका प्रकट की जाती है, क्योकि इसके बाद मै अब यह सिद्ध करूँगा कि अमरीका की राज्य-सरकारे पर्याप्त केन्द्रित न होते हुए भी बहुत केन्द्रित है। विधान-सभाऍ प्रति दिन सरकार की सत्ता का अतिक्रमण करती है और फ्रास की परम्परा के समान ही उनकी प्रवृत्ति इस सत्ता को पूर्णतः अपने ही अधिकार मे कर लेने की है। इस प्रकार केन्द्रित सामाजिक शक्ति निरन्तर भिन्न-भिन्न लोगो के हाथो मे बदलती रहती है क्योकि वह जनता की शक्ति पर आश्रित है। वह प्रायः अपनी शक्ति की चैतन्यता मे बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता के नियमों को भूल जाती है। परिणामस्वरूप उसको खतरा पैदा हो जाता है, सम्भवतया उसकी क्षीणता से नही, उसकी शक्ति से ही उसका अन्तिम विनाश होगा।

विकेन्द्रित प्रशासन की पद्धति अमरीका मे अनेक विभिन्न प्रभावो को जन्म देती है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि अमरीकियो ने सरकार के प्रशासन को अलग हटा कर, श्रेष्ठ नीति की सीमाओ का अतिक्रमण कर दिया है, क्योकि उनके लिए गौण कायो मे भी व्यवस्था राष्ट्रीय महत्व की वस्तु होती है। चूँकि राज्य अपने क्षेत्र के विभिन्न स्थानो पर अपने निजी प्रशासकीय अधिकारी नही रखता, जिनमे वह एक से भाव जगा सके, इसलिए वह शायद ही कभी पुलिस-सम्बन्धी सामान्य नियमो को जारी करने का प्रयत्न करता है। ऐसे नियमों का अभाव बहुत ही खटकता है और यूरोपीय लोगो ने निरन्तर उस अभाव का अनुभव किया है। धरातल पर दिखायी

पडनेवाली अव्यवस्था को देखकर सर्वप्रथम उसकी ऐसी धारणा बन जाती है कि समाज जैसे अराजकता की स्थिति मे है और जब तक वह विषय की गहराई मे नही जाता, तब तक उसे अपनी गलती भी दिखाई नही पड़ती। कुछ कार्य सारे राज्य के लिए महत्वपूर्ण होते है, परन्तु उनका कार्यान्वय इसलिए नही किया जा सकता कि उनका निर्देश करने के लिए कोई राज्य-प्रशासन नही है। उन्हे निर्वाचित और अस्थायी अभिकर्ताओ की देखरेख के नीचे, नगरो या जिलो द्वारा सम्पन्न किये जाने के लिए छोड़ दिया जाता है। इससे कुछ परिणाम नही निकलता या कम-से-कम कोई स्थायी लाभ नही होता।

यूरोप मे केन्द्रीयकरण के समर्थक बहुधा यह मत व्यक्त करते है कि प्रत्येक स्थानीय क्षेत्र के प्रकायो का प्रशासन सरकार स्वयं वहॉ के नागरिको की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से कर सकती है। यह बात तब सही हो सकती है जब केन्द्रीय प्रशासन विवेकशील होता है और स्थानीय सस्थाएँ अनभिज्ञ रहती है, जब वह सतर्क होता है और वे सुस्त रहती है, जब वह कार्य करने का और वे आज्ञा पालन करने की अभ्यस्त रहती है। वास्तव मे यह प्रत्यक्ष है कि केन्द्रीयकरण की वृद्धि के साथ यह दुहरी प्रवृत्ति भी बढनी चाहिए और एक की तत्परता तथा अन्यो की अयोग्यता अधिक-से-अधिक उभर कर सामने आनी चाहिए। परन्तु जब अमरीकियो की तरह ही जनता विवेकशील होती है, अपने हितो के प्रति जागरूक होती है और अमरीकियो के समान ही उन पर विचार करने की अभ्यस्त होती है, तब इस प्रकार की बात होगी, ऐसा मै नही मानता। इसके विपरीत मै ऐसा मानने के लिए बाध्य हूँ कि इसी स्थिति मे नागरिको की सामूहिक शक्ति हमेशा जनकल्याण के कार्यों को सरकार की सत्ता की अपेक्षा अधिक सफलता के साथ पूरा कर सकेगी। मै जानता हूँ की सुप्त जनता को जाग्रत करने के लिए निश्चित साधनो को ढूँढ निकालना और जो उत्साह और ज्ञान उसमे नही है, उन्हे भर देना, बडा ही कठिन कार्य है। मैं यह भी अच्छी तरह जानता हूँ कि लोगो को अपने ही कार्यों मे व्यस्त रहने के लिए राजी करना एक बड़ा ही विकट कार्य है। उनमे अपने सामान्य घर की मरम्मत करने के लिए रुचि जाग्रत करने की अपेक्षा अदालतो के शिष्टाचार की सूक्ष्मताओ के प्रति दिलचस्पी पैदा करना हमेशा आसान रहेगा। परन्तु जब कभी कोई केन्द्रीय प्रशासन अत्यधिक रुचि रखने वाले लोगो की इच्छा के पूर्णतः विरुद्ध कार्य करने की कोशिश करता है

तो मेरा विश्वास है कि या तो वह गलत रास्ते पर है या गलत रास्ते पर ले जाने की इच्छा रखता है। केन्द्रीय शासन चाहे जितना विवेकशील और कुशल हो, वह किसी बड़े राष्ट्र के जीवन की सारी विशेषताओं को अपने अन्दर समाविष्ट नही कर सकता। इस प्रकार की सावधानी मनुष्य की शक्तियो के परे है और जब वह बिना किसी सहायता के अनेक विकट स्रोतों का निर्माण करने और उन्हे प्रवाहित करने का प्रयत्न करता है, तो उसका बहुत ही अपूर्ण परिणाम होगा या उसकी शक्ति निष्फल और निरर्थक प्रयत्नों मे नष्ट हो जायगी।

मनुष्यो की वाह्य क्रियाओ को एक निश्चित एकरूपता के अधीनस्थ कर केन्द्रीयकरण वास्तव मे बडी आसानी से सफलता प्राप्त कर लेता है। अत में हम इस एकरूपता से स्वयं उसी के निमित्त प्रेम करने लगते है और उन वस्तुओ को भूल जाते है, जिनके सम्बन्ध मे यह एकरूपता काम मे लायी जाती है, यह प्रेम उन भक्तों के प्रेम की तरह है, जो मूर्ति की पूजा करते है और मूर्ति जिस देवता का प्रतिनिधित्व करती है, उसे भूल जाते है। केन्द्रीयकरण बिना किसी कठिनाई के दैनिक कारोबार मे सराहनीय नियमितता ला देता है। सामाजिक पुलिस की व्यवस्था बडी निपुणता से कर देता है, छोटी अव्यवस्थाओ और तुच्छ अपराधो को दबा देता है और सुधार तथा पतन दोनों से समानरूप से बचाये रख कर समाज को, जिस स्थिति मे वह है, उसी मे बनाये रखता है और प्रकार्यों के सचालन मे उत्साहविहीन नियमितता बनाये रखता है। ऐसी स्थिति को प्रशासन के मुखिया लोग सुव्यवस्था और सार्वजनिक शान्ति पुकारने के आदी हो गये हैं। सक्षेप में ऐसा कह सकते है कि वह केवल रोकथाम मे आगे है, क्रियाशीलता मे नही। जब समाज विशालरूप से आगे बढता या अपने मार्ग पर तेजी के साथ कदम बढाता है, तो केन्द्रीयकरण की शक्ति उसका साथ छोड देती है। यदि एक बार उसके कार्यो को आगे बढाने के लिए गैर-सरकारी नागरिकों की आवश्यकता पड जाती है तो उस समय उसकी नपुंसकता का भेद खुल जाता है। अपनी दयनीय दशा मे नागरिको से सहायता की अभ्यर्थना करते हुए भी केन्द्रीय सत्ता उनसे यही कहती है, "तुमको वही करना पड़ेगा, जैसा मैं चाहती हूं। उतना ही करना होगा, जितना मैं चाहती हूँ और उसी ढंग से करना होगा, जैसा कि मै चाहती हूँ और पद्धति के मार्गदर्शन की इच्छा न रखते हुए तुम्हे सारी बातो का सचालन करना पड़ेगा, तुम्हे अन्धकार मे रह कर काम

करना पड़ेगा और उसके बाद मेरे कार्य को उसके परिणामो से तोल सकोगे।"
ये वे शर्ते नही है जिन पर मनुष्य की इच्छा-शक्ति का सहकार्य प्राप्त किया जा सके। मानवीय इच्छा का अपना मार्ग चुनने के लिए स्वतंत्र और अपने कार्यो के लिए उत्तरदायी रहना आवश्यक है अथवा (जैसा कि मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है) नागरिक के लिए उन योजनाओ मे, जिनसे उसका परिचय नही है, परावलम्बी कार्याधिकारी होने के स्थान पर निष्क्रिय दर्शक के रूप मे रहना ज्यादा अच्छा होगा।

इसमे कोई सन्देह नही कि फ्रास के प्रत्येक नागरिक के आचरण को नियंत्रित करनेवाला समान नियमो का अभाव संयुक्त-राज्य अमरीका मे बहुधा महसूस नही होता। सामाजिक उदासीनता और उपेक्षा के निम्न कोटि के उदाहरण देखने को मिलते है और समय-समय पर आसपास फैली हुई सभ्यता के ठीक विपरीत अपमानजनक कलंक भी देखने को मिल जाते है। उपयोगी उपक्रमो को, जिनकी सफलता के लिए निरन्तर ध्यान रखने की अवश्यकता होती है और जिनको पूरा करने के लिए अथक परिश्रम करना पड़ता है, बहुधा ऐसे ही छोड़ दिया जाता है। इसका कारण यह है कि अमरीका तथा अन्य देशो मे भी लोग आकस्मिक आवेशो और क्षणिक प्रयासो से ही आगे बढ़ते है। यूरोप का निवासी इस बात का अभ्यस्त है कि वह जो भी कार्य हाथ मे लेगा, उसमे हस्तक्षेप करनेवाला कर्मचारी भी उसी के साथ रहेगा। इस कारण वह नगर-सम्बन्धी प्रशासन की जटिल प्रक्रिया को बड़ी कठिनाई से समझ पाता है। सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि अमरीका मे पुलिस-व्यवस्था की बारीकियो पर, जो जीवन को सुगम और आरामदेह बना देती है, कम ध्यान दिया गया है, परन्तु समाज मे मनुष्य के लिए जो सरक्षण आवश्यक होते है, वे वहाँ भी अन्य स्थानो की भाँति ही शक्तिशाली है। अमरीका मे प्रशासन का संचालन करने वाली शक्ति बहुत ही कम नियमित, कम विवेकशील और कम निपुण है; परन्तु यूरोप की अपेक्षा हजार गुना महान है। संसार के किसी भी देश मे सामान्य हित के लिए नागरिक इतना श्रम नहीं करते। मैने ऐसे लोगो को कही नही देखा है, जिन्होने इतनी विविध और प्रभावोत्पादक पाठशालाओ की और नागरिकों की आवश्यकताओं के अनुकूल ऐसे श्रेष्ठ सार्वजनिक पूजा-स्थानो की स्थापना की हो या जिन्होंने अपनी सड़को की ऐसी अच्छी मरम्मत की हो। एकरूपता अथवा आकृति का स्थायित्व, छोटी-छोटी बातो का सूक्ष्म विन्यास और प्रशासकीय पद्धति की परिपूर्णता सयुक्त-राज्य अमरीका मे नहीं मिलेगी, परन्तु

हमे वहाँ एक ऐसी शक्ति देखने को मिलेगी जो किंचित् प्रचण्ड होते हुए भी कम-से-कम भव्य है तथा जो वास्तव मे दुर्घटनाओं से परिपूर्ण होते हुए भी सजीवन-शक्ति और प्रयत्नो से ओतप्रोत है।

उदाहरण के लिए यदि यह मान लिया जाय कि सयुक्त-राज्य अमरीका के गॉवो और जिलो का प्रशासन, उन्ही मे से चुने गये अधिकारियों द्वारा जैसा होता है, उससे अधिक उपयोगी किसी केन्द्रीय सत्ता द्वारा होगा, जिसका अनुभव उन्हे अभी तक नही हुआ है और तर्क के लिए यदि यह स्वीकार कर लिया जाय कि यदि सारा प्रशासन किसी एक व्यक्ति के हाथ मे केन्द्रित होगा तो अमरीका मे अधिक सुरक्षा होगी और वहॉ समाज के साधनों का उत्तम रीति से उपयोग किया जायगा, तो भी विकेन्द्रीकरण-पद्धति से जो लाभ अमरीकियो को मिलते है, वे मुझे इस विरोधी योजना की तुलना मे उसे अधिमान्यता देने के लिए आकर्षित करेगे। यदि कोई सत्ता मेरी स्वाधीनता और मेरे जीवन की एकमात्र स्वामिनी है और यदि वह मेरी गतिविधियों एवं जीवन पर इस प्रकार एकाधिपत्य स्थापित कर लेती है कि उसका ह्रास होने पर उसके आसपास की प्रत्येक वस्तु का ह्रास हो जाय, उसके निद्रित अर्थात् निष्क्रिय होने पर प्रत्येक वस्तु का निद्रित अर्थात् निष्क्रिय होना आवश्यक हो जाय और उसका नाश होने पर स्वयं राज्य का ही नाश हो जाय, तो अन्ततः मुझे इस बात से तनिक भी लाभ नही होगा कि एक जागरूक सत्ता मेरी प्रसन्नताओ की शान्ति की सदा रक्षा करती है और मेरी परवाह अथवा चिन्ता के बिना ही मेरे मार्ग के समस्त खतरो को निरन्तर दूर करती रहती है।

यूरोप मे ऐसे देश हैं, जहॉ के निवासी अपने को प्रवासी के बतौर ही मानते है और जहॉ वे रहते है, वहॉ की घटनाओ के प्रति उदासीन रहते है। वहॉ के निवासियो की सहमति अथवा जानकारी के बिना ही (जब तक कि संयोग ही उन्हे घटना की जानकारी न करा दे) बड़े-बड़े परिवर्तन कर दिये जाते है। इतना ही नही, इससे भी अधिक बात यह होती है कि ऐसे स्थानो का निवासी अपने गॉव की हालत, अपनी गली की पुलिस, चर्च की मरम्मत और पादरी के मकान से कोई सरोकार नही रखता, क्योकि वह समझता है जैसे इन वस्तुओ से उसका कोई सम्बन्ध ही नही है। वह इन सबको किसी शक्तिशाली अपरिचित व्यक्ति की सम्पत्ति मानता है, जिसे वह सरकार कहता है। इन सब वस्तुओ से उसका सम्बन्ध केवल जीवन साहचर्य का है। इनके प्रति उसमे न स्वामित्व की भावना होती है और न सुधार का कोई विचार ही।

अपने से सम्बन्धित विषयों में उसकी रुचि इतनी कम है कि यदि उसकी या उसके बच्चे की सुरक्षा खतरे में पड़ जाती है तो उस खतरे से बचने का प्रयत्न करने के स्थान पर हाथ बाँध वह तब तक खड़ा रहेगा, जब तक सारा राष्ट्र उसकी सहायता के लिए उमड़ न पड़े। अन्य किसी भी व्यक्ति की अपेक्षा यह व्यक्ति, जिसने अपनी स्वतंत्र इच्छा-शक्ति को पूर्ण रूप से बलिदान कर दिया है, अनुशासन से प्रेम नहीं करता। यह सही है कि छोटे-से-छोटे अधिकारी के सामने वह भयभीत रहता है, परन्तु ज्योंही कानून की श्रेष्ठ शक्ति हटा ली जाती है, त्योंही वह किसी विजित शत्रु के भाव से कानून की अवहेलना करने लगता है। वह निरन्तर दासता और उच्छृंखलता के बीच झूलता रहता है।

जब किसी राष्ट्र में यह स्थिति उत्पन्न हो जाय तो उसे या तो अपने रीति-रिवाजों और कानूनों को बदल देना चाहिए या उसे समाप्त हो जाना चाहिए। कारण यह है कि उस हालत में जन-सामर्थ्य का साधन समाप्त-सा हो जाता है और उस राष्ट्र में यद्यपि प्रजा रह सकती है, परन्तु वहाँ नागरिक नहीं हो सकते। इस प्रकार के जन-समुदाय विदेशी आक्रमणों के सहज शिकार हो जाते हैं और यदि वे रंगमंच से पूर्णतया अदृश्य नहीं होते तो केवल इसलिए कि वे अपने समान या अपने से हीन राष्ट्रों से घिरे रहते हैं, और अभी तक उनमें देशभक्ति के कुछ मनोभाव और अपने देश के प्रति अनैच्छिक गौरव या भूतकालीन प्रसिद्धि की कोई अस्पष्ट स्मृति शेष है, जो उनमें आत्मरक्षा की भावना जगाने के लिए पर्याप्त है।

निरकुशता के अवशेष रह गये है। मान्टेस्क्यू ने निरंकुश शक्ति के लिए एक विशिष्ट प्रकार का अधिकार निर्धारित कर उसे अवाछनीय गौरव प्रदान किया है, ऐसा मै समझता हूँ। कारण यह है कि निरकुशता स्वयं किसी वस्तु को स्थायित्व नही प्रदान कर सकती। सूक्ष्म निरीक्षण करने पर हमे यह ज्ञात होगा कि निरकुश सरकार की दीर्घकालीन समृद्धि का कारण भय न होकर धर्म ही रहा है। आप कुछ भी करे, मनुष्यो मे उनकी इच्छाशक्ति के स्वतत्र सयोग के अतिरिक्त और कोई वास्तविक शक्ति नही है और देशप्रेम अथवा धर्म ही इस ससार मे ऐसे दो प्रेरणा-स्रोत हैं, जो सभी लोगो मे एक समान लक्ष्य की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा जाग्रत कर सकते है।

धर्म की बुझी हुई लौ को कानून फिर से प्रज्ज्वलित नही कर सकते, परन्तु वे मनुष्यो मे अपने राष्ट्र के भाग्य के प्रति अभिरुचि जाग्रत कर सकते है। देशप्रेम के अस्पष्ट मनोवेगो का, जो मानव-हृदय मे चिरस्थायी बसे रहते है, जाग्रत और निर्देशित करना कानूनो पर निर्भर करता है। यदि यह मनोवेग विचारो, मनोविकारो और जीवन की दैनिक प्रवृत्तियो से सम्बन्धित हो तो वह एक स्थायी और विवेकपूर्ण मनोभाव मे परिणत हो जायगा। यह कहना कि ऐसे प्रयोग मे देरी हो चुकी है, सही नही है, क्योकि राष्ट्र मनुष्यो की तरह वृद्ध नही बनते और हमेशा प्रत्येक नयी पीढी की जनता विधानमण्डल के कार्यो की देखरेख करने के लिए तत्पर रहती हैं।

मै अमरीका मे विकेन्द्रीकरण के प्रशासकीय प्रभावों की नही, प्रत्युत उसके राजनीतिक प्रभावो की सबसे अधिक प्रशंसा करता हूँ। सयुक्त राज्य अमरीका मे हर जगह राष्ट्रीय हितो को मद्दे नजर रखा जाता है। सम्पूर्ण सघ के लोग उन्हे बहुत महत्वपूर्ण विषय मानते है और उनके साथ प्रत्येक नागरिक का बडा भावपूर्ण लगाव रहता है, मानो वे उसके स्वयं के हो। वह राष्ट्र के गौरव से अपने को गौरवान्वित समझता है, उसकी सफलता की भूरि-भूरि प्रशंसा करता है और मानता है कि इसमे वह खुद भी एक भागीदार है। वह देश की सामान्य खुशहाली मे आनन्द मनाता है, जो उसे लाभ पहुँचाती है। राज्य के प्रति उसकी भावनाएँ उसी प्रकार की है जो उसे अपने परिवार से सम्बन्धित करती है। वह जिस भाव से देश के कल्याण मे रुचि लेने लगता है, वह एक प्रकार की स्वार्थपरता ही है।

यूरोपीय लोगो के लिए एक सार्वजनिक अधिकारी उच्च सत्ता का प्रतिनिधि माना जाता है और अमरीकियो के लिए वह एक अधिकार का प्रतिनिधित्व

करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि अमरीका में व्यक्ति की आज्ञा का पालन कोई नहीं करता, बल्कि वह न्याय तथा विधि का पालन करता है। यदि मान लिया जाय कि उस धारणा को, जो नागरिक अपने सम्बन्ध में रखता है, बढ़ा-चढ़ा कर कहा जाता है तो भी वह स्वस्थ धारणा अवश्य है। वह बिना किसी हिचक के अपनी स्वयं की शक्तियों पर विश्वास करता है, जो उसे पूर्णतया पर्याप्त मालूम पड़ती हैं। जब कोई गैर-सरकारी व्यक्ति किसी आक्रमण की कल्पना करता है, तो वह सरकार से सहयोग प्राप्त करने के सम्बन्ध में कभी नहीं सोचता, चाहे उस कार्य का समाज के कल्याण से प्रत्यक्षतः कितना ही सम्बन्ध क्यों न हो। इसके विपरीत वह अपनी योजना प्रकाशित करता है, उसे पूरा करने का विश्वास दिलाता है, दूसरे व्यक्तियों से

साधन उपलब्ध हैं, वे बहुत ही कम है। राज्य-पुलिस का अस्तित्व नहीं है और पारपत्र (पासपोर्ट) अज्ञात है। सयुक्त-राज्य अमरीका की दण्ड-पुलिस की तुलना फ्रास की पुलिस से नही की जा सकती। वहाँ न्यायाधीश और सार्वजनिक अभिकर्ता इतने अधिक नही है, न वे अपराधी को पकड़ने के लिए हमेशा अगुआई करते है और वहाँ कैदियो का बयान जल्दी और मौखिक रूप से हो जाता है। फिर भी, मेरा विश्वास है कि अन्य देशो की अपेक्षा यहाँ बडी मुश्किल से कोई सजा पाने से बच सकता है। इसका कारण यह है कि अपराध की साक्षी देने मे और अपराधी को पकडवाने मे हर कोई दिलचस्पी रखता है। अमरीका मे अपने प्रवास-काल के समय मैने यह देखा कि देहात मे एक बहुत बडे अपराधी की खोज और गिरफ्तारी के लिए स्वेच्छा से समितियो का निर्माण किया गया था। यूरोप मे अपराधी एक ऐसा दु खी व्यक्ति होता है, जिसे अपने जीवन के लिए सत्ता के प्रतिनिधियो से सघर्ष करना पडता है, जबकि जनता उस सघर्ष की दर्शक मात्र रहती है। अमरीका मे ऐसे अपराधी को समस्त मानव-जाति के शत्रु के रूप मे देखा जाता है और सारा मानव-समाज उसके खिलाफ उठ खडा होता है।

मै समझता हूँ कि सभी राष्ट्रो के लिए प्रान्तीय सस्थाएँ उपयोगी होती है, परन्तु मुझे लगता है कि लोकतात्रिक समाज के लिए उनकी सबसे बडी आवश्यकता होती है। कुलीनतंत्रवाद मे स्वाधीनता के बीच व्यवस्था को हमेशा कायम रखा जा सकता है और चूँकि शासको को इस व्यवस्था मे काफी हानि उठानी पडती है, इसलिए व्यवस्था उनका बडा महत्वपूर्ण विषय बन जाती है। इसी प्रकार कुलीनतत्र निरकुशता के अत्याचारो से लोगो को बचाये रखता है, क्योकि उसके हाथो मे एक निरकुश का प्रतिरोध करने के लिए एक सगठित शक्ति रहती है, परन्तु बिना प्रातीय सस्थाओ के लोकतत्र के पास इन बुराइयो के प्रतिरोध के लिए कोई सरक्षण नही होता। छोटी-छोटी बातो मे स्वातंत्र्य से अनभ्यस्त जनसाधारण बडे विषयो मे उसका सयम के साथ प्रयोग करना कैसे सीख सकते है ? किसी देश मे, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति निर्बल है तथा जहाँ के नागरिक किसी सामान्य हित से एक सूत्र मे बंधे हुए नही है, निरकुश शासक का प्रतिरोध कैसे किया जा सकता है ? जो भीड की स्वेच्छाचारिता से सत्रस्त रहते हो और जो निरकुश शक्ति से डरते हों, उन्हे समान रूप से प्रान्तीय स्वाधीनताओ के उत्तरोत्तर विकास की कामना करनी चाहिए।

मेरा यह भी विश्वास है कि अनेक कारणो से केन्द्रित प्रशासन के बोझ से लोकतान्त्रिक राष्ट्रो के दब जाने की सर्वाधिक आशंका रहती है। उनमे से कुछ कारण ये है।

इन राष्ट्रो की यह निरन्तर प्रवृत्ति रही है कि सरकार की सारी शक्ति को एकमात्र सत्ता के हाथो मे, जो जनता का प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व करती है, केन्द्रित कर दिया जाय। क्योकि जनता से परे एक से व्यक्तियो की भीड़ के अतिरिक कुछ भी दिखाई नही पडता। परन्तु जब उसी सत्ता के पास सरकार के सारे गुण पहले से ही विद्यमान हो, तो वह प्रशासन के विस्तार मे प्रवेश करने से अपने को नही रोक सकती और जैसा कि फ्रास मे हुआ, अन्ततोगत्वा इस प्रकार का अवसर निश्चित रूप से उपस्थित हो जाता है। फ्रास की राज्यक्रान्ति मे दो भावनाएँ विरोधी दिशाओ मे काम कर रही थी, जिनके विषय मे कदापि भ्रम मे नही पड़ना चाहिए। उनमे से एक स्वाधीनता के पक्ष मे थी और दूसरी निरकुशता के। प्राचीन राजतंत्र के अन्तर्गत कानूनो का एकमात्र प्रणेता सम्राट था और उस सम्राट के अधिकार के नीचे कतिपय अर्द्धनष्ट प्रान्तीय सस्थाओ के अवशेष उस समय भी जीवित थे। ये प्रान्तीय सस्थाएँ अस्थिर और अव्यवस्थित थी और प्रायः अनर्गल कार्य करती थीं। वे कभी-कभी कुलीनतंत्र के हाथो मे पड़कर अत्याचार के साधन बन गयी थी। राज्यक्रान्ति ने शीघ्र ही अपने को राजवश और प्रान्तीय सस्थाओ का शत्रु घोषित कर दिया। उसने अपने पहले की समस्त वस्तुओ, निरंकुश सत्ता और उसके दुरुपयोगो के अवरोधो के प्रति अन्धाधुन्ध घृणा फैलायी और उसकी प्रवृत्ति एक साथ ही गणतंत्र एवं केन्द्रीकरण की स्थापना करने की थी। फ्रास की राज्य-क्रान्ति का यह दुहरा स्वरूप एक ऐसा तथ्य है, जिसका उपयोग निरकुश सत्ता के समर्थको द्वारा बडी निपुणता से किया गया। क्या उन्हे निरंकुशता के पक्ष का समर्थन करने का दोषी ठहराया जा सकता है, जब कि उन्होने उस केन्द्रित प्रशासन का समर्थन किया है जो क्रान्ति की एक महान अभिनव देन थी?

इस तरह लोकप्रियता, जनता के अधिकारो के विरोधो से संयुक्त हो सकती है और क्रूर शासन का गुप्त दास स्वातंत्र्य का प्रेमी होने की घोषणा कर सकता है।

मै ऐसे दो देशों मे गया हूँ, जहाँ स्वाधीनता अत्यन्त परिपूर्णता से संस्थापित है और मैं उन देशो के विभिन्न दलो के विचारो को सुन चुका हूँ। अमरीका मे मै ऐसे व्यक्तियो से मिला हूँ, जो इंग्लैड मे सघ की लोकतान्त्रिक संस्थाओ

को समाप्त कर देने की गुप्त इच्छा रखते है। ऐसे लोग भी मिले, जो खुले-आम कुलीनवाद पर आक्षेप कर रहे थे। परन्तु मैंने एक भी ऐसा व्यक्ति नही पाया जो प्रान्तीय स्वाधीनता को एक महान वस्तु न समझता हो। दोनो देशो मे राज्य की बुराई के हजारो कारण मुझे सुनने को मिले, परन्तु उनमे स्थानीय पद्धति का कभी उल्लेख नही हुआ। मैने नागरिकों के मुख से उनके देश की शक्ति और समृद्धि के सम्बन्ध मे अनेक प्रशसाएँ सुनी, परन्तु उन सबने स्थानीय सस्थाओ के लाभो को सर्वप्रथम स्थान प्रदान किया।

क्या मै यह धारणा बना लूँ कि जब मनुष्य, जो स्वाभाविक रूप से धर्मों, विचारो और राजनीतिक सिद्धान्तो पर एकमत नही है, किसी एक बात पर सहमत होते है (और वह बात ऐसी है जिसके सम्बन्ध मे वे ही सर्वश्रेष्ठ निर्णायक हो सकते हैं, क्योकि उसका उनको दैनिक अनुभव है) तो सब-के सब गलती पर हैं? केवल वे ही राष्ट्र प्रान्तीय स्वाधीनताओ की उपयोगिताओ से इनकार करते हैं, जहाँ वे बहुत ही कम होती है—अर्थात् वे केवल उन सस्थाओ पर प्रतिबंध लगाते हैं, जिनके सम्बन्ध मे उनको जानकारी नही है।

६. संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायिक शक्ति

अमरीका के न्यायिक अधिकारो पर अलग से एक परिच्छेद लिखना मैने उपयुक्त समझा है, जिससे उनका प्रासगिक जिक्र कर देने मात्र से पाठको की दृष्टि मे उनकी राजनीतिक महत्ता कही कम न हो जाये। अमरीका के अतिरिक्त अन्य राष्ट्रो मे भी राज्यमण्डल सस्थापित हुए है। मैने गणराज्यो को केवल नयी दुनिया के किनारो पर ही नही, अपितु अन्य स्थानो पर भी देखा है। प्रतिनिधिमूलक सरकार की पद्धति यूरोप के अनेक राज्यो मे भी अपनायी गयी है, परन्तु मै नही समझता कि अब तक विश्व के किसी भी देश ने न्यायिक शक्ति को इस ढंग से सगठित किया है, जैसा कि अमरीकियो द्वारा किया गया है। सयुक्त राज्य अमरीका का न्यायिक सगठन एक ऐसी सस्था है, जिसे किसी अजनबी को समझने मे बडी कठिनाई होती है। वह सुनता है कि प्रतिदिन घटित होने वाली राजनीतिक घटनाओ मे न्यायाधीश के अधिकार की दुहाई दी जाती है। इससे वह स्वाभाविक रूप से इस निष्कर्ष पर पहुँच जाता है कि सयुक्त राज्य अमरीका मे न्यायाधीश बडे महत्त्वपूर्ण

राजनीतिक अधिकारी होते है। फिर भी, जब वह न्यायाधिकरणो के स्वरूप का निरीक्षण करता है तो उसे प्रथम दृष्टि मे जो कुछ दिखायी देता है, वह इन संस्थाओ की सामान्य प्रवृत्तियो और विशेषाधिकारो से तनिक भी विपरीत नही होता। उसे सार्वजनिक मामलो मे हस्तक्षेप केवल संयोगवश ही दिखायी पड़ता है, परन्तु यह सयोग ऐसा है जो प्रतिदिन घटित होता है...।

समस्त राष्ट्रो मे न्यायिक सत्ता का प्रथम लक्षण पचायत का कर्त्तव्य है, परन्तु किसी अदालत (न्यायाधिकरण) के हस्तक्षेप को उचित सिद्ध करने के लिए अधिकारो का विरोध करना चाहिए और किसी न्यायाधीश का निर्णय प्राप्त करने के पहिले कोई कार्रवाई होनी चाहिए। अतः जब तक किसी कानून को कोई चुनौती नही देता तब तक किसी न्यायिक संस्था को उस पर विचार करने के लिए नही कहा जाता और वह प्रत्यक्षानुभूति के बिना अपना अस्तित्व बनाये रख सकती है। यदि कोई न्यायाधीश प्रस्तुत किसी विवाद मे उस विवाद से सम्बन्धित कानून पर आक्षेप करता है तो वह अपने सामान्य कर्तव्यो के क्षेत्र को विस्तृत कर देता है, परन्तु फिर भी वह उसकी सीमा का अतिक्रमण नही करता, क्योंकि विवाद का निर्णय करने के लिए उससे सम्बधित कानून पर किसी-न-किसी रूप मे निर्णय करना ही पड़ता है। परन्तु यदि वह विवादसम्बन्धी कुछ कार्रवाई किये बिना कानून पर अपनी राय जाहिर करता है तो स्पष्टतः अपने क्षेत्र का उल्लंघन और विधान निर्मातृ सत्ता के क्षेत्र पर आक्रमण करता है।

न्यायिक सत्ता का द्वितीय लक्षण यह है कि वह सामान्य सिद्धान्तो पर नही, अपितु विशिष्ट विवादो पर ही अपना निर्णय देती है। यदि कोई न्यायाधीश किसी विशिष्ट प्रश्न पर निर्णय करते समय किसी सामान्य सिद्धान्त को, किसी निर्णय द्वारा, जो उस सिद्धान्त के समस्त तर्को को अस्वीकार कर देता है और परिणामतः उसे रद्द कर देता है, अमान्य ठहरा देता है, तो भी वह अपने प्रकार्यों की सामान्य सीमाओ मे ही रहता है; परन्तु यदि वह बिना किसी विशिष्ट प्रश्न को ध्यान मे रखे किसी सामान्य सिद्धान्त पर प्रत्यक्ष प्रहार करता है तो वह उस क्षेत्र का उल्लंघन कर देता है, जिसमे उसके अधिकारो को, समस्त राष्ट्रो ने परिसीमित कर रखा है। इस स्थिति मे वह किसी न्यायाधीश से अधिक महत्वपूर्ण और सम्भवतः अधिक प्रयोजनीय प्रभाव ग्रहण कर लेता है। परन्तु वह न्यायिक शक्ति का प्रतिनिधित्व करने योग्य नही रह जाता।

न्यायिकशक्ति का तीसरा लक्षण यह है कि वह तभी कार्रवाई कर सकती है जब उसे ऐसा करने के लिए कहा जाय या कानूनी शब्दों मे जब उसने

किसी घटना पर ध्यान दिया हो। यह लक्षण उपर्युक्त दो लक्षणो की अपेक्षा कम सामान्य है, परन्तु अपवादो के बावजूद मेरी दृष्टि मे वह अनिवार्य जैसा ही समझा जायगा। न्यायिक शक्ति अपनी प्रकृति से क्रियाहीन है, किसी परिणाम की प्राप्ति के लिए ही उसे गतिशील बनाना चाहिए। जब उसे किसी अपराध को रोकने के लिए कहा जाता है, तब वह अपराधी को सजा देती है, जब किसी दोष को दूर करना होता है, जब वह उसे दूर करने के लिए तैयार रहती है, जब किसी अधिनियम की व्याख्या करने की आवश्यकता पड़ती है, तब वह उसकी व्याख्या करने को तत्पर रहती है—परन्तु वह अपराधियो का पीछा नही करती, दोषो की खोज नही करती या अपने इच्छानुसार प्रमाण की छानबीन नही करती। जो न्यायिक अधिकारी अगुआई करता है और अनधिकारपूर्वक कानूनो का दोषविवेचन करता है, वह अपने अधिकारो की निष्क्रिय प्रवृत्ति पर कुछ अगो मे आघात पहुँचायेगा।

न्यायिकशक्ति के इन तीनो विशिष्ट लक्षणों को अमरीकियो ने अपने अधिकार मे कर रखा है। अमरीकी न्यायाधीश मुकदमा दायर होने पर ही निर्णय की घोषणा करता है, वह केवल विशिष्ट विवादो से सर्वथा परिचित रहता है और वह तब तक कार्रवाई नही कर सकता, जब तक कि अदालत मे मामला विधिवत् पेश नहीं हो जाता। अतः उसकी स्थिति पूर्णतः अन्य राष्ट्रो के न्यायाधीशो की स्थिति के ही समान है। फिर भी वह बृहत् राजनीतिक अधिकारो से युक्त है। यह कैसे होता है? यदि उसके अधिकार का क्षेत्र और उसकी कार्रवाईयो के साधन उन अन्य न्यायाधीशो के समान ही है, तो कहॉ से उसे वह शक्ति प्राप्त होती है जो उनके पास नही है? इस भेद का कारण इस छोटे-से तथ्य में निहित है कि अमरीकियो ने कानूनों की अपेक्षा सविधान के आधार पर निर्णय करने के न्यायाधीशो के अधिकार को मान्य किया है। दूसरे शब्दो मे अमरीकियो ने उन्हे ऐसे कानूनो को अमल मे लाने की अनुमति नही दी है, जो उन्हे अवैधानिक प्रतीत होते हों

मुझे इस बात का पता है कि कभी-कभी अन्य देशो के न्यायालयो ने भी इसी प्रकार के अधिकार का दावा किया है, किन्तु उनका यह दावा निरर्थक ही सिद्ध हुआ है, किन्तु अमरीका मे सभी सत्ताओ ने इसे मान्य किया है और कोई भी दल, इस अधिकार से इनकार करता हुआ नही दिखायी देता, व्यक्ति की तो बात ही दूर रही। इस तथ्य को केवल अमरीकी सविधानो के सिद्धान्तो द्वारा ही समझाया जा सकता है। फ्रास मे सविधान अपरिवर्तनीय है या कम-से-कम समझा जाता है और सामान्य तौर से

स्वीकृत सिद्धान्त यह है कि किसी शक्ति को उसके किसी भाग को बदलने का अधिकार नही है। इंग्लैण्ड मे संविधान निरन्तर बदलता रह सकता हैं, बल्कि उसका वास्तविक रूप मे अस्तित्व नही है। संसद् एक साथ ही कानून और संविधान, दोनो का निर्माण करने का कार्य करती है। अमरीका के राजनीतिक सिद्धान्त अधिक सरल और अधिक युक्तिपूर्ण है। फ्रास की तरह अमरीकी सविधान अपरिवर्तनीय नही समझा जाता और न इंग्लैण्ड की तरह समाज की साधारण शक्तियो द्वारा उसमे परिवर्तन किये जा सकते है। वह सम्पूर्ण रूप से एक पृथक वस्तु है, जो समस्त जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व करने के कारण विधायको के लिए भी उतना ही माननीय है, जितना कि गैर-सरकारी नागरिको के लिए; किन्तु जिसमे प्रस्थापित नियमो के अनुसार, पूर्व निश्चित परिस्थितियो मे जनता की इच्छा द्वारा परिवर्तन किया जा सकता है। इसलिए अमरीका मे साविधान बदलता हुआ रह सकता है, परन्तु जब तक उसका अस्तित्व है, वह समस्त अधिकार का उद्गम और प्रधान शक्ति का एक मात्र साधन है।

सयुक्तराज्य अमरीका मे विधान जितना गैर-सरकारी नागरिको पर लागू होता है, उतना ही विधायको पर भी लागू होता है। चूँकि वह सर्वप्रथम और सर्वप्रधान कानून है, इसलिए उसमे किसी कानून द्वारा परिवर्तन नहीं किया जा सकता और इसलिए यह उचित ही है कि न्यायाधिकरण किसी कानून की अपेक्षा संविधान की आज्ञा का पालन करना अधिक पसन्द करे। यह स्थिति न्याय-सत्ता का मूल तत्व है, क्योकि उस कानूनी बन्धन को चुनना, जिससे वह बडी दृढता से बंधा रहता है, वस्तुतः एक प्रकार से प्रत्येक मजिस्ट्रेट का प्राकृतिक अधिकार है।

फ्रांस मे भी सविधान सर्वप्रथम कानून है और न्यायाधीशों को उसे अपने निर्णयो का आधार मानने का अधिकार है। परन्तु यदि वे उस अधिकार का प्रयोग करे तो उन्हे अपने अधिकारो से अधिक पवित्र अधिकारों का अर्थात् समाज के उन अधिकारो पर जिसके नाम पर वे कार्य कर रहे है, अतिक्रमण के लिए बाध्य हो जाना पडेगा। इस विषय मे राज्य के हेतु स्पष्टतः सामान्य प्रयोजनो से अधिक शक्तिशाली है। अमरीका मे, जहाँ राष्ट्र अपने विधान को बदल कर मजिस्ट्रेटो को आज्ञा मानने के लिए बाधित कर सकता है, इस प्रकार के खतरे का कोई भय नही है। इसलिए इस विषय मे राजनीतिक और

तर्कसगत हेतु एक समान है और जनता और न्यायाधीश, दोनो ही अपने अपने विशेषाधिकारों को सुरक्षित रखते है।

सयुक्त-राज्य अमरीका के किसी न्यायाधिकरण मे जब कभी किसी ऐसे कानून की दुहाई दी जाती है, जिसे न्यायाधीश असाविधानिक मानता है, तो न्यायाधिकरण उस कानून को एक नियम के रूप में स्वीकार करने से इनकार कर सकता है। यह अधिकार अमरीकी मजिस्ट्रेट का एक-मात्र विशिष्ट अधिकार है, किन्तु यह अधिकार अति व्यापक राजनीतिक प्रभाव की सृष्टि करता है। सच तो यह है कि बहुत थोडे कानून अधिक समय तक न्यायसत्ता के खोजपूर्ण विश्लेषण से बचे रहे सकते है, क्योकि बहुत कम कानून ऐसे है जो किसी-न-किसी वैयक्तिक हित के विरुद्ध न हो और ऐसा कोई भी कानून नहीं है, जो किसी न्यायालय मे पक्षो की इच्छा से या विवाद की आवश्यकता से पेश न किया जा सकता हो। परन्तु ज्योही कोई न्यायाधीश किसी कानून विशेष को किसी विवाद के सम्बन्ध मे लागू करने से इनकार कर देता है, त्योही वह कानून अपने नैतिक प्रभाव का कुछ अश खो देता है। वे लोग, जिनके लिए वह कानून प्रतिकूल रहता है, जान जाते है कि उसकी सत्ता को समाप्त करने के साधन विद्यमान हैं और जब तक वह कानून शक्तिहीन नही हो जाता, तब तक इस प्रकार के मुकदमो की सख्या बढती ही जाती है।

ऐसी स्थिति मे विकल्प यह रहता है कि या तो जनता सविधान मे परिवर्तन करे या विधान-सभा कानून को रद्द करे। अतः न्यायालयो को जो राजनीतिक शक्ति प्रदान की गयी है, वह अत्यन्त व्यापक है, किन्तु चूँकि न्यायालयो को छोड कर किसी भी द्वारा कानूनो पर प्रहार किया जाना असम्भव है, इसलिए इस शक्ति की बुराइयाँ पर्याप्तरूप से घट गयी है। यदि न्यायाधीश को सैद्धातिक सामान्यताओ के आधार पर कानून को चुनौती देने का अधिकार प्राप्त होता, यदि उसे अग्रणी बनने और विधायक की निदा करने का अधिकार होता, तो वह एक प्रमुख राजनीतिक कार्य करता और एक पक्ष के समर्थक अथवा विरोधी के रूप मे राष्ट्र की विरोधी भावनाओ को सघर्षरत कर देता। परन्तु जब कोई न्यायाधीश किसी प्रश्न विशेष पर होने वाले अस्पष्ट वाद-विवाद में किसी कानून को चुनौती देता है, तो जनता को उसकी आलोचना के महत्व की जानकारी नही हो पाती, उसके निर्णय का प्रभाव एक व्यक्ति के हितो पर पडता है और कानून केवल प्रासगिक रूप से तुच्छ समझा जाता है। इसके अतिरिक्त,

यद्यपि कानून की निन्दा की जाती है, परन्तु वह रद्द नहीं होता, उसका नैतिक प्रभाव घट सकता है, परन्तु उसकी शक्ति का हरण नहीं किया जाता। उसका अन्तिम हनन न्यायाधिकारियों द्वारा बारम्बार की गयी निन्दा से ही हो सकता है। यह भी देखने में आयेगा कि कानून को चुनौती देने का कार्य वैयक्तिक हितों पर छोड़ देने से और कानून की परीक्षा को एक व्यक्ति के मुकदमे के साथ ही घनिष्ठतापूर्वक सम्बद्ध कर देने से मर्यादाहीन आक्रमणों और दलगत भावना के दैनिक प्रहारों से कानून सुरक्षित रहता है। विधायकों की त्रुटियों को केवल किसी वास्तविक अभाव की पूर्ति के लिए ही खोलकर रखा जाता है और किसी अभियोग के आधार के रूप में सदा एक निश्चयात्मक और सराहनीय तथ्य को ही प्रस्तुत किया जाता है।

मेरा विश्वास है कि अमरीकी न्यायालयों की यह कार्यपद्धति स्वतन्त्रता और सार्वजनिक व्यवस्था, दोनों के लिए अत्यन्त अनुकूल है। यदि न्यायाधीश खुले और प्रत्यक्ष रूप से विधायक की आलोचना ही कर सकता, तो कभी-कभी वह उसका विरोध करने से डरता और अन्य समयों पर दलगत भावना उसे प्रत्येक अवसर पर विधायक की अवहेलना करने के लिए प्रोत्साहित करती। परिणामतः जिस सत्ता से कानून निःसृत होते हैं, उस सत्ता के निर्बल होने पर कानूनों पर प्रहार किया जाता और उस सत्ता के प्रबल होने पर कानूनों का

सम्भव होने पर भी हो सकता है कि कोई उसे अदालत के सामने लाने की परवाह न करे। अमरीकियों ने बहुधा इस असुविधा का अनुभव किया है, किन्तु उन्होने उसके समाधान को अपूर्ण ही छोड दिया है, जिससे वह कहीं इतना अधिक प्रभावशाली न हो जाय कि कतिपय मामलो मे वह खतरनाक सिद्ध होने लगे। इन सीमाओ के अन्तर्गत अमरीकी न्यायालयों को किसी कानून को असाविधानिक घोषित करने का जो अधिकार प्राप्त है, वह राजनीतिक विधान-सभाओ के अत्याचार के विरुद्ध सोचे गये अवरोधो में सबसे अधिक शक्तिशाली अवरोध है।

यह बताने की आवश्यकता नही कि अमरीका जैसे एक स्वतंत्र देश मे समस्त नागरिको को साधारण न्यायाधिकरणों के समक्ष सार्वजनिक अधिकारियो के विरुद्ध आरोप लगाने का अधिकार प्राप्त है और समस्त न्यायाधीशों को सार्वजनिक अधिकारियो को दंडित करने का अधिकार प्राप्त है। कानूनो का उल्लघन करने पर शासन-कार्यकारिणी के अभिकर्ताओं को दड देने का जो अधिकार न्यायालयों को प्रदान किया गया है, वह इतना स्वाभाविक अधिकार है कि उसे एक असाधारण विशेषाधिकार नहीं समझा जा सकता। न मुझे ऐसा ही प्रतीत होता है कि समस्त सार्वजनिक अधिकारियों को न्यायाधिकरणो के प्रति उत्तरदायी बना देने से संयुक्त राज्य अमरीका मे शासन का स्रोत क्षीण हो गया है। इसके विपरीत ऐसा प्रतीत होता है कि अमरीकियो ने इस साधन द्वारा उस सम्मान मे वृद्धि कर दी है, जो अधिकारियो को प्राप्त होना चाहिए और साथ-ही-साथ इन अधिकारियो को भी अपराध न करने के लिए अधिक सतर्क बना दिया है। सयुक्त-राज्य अमरीका मे राजनीतिक मुकदमो की सख्या की न्यूनता को देख कर मुझे आश्चर्य हुआ, किन्तु इस परिस्थिति के कारण का पता लगाने में मुझे कोई कठिनाई नही हुई। मुकदमेबाजी, चाहे उसका स्वरूप कुछ भी हो, सदा ही एक कठिन एव व्ययसाध्य कार्य होता है, समाचारपत्रो मे किसी सार्वजनिक व्यक्ति पर प्रहार करना सरल है, किन्तु उसे किसी न्यायाधिकरण के समक्ष उपस्थित करने का उद्देश्य अवश्य ही गम्भीर होना चाहिए। किसी सार्वजनिक अधिकारी के विरुद्ध मुकदमा चलाने के पूर्व शिकायत का एक ठोस आधार अवश्य रहना चाहिए और जब ये अधिकारी अपने विरुद्ध मुकदमा चलाये जाने से भयभीत रहते है, तब वे इस बात के लिए अत्यन्त सतर्क रहते है कि शिकायत के इस प्रकार के ठोस आधार मिल सके।

यह अमरीकी संस्थाओं के गणतंत्रात्मक स्वरूप पर निर्भर नहीं करता, क्योंकि इंग्लैण्ड मे भी ऐसा ही होता है। ये दोनो राष्ट्र राज्य के मुख्य अधिकारियों के विरुद्ध आरोप लगाये जाने को अपनी स्वतंत्रता के लिए एक 'गारंटी' नही मानते, किन्तु उनकी मान्यता है कि स्वतत्रता की रक्षा उन महान न्यायिक कार्य-प्रणालियो द्वारा नही होती, जिनका प्रयोग प्राय. अत्यन्त विलम्ब से होता है, प्रत्युत उन छोटे-छोटे मुकदमो द्वारा होती है, जिन्हे तुच्छतम नागरिक भी किसी भी समय चला सकता है।

मध्य युगो मे, जब अपराधियो तक पहुँच सकना अत्यन्त दुष्कर होता था, न्यायाधीश गिरफ्तार हो जाने वाले थोड़े-से व्यक्तियो को भयंकर दण्ड दिया करते थे, किन्तु इससे अपराधो की सख्या मे कोई कमी नही होती थी। उसके बाद से इस बात का पता चला कि जब न्याय अधिक निश्चयात्मक और अधिक नम्र होता है, तब वह अधिक प्रभावकारी होता है। अग्रेजो और अमरीकियो की मान्यता है कि दण्ड मे कमी कर तथा दण्ड देने की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाकर अत्याचार और दमन को भी अन्य किसी अपराध की तरह ही माना जाय।

७. संघीय संविधान के पहलू

जैसा कि मै पूर्व मे उल्लेख कर चुका हूँ, उन तेरह उपनिवेशो के, जिन्होंने पिछली शताब्दी के अन्त मे इग्लैण्ड के जुए को एक साथ ही उतार फेका था, एक ही धर्म, एक ही भाषा, एक ही रीति-रिवाज और प्राय. एक-से ही कानून थे। वे सब एक सामान्य शत्रु के विरुद्ध संघर्ष कर रहे थे और ये सब तथ्य उन्हे परस्पर मिलाने के लिए और एक राष्ट्र के रूप मे उनका एकीकरण करने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली थे। परन्तु चूंकि उनमे से प्रत्येक का सदैव अपना एक अलग अस्तित्व था और प्रत्येक की अपनी सीमा के भीतर अलग सरकार थी, इसलिए भिन्न रितो और विशिष्ट प्रथाओं का प्रादुर्भाव हुआ जो इस प्रकार के दृढ और घनिष्ट संयोग के मार्ग मे बाधक थे; क्योंकि ऐसा होने पर प्रत्येक का व्यक्तिगत महत्व सब के सामान्य महत्व मे मिलकर समाप्त हो जाता। अतः दो परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों का जन्म हुआ। उनमे से एक आग्ल-अमरीकियों को एक होने के लिए प्रोत्साहन दे रही थी और दूसरी उनकी शक्ति को विभाजित कर रही थी।

जब तक मातृदेश के साथ युद्ध चलता रहा, सघ का सिद्धान्त आवश्यकता के कारण जीवित रहा और यद्यपि उसे निर्मित करने वाले कानून दोषपूर्ण थे, तथापि उनकी अपूर्णताओं के बावजूद सामान्य हित ने उनको परस्पर बॉध रखा था, परन्तु ज्योही शान्ति-सन्धि हुई, इस विधान के दोष सामने प्रकट होने लगे और अचानक राज्य का विघटन होता दिखायी पडा। प्रत्येक उपनिवेश ने स्वाधीन गणराज्य बनकर निरकुश सार्वभौमता धारण की। सघीय सरकार अपने सविधान द्वारा निष्क्रिय करार दी गयी और सामान्य खतरे की उपस्थिति से पूर्व की भॉति उसका अस्तित्व नही रहा। उसने यूरोप के बडे राष्ट्रो द्वारा अपने ध्वज का अपमान होते देखा और उसके लिए उस समय रेड इडियन जन-जाति के विरुद्ध सघर्ष मे रत रहना और स्वाधीनता-सग्राम के दिनों मे लिये गये ऋण का ब्याज चुकाना अत्यन्त कठिन हो गया। वह उस समय विनाश के किनारे पर खडी थी, जब उसने अधिकृत रूप से सरकार के संचालन की अपनी अयोग्यता घोषित की और सम्बन्धित सत्ता से अपील की।

यदि अमरीका कभी भी वैभव के उच्च शिखर तक पहुँचा है (चाहे वह थोड़े समय के लिए हो), जहॉ निवासियो की अहमन्य भावना प्रदर्शित होने लगी हो, तो वह यही ऐश्वर्यशाली अवसर था, जब राष्ट्रीय शक्ति ने मानो अपनी सत्ता का परित्याग कर दिया था। जनता को अपनी स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए शक्ति के साथ सघर्ष करते हुए हम सभी युगो मे देखते है, परन्तु अग्रेजी जुए से मुक्त होने के लिए अमरीकियो ने जो प्रयत्न किये, उन्हे काफी बढा-चढा कर बताया गया है। वे अपने शत्रुओ से तीन हजार मील समुद्र की दूरी पर थे और शक्तिशाली मित्र का उन्हे सहारा था। इस प्रकार सयुक्त-राज्य अमरीका की विजय का मुख्य कारण उसकी भौगोलिक स्थिति थी, न कि उसकी सेनाओ की वीरता या नागरिकों की देशभक्ति। अमरीका के स्वाधीनता-युद्ध की फ्रास की राज्य-क्राति से या अमरीकियो के प्रयत्नो की फ्रासीसियो के प्रयत्नो से तुलना करना हास्यास्पद होगा। जब फ्रास पर समस्त यूरोप द्वारा आक्रमण किया गया, तब उसने बिना धन, बिना साख, बिना मित्रो की सहायता के, शत्रुओ से मोर्चा लेने के लिए अपनी जनसख्या के बीसवे भाग को युद्ध मे झोक दिया और एक हाथ मे राज्यक्राति की मशाल लेकर देश की सीमाओ से पार दुनिया के अन्य भागो मे उसकी लपटो को पहुँचा दिया, परन्तु देश के भीतर ही खाक करने वाली एक दूसरी आग जल रही थी, जिससे

उसका दम घुटने लगा था, परन्तु विधानमण्डल द्वारा स्थिति का यह स्पष्टीकरण होने पर कि सरकार का कारोबार ठप्प हो गया है, विशाल जनसंख्या का शान्त रहना और बुराई की गहनता का सतर्कतापूर्वक परीक्षण करने के लिए अपना सूक्ष्म अनुवीक्षण करना और सकट का समाधान न होने तक, जिसके सामने उसने मनुष्य जाति का बिना आँसू और खून बहाये स्वेच्छा से आत्मसमर्पण कर दिया था, धैर्यपूर्वक पूरे दो वर्ष तक प्रतीक्षा करते रहना समाज के इतिहास मे एक अपूर्व घटना है।

अमरीका मे जब प्रथम सविधान की अपर्याप्तताएँ ज्ञात हुई, तब अमरीका को दोहरा लाभ हुआ। एक तो उसे क्राति के उफान के बाद की शान्ति हुई और दूसरे उन महान व्यक्तियों का सहयोग मिला, जिन्हे क्रान्ति ने उत्पन्न किया था। द्वितीय सविधान बनाने का कार्य हाथ मे लेने वाली विधान सभा छोटी थी, परन्तु उसका सभापति जार्ज वाशिग्टन था और उसमे नयी दुनिया के अत्यन्त दुर्लभ बुद्धिवाले सम्भ्रान्त चरित्र के व्यक्ति सम्मिलित थे। इस राष्ट्रीय सविधान सभा ने दीर्घ और गम्भीर विचार-विमर्श के बाद सामान्य कानूनो का विधान स्वीकृति के लिए जनता के सामने प्रस्तुत किया जिसके द्वारा अब तक संघ का प्रशासन चलाया जाता है। सभी राज्यो ने यथाक्रम इस संविधान को अगीकृत किया। दो वर्षों की अराजकता के पश्चात् सन् १८८९ में नयी सघीय सरकार का निर्माण हुआ। जब अमरीका की क्रान्ति सफलता के साथ समाप्त हुई तब फ्रास की क्रान्ति का उदय हुआ।

अमरीकियो के सामने मूल प्रश्न यह बना रहा कि सार्वभौमता को किस प्रकार विभाजित किया जाय कि सघ बनाने वाले भिन्न राज्यो में प्रत्येक को अपनी आन्तरिक समृद्धि से सम्बन्धित सभी विषयों मे प्रशासन करने का अधिकार यथावत् बना रहे, जब कि सम्पूर्ण राष्ट्र जिसका प्रतिनिधित्व संघ द्वारा किया जाय, निरन्तर एक गठित संस्था के रूप में बना रहे और सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति करता रहे। यह एक जटिल और कठिन समस्या थी। पहले से ही दोनों सरकारो को मिलने वाली सत्ता के भाग को ठीक-ठीक निश्चित कर देना असम्भव था, जिस प्रकार राष्ट्र के जीवन में घटित होने वाली समस्त घटनाओं की भविष्यवाणी नहीं की जा सकती।

सघीय सरकार के कर्तव्य और अधिकार सरल थे, जिनकी ठीक-ठीक व्याख्या की जा सकती थी क्योंकि सघ का निर्माण कतिपय महत्त्व सामान्य

आवश्यकताओं की पूर्ति के स्पट उद्देश्य से किया गया था। दूसरी ओर अकेले राज्यों के अधिकार और कर्तव्य जटिल और विविध थे क्योंकि उनकी सरकार ने सामाजिक जीवन की समस्त सूक्ष्मताओ मे अन्त प्रवेश पा लिया था। इसलिए सघीय सरकार के कार्यों की व्याख्या बडी सावधानी के साथ की गयी और जो कार्य उनमे सम्मिलित नही किये गये, उन्हे विभिन्न राज्यों की सरकारों को सौंप देने की घोषणा की गयी। इस प्रकार राज्यों की सरकार नियंत्रित रही, परन्तु राज्यमण्डल की सरकार इसका अपवाद थी। परन्तु जैसी कि भविष्यवाणी की गयी कि इस अपवादस्वरूप व्यवहार में सत्ता की वास्तविक सीमाएँ क्या हों? इस सम्बन्ध मे प्रश्न उठ खड़े हो सकते हैं और इन प्रश्नों को विभिन्न राज्यो मे, स्वयं राज्यों द्वारा संस्थापित सामान्य न्यायालयों के सामने निर्णयार्थ प्रस्तुत करना खतरनाक होगा। अत· सविधान के अन्तर्गत एक उच्चसघीय न्यायालय का निर्माण किया गया, जिसका मुख्य कर्तव्य दोनों प्रतिद्वन्द्वी सरकारों के मध्य सन्तुलन बनाये रखना था।

मनुष्य स्वत· पूर्णतया एकाकी हैं और उनको एक सरकार के अन्तर्गत संघटित करने की आवश्यकता क्यों है, इसका विशिष्ट कारण यह है कि वे विदेशियों के सामने विशेषाधिकारों से युक्त दिखाई पड़े। इसलिए शान्ति और युद्ध करने, व्यापारिक सन्धियॉ करने, फौज का विस्तार करने और जहाजी बेड़े को सुसज्जित करने का अनन्य अधिकार संघ को सौंपा गया। समाज के आन्तरिक प्रकार्यों के सचालन के लिए राष्ट्रीय सरकार की आवश्यकता इतनी महत्वपूर्ण नही समझी गयी, परन्तु कतिपय ऐसे सामान्य हित हैं, जिनकी देखभाल केवल सामान्य सत्ता द्वारा विशेष सुविधापूर्वक की जा सकती है। संघ को आर्थिक व्यवस्था पर नियंत्रण रखने, डाक व्यवस्था का प्रबन्ध करने और देश के विविध-विभिन्न भागों को मिलाने के लिए बडी सड्कों का निर्माण करने का अधिकार दिया गया। प्रत्येक राज्य की सरकार को उसके स्वय के अधिकार क्षेत्र मे स्वतंत्रता दी गयी, फिर भी सघीय सरकार को राज्य के आन्तरिक प्रकार्यों के कतिपय पूर्व निश्चित उन मामलो मे, जिनमे उनकी स्वाधीनता का अदूरदर्शी व्यवहार सारे संघ की प्रतिष्ठा को खतरे मे डाल सकता है, हस्तक्षेप करने का अधिकार दिया गया। अत. जब कि राज्यमण्डल के प्रत्येक गणतंत्र को स्वेच्छा से अपने अधिनियमों मे संशोधन करने और बदलने का अधिकार सुरक्षित रखा गया था, परन्तु पश्चात् कानूनो को लागू करना या कुलीनता की पदवी

प्रदान करना निषिद्ध कर दिया है। अन्त मे, जैसा कि सघीय सरकार के लिए अपने उत्तरदायित्वो को निभाना आवश्यक था, उसे कर-निर्धारण के असीम अधिकार दिये गये।

सघीय सविधान द्वारा स्थापित शक्तियो के विभाजन के परीक्षण में, एक ओर विभिन्न राज्यो के लिए सुरक्षित सार्वभौमता के अश का तथा दूसरी ओर सत्ता के उस भाग का, जो सघ को प्रदान किया गया, लक्ष्य निरूपण करने पर यह प्रत्यक्षतः मालूम हो जाता है कि सघीय विधायक सरकार के केन्द्रीयकरण के सम्बन्ध में अत्यन्त स्पष्ट और सही धारणा ग्रहण किये हुए थे। संयुक्त राज्य अमरीका न केवल गणतंत्र है, परन्तु वह एक राज्यमण्डल भी है, फिर भी वहाँ राष्ट्रीय सत्ता यूरोप के अनेक निरंकुश राजतंत्रो की अपेक्षाकृत अधिक केंद्रित है।

कार्यकारिणी शक्ति

यदि अमरीका मे शासन-कार्यकारिणी फ्रास की अपेक्षाकृत शक्तिहीन है, तो इसका कारण सम्भवतः देश के कानूनों की अपेक्षाकृत परिस्थितियो पर अधिक आरोपणीय है।

मुख्यतः विदेशी सबन्धो में कार्यकारिणी शक्ति को अपनी कुशलता और अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने का अवसर मिलता है। यदि संघ का अस्तित्व निरन्तर खतरे मे रहता, यदि उसके मुख्य हितो का अन्य शक्तिशाली राष्ट्रो के हितों से दैनिक सम्पर्क बना रहता तो शासन-कार्यकारिणी उन कार्यो के अनुपात मे, जिनको पूरा करने की उससे आशा की जाती है अथवा जिन्हे उसे पूरा करना पड़ता, अधिक महत्ता ग्रहण कर लेती। यह सही है कि संयुक्त-राज्य अमरीका का राष्ट्रपति सेना का सेनाध्यक्ष है, परन्तु सेना केवल छः हजार सैनिकों की है, वह जहाजी बेड़े का नायक है, परन्तु जहाजों की गणना मात्र होती है और कुछ ही जहाज सक्रिय दिखायी पड़ते है। वह संघ के विदेशी सम्बन्धो की देखभाल करता है, परन्तु सयुक्त राज्य अमरीका बिना पड़ोसियो का राष्ट्र है। वह ससार के अन्य भागो से समुद्र के कारण विलग है और अभी तक महासागरो पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए सशक्त नहीं है। उसका कोई शत्रु नहीं है और उसके हित विश्व के अन्य किसी राष्ट्र के हित से शायद ही कभी मेल खाते हैं। इससे यही सिद्ध होता है कि सरकार की व्यावहारिक शक्ति को उसके संविधान के सिद्धान्त से नही तोलना चाहिए। सयुक्त-राज्य अमरीका के राष्ट्रपति के पास प्रायः राजकीय परमाधिकार होते है, पर उन्हे अमल में लाने के लिए उसे कोई अवसर नहीं मिलता। इस समय वह जिन विशेषाधिकारो का प्रयोग कर सकता है, वे बहुत

ही सीमित हैं। कानून राष्ट्रपति को शक्तिशाली बनाता है, परन्तु परिस्थितियाँ उसे निर्बल बनाये रखती है।

संघीय पद्धति के सामान्य लाभ और अमरीका में उसकी विशेष उपयोगिता

छोटे राज्यो मे समाज की सतर्कता प्रत्येक भाग मे व्याप्त रहती है और सुधार की भावना विस्तृत रूप से सभी सूक्ष्म बातो मे निहित रहती है। इसी निर्बलता के कारण लोगों की महत्वाकाक्षा नियंत्रित रहती है और नागरिकों के सभी प्रयत्न और साधन समाज के आन्तरिक कल्याण की ओर उन्मुख रहते हैं और अहमन्यता के उच्छ्वास मे उसके लोप हो जाने की सम्भावना नही रहती। प्रत्येक व्यक्ति की शक्तियाँ सामान्यतः सीमित रहने के कारण उसकी इच्छाऍ यथोचित कम रहती हैं। भाग्य की सामान्यता जीवन की विभिन्न परिस्थितियों को प्राय समान बना देती है और निवासियों के आचरण व्यवस्थित और सरल हो जाते है। इस प्रकार सभी बातो पर विचार करने पर और नैतिकता तथा सस्कार की विभिन्न अवस्थाओं को मान्यता देने पर सामान्य रूप से हम यह पायेगे कि बडे राष्ट्रों की अपेक्षा छोटे राष्ट्रों मे ऐसे लोगों की सख्या अधिक होगी जो सुविधाजन्य परिस्थितियो मे अधिक संतोष और सुख से रहते हैं।

जब छोटे राज्य के भीतर क्रूर शासन की स्थापना होती है, तो वह अन्य स्थानो की अपेक्षा वहाँ अधिक निष्ठुर रहता है, क्योंकि संकुचित दायरे मे रहने के कारण हर वस्तु उससे प्रभावित रहती है। वह सूक्ष्म ब्योरे की सैकडों बातों मे उत्तेजक हस्तक्षेप द्वारा या हिंसा उत्पन्न कर उन बडी योजनाओं के लिए मार्ग प्रशस्त कर देता है, जिन्हे वह पूर्ण करने मे असमर्थ रहता है और राजनीतिक जगत को अपने उपयुक्त स्थान पर छोड देता है ताकि वह व्यक्तिगत जीवन की व्यवस्था मे हस्तक्षेप कर सके। रुचियों तथा कार्यों को नियमित करना होगा तथा नागरिकों के परिवारो तथा राज्य को भी नियन्त्रित करना पडेगा। अधिकारो पर कुठाराघात होता है, मगर कभी-कभी। स्वतंत्रता छोटे समुदायो की वस्तुतः स्वाभाविक स्थिति होती है। सरकार आकाक्षाओं को जाग्रत करने के लिए जो प्रलोभन देती है, वे बहुत ही निर्बल होते है और व्यक्तियों के स्रोत बहुत मामूली होते हैं। इस कारण सार्वभौमता पर बडी सरलता से एक व्यक्ति का प्रभुत्व छा जाता है और इस प्रकार की घटना घटित होने पर राज्य प्रजा सहज ही संगठित होकर निरंकुश शासक और निरंकुशता का शीघ्र

उन्मूलन कर सकती है। इसलिए सर्वदा राजनीतिक स्वाधीनता छोटे राष्ट्रो मे ही पनपी और उनमे से अनेको को बडे होने के परिणामस्वरूप स्वतंत्रता से हाथ धोना पडा। इस तथ्य से यह प्रमाणित हो जाता है कि स्वतंत्रता लोगो के गुणो के कारण न होकर, उनके छोटे आकार के परिणामस्वरूप थी।

ससार के इतिहास मे ऐसे किसी बड़े राष्ट्र का उदाहरण नही मिलता, जिसने अनेको वर्ष तक प्रजातान्त्रिक सरकार के स्वरूप को बनाये रखा हो ...। सभी मनोवेग, जो प्रजातान्त्रिक सस्थाओं के लिए अत्यन्त घातक हैं, सीमा के विस्तार के साथ-साथ बढते जाते हैं, जबकि उनको सशक्त बनाने वाले गुण, उसी अनुपात में नही बढते हैं। गैर-सरकारी नागरिकों की आकाक्षा राज्य की शक्ति के साथ बढती है, दलो की शक्ति उनके उद्देश्यो की महत्ता के साथ बढती है, परन्तु देशप्रेम, जिसे इन विनाशकारी अभिकर्त्ताओ पर अंकुश रखना चाहिए, छोटे गणतंत्र मे इतना शक्तिशाली नही रहता। निस्सन्देह यह आसानी के साथ सिद्ध किया जा सकता है कि वह कम शक्तिशाली और कम विकसित है।

धन की प्रचुरता और अत्यधिक दरिद्रता, बडे-बड़े महत्वपूर्ण नगर, विलासपूर्ण नैतिकता, स्वार्थपरता और परस्पर विरोधी हित, ऐसे खतरे हैं, जो प्रायः राज्य के फैलाव के साथ उत्पन्न होते हैं। इनमे से अधिकाश बुराइयॉ शायद ही कभी राजतंत्र के लिए घातक होती हैं और इनमे से कुछ उसकी शक्ति और अवधि मे सहायक होती हैं। राजतान्त्रिक राज्यो मे सरकार की अपनी एक विशिष्ट शक्ति होती है, वह समाज का प्रयोग कर सकती है, परन्तु उस पर निर्भर नही कर सकती और लोगो की जितनी ही अधिक सख्या होगी, राजा उतना ही अधिक शक्तिशाली होगा. परन्तु बुराइयों के विरोध में प्रजातान्त्रिक सरकार की एक मात्र सुरक्षा बहुमत के समर्थन मे निहित है। तथापि यह समर्थन वृहद गणतंत्र मे छोटे गणतंत्र की अपेक्षा अनुपात मे बडा नही होता और इस प्रकार आक्रमण के साधनों मे निरंतर वृद्धि होती है, प्रतिरोध की शक्ति, संख्या और प्रभाव दोनो की दृष्टि से वही रहती है अथवा यह कहा जा सकता है कि शक्ति घट जाती है. क्योकि जनसख्या मे वृद्धि से लोगों की प्रवृत्तियो और हित अधिक विभाजित हो जाते है और एक संगठित बहुमत के निर्माण करने की कठिनाई निरन्तर बढती रहती है। इसके सिवाय यह देखा गया है कि मानवीय भावों की गहनता न केवल उस लक्ष्य की महत्ता से बढ़ती है, जिसे वे प्राप्त करना चाहते हैं, बल्कि उन व्यक्तियों के समुदाय से बढ़ती है, जो उस समय उनसे प्रेरणा प्राप्त करते

है। प्रत्येक को यह कहने का अवसर मिलता है कि सहानुभूति प्रकट करने-वाले समुदाय के मध्य उसके भाव उन भावो की अपेक्षाकृत अधिक उत्तेजित होते है, जिन्हे वह एकान्त मे अनुभव करता। महान गणतंत्रो मे राजनीतिक उद्वेग अनिवार्य है, केवल इसलिए नही कि उनका लक्ष्य महान प्रयोजनो की पूर्ति करना होता है, अपितु इसलिए कि उन्ही के साथ लाखो मनुष्य इसी प्रकार के भावो को महसूस करते है।

इसलिए सामान्य प्रस्तावना के रूप मे यह उद्घोषित किया जा सकता है कि केवल बडे साम्राज्य ही मनुष्यो के कल्याण और उनकी स्वतंत्रता के विरोधी है, फिर भी बडे राज्यो के विशिष्ट लाभो की महत्ता को भुलाया नही जा सकता, क्योंकि इसी कारण शक्ति प्राप्त करने की इच्छा सामान्य लोगो की अपेक्षा इन समाजो मे अधिक तीव्र होती है। अहमन्यता कतिपय नागरिकों के हृदय मे अधिक प्रस्फुटित होती है, जो महान लोगों की ख्याति को उनके प्रयासो का फल समझते है। यदि हमे इस बात का ज्ञान हो जाय कि ज्ञान-वृद्धि और सभ्यता की उन्नति मे बडे राष्ट्र छोटे राज्यो की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली ढग से क्यो योगदान देते है, तो हम उन बडे नगरों मे जो बौद्धिक केन्द्र है और जहाँ मानवीय प्रतिभा की सारी किरणे प्रतिबिम्बित है, विचारों के शीघ्र और प्रभावशाली परिचालन का पर्याप्त कारण ढूँढ लेगे। इसके अतिरिक्त, अत्यन्त महत्वपूर्ण अनुसन्धानों के लिए राष्ट्रीय शक्ति के उपयोग की आवश्यकता होती है, जो छोटे राज्य की सरकार करने मे असमर्थ है। बड़े राष्ट्रों मे सरकार के पास व्यापक कल्पनाएँ होती है जो पूर्ववर्ती कार्यो की सलग्नता एवं स्थानीय भावना की स्वार्थपरता से पूर्णत मुक्त रहती है, उसके प्रयोजन अधिक प्रतिभावान होते है और अधिक साहस के साथ उनका परिचालन होता है।

शान्ति के समय छोटे राष्ट्रो का कल्याण निस्सन्देह अधिक सामान्य और निश्चित रहता है, परन्तु युद्ध की विभीषिकाओ से वे अधिक सन्त्रस्त रहते है, अपेक्षाकृत उन महान साम्राज्यो के, जिनके सुदूर सीमान्त दीर्घ काल तक जनता पर आने वाले सकट को टाल सकते है। इसलिए छोटे राष्ट्र प्रतिस्पर्धा से नष्ट होने के बजाय प्राय पीडित रहते है।

परन्तु इस विषय मे अनेक बातो की तरह एक निर्णायक तर्क की आवश्यकता है। यदि छोटे राष्ट्रो को छोड कर किसी का अस्तित्व न रहे तो मेरा विश्वास है कि मानवता अधिक सुखी और अधिक स्वतंत्र रहेगी, बडे राष्ट्रों का अस्तित्व भी अनिवार्य है।

इस प्रकार राजनीतिक शक्ति राष्ट्रीय समृद्धि की एक आवश्यक शर्त हो जाती है। उससे राज्य लाभान्वित होता है, परन्तु यदि निरंतर उसकी लूट होती रहे और वह परवश रहे तो बहुत कम समृद्धि और स्वतंत्रता होगी। उसे अन्य बडे राष्ट्र की अपेक्षा, जिनका महासागरो पर प्रभुत्व है और विश्व के बाजार मे जिसका कानून चलता है, उत्पादन और व्यवसायो से बहुत ही कम लाभ प्राप्त होगा। छोटे राष्ट्र प्रायः पीडित रहते हैं, इसलिए नही कि वे छोटे है, बल्कि इसलिए कि वे निर्बल है और बड़े राष्ट्र समृद्धि करते हैं, इसलिए नही कि वे बडे है, अपितु इसलिए कि वे शक्तिशाली है। अतः भौतिक शक्ति राष्ट्रों की समृद्धि की एक प्राथमिक आवश्यकता है, यहाँ तक कि उनके अस्तित्व की भी। परिणाम यह होता है कि छोटे राष्ट्र हमेशा अन्त मे या तो दबाव से अथवा अपनी सहमति से बडे साम्राज्यो मे मिल जाते है, बशर्ते कोई विचित्र स्थिति न उत्पन्न होजाय। मेरी दृष्टि मे इससे बढ कर दयनीय दशा और कोई नही हो सकती जब वे राष्ट्र अपनी रक्षा करने या स्वयं की आवश्यकताओ की पूर्ति करने मे असमर्थ हो।

राष्ट्रों की विशालता और लघुता से मिलने वाले विभिन्न लाभो का समन्वय करने की दृष्टि से संघीय पद्धति प्रारम्भ की गयी और संयुक्त-राज्य अमरीका पर दृष्टिपात करने से पता चल जायगा कि इसे अगीकार करने से उसे क्या लाभ मिला है।

विधायक को अधिक केन्द्रित राष्ट्रों मे कानूनों को एकरूपता देनी पडती है, जो हमेशा प्रथाओं और जिलों की विभिन्नताओ के अनुकूल नही होते, क्योंकि वह तत्सम्बन्धी विशिष्ट विषयो की ओर ध्यान नही देता। वह केवल सामान्य सिद्धान्त पर कार्य कर सकता है और जनता विधान के निर्देशित नितान्त आवश्यकताओ के अनुकूल कार्य करने को बाध्य रहती है, क्योकि कानून आवश्यकताओं और जनता की रीतियों के अनुसार अपने को नही ढाल सकता। यही स्थिति कठिनाइयो और दुःखो का मूल कारण है। यह प्रतिकूलता संघ मे स्थित नही है। कॉग्रेस राष्ट्रीय सरकार के मुख्य अधिनियमों को विनियमित करती है और प्रशासन की सारी सूक्ष्मताएँ प्रान्तीय विधानमण्डलों के लिए सुरक्षित रहती है। कोई भी व्यक्ति सहज ही यह कल्पना नहीं कर सकता कि सार्वभौमता का यह विभाजन संघ निर्मित करने वाले प्रत्येक राज्य के कल्याण के लिए कितना योगदान देता है। इन छोटे समुदायो मे, जो कभी भी धन बचाने की लालसा या आत्मरक्षा की चिन्ता से उत्तेजित नहीं

होते, सभी सार्वजनिक प्रभुत्व और निजी शक्ति आन्तरिक सुधार की ओर उन्मुख रहती है। नागरिको के निकटतम सम्पर्क मे रहने वाली प्रत्येक राज्य की केन्द्रीय सरकार को समाज मे उत्पन्न होने वाले अभावों का सर्वदा ध्यान रहता है और उन अभावो को दूर करने के लिए प्रति वर्ष नयी योजनाएँ बनायी जाती है। इन योजनाओ पर नगर-सभाओ और विधानमण्डल द्वारा विचारविमर्श किया जाता है, तत्पश्चात नागरिको मे अभिरुचि और उत्साह जगाने के लिए उन्हे प्रेस द्वारा प्रचारित किया जाता है। अमरीकी प्रजातंत्र मे सुधार की भावना निरन्तर बनी रहती है और उनकी शान्ति को खतरे मे डाले बिना, शक्ति की अभिलाषा के स्थान पर कम शिष्ट और कम खतरनाक कल्याण की अभिलाषा स्थान ग्रहण कर लेती है। अमरीका मे सामान्यत. यह धारणा प्रचलित है कि नयी दुनिया मे प्रजातात्रिक सरकार का अस्तित्व और स्थायित्व सघीय पद्धति के अस्तित्व और स्थायित्व पर निर्भर है और प्राय· दक्षिण अमरीका के नये राज्यो के दुर्भाग्यो का अधिकाशत. दोष विभाजित और सघीय सार्वभौमता के स्थान पर अविवेकता से निर्मित बड़े गणतंत्रो को है।

यह निर्विवाद सत्य है कि सयुक्त-राज्य अमरीका मे प्रजातात्रिक सरकार के प्रति अभिरुचि और प्रवृत्ति प्रथमत. नगरो और प्रान्तीय विधान सभाओं मे पैदा हुई। उदाहणार्थ, कनेक्टीकट जैसे छोटे राज्य मे, जहाँ नहर की खुदाई या सडक का निर्माण बडा राजनीतिक प्रश्न होता है, जहाँ राज्य कोई सेना नही रख सकता, न युद्ध का सचालन कर सकता है और जहाँ सम्राटो को विशाल धन और प्रतिष्ठा नही दी जा सकती, सरकार का कोई स्वरूप प्रजातंत्र से बढ कर अधिक स्वाभाविक और अधिक उपयुक्त नही हो सकता। परन्तु इसी प्रजातात्रिक भावना और स्वतंत्र मनुष्यो के इन्ही आचार और रीति-रिवाजो का, जो विभिन्न राज्यो में पैदा हुए और पनपे, बाद मे सारे राष्ट्र मे प्रयोग होना आवश्यक है। कहने का तात्पर्य यह कि सघ की जनभावना विभिन्न प्रान्तो की देशभक्ति से ओतप्रोत उत्साह का समष्टि स्वरूप या सार है। कहने का अभिप्राय यह है कि संयुक्त-राज्य अमरीका मे प्रत्येक नागरिक अपने छोटे गणतंत्र के प्रति लगाव को अमरीकी देशभक्ति के सामान्य प्रक्षेत्र की ओर वहन करके लाता है। वह सघ की सुरक्षा करते समय अपने स्वय के राज्य या देश की बढती हुई समृद्धि की सुरक्षा करता है। उसके कार्य-सचालन के अधिकार तथा अगीकृत सुधार के कार्य उसके स्वयं के हित के अनुकूल

होते हैं। ये सब वे निमित्त कारण है, जो देश के सामान्य हित और राष्ट्रीय गौरव से बढकर मनुष्यो मे किसी प्रकार की उत्तेजना पैदा नही करते।

दूसरी ओर यदि निवासियो का स्वभाव और आचार उन्हे महान प्रजातंत्र के कल्याण की अभिवृद्धि के लिए विशेषतः योग्य बनाते है, तो सघीय पद्धति उनके कार्य को कठिन कर देती है। समस्त अमरीकी राज्यो का सघ लोगो के विशाल समुदायो के परिणामस्वरूप उत्पन्न सामान्य असुविधाओ मे कोई भी बाधा उपस्थित नहीं करता, परन्तु उद्देश्यो की न्यूनता, जिसके लिए सरकार कार्यरत होती है, छोटे राज्य मे घुलमिल जाती है। उसके अधिनियम महत्वपूर्ण होते है, परन्तु वे बहुत कम सख्या मे होते है। संघीय सार्वभौमता चूँकि परिसीमित होती है और अपरिपूर्ण रहती है, उसका प्रयोग स्वाधीनता के लिए खतरनाक नही होता। वह प्रसिद्धि और शक्ति की अतृप्त अभिलाषाओ को उत्तेजित नही करती, जो विशाल गणतंत्रो के लिए घातक सिद्ध हुई है। चूँकि देश मे कोई सामान्य केन्द्र नही होता, इसलिए बडे विशाल शहर, अपार धनराशि, निकृष्ट दरिद्रता और आकस्मिक क्रान्तियॉ समान रूप से अज्ञात रहती है और राजनीतिक उत्तेजना घास के विस्तृत मैदानो मे फैलने वाली अग्नि की तरह नही फैलती। वह अपनी शक्ति को प्रत्येक राज्य के स्वार्थ और व्यक्तिगत उद्वेगो के विरोध मे लगा देती है।

फिर भी, स्पृश्य प्रयोजन और विचार सारे सघ मे उस देश की भॉति, जहॉ एक समाज निवास करता है, स्वतंत्रता के साथ फैलते है। कोई भी उसकी साहसिक अन्तःप्रेरणा पर रोक नही लगाता। सरकार उन सभी लोगो की सहायता आमंत्रित करती है, जिनमे सेवा की प्रतिभा और समझ होती है। संघ की सीमाओं के भीतर, दृढ़ शान्ति रहती है जैसे कि कुछ महान साम्राज्यो के भीतर हो और बाहर वह पृथ्वी पर अत्यन्त शक्तिशाली राष्ट्रो की श्रेणी मे रखा जा सकता है। उसका दो हजार मील का समुद्री तट संसार के व्यापार के लिए खुला पडा है और नयी दुनिया की कुंजी उसके हाथो मे है, उसके ध्वज का आदर दूरवर्ती समुद्रो तक होता है। सघ छोटे समाज की तरह खुशहाल और स्वतंत्र है और बड़े राष्ट्र की भॉति गौरवशाली और शक्तिशाली है।

युद्ध का प्रभाव

राष्ट्र के जीवन मे अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना युद्ध का छिड़ना है। युद्ध में सारा समाज अपने अस्तित्व की सुरक्षा के लिए विदेशी राष्ट्रों के सामने एक व्यक्ति की तरह लडता है। सरकार की दक्षता, समुदाय की सद्बुद्धि और वह

स्वाभाविक अनुराग, जो मनुष्य प्राय· हमेशा अपने देश के प्रति अभिव्यक्त करते है, वे उस समय तक पर्याप्त रहेगे, जबतक राज्य की आन्तरिक शान्ति बनाये रखना और देश की आन्तरिक समृद्धि बढाना ही एक मात्र लक्ष्य हो, परन्तु राष्ट्र के लिए महान युद्ध की आवश्यकता होने पर लोगो को विविध और अधिक कष्टदायक त्याग करना चाहिए और इस प्रकार की कल्पना करना कि अधिक सख्या मे लोग स्वय अपनी इच्छा से इन अनिवार्यताओ के सम्मुख आत्म-समर्पण कर देगे, मानव प्रकृति की अनभिज्ञता ही है। उन सभी राष्ट्रो को, जिन्हें दीर्घ काल तक गम्भीर युद्ध मे सलग्न होने के लिए बाध्य होना पडा था, परिणामतः उन्हे अपनी सरकार की शक्ति मे वृद्धि करनी पड़ी थी। जो इस प्रयत्न मे सफल नही हुए, उन्हे दासता स्वीकार करनी पडी। दीर्घकालीन युद्ध प्रायः हमेशा राष्ट्रो को, हार द्वारा नष्ट होने के लिए, विजयी होकर निरकुश बनने के लिए हतभाग्य के इस विकल्प के सामने छोड देते है। इसलिए युद्ध सरकार को निर्बल बनाता है। यह अत्यन्त स्पष्ट और अत्यन्त खतरनाक स्थिति है और मै बता चुका हूँ कि सघीय सरकार की यह अन्तर्हित हार उसके निर्बल होने मे है।

सघीय पद्धति मे केन्द्रित प्रशासन का केवल अभाव ही नही है, अपितु उसमे कोई बात नही है जो उससे मेल खाती हो, परन्तु केन्द्रीय सरकार स्वयं परिपूर्ण रूप से सुव्यवस्थित नही है, जो राष्ट्र की निर्बलता का सबसे बडा कारण है, जब कि राष्ट्र उन देशो का विरोधी हो, जो एक मात्र सत्ताधारी से शासित होते है।

तब यह कैसे होता है कि अमरीकियो का सघ, अपने कानूनो की समस्त सापेक्षित परिपूर्णता के साथ बडे युद्ध चालू होने पर भी नष्ट नही होता? यह इसलिए होता है कि उसे बडे युद्धो का भय नही है। विस्तृत महाद्वीप के केन्द्र मे स्थापित सघ, जो मानव प्रयत्नो के लिए विस्तृत क्षेत्र खुला रखता है, प्राय. अपनी सीमाओ से पृथक रहता है, मानो उसकी सीमाएँ समुद्र से घिरी हो। कनाडा मे केवल दस लाख निवासी रहते है और उसकी जनसख्या दो विरुद्ध राष्ट्रो मे विभाजित है। जलवायु की तीव्रता उसकी सीमाओ के विस्तार को परिसीमित कर देती है और उसके बन्दरगाहो को छः महीने के लिए बन्द कर देती है। कनाडा से लेकर मैक्सिको की खाडी तक उन असभ्य जंगली आदिवासियो का सामना छः हजार सैनिको को करना पडता है, जो पीछे हटते रहते है। दक्षिण मे सघ मैक्सिको के साम्राज्य से जुडा हुआ है और वही पर एक दिन गम्भीर

संघर्ष पैदा हो जाने की आशा की जा सकती है। परन्तु ऐसा होने मे दीर्घ समय लगेगा, क्योकि मेक्सिको के लोगो की असभ्यता, उनकी नैतिक भ्रष्टता और उनकी परम दरिद्रता उस देश को बड़े राष्ट्र की श्रेणी मे नही आने देगे; यथा यूरोप की शक्तियॉ भयंकर होने के लिए काफी दूर है।

इसलिए सयुक्त-राज्य अमरीका की महान सुविधाएँ सघीय सविधान मे निहित नही है, जिससे वह बड़े युद्ध मे रह सके, वल्कि वह उसकी भौगोलिक स्थिति है, जो ऐसे युद्ध को असम्भव कर देती है।

मुझसे बढकर शायद ही कोई संघीय पद्धति के लाभो की सराहना करने का इच्छुक होगा। मेरी दृष्टि मे वह मनुष्यो की समृद्धि और स्वतंत्रता के लिए अत्यन्त उपयुक्त संयोग है। मै उन राष्ट्रो के भाग्य को ईर्ष्या की दृष्टि से देखता हूँ जो इसे अगीकार करने मे असमर्थ हो चुके है। परन्तु मै इस पर विश्वास नही कर सकता कि संघीय प्रजा समान शक्ति वाले राष्ट्रो से, जिनकी सरकार केद्रित है, अधिक या बराबर प्रतिस्पर्धा कर सकती है। वह राष्ट्र, जिसने अपनी सार्वभौमता का विभाजन विभिन्न भागो मे किया हो, यूरोप के महान सैनिक राजतंत्रो के समक्ष, मेरी राय मे, अपनी शक्ति का विनाश कर देगा और सम्भवतः अपना नाम व अस्तित्व भी खो देगा। परन्तु नयी दुनिया की इस प्रकार की स्थिति सराहनीय है कि मनुष्य का स्वयं के सिवाय कोई दूसरा शत्रु नही है और खुशहाल रहने और स्वतंत्रता का उपभोग करने के लिए उसे केवल इस बात का निर्णय कर लेना है कि वह ऐसा ही बनेगा।

८—राजनीतिक दल

अमरीका मे जनता विधायिनी और कार्यकारिणी सत्ता को नियुक्त करती है और जूरियो की व्यवस्था करती है, जो कानूनो का उल्लंघन करने वालो को सजा देते है। वहॉ की सस्थाऍ न केवल सिद्धान्त की दृष्टि से, अपितु परिणामो की दृष्टि से भी लोकतान्त्रिक है और जनता अपने प्रतिनिधियो का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से तथा अधिकाशतः प्रतिवर्ष करती है, जिससे उन संस्थाओ पर जनता का भरोसा बना रहे। अतः वास्तविक निर्देशिक सत्ता जनता के हाथो मे रहती है और यद्यपि सरकार का स्वरूप प्रतिनिधिमूलक है, यह स्पष्ट है कि जनता के अभिमतो, पूर्वाग्रहों, हितो और यहॉ तक कि उसकी भावनाओं को

भी प्रतिदिन के कार्यों के संचालनार्थ प्रभावित करते रहने मे कोई स्थायी बाधा नही उपस्थित होती। संयुक्त-राज्य अमरीका मे जनता के नाम पर बहुमत शासन करता है, जैसा सभी देशो मे, जहॉ जनता सर्वोपरि है, होता है। यह बहुमत सिद्धान्ततः उन शान्तिप्रिय नागरिको से गठित होता है, जो प्रवृत्तिवश अथवा स्वार्थवश अपने देश के कल्याण की सच्चे दिल से कामना करते हैं, किन्तु वे पार्टियों के अविच्छिन्न आन्दोलन से घिरे रहते हैं, जो उनका सहयोग और समर्थन प्राप्त करने का प्रयास करती है।

पार्टियों के बीच एक बडे अन्तर को बताना जरूरी है। कुछ देश इतने बड़े हैं कि वहॉ बसने वाले विभिन्न लोगो के हित एक ही सरकार के अन्तर्गत सगठित रहते हुए भी परस्पर विरोधी रहते हैं और इसके फलस्वरूप वे निरन्तर विरोध करने की स्थिति मे रह सकते हैं। ऐसे मामले मे लोगों के विभिन्न भागो को मात्र पार्टियॉ समझने की अपेक्षा विभिन्न राष्ट्र समझना उचित होगा और जब गृह-युद्ध छिड जाता है, तो यह संघर्ष एक ही राज्य के भागों द्वारा नही, प्रत्युत प्रतिद्वन्द्वी राज्यों द्वारा चलाया जाता है। किन्तु जब नागरिक ऐसे विषयो पर—उदाहरणार्थ, सरकार-सचालन के आधारभूत सिद्धान्तों पर भिन्न मत रखते है, जिनका प्रभाव सारे देश पर समान रूप से पड़ता है, तब विभेद उत्पन्न होते है, जिनको सही रूप मे पार्टियों की संज्ञा प्रदान की जा सकती है। स्वतन्त्र सरकारों मे पार्टियॉं अनिवार्यतः एक बुराई है, किन्तु हर समय उनका स्वरूप और प्रवृत्ति एक समान नहीं रहती।

अमरीका मे बड़ी-बडी पार्टियॉ थी, किन्तु अब वे नहीं रह गयी है और यदि इससे उसके सुख मे अत्यधिक वृद्धि हुई है, तो उसकी नैतिकता को आघात भी पहुॅचा है। जब स्वतन्त्रता—सग्राम समाप्त हुआ और नयी सरकार की नींव डाली जाने वाली थी, तब राष्ट्र दो विचार-धाराओं मे विभक्त हो गया। ये दो विचारधाराऍ उतनी ही पुरानी है, जितना विश्व और वे सभी स्वतन्त्र जातियों मे विभिन्न स्वरूपों और विभिन्न नामो के साथ मिलती हैं। इनमे से एक विचारधारा जनता की शक्ति और सत्ता को सीमित करना चाहती है और दूसरी उसका अनिश्चित रूप से विस्तार करना चाहती है। इन दो विचारधाराओं के संघर्ष ने अमरीका मे उतना हिसात्मक रूप नही धारण किया, जितना हिंसात्मक रूप वह अन्य स्थानो पर बहुधा धारण करता रहा है। अमरीकियों की दोनों पार्टियॉ अत्यावश्यक विषयो पर सहमत थीं और किसी को भी विजय प्राप्ति के

लिए किसी पुराने संविधान को नष्ट करना अथवा समाज के ढाँचे को भंग करना नही पडा । फलस्वरूप उनमे से किसी मे भी विजय अथवा पराजय से प्रभावित बहुत अधिक निजी हित नही थे, किन्तु स्वतन्त्रता एव समानता के प्रेम जैसे उच्चस्तर के नैतिक सिद्धान्त सघर्ष मे प्रमुख थे और वे हिंसात्मक भावनाओ को उभारने के लिए पर्याप्त थे।

जनशक्ति को सीमित करने की इच्छा रखनेवाली पार्टी ने अपने सिद्धान्तो को विशेष रूप से यूनियन के सविधान पर लागू करने का प्रयास किया, जिससे इसका नाम संघीय (फेडरल) हुआ। दूसरी पार्टी, जो केवल स्वतन्त्रता के पक्ष से ही सम्बन्धित रही, रिपब्लिकन कहलायी। अमरीका लोकतान्त्रिक देश है। अतः सघवादी हमेशा अल्पमत मे रहे, किन्तु उन्हे स्वतन्त्रता संग्राम के प्रायः सभी महान पुरुषो का समर्थन प्राप्त रहा और उनकी नैतिक शक्ति भी अत्यधिक थी। इसके अतिरिक्त उनके उद्देश्य को परिस्थितियो से बल मिला। प्रथम महासंघ के विनाश से जनता अराजकता के भय से ग्रस्त हो गयी और जनसमूह की इस क्षणस्थायी मनोवृत्ति से संघवादियो को लाभ हुआ। दस अथवा बारह वर्षो तक वे सत्तारूढ रहे और उन्होने अपने कतिपय सिद्धान्तो को कार्यान्वित किया। यद्यपि वे अपने समस्त सिद्धान्तो को कार्यरूप मे नही परिणत कर सके, क्योंकि विरोध का प्रवाह दिन-प्रति-दिन इतना उग्र होता जा रहा था कि उसको रोकना मुश्किल था। १९०१ मे रिपब्लिकनो ने सत्ता प्राप्त कर ली, थामस जेफर्सन प्रेसिडेट चुने गये और उन्होने अपनी अत्यधिक लोकप्रियता बुद्धि, प्रतिभा और नाम की महत्ता के बल पर अपनी पार्टी के प्रभाव को बढाया।

जिन तरीको से सघवादियो ने अपनी स्थिति को बनाये रखा, वे कृत्रिम थे, उनके प्रसाधन अस्थायी थे। वे अपने नेताओ के गुणो अथवा उनकी प्रतिभा तथा सौभाग्यपूर्ण परिस्थितियो के कारण सत्तारूढ हुए थे। जब रिपब्लिकनो ने अपनी बारी आने पर वही स्थान प्राप्त कर लिया, तब उनके विरोधियो की करारी हार हुई। एक बडा बहुमत अवकाश ग्रहण करनेवाली पार्टी के विरुद्ध हो गया और सघवादी इतने अल्पमत मे रह गये कि उनकी भावी सफलता की आशा तत्काल समाप्त हो गयी। उस समय के बाद रिपब्लिकन अथवा डेमोक्रेटिक पार्टी विजय-पर-विजय प्राप्त करती रही, जब तक उसने देश मे पूर्ण प्राधान्य प्राप्त नही कर लिया। संघवादियो ने यह देखा कि वे पराजित होकर साधनविहीन हो गये हैं तथा राष्ट्र के मध्य एकाकी रह गये है और वे दो भागो

मे बँट गये, जिनमे से एक भाग विजयी रिपब्लिकन पार्टी से मिल गया और दूसरे ने अपने ध्वज उतार कर अपना नाम बदल दिया। एक पार्टी के रूप मे सघवादियो का अस्तित्व समाप्त हुए अनेक वर्ष व्यतीत हो चुके है।

मेरे मतानुसार सघवादियो का सत्तारूढ होना महान अमरीकी सघ के निर्माण के साथ-साथ घटित होने वाली एक अत्यन्त सौभाग्यपूर्ण घटना थी। उन्होंने अपने देश की और अपने समय की अनिवार्य प्रवृत्तियो का विरोध किया। उनके सिद्धान्त चाहे अच्छे रहे हो अथवा बुरे, किन्तु उनका दोष यह था कि कुल मिला कर वे उस समाज पर लागू नही हो सकते थे, जिस पर वे शासन करना चाहते थे और इस कारण जेफर्सन के तत्वावधान मे जिस समाज का निर्माण हुआ, वह शीघ्र अथवा बाद मे अवश्य होता। किन्तु उनकी सरकार ने नवीन गण-राज्य (रिपब्लिक) को कुछ स्थायित्व प्रदान करने और जिन सिद्धान्तो का उन्होने विरोध किया था, बाद मे उन्ही सिद्धान्तो के गतिमान विकास का बिना किसी असुविधा के समर्थन करने का अवसर प्रदान किया। इसके अलावा इनके अनेक सिद्धान्त अन्त मे उनके विरोधियो के राजनीतिक सिद्धान्त मे शामिल कर लिये गये। आज जो सघीय सविधान है, वह उनकी देशभक्ति एव बुद्धि का चिरस्थायी स्मारक है।

इस प्रकार वर्तमानकाल मे अमरीका मे महान राजनीतिक पार्टियॉ नही दिखायी देती।

महान पार्टियो के अभाव मे अमरीका मे छोटे-मोटे विवादो की भरमार रहती है और जनमत छोटे-छोटे प्रश्नो पर हजारो विचारधाराओ मे विभक्त रहता है। पार्टियो के बनाने मे जो कष्ट उठाने पडते है, उनकी कल्पना नही की जा सकती और आज यह कार्य सरल नही है। अमरीका मे कोई धार्मिक ईर्ष्या नही है, क्योकि सभी धर्मो का सम्मान किया जाता है और कोई मत प्रमुख नही है। वहॉ कोई श्रेणीगत द्वेष नही है, क्योकि जनता ही सब कुछ है और कोई भी उसके अधिकारो के सम्बन्ध में विवाद नही कर सकता। अन्तिम बात यह है कि यहॉ किसी प्रकार का सार्वजनिक सकट नही है, जो आन्दोलन का साधन सिद्ध हो सके, क्योकि देश की भौतिक स्थिति ऐसी है कि उद्योग का विशाल क्षेत्र खुला है और मनुष्य को आश्चर्यजनक कार्य सम्पन्न करने के लिए केवल अकेला छोड दिये जाने की आवश्यकता रहती है। तथापि महत्वाकाक्षी व्यक्ति पार्टियो के बनाने मे सफल हो सकेगे, क्योकि किसी व्यक्ति को केवल इसी

आधार पर कि दूसरे व्यक्ति उसके पद को लोभ की दृष्टि से देखते है और उसे ग्रहण करना चाहते है, सत्ता से हटाना कठिन है। राजनीतिक जगत के समस्त नेताओ का कौशल राजनीतिक दलो के निर्माण की कला मे ही निहित रहता है। सयुक्त-राज्य अमरीका मे राजनीतिक महत्वाकाक्षी व्यक्ति सर्वप्रथम अपने खुद के हितो को पहचानता है, फिर अपने चारो ओर पाये जानेवाले अन्य हितो की खोज कर और एकत्र कर उन्हे अपने हितो मे सम्मिलित कर लेता है। तत्पश्चात् वह कुछ ऐसे मतो या सिद्धान्तो की छानबीन करता है जो इस नये संसर्ग के उद्देश्यो के अनुकूल होते है। अत मे वह अपने दल को आगे लाने के लिए और उसकी लोकप्रियता बनाये रखने के लिए उन्हे उसी प्रकार अगीकार कर लेता है जिस प्रकार पूर्वकाल मे किसी पुस्तक के मुखपृष्ठ पर शाही चिह्न अकित कर देने से उसे उस श्रेणी की पुस्तक मे शामिल कर लिया जाता था जिसके वह योग्य नही होती थी। इस प्रकार राजनीतिक जगत मे एक नये दल का प्रादुर्भाव होता है।

बाहरी व्यक्ति को शुरू-शुरू मे अमरीकियों के समस्त वादविवाद उद्दण्ड और तुच्छ प्रतीत होते है और वह असमंजस मे पड़ जाता है कि वह ऐसे समाज पर, जो नितान्त तुच्छ बातो को गम्भीरतापूर्वक स्वीकार करता है, सहानुभूति प्रकट करे या उस प्रसन्नता के प्रति ईर्ष्या प्रकट करे जो समाज को इन छोटी-छोटी बातो पर विचार करने योग्य बनाती है। परन्तु, बाद मे जब वह अमरीका के दलों को नियंत्रित करनेवाली गुप्त प्रवृत्तियो का अध्ययन करता है, तो शीघ्र ही उसे ज्ञात हो जाता है कि उनमे से अधिकाश दल न्यूनाधिक रूप मे, स्वतंत्र समाज मे सर्वदा विद्यमान रहनेवाले बड़े दलो मे से, किसी-न-किसी एक से सम्बन्धित है। ज्यों-ज्यो हम इन दलो की गहराई मे प्रवेश करते है, त्यो–त्यो हम देखते हैं कि एक का उद्देश्य जनता के अधिकारो को सीमित करने और दूसरे का उद्देश्य उन्हे विस्तृत करने का होता है। मेरा मंतव्य यह नही है कि इन दलो का परोक्ष अथवा अपरोक्ष उद्देश्य देश मे कुलीनतत्र अथवा प्रजातंत्र की अभिवृद्धि है। परन्तु निश्चयपूर्वक मेरा यह कहना है कि सभी दलो की तह मे कुलीनतंत्र या प्रजातंत्र के उद्वेगो को सरलता से ढूँढा जा सकता है, यद्यपि ऊपरी तौर से ऐसा दिखाई नही देता, फिर भी सयुक्त-राज्य अमरीका मे वस्तुतः प्रत्येक दल का मुख्य विषय और मूल सार यही है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि जहाँ लोगो मे विभिन्न विचारधाराएँ होती है, वहाँ दलो का सतुलन बिगड जाता है और उनमे से एक दल परम शक्ति धारण

करता है, समस्त बाधाओ को पार करता है, अपने विरोधियो का उन्मूलन करता है और समाज के समस्त साधनो को अपने लिए उपयोगी बना लेता है। हारनेवाले सफलता के प्रति निराशा से अपना मुह छिपा लेते हैं। उस समय सारा राष्ट्र केवल एक सिद्धान्त द्वारा शासित दिखाई देता है, और सर्वव्यापी सुस्थिरता आ जाती है। तभी देश मे शान्ति और एकता बनाये रखने का सारा श्रेय सत्ताधारी दल को मिलता है, परन्तु इस प्रत्यक्ष एकता के भीतर अब भी विचारो का गहरा मतभेद और वास्तविक विरोध पाया जाता है।

अमरीका मे जो कुछ हुआ, वह निम्नलिखित है जब डेमोक्रेटिक पार्टी को सत्ता मिल गयी तब उसने कार्यो के सचालन पर एकाधिकार कर लिया और उस समय के बाद से समाज के कानूनो एव प्रथाओं को उसकी समय-समय पर परिवर्तित होने वाली इच्छाओ के अनुसार बनाया जाता रहा है। आज समाज के अधिक समृद्ध वर्गो का राजनीतिक कार्यों पर कोई प्रभाव नही है और धन द्वारा अधिकार प्राप्त होना तो दूर की बात है, वह सत्ता प्राप्त करने के एक साधन की अपेक्षा अलोकप्रियता का कारण बन गया है। निर्धनतर वर्गों के अपने सहनागरिकों के विरुद्ध प्रतिस्पर्धा करने और बहुधा निरर्थक प्रतिस्पर्धा करने की अनिच्छा के कारण धनी व्यक्ति सूची से पृथक हो जाते है। चूँकि वे सार्वजनिक जीवन मे वही स्थान प्राप्त नही कर सकते, जो उन्हे निजी जीवन मे प्राप्त होता है, अतः वे सार्वजनिक जीवन का परित्याग कर निजी जीवन की ओर झुक जाते है और राज्य मे उनका एक निजी समाज बन जाता है, जिसकी अपनी रुचियॉ और अपने आनन्द होते है। वे स्थिति को एक असाध्य बुराई मान कर उसके समक्ष आत्मसमर्पण कर देते है, किन्तु वे इस बात की सावधानी बरतते है कि यह न प्रकट होने पाये कि वे स्थिति के जारी रहने से भयभीत है। जब वे जनता के मध्य आते है, तब वे गणतान्त्रिक शासन एवं प्रजातान्त्रिक सस्थाओ के लाभो की प्रशसा करते हुए सुनायी देते है। मनुष्य अपने शत्रुओं से घृणा करने के बाद उनकी खुशामद करने की ओर सर्वाधिक प्रवृत्त होते है, किन्तु बहुमत-सत्ता के प्रति इस कृत्रिम उत्साह और आज्ञाकारिता के नीचे यह देखना एक सरल कार्य है कि धनी व्यक्ति अपने देश की प्रजातान्त्रिक सस्थाओ के प्रति हार्दिक घृणा रखते है। जनता एक सत्ता का निर्माण करती है, जिससे वह एक साथ ही भयभीत रहती है और घृणा भी करती है। यदि सयुक्त-राज्य अमरीका मे कभी प्रजातंत्र के कुशासन के परिणामस्वरूप क्रान्तिकारी सकट उत्पन्न हुआ और राजतत्रीय सस्थाऍ बनी, तो मेरे तर्को की सत्यता स्पष्ट हो जायगी।

सफलता प्राप्त करने के लिए दल जिन दो प्रमुख अस्त्रो का प्रयोग करते है, वे है समाचार-पत्र और सार्वजनिक सगठन।

९–अमरीका में प्रेस की स्वतंत्रता

प्रेस की स्वतंत्रता का प्रभाव केवल राजनीतिक विचारधाराओ पर ही नही, बल्कि लोगो की समस्त विचारधाराओ पर भी पडता है और वह प्रथाओ तथा कानूनो, दोनो मे परिवर्तन–संशोधन करता है। मै स्वीकार करता हूँ कि प्रेस की स्वतंत्रता के प्रति मेरा वह दृढ एवं परिपूर्ण लगाव नही है, जो लगाव उन वस्तुओ के प्रति अपने आप होता है, जो स्वभावतः अत्यन्त उत्तम होती है। इससे जो लाभ होते है, उनकी अपेक्षा इससे रुकनेवाली बुराइयो की दृष्टि से मै इसे अधिक पसन्द करता हूँ। यदि कोई पूर्ण स्वतंत्रता और पूर्ण वैचारिक दासता के बीच की एक ऐसी मध्यम स्थिति बता सके, जो तर्क-सगत भी हो, तो सम्भवतः मै उसे ग्रहण करने के लिए तैयार हो जाऊँ, किन्तु उस मध्यम स्थिति का पता लगा सकना ही तो कठिन कार्य है। प्रेस की स्वेच्छाचारिता मे सुधार करने और सयमित भाषा के प्रयोग की पुनः स्थापना करने के उद्देश्य से आप सर्वप्रथम जूरी के समक्ष अपराधी के विरुद्ध अभियोग लगाते है, किन्तु यदि जूरी उसे मुक्त कर देता है, तो जो मत एक व्यक्ति मात्र का था, वह समस्त देश का मत बन जाता है। अतः बहुत अधिक और बहुत कम किया गया है, तब और आगे बढिये। आप अपराधी को स्थायी मजिस्ट्रेटो के सामने लाते है, किन्तु यहाँ भी मामले का निर्णय किये जाने से पूर्व उसकी सुनवाई आवश्यक होती है और जिन सिद्धान्तो को किसी भी पुस्तक मे व्यक्त करने का साहस नही किया जाता, उन्ही सिद्धान्तो को बहसो मे सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत किया जाता है और केवल एक निबन्ध मे जिस बात का अस्पष्ट रूप से सकेत किया गया था, उसकी पुनरावृत्ति इस प्रकार अन्य अनेक प्रकाशनो मे की जाती है। भाषा केवल अभिव्यक्ति और (यदि मै ऐसा कह सकूँ) विचार का शरीर होती है, किन्तु वह स्वयं विचार नही होती। न्यायाधिकरण शरीर की भर्त्सना कर सकते है, किन्तु रचना का अर्थ तथा उसकी भावना उनकी सत्ता के लिए अत्यन्त सूक्ष्म होती है। फिर भी पीछे हटने की दिशा मे बहुत अधिक और आपके लक्ष्य की प्राप्ति की

दिशा मे बहुत कम किया गया है, आपको और आगे बढना चाहिए। प्रेस की सेसरशिप स्थापित कीजिए, किन्तु सार्वजनिक वक्ता की आवाज अब भी सुनायी देती रहेगी और आपका उद्देश्य अभी तक पूर्ण नही हुआ है, आपने केवल शरारत मे वृद्धि कर दी है। शारीरिक शक्ति की भॉति विचार अपने अभिकर्त्ताओ की सख्या पर आश्रित नही होता, न लेखको की गणना किसी सेना के सैनिको की भॉति की जा सकती है। इसके विपरीत बहुधा ऐसा होता है कि कम व्यक्तियो द्वारा व्यक्त किये जाने वाले सिद्धान्त की शक्ति बढ जाती है। ध्यानपूर्वक सुनने वाले जन-समुदाय की भावनाओ को सम्बोधित कर कहे गये दृढ सकल्पवाले व्यक्ति के शब्द हजार वक्ताओ के शोरगुल से अधिक शक्तिशाली होते है और यदि उसे किसी सार्वजनिक स्थान पर स्वतंत्रता-पूर्वक बोलने की अनुमति दे दी जाय, तो उसका परिणाम वही होगा, जो परिणाम प्रत्येक गॉव मे स्वतत्रतापूर्वक बोलने की अनुमति देने का होगा। अत भाषण-स्वतत्रता और प्रेस-स्वतत्रता को भी नष्ट करना अत्यन्त आवश्यक है। अब आप सफल हो गये, प्रत्येक व्यक्ति शात हो गया, किन्तु आपका उद्देश्य स्वतत्रता के दुरुपयोग को दबाना था और आप एक अत्याचारी के चरणो मे पहुँच गये। आप स्वतंत्रता की चरम सीमा से वासना की चरम सीमा तक पहुँचा दिये गये और मार्ग मे आपको कोई भी ऐसी तर्कसगत स्थिति नही मिली, जिस पर आप रुक सकते।

अमरीकी पत्रो के अल्प प्रभाव के अनेक कारण है, जिनमे से कुछ ये है—लेखन-स्वतंत्रता मे जब नवीनता होती है, तब वह अन्य समस्त स्वतत्रताओ की भॉति अत्यन्त दुर्दम होती है, क्योकि जो लोग अपने समक्ष राजकीय प्रश्नो पर विचार-विमर्श सुनने के अभ्यस्त नही है, वे उस प्रथम वक्ता मे स्पष्ट विश्वास करने लगते है, जो उनके समक्ष उनके अधिकारो के समर्थक के रूप मे उपस्थित होता है। उपनिवेशो की स्थापना के समय से ही आग्ल-अमरीकी इस स्वतत्रता का उपभोग करते रहे है। इसके अतिरिक्त प्रेस मानव-भावनाओ को उत्पन्न नही कर सकता, भले ही विद्यमान मानव-भावनाओ को प्रज्ज्वलित करने मे वह कितना ही कुशल हो। अमरीका मे राजनीतिक जीवन सक्रिय, विभिन्नताओ से पूर्ण और यहॉ तक कि आन्दोलन से भरा है, किन्तु वह उन गहरी भावनाओ से बहुत कम प्रभावित होता है, जो भौतिक हितो पर आघात पहुँचने पर उभर पडती है। अमरीका मे ये हित समृद्धशालियो के हित है। एक फ्रासीसी और एक अमरीकी समाचार-पत्र पर

अतः अमरीका मे पत्र-पत्रिकाओ की संख्या इतनी अधिक है कि उन पर विश्वास नही होता। अत्यधिक सुविज्ञ अमरीकी प्रेस के इस अल्प प्रभाव का कारण उसकी सत्ता का अत्यधिक बिखरा होना बताते हैं, और इस देश में राजनीतिक विज्ञान की यह एक स्वयंसिद्धि है कि सार्वजनिक पत्रों का प्रभाव कम करने का एकमात्र मार्ग है कि उनकी संख्या में वृद्धि कर दी जाय। मैं नही समझ पाता कि जो सत्य इतना अधिक स्वत. स्पष्ट है, उसे यूरोप मे पहले ही अधिक सामान्य रूप से क्यों नही स्वीकार किया गया। मै यह तो समझ सकता हूँ कि वे व्यक्ति, जो पत्रो के साधन से क्रान्ति उत्पन्न करने की आशा करते है, क्यों उन्हे थोडे-से शक्तिशाली अगों तक ही सीमित रखना चाहते है। किन्तु इस बात की कल्पना भी नही की जा सकती कि वर्तमान व्यवस्था के सरकारी पक्षपाती तथा कानून के स्वाभाविक समर्थक प्रेस की सत्ता के केन्द्रीयकरण द्वारा उसके प्रभाव को कम करने का प्रयास करे। यूरोप की सरकारे प्रेस के साथ उसी प्रकार की शिष्टता बरतती हुई प्रतीत होती है, जैसी कि पुराने जमाने के सरदार अपने विपक्षियों के साथ बरतते थे। निजी अनुभव से यह जान लेने के बाद कि केन्द्रीयकरण एक शक्तिशाली शस्त्र है, उन्होने अपने शत्रुओं को उससे सज्जित किया है, जिससे वे उन्हे अधिक गौरव के साथ परास्त कर सके।

अमरीका मे शायद ही कोई ऐसा गॉव होगा जिसका अपना समाचार-पत्र नही है। इस बात की सहज ही कल्पना की जा सकती है कि इतने अधिक प्रतिद्वन्द्वियों के मध्य न तो अनुशासन की और न कार्य की एकता की स्थापना की जा सकती है और फलस्वरूप प्रत्येक अपने झण्डे के नीचे सघर्ष करता रहता है। निश्चय ही अमरीका मे सभी राजनीतिक पत्रिकाएँ प्रशासन के पक्ष मे अथवा विपक्ष मे विचार व्यक्त करती रहती है, किन्तु वे हजारों भिन्न-भिन्न मार्गों से उसका समर्थन अथवा विरोध करती है। वे विचारो का वह प्रचण्ड प्रवाह नही बना सकती जो अत्यन्त शक्तिशाली बाधो को भी बहा ले जाता है। प्रेस के प्रभाव के इस विभाजन से अन्य परिणाम उत्पन्न होते है, जो कम महत्वपूर्ण नही है। समाचारपत्रो की स्थापना इतनी आसानी से होती है कि उनकी संख्या बहुत अधिक बढ जाती है, किन्तु चूँकि प्रतिस्पर्द्धा के कारण अधिक लाभ नहीं होता, अतः अधिक योग्यतावाले व्यक्ति इन सस्थाओं के साथ सम्बद्ध होने के लिए बहुत कम प्रेरित होते हैं। सार्वजनिक समाचारपत्रों की संख्या इतनी अधिक होती है कि उनके धन कमाने के साधन होते हुए भी उन सभी के सचालन के लिए योग्य लेखक नही मिल सकते। अमरीका

के पत्रकारो की स्थिति सामान्यतः अत्यन्त विपन्न होती है, उनकी शिक्षा कम होती है और उनकी विचारधारा विकृत होती है। बहुमत की इच्छा सर्वाधिक कानून होती है और उससे एक प्रकार की परम्परा बनती है, जिसके अनुकूल हर एक को चलना ही चाहिए। इन सामान्य परम्पराओ की समष्टि को ही हर एक धन्धे की वर्ग-भावना कहा जाता है, इस प्रकार वकीलो, न्यायालयों आदि की वर्ग-भावना होती है। फ्रासीसी पत्रकारो की वर्ग भावना राज्य के महान हितो पर उग्र रूप से, किन्तु बहुधा प्रभावशाली एव धाराप्रवाह भाषा में ओर उच्च विचार-विमर्श करने मे निहित होती है और इस प्रकार की लेखन-प्रणाली के अपवाद कभी-कभी ही दिखायी देते है। अमरीकी पत्रकार की विशिष्टता यह होती है कि वह अपने पाठकों की भावनाओ को खुले रूप से एव भद्दे ढग से उभाडता है; वह व्यक्तियो के आचरण पर आक्षेप करने, उनके व्यक्तिगत जीवन का पता लगाने तथा उनकी समस्त कमजोरियो और बुराइयो को प्रकट करने के सिद्धान्तों का परित्याग कर देता है।

यद्यपि प्रेस इन साधनो तक ही सीमित है, तथापि अमरीका में उसका प्रभाव बहुत अधिक है। वह उस विशाल देश के समस्त भागो मे राजनीतिक जीवन का सचार करता है। राजनीतिक कुचक्रो के गुप्त स्रोतो का पता लगाने के लिए तथा जनमत के न्यायालय के समक्ष बारी-बारी से सभी राजनीतिक दलों के नेताओ को बुलाने के लिए उसकी ऑखे सदा खुली रहती है। वह समाज के हितों को कतिपय सिद्धान्तों के चारो ओर एकत्र करता है और प्रत्येक दल का लक्ष्य निर्धारित करता है, क्योंकि वह उन लोगो को विचार-विनिमय का एक साधन प्रदान करता है, जो कभी तात्कालिक सम्पर्क में आये बिना एक-दूसरे की बाते सुनते हैं और एक-दूसरे को सम्बोधित करते हैं। जब प्रेस के अनेक अग एक ही प्रकार की आचरण-पद्धति ग्रहण करते हैं, तब अन्ततोगत्वा उनका प्रभाव अदम्य हो जाता है और निरन्तर एक ही दिशा से आक्रान्त होना रहनेवाला जनमत अन्त मे उस प्रहार के समक्ष आत्मसमर्पण कर देता है। अमरीका मे एक पृथक् पत्र की सत्ता कुछ भी नहीं होती; किन्तु निर्धारित अवधि के अन्दर से प्रकाशित होने वाले पत्रो की शक्ति का स्थान जनता की शक्ति के बाद ही है।

१० — संयुक्त-राज्य अमरीका में राजनीतिक संगठन

विश्व मे अमरीका के अलावा किसी भी अन्य राष्ट्र मे संघ के सिद्धान्त का इतनी सफलता से प्रयोग नही किया गया है अथवा इसको इतनी व्यापकता से लागू नही किया गया है। कस्बो, नगरो अथवा काउंटियो के नामो के अन्तर्गत अथवा कानून द्वारा स्थापित स्थायी सगठनो के अतिरिक्त अन्य अनेक सगठन निजी व्यक्तियो द्वारा निर्मित और सचालित होते है।

अमरीका के नागरिक को बचपन से ही अपने ही प्रयासों पर विश्वास करना सिखाया जाता है, जिससे वह जीवन की कठिनाइयो और बुराइयो का सामना कर सके। वह सामाजिक सत्ता को सन्देह और चिन्ता की दृष्टि से देखता है और उसकी सहायता का तभी दावा करता है जब उसके बिना उसके लिए कार्य करना असम्भव हो जाता है। इस आदत की झलक पाठशालाओ मे भी देखी जा सकती है, जहाँ बालक अपने द्वारा बनाये हुये नियमो के आगे झुकने के आदी होते है और उन नियमो का, जिनको उन्होने ही बनाया है, उल्लंघन करनेवाले को दण्ड देते है। इस प्रकार की भावना सामाजिक जीवन की सभी गतिविधियो मे व्याप्त है। यदि मार्ग मे किसी प्रकार की रुकावट आ जाती है और यातायात मे किसी प्रकार की बाधा उपस्थित हो जाती है तो पडोसी तत्काल एक विचार-सभा का निर्माण कर लेते है और बिना किसी पूर्व तैयारी के तत्काल बनायी गयी यह सभा कार्यपालिका-सत्ता को जन्म देती है और इसके पूर्व कि कोई व्यक्ति तात्कालिक रूप से सम्बद्ध व्यक्तियो की सत्ता से उच्चतर एव पहले से ही विद्यमान सत्ता को सूचित करने की बात सोच सके, इस असुविधा को दूर कर दिया जाता है। यदि किसी सार्वजनिक आनन्द का प्रश्न उठता है तो उस मनोरजन मे नियमितता और अधिक शोभा लाने के लिए सगठनो का गठन किया जाता है। ऐसी बुराइयो को, जिनका स्वरूप विशुद्धत नैतिक होता है, मिटाने के लिए, जैसे मद्यपान की बुराई कम करने के लिए, सस्थाएँ बनायी जाती है। अमरीका मे सार्वजनिक सुरक्षा, वाणिज्य, उद्योग, नैतिकता और धर्म की रक्षा के लिए संगठन बनाये जाते है। एक सस्था के रूप मे सगठित व्यक्तियों की सम्मिलित शक्ति द्वारा किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति मे मानवीय इच्छा हतोत्साह नही होती।

व्यक्तियो का कोई समूह कतिपय सिद्धान्तो को, जो सार्वजनिक सहमति प्रदान करता है तथा एक निश्चित पद्धति द्वारा उन सिद्धान्तो के प्रसार के लिए

वे जो कुछ करने के लिए अनुबन्ध करते है, उसी से संस्था का निर्माण होता है। इस प्रकार के मतों के साथ सम्बद्ध होने का अधिकार बहुत अधिक लाइसेंस रहित मुद्रण की स्वतंत्रता के सदृश होता है, किन्तु इस प्रकार से बनी सस्थाओ के अधिकार प्रेस से भी अधिक होते है। जब एक संस्था किसी मत का प्रतिनिधित्व करती है तब वह आवश्यक रूप से सही और स्पष्ट रूप धारण कर लेती है। वह अपने समर्थकों की सख्या की गणना करती है और उन्हे अपने उद्देश्यो मे दीक्षित करती है, दूसरी ओर वे एक दूसरे से परिचित होते है और उनकी सख्या से उनके उत्साह में वृद्धि होती है। एक सगठन भिन्न दिशा में सलग्न मस्तिष्कों के प्रयासो को एक दिशा मे लाता है और उन्हे एक लक्ष्य की ओर, जिसका वह स्पष्ट सकेत करता है, बढने के लिए प्रबल रूप से प्रेरित करता है।

सघ के अधिकार के प्रयोग का दूसरा अग है सभा की शक्ति। जब किसी सगठन को देश के कुछ महत्वपूर्ण भागो में कार्य-केन्द्र स्थापित करने की अनुमति दी जाती है, तब उसकी गतिविधि बढ जाती है और उसके प्रभाव की सीमा विस्तृत हो जाती है। मनुष्यो को एक दूसरे से मिलने का अवसर मिलता है, कार्य करने के साधन सयुक्त हो जाते है और मतों की रक्षा एक ऐसे उत्साह एवं शक्ति के साथ की जाती है, जिन्हे लिखितभाषा कभी नही प्राप्त कर सकती। अन्त में राजनीतिक सगठनो के अधिकार के प्रयोग में एक तीसरा अग होता है, किसी मत के समर्थक निर्वाचक सस्थाओ मे सयुक्त होकर केन्द्रीय धारासभा में अपना प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रतिनिधियो का निर्वाचन कर सकते है। ठीक ठीक कहा जाय तो यह दल पर प्रतिनिधिमूलक प्रणाली को लागू करना है।

उनको अन्यों की भॉति कानून बनाने का अधिकार नही होता, किन्तु जो कानून प्रचलित है, उनकी आलोचना करने का तथा जो कानून बनाये जाने चाहिए उनकी रूपरेखा अग्रिम रूप से तैयार करने का उन्हे अधिकार होता है।

जिस जाति को स्वतंत्रता का प्रयोग करने का अपूर्ण अधिकार होता है अथवा जिसकी राजनीतिक भावनाएँ उग्र होती हैं, उसमें यदि कानून बनाने वाले बहुमत के पार्श्व मे एक ऐसे अल्पमत को रख दिया जाय, जो केवल विचार-विमर्श करता है तथा जिसे अमल मे लाने के लिए तैयार कानून मिलते है, तो मैं यह विश्वास किये बिना नहीं रह सकता कि वहॉ जन-शान्ति के लिए बहुत बडा खतरा उपस्थित हो जायगा। इसमे सन्देह नहीं कि यह सिद्ध करने मे कि एक कानून अपने आप मे एक दूसरे कानून की अपेक्षा अधिक अच्छा है तथा यह सिद्ध करने मे कि दूसरे कानून का स्थान पहले कानून को दिया जाय, बहुत बडा अन्तर है, किन्तु अधिकाश व्यक्ति इस अन्तर की, जो विचारशील व्यक्तियो के मस्तिष्क में स्पष्ट होता है, आसानी के साथ उपेक्षा कर देते है। कभी–कभी ऐसा होता है कि एक राष्ट्र दो लगभग बराबर की पार्टियों में विभक्त होता है, जो बहुमत का प्रतिनिधित्व करने का दावा करती हैं। यदि निर्देशिका सत्ता के निकट एक दूसरी सत्ता की स्थापना हो जाय, जिसका नैतिक अधिकार पहली के नैतिक अधिकार के समान ही है, तो हमे यह विश्वास नही करना चाहिए कि वह कार्रवाई किये बिना बोलने मे ही सन्तोष करेगी अथवा वह सदा इस सूक्ष्म विचार तक ही सीमित रहेगी कि सघों का काम विचारधाराओ का निर्देशन करना है, उनको लागू करना नहीं, कानून का सुझाव देना है, कानून बनाना नही।

प्रेस-स्वातंत्र्य पर उसके मुख्य परिणामो के दृष्टिकोण से मै जितना अधिक सोचता हूँ, उतना ही मुझे विश्वास होता जाता है कि आधुनिक विश्व में यह स्वतंत्रता का मुख्य और यह कहना चाहिए कि सारभूत तत्त्व है। अतः जो राष्ट्र स्वतंत्र रहने के लिए कृतसंकल्प हैं, उनका किसी भी कीमत पर इस स्वतंत्रता के लिए मॉग करना ठीक ही है, किन्तु राजनीतिक सस्था की असीमित स्वतंत्रता को प्रेस की स्वतत्रता के पूर्णत समान नहीं माना जा सकता, क्योंकि वे एक दूसरे की अपेक्षा एक साथ ही कम आवश्यक और अधिक खतरनाक होती हैं। कोई राष्ट्र आत्मनिर्देशन की शक्ति के किसी भी अश को समर्पित किये बिना भी कतिपय सीमाओ के अन्तर्गत रह सकता है और कभी-कभी वह अपने अधिकार की रक्षा करने के लिए विवश भी हो जाता है।

इस बात को स्वीकार करना ही होगा कि अमरीका मे राजनीतिक संगठन की निरकुश स्वतंत्रता के अभी तक ऐसे घातक परिणाम नही हुए हैं, जो अन्य राष्ट्रो मे सम्भवतः हो सकते हैं। सगठन का अधिकार इग्लैण्ड से आया और अमरीका में यह सदा कायम रहा। इस विशेषाधिकार का प्रयोग अब लोगों के रीति-रिवाजो और आचरण के साथ मिल गया है। आज के युग मे बहुमत के अत्याचार के विरुद्ध सगठन की स्वतंत्रता एक आवश्यक 'गारण्टी' हो गयी है। अमरीका मे जैसे ही एक पार्टी प्रभुताशाली बन जाती है, सभी सार्वजनिक अधिकार उसके हाथ मे चले जाते है, उसके निजी समर्थक समस्त पदों पर आरूढ़ हो जाते है और प्रकाशन की सारी शक्ति उनके हाथ मे चली जाती है। चूंकि विपक्षी दल के अत्यन्त प्रतिष्ठित व्यक्ति भी उस सीमा को पार नही कर सकते, जो उनको सत्ता से अलग रखती है, इसलिए उनके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वे उसके बाहर अपनी स्थिति को सुदृढ बनाये और भौतिक सत्ता पर अल्पमत के उस समस्त नैतिक अधिकार का विरोध करे, जिसका उस पर आधिपत्य होता है। इस प्रकार एक भीषण खतरे का सामना करने के लिए एक खतरनाक साधन का प्रयोग किया जा सकता है।

बहुमत की सर्वशक्तिमत्ता मुझे अमरीकी गणतंत्रो के लिए इतने खतरो से भरी हुई मालूम देती है कि उस पर रोक लगाने के लिए खतरनाक साधनो का प्रयोग भी घातक की अपेक्षा लाभदायक अधिक प्रतीत होता है और यहाँ मैं एक ऐसा मत व्यक्त करूँगा, जिससे पाठक को वह बात याद आ जायेगी जो मैंने बस्तियों की स्वतंत्रता के सम्बन्ध मे कही थी। किसी दल की निरकुशता अथवा किसी राजा की स्वेच्छाचारिता के अत्याचार को रोकने के लिए संगठनों की आवश्यकता अन्य देशो मे उतनी नही होती, जितनी गणतान्त्रिक देशो मे। कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रो मे सरदारों और धनिकों का स्वतः एक संगठन बन जाता है, जो सत्ता के दुरुपयोग को रोकता है। जिन देशों मे ऐसे सघ नही है, यदि निजी व्यक्ति उसके स्थान पर कृत्रिम और स्थायी सगठन नही बना सकते तो भीषण अत्याचारो से उनके लिए कोई स्थायी सुरक्षा नही हो सकती और एक छोटे वर्ग अथवा एक व्यक्ति द्वारा महान जन-समुदाय का स्वतंत्रतापूर्वक दमन किया जा सकता है।

इस बात से इनकार नही किया जा सकता कि राजनीतिक कार्यों के लिए सगठन की अनियंत्रित स्वतंत्रता एक ऐसा विशेषाधिकार है जिसके प्रयोग को

सीखने मे मनुष्य को सब से अधिक समय लगता है। यदि यह राष्ट्र मे अराजकता उत्पन्न नही करती तो वह अराजकता के संकट की आशंकाओं मे निरन्तर वृद्धि अवश्य करती है। फिर भी, एक बिन्दु पर इस खतरनाक स्वतंत्रता से दूसरे प्रकार के खतरों से रक्षा होती है। ऐसे देशों मे जहाँ सब स्वतंत्र होते हैं, गुप्त संस्थाएँ अज्ञात रहती हैं। अमरीका मे दलबन्दी है, किन्तु षड्यन्त्र नही।

स्वेच्छापूर्वक कार्य करने के बाद मनुष्य का सर्वाधिक स्वाभाविक अधिकार है अपने सहप्राणियों के साथ अपने प्रयत्नों को सयुक्त करना तथा उनके साथ मिलकर सामान्य कार्य करना। अतः मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि संगठन का अधिकार भी व्यक्तिगत स्वतत्रता के अधिकार के समान ही अविच्छेद्य है। कोई भी विधायक समाज की नीव को आघात पहुँचाये बिना उस पर प्रहार नहीं कर सकता। तथापि यदि संगठन की स्वतत्रता कुछ राष्ट्रों के लिए केवल लाभ और समृद्धि का एक साधन है तो अन्य राष्ट्र उसको दूषित भी कर सकते है और उसे जीवन के तत्व से बदल कर सर्वनाश का कारण बनाया जा सकता है। ऐसे देशो मे जहाँ स्वतंत्रता को अच्छी तरह समझा जाता है और जहाँ स्वतंत्रता उच्छृंखलता का रूप धारण कर लेती है, सगठनो द्वारा अपनायी जानेवाली विभिन्न पद्धतियों की तुलना सरकारो और पार्टियो के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

अधिकाश यूरोपीय सगठन को एक ऐसा अस्त्र मानते है, जिसको शीघ्र बनाया जा सकता है और सघर्ष के समय तत्काल काम मे लाया जा सकता है। सस्था की स्थापना विचार-विनिमय के लिए की जाती है, किन्तु इसमे शामिल होनेवालो के मास्तिष्क मे भावी कार्रवाई की भावना व्याप्त रहती है। वास्तव मे यह एक सेना है और भाषण मे जितना समय व्यतीत किया जाता है, उसमे शक्ति का अनुमान लगाया जाता है तथा समूह के साहस को जाग्रत किया जाता है, जिसके बाद वे शत्रु के विरुद्ध प्रयाण करते है। कानून की सीमाओ के अन्तर्गत रहनेवाले साधन सगठन के सदस्यों को सफलता के साधन के रूप मे जॅच सकते है, किन्तु वे सफलता के एकमात्र साधन के रूप मे कभी नही जॅच सकते।

फिर भी अमरीका मे संगठनके अधिकार को इस प्रकार नही समझा जाता। अमरीका मे वे नागरिक, जो अल्पसख्यक है, प्रथमत अपनी सख्यागत शक्ति का प्रदर्शन करने और इस प्रकार बहुमत की नैतिक शक्ति को कम करने के लिए और द्वितीयत

प्रतिस्पर्द्धा मे वृद्धि करने तथा इस प्रकार उन तर्कों का पता लगाने के लिए, जो बहुसख्यक दल पर प्रभाव डालने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त होते है, अपना सगठन बनाते है, क्योकि उनको सदैव यह आशा रहती है कि वे बहुमत को अपनी ओर ला सकेगे और इस प्रकार उसके नाम पर सर्वोच्च सत्ता का प्रयोग कर सकेगे। अतः अमरीका मे राजनीतिक सगठनो के इरादे शान्तिमय होते है और उनके द्वारा अपनाये जानेवाले साधन पूर्णतः वैधानिक होते हैं। वे बलपूर्वक कहते है तथा उनका कथन पूर्णतया सत्य भी है कि उनका उद्देश्य केवल वैधानिक उपायो द्वारा ही सफलता प्राप्त करने का होता है।

इस सम्बन्ध मे अमरीकियो और यूरोपीय लोगो के मध्य जो अन्तर है, वह कई कारणो पर निर्भर करता है। यूरोप मे ऐसी पार्टियॉ है, जिनका बहुमत से इतना अधिक मतभेद होता है कि वे उसका समर्थन प्राप्त करने की आशा कभी नही कर सकती। फिर भी वे सोचती है कि वे अपने-आप मे इतनी शक्तिशालिनी है कि वे बहुमत का सामना कर सकती है। जब इस प्रकार की पार्टी कोई सगठन बनाती है तब उसका उद्देश्य विश्वास दिलाना नही, बल्कि संघर्ष करना होता है। अमरीका मे जो व्यक्ति बहुमत के बहुत अधिक प्रतिकूल मत रखते हैं, वे उसके विरुद्ध कुछ भी नही कर सकते और अन्य सभी पार्टिया बहुमत को अपने ही सिद्धान्तो के अनुकूल बनाने की आशा रखती है। तब जिस अनुपात मे बड़ी पार्टियॉ बहुमत प्राप्त कर सकने मे अपने को पूर्णतया असमर्थ पाती है, उसी अनुपात मे सगठन के अधिकार का प्रयोग खतरनाक हो जाता है। संयुक्त राज्य अमरीका जैसे देश मे जहॉ मतभेद स्वरूप-भेद मात्र है, सगठन का अधिकार बिना दुष्परिणामो के अपरिसीम रह सकता है। हम स्वतत्रता विषयक अपनी अनुभवहीनता के फलस्वरूप सगठन की स्वतंत्रता को केवल सरकार की आलोचना करने का अधिकार समझने लगते है। अपनी शक्ति का ज्ञान होने के बाद पार्टी और व्यक्ति के समक्ष जो प्रथम धारणा उपस्थित होती है, वह है हिसा की धारणा। तर्क द्वारा मनाने की धारणा बाद मे बनती है और वह अनुभव से प्राप्त की जाती है। अग्रेज, जो ऐसी पार्टियो मे बॅटे हुए है जो एक दूसरे से भिन्न है, संगठन के अधिकार का दुरुपयोग बहुत कम करते है, क्योकि लम्बे अर्से से वे इसका पालन करने के आदी है। फ्रास मे युद्ध की भावना इतनी उग्र है कि इतने अधिक पागलपन से भरा हुआ अथवा राज्य के कल्याण के लिए इतना अधिक

हानिकारक कार्य कोई नहीं है और कोई व्यक्ति अपने प्राणों की कीमत पर इसकी रक्षा करने मे अपने को सम्मानित नहीं मानता।

किन्तु अमरीका मे राजनीतिक संगठनो की हिंसा को कम करने का कदाचित् सबसे बडा कारण देशव्यापी मताधिकार है। जिन देशों में देशव्यापी मताधिकार है, वहॉ बहुमत कभी भ्रम मे नहीं रहता, क्योकि कोई भी पार्टी समाज के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करने का तर्क-सगत दावा नहीं कर सक्ती, जिसने मतदान नही किया है। सगठन और राष्ट्र भी जानते हैं कि वे बहुमत का प्रतिनिधित्व नहीं करते। वास्तव मे इस बात का पता उनके अस्तित्व से ही चल जाता है, क्योंकि यदि वे बहुमत की शक्ति का प्रतिनिधित्व करते है तो वे सुधार का प्रयत्न करने की अपेक्षा कानून में परिवर्तन ही कर डालते। इसके फलस्वरूप सरकार का, जिसकी वे आलोचना करते है, नैतिक प्रभाव बहुत बढ़ जाता है और स्वयं उनकी शक्ति बहुत अधिक क्षीण हो जाती है।

यूरोप मे बहुत कम ऐसे संगठन है जो बहुमत का प्रतिनिधित्व करने का दिखावा नही करते अथवा जो उसका प्रतिनिधित्व करने का विश्वास नहीं रखते। यह धारणा अथवा यह दावा उनकी शक्ति में आश्चर्यजनक वृद्धि करता है और वह उनकी कार्रवाइयो को वैधानिक बनाने मे कम योग नहीं देता। दबाये गये अधिकार के बचाव मे हिंसा भी क्षम्य प्रतीत हो सकती है। इस प्रकार मानवीय कानूनों की विशाल उलझनों मे ऐसा होता है कि उग्र स्वतंत्रता कभी-कभी स्वतंत्रता की बुराइयो मे सुधार करती और उग्र प्रजातन्त्र प्रजातंत्र के खतरो को दूर करता है। यूरोप में सगठन अपने को कुछ हद तक अपने लिए बोलने में असमर्थ लोगों की विधान-निर्मातृ और कार्यकारिणी परिषद् मानते है तथा इसी विश्वास के आधार पर वे कार्य और नेतृत्व करते हैं। अमरीका मे, जहॉ वे सबकी दृष्टि मे राष्ट्र के अल्पमत का ही प्रतिनिधित्व करते है, वे तर्क करते हैं और आवेदन पेश करते हैं।

यूरोप में सगठनों द्वारा अपनाये जाने वाले साधन उनके लक्ष्यों के अनुकूल होते हैं। चूँकि इन सस्थाओं का मुख्य उद्देश्य कार्य करना होता है, विश्वास दिलाना नही, अत वे ऐसे सगठन बनाने के लिए प्रेरित होते है जो नागरिक और शान्तिपूर्ण नही होते, बल्कि सैनिक जीवन की आदतो और सिद्धान्तो का अनुसरण करते हैं। वे अपनी शक्ति को जहॉ तक सम्भव हो सके, केन्द्रित करते है और समूची पार्टी की शक्ति को थोडे से नेताओ के हाथ मे सौप देते है।

इन सगठनो के सदस्य गश्त पर तैनात सैनिको की भाति एक साकेतिक शब्द पर सक्रिय हो जाते है, वे सविनय आज्ञापालन के सिद्धान्त मे विश्वास करते है अथवा यह कह सकते है कि वे एक साथ संगठित होने मे तत्काल अपने निजी निर्णय और स्वतत्र इच्छा के प्रयोग का परित्याग कर देते है। ये संस्थाएँ जिस तानाशाही नियंत्रण का प्रयोग करती है, वह समाज पर सरकार की सत्ता की अपेक्षा, जिसकी वे आलोचना करते है, बहुत अधिक असमर्थनीय होती है। इन कार्रवाइयो से उनकी नैतिक शक्ति बहुत कम हो जाती है और उनका वह पावन स्वरूप नष्ट हो जाता है, जो दमनकारियों के विरुद्ध दलितो के संघर्ष के साथ सदा सम्बद्ध रहता है। जो निश्चित मामलों मे दासता की भावना से अपने साथियो की आज्ञा का पालन करना स्वीकार करता है और जो अपनी इच्छा तथा अपने विचारो को भी उनके नियंत्रण मे छोड देता है, वह यह कैसे कह सकता है कि वह स्वतंत्र होना चाहता है ?

अमरीकियो ने अपने सगठनो मे सरकार की भी स्थापना की है, किन्तु यह अपरिवर्तनीय रूप से नागरिक प्रशासन से उधार ली गयी है। हरेक व्यक्ति की स्वतंत्रता को औपचारिक रूप से मान्यता मिली हुई है, जैसे कि समाज मे सभी सदस्य एक ही लक्ष्य की ओर एक ही समय बढते है, किन्तु उनके लिए एक ही मार्ग अपनाना आवश्यक नही है। कोई भी अपने तर्क और अपनी स्वतंत्र इच्छा के प्रयोग का परित्याग नही करता, किन्तु प्रत्येक व्यक्ति समान कार्य को आगे बढाने के लिए उस तर्क एवं इच्छा पर जोर देता है।

११. संयुक्त-राज्य अमरीका में प्रजातंत्र से लाभ

प्रजातान्त्रिक सरकार की कमियो और कमजोरियों का तत्काल पता चल सकता है, इनका पता स्पष्ट घटनाओ से चल जाता है, जबकि इसका लाभकारी प्रभाव अस्पष्ट और अज्ञात रहता है। उसकी कमियों का पता लगाने के लिए एक दृष्टिपात मात्र पर्याप्त होता है, किन्तु उसके अच्छे गुणों का पता दीर्घकालिक पर्यवेक्षण से ही चल सकता है। अमरीकी प्रजातंत्र के कानून त्रुटिपूर्ण अथवा अपूर्ण हैं। वे कभी-कभी निहित स्वार्थों पर प्रहार करते हैं अथवा कुछ अन्य की स्वीकृति देते है, जो समाज के लिए खतरनाक होते है और यदि वे अच्छे भी हों तो भी उनकी बहुलता एक भारी बुराई है।

तत्र किस प्रकार अमरीकी गणतत्र समृद्धि की ओर बढते जाते है और कायम है ?

प्रजातंत्र के कानून सामान्यत यथासम्भव अधिकाधिक व्यक्तियो के कल्याण के लिए होते है, क्योंकि वे नागरिकों के बहुमत द्वारा बनाये जाते हैं, जिनके लिए गलतियाँ करना स्वाभाविक होता है, किन्तु जिनका हित स्वयं उन्हींके लाभ के विरुद्ध नही हो सकता। इसके विपरीत कुलीनतंत्र के कानूनों के अनुसार धन और सत्ता अल्पमत के हाथ में रहती है, क्योंकि कुलीनतंत्र का स्वरूप ही अल्पमत मे निहित रहता है। अत. एक सामान्य सिद्धान्त के रूप मे यह बलपूर्वक कहा जा सकता है, कि कानून बनाने मे प्रजातत्र का उद्देश्य कुलीनतंत्र के उद्देश्य की अपेक्षा मानवता के लिए अधिक लाभदायक होता है। फिर भी, इससे होने वाले कुल लाभ यही है।

विधान-निर्माण के विज्ञान मे कुलीनतान्त्रिक प्रणालियाँ प्रजातान्त्रिक पद्धतियो की अपेक्षा निश्चित रूप से अधिक सिद्धहस्त रही है। उनके पास आत्मनियन्त्रण होता है, जो क्षणिक उत्तेजना से उत्पन्न होने वाली भूलो से उनकी रक्षा करता है और वे दूरगामी निर्णय करते है, जिनके बारे मे वे यह जानते है कि वे अनुकूल अवसर आने तक कैसे पूर्ण होते है। कुलीनतान्त्रिक सरकार चतुरता से आगे बढती है और वह यह समझती है कि किस प्रकार एक निश्चित बिन्दु पर अपने सभी कानूनो की सामूहिक शक्ति को एक ही समय एकत्र किया जाता है। प्रजातत्रो मे स्थिति भिन्न रहती है, जिसके कानून लगभग सदा ही अप्रभावकारी अथवा असामयिक होते हैं। अत॰ प्रजातंत्र के साधन कुलीनतत्र के साधनो से अधिक अपूर्ण होते है और वह अनजाने जो भी कार्रवाई करता है, वह प्रायः उसके ही उद्देश्य के विरुद्ध होती है, किन्तु उसका उद्देश्य अधिक उपयोगी होता है।

सार्वजनिक अधिकारियो के सम्बन्ध मे भी ऐसा ही मत व्यक्त किया जा सकता है। यह देखना सरल है कि अमरीकी प्रजातत्र जिन व्यक्तियो को प्रशासन के अधिकार देता है, उनके चुनाव मे वह बहुधा गलतियाँ करता है। अमरीका मे जिन लोगो को सार्वजनिक मामलो के निर्देशन का भार सौपा जाता है, वे क्षमता और नैतिकता, दोनो दृष्टियो से उन व्यक्तियो से प्राय॰ निम्नकोटि के होते है, जिन्हे कुलीनतान्त्रिक पद्धति मे सत्तारूढ किया जाता है, किन्तु उनका हित उनके सह-नागरिको के बहुमत के साथ होता है। वे प्राय. अविश्वसनीय

और गलत हो सकते है, किन्तु वे व्यवस्थित रूप से ऐसा कोई आचरण नही करेगे, जो बहुमत के विरुद्ध हो और वे सरकार को एक खतरनाक अथवा सर्वस्वतंत्र मनोवृत्ति नही प्रदान कर सकते।

इसके अतिरिक्त प्रजातात्रिक मजिस्ट्रेट का कुप्रशासन एक पृथक तथ्य होता है, जिसका प्रभाव उस अल्पावधि तक ही रहता है, जिसके लिए वह चुना जाता है। भ्रष्टाचार और अक्षमता उस प्रकार के सामान्य हित नही होते, जो मनुष्य को सदा के लिए एक दूसरे से सम्बद्ध कर सकते है। एक भ्रष्ट अथवा अयोग्य मजिस्ट्रेट केवल इस कारण से किसी दूसरे मजिस्ट्रेट के साथ अपने कार्यो को सम्बद्ध नही करेगा कि दूसरा भी उतना ही भ्रष्ट और अयोग्य है, जितना कि वह स्वय और ये दोनो व्यक्ति अपनी दूर की पीढियो के भ्रष्टाचार और अक्षमता मे वृद्धि के लिए अपने प्रयासो को कभी संयुक्त नही करेगे। इसके विपरीत, एक की आकाक्षाएँ और प्रयास दूसरे का भंडाफोड कर देगे। प्रजातात्रिक राज्यो मे मजिस्ट्रेट के दुर्गुण प्रायः पूर्णतः व्यक्तिगत होते है।

अमरीका मे जहॉ सार्वजनिक अधिकारियो का कोई वर्गहित नही होता, सरकार का सामान्य और निरन्तर प्रभाव लाभकारी होता है, यद्यपि सरकार का संचालन करने वाले व्यक्ति बहुधा अकुशल और कभी-कभी घृणित होते है। प्रजातात्रिक संस्थाओ मे निश्चय ही एक गुप्त प्रवृत्ति होती है, जो उनकी त्रुटियो और बुराइयो के बावजूद नागरिको के प्रयासो को समाज की समृद्धि के लिए सहायक बनाती है, जब कि कुलीनतात्रिक संस्थाओ मे एक गुप्त पक्षपात होता है, जो सरकार का संचालन करने वालो के गुणो एव योग्यताओ के बावजूद उन्हे ऐसी दिशा मे प्रवृत्त करता है, जिससे वे अपने साथियो का दलन करने लगते है। कुलीनतात्रिक सरकारो मे सार्वजनिक व्यक्ति इरादा न रखते हुए भी प्राय. हानि पहुँचा सकते है और प्रजातात्रिक राज्यो मे वे ऐसे अच्छे परिणाम उत्पन्न कर देते है, जिनकी उन्होने कभी कल्पना भी नही की थी।

जन-भावना

देशप्रेम का एक ऐसा मोह होता है, जो मुख्यतः उस स्वाभाविक, नि स्वार्थ और अनिर्वचनीय भावना से उत्पन्न होता है, जो मनुष्य के प्रेम को उसके जन्मस्थान के साथ सम्बद्ध करती है। यह स्वाभाविक प्रेम प्राचीन प्रथाओ के प्रति अभिरुचि तथा प्राचीन परम्पराओ के प्रति श्रद्धा के साथ सम्बद्ध होता है। जिनमे यह भावना होती है, वे अपने देश के साथ वैसे ही प्रेम करते है, जैसे अपने पिता के भवन से करते है। यह भावना उन्हे जो शान्ति

प्रदान करती है, उससे वे प्रेम करते है। वे उन शान्तिपूर्ण आदतों से लिपटे रहते है, जिन्हे उन्होने इसके अन्तस्तल मे प्राप्त किया है। वे इससे जाग्रत होने वाली स्मृतियों से सम्बद्ध रहते हैं और वे वहॉ आज्ञाकारिता की अवस्था मे रहने में भी प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। इस देशभक्ति को कभी-कभी धार्मिक उत्साह से भी प्रोत्साहन मिलता है और तब वह काफी प्रयास करने योग्य हो जाती है। यह स्वयं एक प्रकार का धर्म है; यह तर्क नहीं करती, किन्तु यह विश्वास और भावना की प्रेरणा से कार्य करती है। कुछ राष्ट्रों मे राजा को देश का प्रतीक माना जाता है और देशभक्ति का जोश निष्ठा के जोश मे परिणत हो जाने पर वे उसकी विजयों मे सहानुभूतिपूर्ण गर्व और उसकी शक्ति मे गौरव का अनुभव करते है। प्राचीन राजतंत्र के अतर्गत एक समय था जब फ्रासीसी अपने राजा की मनमानी इच्छा पर अवलम्बित रहने मे सतोष अनुभव करते थे और वे गर्व के साथ कहा करते थे कि "हम विश्व के सबसे शक्तिशाली राजा के शासन मे रहते है", किन्तु समस्त स्वाभाविक भावनाओ की भॉति इस प्रकार की देशभक्ति महान अस्थायी प्रयासो को तो प्रोत्साहित करती है, उन प्रयासो को निरतरता नही प्रदान करती। संकट-काल मे इससे राज्य की रक्षा हो सकती है, किन्तु शान्तिकाल मे बहुधा इस प्रवृत्ति के कारण राज्य की क्षति होने लगती है। जब लोगों के आचरण साधारण होते है और जब समाज ऐसी परम्परागत संस्थाओ पर आधारित होता है, जिनकी वैधता पर कभी विवाद नही उठा, तब इस प्रकार की आतरबौद्धिक देशभक्ति दृढ रहती है।

किन्तु देश के प्रति लगाव का एक दूसरा प्रकार भी है, जो उस देशप्रेम से, जिसका हम अभी तक वर्णन करते आये है, अधिक युक्तिसगत है। यह सम्भवतः कम उदार और कम प्रबल है, किन्तु अधिक लाभदायक और स्थायी है। यह ज्ञान से प्रवाहित होता है, कानूनों से उसका पोषण होता है, नागरिक अधिकारो के प्रयोग से इसका विकास होता है और अन्त मे नागरिको के निजी हितो से यह आच्छादित हो जाता है। मनुष्य के कल्याण पर उसके देश के कल्याण का जो प्रभाव पडता है, उसे वह समझता है, वह इस बात से अवगत होता है कि कानून उसको उस समृद्धि मे योग देने की अनुमति देता है और वह उसके विकास के लिए परिश्रम करता है। प्रथमतः वह ऐसा इसलिए करता है कि उसको इससे लाभ होता है और दूसरे इसलिए कि वह उसके कार्य का ही एक अग है।

किन्तु किसी राष्ट्र के जीवन मे कभी-कभी ऐसे युग आते हैं, जब जनता के पुराने रीति-रिवाज बदल जाते है, सार्वजनिक नैतिकता नष्ट हो जाती है, धार्मिक विश्वास डगमगा जाते हैं, परम्परा का जादू भंग हो जाता है। जब कि ज्ञान अपूर्ण रहता है और समाज के नागरिक अधिकार अरक्षित अथवा संकीर्ण सीमाओ में बँधे रहते हैं, तब नागरिको की दृष्टि मे देश धुँधला और भ्रमपूर्ण स्वरूप धारण कर लेता है। वे उसे उस भूमि मे नही देखते जिस पर वे रहते है, क्योकि वे उसको एक निर्जीव स्थल मानते हैं। अपने पूर्वजो की प्रथाओ मे, जिनको उन्होने पतनकारी बंधन मानना सीखा है; धर्म मे, जिसके बारे मे उनको सशय रहता है; कानून मे, जो उनके अधिकारो से उद्भूत नही है, और विधायको मे भी, जिनसे वे डरते है और जिनसे वे घृणा करते है, उन्हे देश के दर्शन नही होते। देश उनकी इन्द्रियो के लिए खोया हुआ रहता है, वे न तो देश के निजी रूप मे और न अन्य से प्राप्त रूप मे उसका पता लगा सकते है और वे एक संकीर्ण एवं ज्ञानरहित स्वार्थपरता के प्रभाव में आ जाते है। वे तर्क के साम्राज्य को स्वीकार किये बिना ही पूर्वाग्रह से मुक्त हो जाते है, उनमे न तो राजतंत्र की आन्तरिक देशभक्ति होती है और न गणराज्य की विवेकशील देशभक्ति होती है, प्रत्युत वे भ्रान्ति और विपत्ति के मध्य दोनो के बीच मे रुक जाते है।

इस स्थिति में पीछे हटना असम्भव है, क्योंकि जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपनी बाल्यावस्था की निर्दोष रुचियो को पुनः नही प्राप्त कर सकता, उसी प्रकार कोई जाति अपनी युवावस्था की भावनाओ को पुनः नही प्राप्त कर सकती। इस प्रकार की बातो पर खेद प्रकट किया जा सकता है, पर इनका नवीनीकरण नही किया जा सकता। उन्हे आगे बढना ही होगा और निजी एवं सार्वजनिक स्वार्थों के एकीकरण की गति को तीव्र करना ही होगा, क्योकि निःस्वार्थ देशसेवा का समय सदा के लिए चला गया है।

मै निश्चय ही यह नही कह रहा हूँ कि इस परिणाम की प्राप्ति के लिए सभी लोगो को तत्काल राजनीतिक अधिकार दे दिये जाय, किन्तु मै यह मानता हूँ कि मनुष्यो को अपने देश के कल्याण मे रुचि लेने के लिए प्रेरित करने वाला जो सर्वशक्तिशाली और सम्भवतः एक मात्र साधन अब तक हमारे पास है, वह यह है कि उनको सरकार मे भागीदार बनाया जाय। आधुनिक युग मे मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि नागरिक उत्साह को राजनीतिक अधिकारों के प्रयोग से अलग नही किया जा सकता और मेरा विचार है कि इन अधि-

कारो का विस्तार जिस अनुपात मे होता है, उसी अनुपात में यूरोप मे नागरिको की सख्या बढती अथवा घटती हुई दिखायी देगी।

अमरीका मे, जहॉ के निवासी उस भूमि पर अभी जैसे कल ही आये, जिस पर आज उनका अधिकार है और जो अपने साथ वहॉ किसी प्रकार की परम्परा अथवा रीति-रिवाज लेकर नही आये, जहॉ वे एक दूसरे से बिना किसी पूर्व परिचय के पहली बार मिले, जहॉ सक्षेप मे, देशप्रेम की आन्तरिक भावना मुश्किल से विद्यमान हो सकती है, यह किस प्रकार होता है कि हरेक व्यक्ति अपने नगर, अपने जिले और समस्त राज्य के कार्यों में ऐसे उत्साह के साथ रुचि लेता है, जैसे वे उसी के हो। इसका कारण यह है कि अपने क्षेत्र मे प्रत्येक व्यक्ति समाज के प्रशासन मे सक्रिय भाग लेता है। अमरीका में निम्न श्रेणी के लोग उस प्रभाव को समझते है, जो प्रभाव सामान्य समृद्धि का उनके निजी कल्याण पर पड़ता है। यह पर्यवेक्षण सरल होते हुए भी जनता द्वारा बहुत ही कम किया जाता है। वे उस समृद्धि को अपने ही प्रयासो का फल मानते हैं। नागरिक सार्वजनिक समृद्धि को अपनी ही समृद्धि मानता है और वह राज्य की भलाई के लिए, केवल गर्व अथवा कर्तव्य की भावना से नहीं, अपितु एक ऐसी भावना से श्रम करता है, जिसे मैं उत्कट अभिलाषा कहता हूँ।

इस कथन की सत्यता जानने के लिए अमरीकियो की सस्थाओ और इतिहास का अध्ययन अनावश्यक है, क्योकि उनके आचरण ही इसको पर्याप्त रूप से स्पष्ट कर देते है। चूँकि अमरीकी अपने देश मे किये जाने वाले समस्त कार्यो मे भाग लेता है, अत उसमे जिस किसी भी बात की निन्दा होती है, उसका बचाव करना वह अपना कर्त्तव्य समझता है क्योकि तब केवल उसके देश की ही नही, स्वय उसकी आलोचना होती है। फल यह होता है कि उसका राष्ट्रीय गर्व हजारो कौशलो को अपनाता है और वह व्यक्तिगत अहंकार की समस्त क्षुद्र चालो पर उतर आता है।

जीवन के सामान्य आदान-प्रदान मे अमरीकियो की इस उत्तेजनीय देशभक्ति से अधिक आकुल करने वाली कोई वस्तु नही है। कोई नवागतुक इस देश की अनेक सस्थाओ की प्रशंसा करने के लिए प्रेरित होता है, किन्तु वह इसकी कतिपय वस्तुओ की आलोचना करने की अनुमति चाहता है, यह अनुमति निर्ममतापूर्वक अस्वीकृत कर दी जाती है। अतः अमरीका एक राष्ट्र है, जिसमे आपको सम्भवतः जलवायु और भूमि को छोडकर,

प्राइवेट व्यक्तियो अथवा राज्य, नागरिकों अथवा निजी अथवा सार्वजनिक व्यवसायो के अधिकारियो अथवा सक्षेप मे, किसी भी वस्तु के सम्बन्ध मे स्वतंत्रतापूर्वक अपना मत व्यक्त करने की अनुमति नहीं है, ताकि आपके कथनो से किसी की भावनाओ पर आघात न पहुँच जाय। इतना होने पर भी अमरीकी जलवायु और भूमि, दोनो का बचाव करने के लिए तत्पर मिलेंगे, मानो उनकी सृष्टि उनकी राय से ही हुई हो।

अपने युग मे हमे सबकी देशभक्ति और थोडे-से व्यक्तियो की सरकार में से एक को चुनना है, क्योकि सबकी देशभक्ति के साथ, जो सामाजिक शक्ति और गतिविधि प्रदान करती है, थोडे-से व्यक्तियो की सरकार द्वारा प्राप्त होनेवाले शाति के वचनो का मेल नहीं बैठ सकता।

अधिकारों की भावना

मुझे ऐसे किसी सिद्धान्त का ज्ञान नहीं है, जो पुण्य की सामान्य भावना के अतिरिक्त अधिकार के सिद्धान्त से उच्चतर हो अथवा यो कहा जा सकता है कि ये दोनो भावनाएँ एक मे सयुक्त हैं। अधिकार की भावना राजनीतिक जगत् मे लागू की गयी पुण्य की भावना मात्र है। अधिकार की भावना ने ही मनुष्यो को अराजकता और अत्याचार की परिभाषा करने के योग्य बनाया और इसी ने अहंकार बिना स्वतत्र होना तथा दासता की वृत्ति के बिना आज्ञापालन करना सिखाया।

जो मनुष्य हिसा के आगे झुक जाता है, उसकी आज्ञापालकता उसे नीचे गिराती है, किन्तु जब वह अधिकार की सत्ता के आगे नत हो जाता है, जिसे वह अपने सह-प्राणी मे स्वीकार करता है, तब वह कुछ अंश तक आज्ञा देने वाले व्यक्ति से ऊपर उठ जाता है। गुणों के बिना कोई व्यक्ति महान नहीं होता और अधिकारो के प्रति सम्मान के बिना कोई राष्ट्र महान नहीं हो सकता, बल्कि इसके बिना कोई समाज ही नहीं हो सकता, क्योकि केवल शक्ति के बन्धन के द्वारा एक दूसरे से आबद्ध बौद्धिक और प्रतिभाशाली प्राणियों का मिलन और क्या है?

प्रजातत्र सरकार राजनीतिक अधिकारो की भावना को उसी प्रकार साधारणतम नागरिको के स्तर तक ला देती है, जिस प्रकार सम्पत्ति का विकेन्द्रीकरण इस धारणा को जन्म देता है कि सभी व्यक्ति सम्पत्ति को प्राप्त कर सकते हैं, मेरे मतानुसार यह इसका एक सबसे बडा लाभ है। मै यह नहीं कहता कि लोगो को

राजनीतिक अधिकारों का प्रयोग सिखाना आसान है, क्निन्तु मैं मानता हूँ कि जब यह सम्भव हो, तो इससे जो परिणाम निकलते हैं वे अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं और मै पुनः कहता हूँ कि इस प्रकार के प्रयास का यदि कोई समय है, तो वह आज है। क्या आप नहीं देखते हैं कि धार्मिक विश्वास टूट रहा है, अधिकारो की पुनीत धारणा का ह्रास होता जा रहा है, नैतिकता का मूल्य कम होता जा रहा है और नैतिक अधिकारों की धारणा समाप्त हो रही है, विश्वास का स्थान तर्क ले रहा है, भावना का स्थान ऑकडे ले रहे हैं? इस सामान्य विघटन के बीच यदि आप अधिकार की धारणा को निजी हित के साथ, जो मानव हृदय मे एक मात्र अपरिवर्तनीय तत्व है, सम्बद्ध करने मे सफल नहीं हो सकते, तब विश्व पर शासन करने के लिए भय के अलावा और क्या साधन आपके पास रह जायगा? जब मुझसे कहा जाता है कि कानून कमजोर है, जनता अशान्त है, उग्र भावनाएँ उभाडी जाती हैं और पुण्य की सत्ता शक्तिहीन हो गयी है और इसीलिए प्रजातत्र के अधिकारो मे वृद्धि करने के लिए कोई कार्रवाई नही की जानी चाहिए, तो मै उत्तर देता हूँ कि इन्हीं कारणो से इस प्रकार की कोई कार्रवाई करनी चाहिए और मै विश्वास करता हूँ कि समाज की अपेक्षा सरकारे इन कार्रवाइयों के करने मे अधिक रुचि रखती हैं, क्योंकि सरकारे समाप्त हो सकती है, समाज नहीं।

मै अमरीका द्वारा पेश किये जानेवाले उदाहरण को बढा-चढा कर कहना नहीं चाहता। वहाँ लोगों को उस समय राजनीतिक अधिकार दिये गये जब उनका दुरुपयोग नहीं किया जा सकता था, क्योंकि वहाँ के निवासी सख्या मे कम और साधारण आचरण वाले थे। जनसख्या मे वृद्धि के साथ अमरीकियो ने प्रजातत्र के अधिकारों मे वृद्धि नहीं की है, बल्कि उसके आधिपत्य मे विस्तार किया है।

इसमे सन्देह नहीं किया जा सकता कि जिस समय किसी जनता को, जिसके पास पहले राजनीतिक अधिकार नहीं थे, राजनीतिक अधिकार दिये जाते हैं, वह समय बडा सकटपूर्ण होता है तथा यह कार्रवाई बहुधा आवश्यक होते हुए भी सदा खतरनाक होती है। एक बालक जीवन के मूल्य से अवगत होने से पहले ही किसी की हत्या कर सकता है, वह दूसरे व्यक्ति को, यह जानने के पहले कि स्वय उसकी सम्पत्ति ले ली जायगी, सम्पत्ति से वचित कर सकता है। निम्न वर्ग के लोगो को जब प्रथम बार राजनीतिक अधिकार प्रदान किये जाते हैं, तब वे उन अधिकारों का उसी प्रकार उपयोग करते हैं, जिस प्रकार बालक

समस्त प्रकृति का उपयोग करता है और तब उनके लिए इस विख्यात कहावत का प्रयोग किया जा सकता है कि मनुष्य शक्तिशाली बालक होता है। इस सत्य के दर्शन अमरीका मे भी किये जा सकते हैं। जिन राज्यो में नागरिको ने अधिकतम समय तक नागरिक अधिकारो का उपभोग किया है, उन राज्यो में नागरिक उनका सर्वोत्तम उपयोग करते हैं।

इस कथन की पुनरावृत्ति बारबार नही की जा सकती कि विलक्षण प्रतिभा-वाले व्यक्तियो मे स्वतत्र रहने की कला से बढ़ कर दूसरी कोई विशेषता नहीं होती, किन्तु स्वतंत्रता के प्रशिक्षण से कठिनतर कार्य कोई नहीं है।

तानाशाही मे ऐसा नहीं होता। तानाशाही बहुधा हजारो पुरानी बुराइयों में सशोधन करने का वचन देती है, वह अधिकारो का समर्थन करती है, वह पीडितो की रक्षा करती है और सार्वजनिक व्यवस्था को कायम रखती है। उससे उत्पन्न होनेवाली अस्थायी समृद्धि से राष्ट्र तब तक के लिए चुप हो जाता है, जब तक कि वह अपने दुःख के प्रति जागरूक नहीं हो जाता। इसके विपरीत स्वतत्रता आम तौर से अनेक सकटों के तूफानो के बीच कठिनाई से स्थापित होती है। वह नागरिक सघर्ष से पूर्णता प्राप्त करती है और उसके लाभो को तब तक नही समझा जा सकता, जब तक वह पुरानी नही हो जाती।

कानून का सम्मान

कानून बनाने मे सभी लोगो से प्रत्यक्षतः अथवा अप्रत्यक्षतः परामर्श लेना सदा सभव नहीं होता, किन्तु इस बात को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि जब यह सभव होता है, तो कानून का अधिकार बहुत अधिक बढ जाता है। इस लोकप्रिय उद्भव से, जिससे विधान की बुद्धिमत्ता और अच्छाई मे बाधा पहुँचती है, सत्ता की वृद्धि मे पर्याप्त योग मिलता है। सभी लोगो की मताभिव्यक्ति मे आश्चर्यजनक शक्ति है और जब वह अपने को घोषित करती है तो उन लोगों की, जो उससे प्रतिस्पर्धा करना चाहते हैं, कल्पना का भी अतिक्रमण हो जाता है। पार्टियाँ इस तथ्य के सत्य को भलीभाँति जानती है और फलस्वरूप वे जहाँ तक सम्भव हो सकता है, बहुमत को अपने पक्ष मे करने का प्रयास करती हैं। यदि बहुमत उनके पक्ष मे नही होता तो वे इस बात पर बल देती हैं कि सच्चे बहुमत ने मतदान नहीं किया और यदि वे यहाँ भी विफल रहती हैं, तो वे उनकी शरण लेती हैं, जिनको मतदान का अधिकार नहीं है।

अमरीका मे गुलामों, नौकरों और नगरीय प्रशासनों की सहायता पर निर्भर

निस्सहाय निर्धनों को छोड कर कोई ऐसा वर्ग नहीं है, जिसे मताधिकार प्राप्त न हो और जो अप्रत्यक्ष रूप से कानून बनाने में योग न देता हो। इसके फलस्वरूप जो कानूनो की आलोचना करना चाहते हैं, उन्हे या तो राष्ट्र का जनमत बदलना पडता है अथवा उनके निर्णयो को कुचलना पडता है।

एक दूसरा कारण, जो और अधिक प्रत्यक्ष और प्रभावकारी है, पेश किया जा सकता है और वह यह है कि अमरीका मे प्रत्येक व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से इस बात में रुचि रखता है कि समस्त समाज कानून का आज्ञाकारी हो। चूँकि अल्पसख्यक दल शीघ्र ही बहुमत को अपने सिद्धान्तो का अनुगामी बना सकता है, इसलिए वह विधायक के आदेशों के प्रति, जिन्हें अपना कहने का अवसर उसे शीघ्र ही उपलब्ध हो सकता है, सम्मान व्यक्त करने में रुचि रखता है। कानून कितना ही अरुचिकर क्यो न हो, अमरीका के नागरिक उसका पालन करते हैं। इसका कारण केवल यह नहीं है कि वह बहुमत द्वारा बनाया गया है, बल्कि यह है कि वह उसे अपना मानता है और वह उसे एक ऐसा अनुबन्ध मानता है, जिसमे वह भी शामिल है।

अतः अमरीका मे विशाल उग्र जनसमूहों का अस्तित्व नही है, जो कानून को अपना स्वाभाविक शत्रु मानकर उसको भय और अविश्वास की दृष्टि से देखते हैं। इसके विपरीत यह न देख सकना भी असभव है कि सभी वर्ग अपने देश के विधान पर पूर्ण विश्वास करते हैं और एक प्रकार के पैतृक प्रेम द्वारा उससे सम्बद्ध हैं।

फिर भी सभी वर्गो का उल्लेख करना मेरी भूल है, क्योकि चूँकि अमरीका मे अधिकार की यूरोपीय तुला उलट दी गयी है, इसलिए वहाँ धनवानों को उसी स्थिति मे रखा जाता है जिस स्थिति मे पुराने विश्व मे निर्धनों को रखा जाता था और धनवान वर्ग ही बहुधा कानून को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। मै पहले ही बता चुका हूँ कि जैसा कि कभी-कभी कहा जाता है, प्रजातन्त्र का लाभ यह नही है कि वह सबके हितों की रक्षा करता है, बल्कि उसका लाभ केवल इतना है कि वह बहुमत के हितो की रक्षा करता है। अमरीका मे, जहाँ गरीबों का शासन होता है, धनीवर्ग के लिए उनके द्वारा अधिकारों के दुरुपयोग से भय करने का कोई न कोई कारण सदैव बना रहता है। धनियो की यह स्वाभाविक चिन्ता एक गुप्त असन्तोष को जन्म दे सकती है, किन्तु इससे समाज के कार्य मे बाधा उपस्थित नही होती, क्योकि वही कारण, जो विधान निर्मातृ सत्ता मे धनिको का विश्वास नहीं उत्पन्न होने देता, उनसे उसके आदेशों का पालन

कराता है; उनकी जो सम्पत्ति कानून बनाने के उनके मार्ग मे बाधक सिद्ध होती है, वही उसका विरोध करने से भी उन्हे रोकती है। सभ्य देशो मे केवल वे ही लोग विद्रोह करते है, जिनके पास खाने के लिए कुछ नहीं होता और यदि किसी प्रजातंत्र का कानून सदैव सम्मानीय नहीं होता, तो भी उनका सदैव सम्मान किया जाता है, क्योंकि जो लोग सामान्यतः कानून भग करते हैं, स्वय अपने द्वारा निर्मित और अपने को लाभ पहुँचाने वाले कानूनो का पालन करने मे चूक नही सकते, जबकि वे नागरिक, जो उनको भग करने मे दिलचस्पी रख सकते हे, अपने चरित्र और स्थिति के कारण विधानमण्डल के निर्णयों के आगे, चाहे वे कुछ भी हो, झुकने के लिए प्रेरित होते हैं। इसके अलावा, अमरीकी केवल इसलिए कानून का पालन नहीं करते कि यह उनका कार्य है, बल्कि इसलिए कि उनके हानिकारक होने पर वे उनमे परिवर्तन कर सकते हैं। कानून का पालन किया जाता है, क्योंकि प्रथमतः यह स्वतः थोपी गयी बुराई है और दूसरे, यह बुराई अस्थायी होती है।

संयुक्त-राज्य अमरीका में राजनीतिक गतिविधियों की व्यापकता

अमरीकियो की आश्चर्यजनक स्वतत्रता का अनुमान लगाना असभव नहीं। इसी प्रकार उनकी समानता के सम्बन्ध मे मत निर्धारित किया जा सकता है, किन्तु अमरीका की राजनीतिक गतिविधियो को समझने के लिए उनका अध्ययन जरूरी है। जैसे ही आप अमरीकी भूमि पर कदम रखते हैं, आप वहाँ की हलचल से आश्चर्यचकित हो जाते हैं। हर दिशा से एक अस्पष्ट शिकायत सुनायी देती है और हजारो व्यक्ति एक साथ अपने सामाजिक अभावो की पूर्ति की माँग करते हैं। आपके चारो ओर हर प्रकार की गतिशीलता दिखायी देती है। यहाँ नगर के एक ओर के लोग गिरजाघर बनाने के सम्बन्ध मे निर्णय करने के लिए मिलते हैं और वहाँ प्रतिनिधियो का चुनाव हो रहा है, कुछ दूर जाने पर जिले के प्रतिनिधि कुछ स्थानीय सुधारो पर परामर्श करने के हेतु नगर की ओर बढ़ रहे हैं, दूसरे स्थान पर गाँव के मजदूर अपने हल छोडकर सडक अथवा एक सार्वजनिक स्कूल के निर्माण की योजना मे भाग ले रहे हैं। सरकार के कार्यों के प्रति असहमति प्रकट करने के एकमात्र उद्देश्य से सभाएँ बुलायी जाती हैं, जबकि दूसरी सभाओ मे नागरिक उस समय के अधिकारियों को अपने देश के पिता समझ कर उनका गुणगान करते हैं। ऐसी सस्थाएँ बनायी जाती हैं जो मद्यपान को राज्य की बुराइयो का मूल कारण मानती हैं और

मद्यनिषेध का उदाहरण उपस्थित करने के लिए गम्भीरतापूर्वक प्रतिज्ञाएँ करती हैं। अमरीकी विधायिका सस्थाओ का विशाल राजनीतिक आन्दोलन, जो विदेशियों का ध्यान आकर्षित करने वाला एक मात्र आन्दोलन है, एकमात्र घटना है, अथवा विश्वव्यापी आन्दोलन का एक प्रवाह है, जो निम्नतम वर्ग से प्रारम्भ होता है और एक के बाद दूसरे समाज के सभी वर्गो मे फैल जाता है। सुख की खोज मे इससे अधिक प्रयास करना असम्भव है।

अमरीका के नागरिको की वृत्तियो मे राजनीतिक चिन्ताओ का एक प्रमुख स्थान होता है और एक अमरीकी जो एकमात्र आनन्द जानता है, वह सरकार मे हाथ बॅटाने और उसकी कार्रवाइयों पर विचार-विमर्श करने का होता है। यह भावना जीवन के तुच्छतम व्यापारो मे व्याप्त है, यहाँ तक कि महिलाएँ भी कई बार सभाओ मे भाग लेती हे और मनोरजन के रूप मे अपने घरेलू मजदूरों से जोशीले राजनीतिक भाषण सुनती हें। वादविवाद क्लब, कुछ सीमा तक, रगमच-मनोरजन के पूरक हैं। अमरीका का निवासी वार्तालाप नहीं कर सक्ता, किन्तु वह बहस कर सकता है और उसकी वार्ता विवरणात्मक हो जाती है। वह आपसे इस प्रकार बात करता है, मानो वह कहीं सभा मे भाषण कर रहा हो, और यदि उसे बहस मे उत्तेजित होने का अवसर मिल जाता है, तो उस व्यक्ति को, जिससे वह बात कर रहा है—"सज्जनो!" कहेगा।

कुछ देशो मे वहाॅ के निवासी कानून द्वारा उन्हे दिये गये राजनीतिक अधिकारो से लाभ उठाने के अनिच्छुक प्रतीत होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वे अपने समय को इतना अधिक मूल्यवान समझते हैं कि उसे समाज के हित मे व्यय नही किया जा सकता और वे अपने को सकीर्ण स्वार्थपरता की ठोस चहारदीवारी मे बन्द कर लेते हैं, किन्तु यदि एक अमरीकी अपने मामलो तक ही अपनी गतिविधियों को सीमित रखता है, तो उसके जीवन का आधा हिस्सा उससे छीन लिया जाता है। वह उस जीवन में, जिसका वह आदी है, एक विशाल रिक्तता अनुभव करने लगता है और उसके लिए यह निम्न कोटि की स्थिति असह्य हो जाती है। मै ऐसा मानने के लिए प्रेरित हुआ हूँ कि यदि कभी अमरीका मे निरकुशता की स्थापना हुई, तो स्वतत्रता के प्रति प्रेम पर विजय पाने की अपेक्षा स्वतत्रता से निर्मित आदतो पर विजय पाना अधिक कठिन होगा।

राजनीतिक जगत् मे प्रजातात्रिक शासन द्वारा प्रारम्भ किये गये इस अनवरत आन्दोलन का प्रभाव समस्त सामाजिक आदान-प्रदानो पर पड़ता है। म

निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि कुल मिला कर यह प्रजातंत्र का सबसे बड़ा लाभ नहीं है और वह जो कुछ करता है, उस पर प्रसन्नता प्रकट करने के लिए मैं उतना प्रेरित नहीं होता जितना कि इसके द्वारा जो होता है, उस पर प्रसन्नता प्रकट करने के लिए प्रेरित होता हूँ। यह निर्विवाद है कि लोग प्रायः अत्यन्त अनुचित ढंग से सार्वजनिक कार्य करते हैं, किन्तु निम्न वर्गों का अपने विचारों के क्षेत्र का विस्तार किये बिना और अपने विचारों के सामान्य क्रम का परित्याग किये बिना सार्वजनिक कार्यों में भाग लेना असम्भव है। समाज के प्रशासन में सहयोग करने वाला क्षुद्रतम व्यक्ति भी कुछ अंश तक आत्मसम्मान प्राप्त कर लेता है। चूँकि उसके पास अधिकार होता है, अतः वह अपने से अधिक विकसित मस्तिष्कों की सेवाएँ प्राप्त कर सकता है। असंख्य प्रार्थी उसका प्रचार करते हैं और वे हजारों तरीकों से उसे मूर्ख बनाने का प्रयत्न कर उसके ज्ञान में वृद्धि करते हैं। वह ऐसे राजनीतिक कार्यों में भाग लेता है, जिनको उसने प्रारम्भ नहीं किया था, किन्तु जो उसमें इस प्रकार के कार्यों के प्रति रुचि उत्पन्न करते हैं। सामान्य संपत्ति में नये-नये सुधारों की ओर उसका ध्यान प्रति दिन आकृष्ट किया जाता है और इससे उसमें स्वयं अपनी सम्पत्ति में सुधार करने की इच्छा उत्पन्न होती है। सम्भवतः वह अपने सामने आने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा न तो अधिक सुखी है और न उनसे अच्छा है, किन्तु वह अधिक जानकारी रखता है और अधिक सक्रिय रहता है। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि अमरीका के निवासियों की विशाल व्यावसायिक गतिविधियों का कारण (प्रत्यक्ष कारण नहीं, जैसा कि बहुधा कहा जाता है, बल्कि अप्रत्यक्ष कारण) देश के भौतिक संविधान से सम्बद्ध वहाँ की प्रजातान्त्रिक संस्थाएँ हैं। इसका निर्माण कानूनों से नहीं होता, किन्तु लोग विधान से प्राप्त अनुभव के आधार पर इसका निर्माण करना सीखते हैं।

और जनता के कार्यकलाप प्रजातात्रिक सस्थाओं के जीवित रहने की अनुमति देते हैं, तो भी वे नियमित और विधिवत् शासनपद्धति का प्रदर्शन नहीं करते। कुशल निरकुशता मे जिस कौशल के साथ योजनाओ की पूर्ति होती है, उस कौशल के साथ प्रजातात्रिक स्वतन्त्रता मे समस्त योजनाओ की पूर्ति नहीं हो सकती। यह बहुधा उनके फल निकलने से पूर्व ही उनका परित्याग कर देती है अथवा उस समय उनका खतरा मोल लेती है, जब उनके परिणाम खतरनाक हो सकते है, किन्तु अन्त मे उसके परिणाम किसी निरकुश सरकार से अधिक निकलते हैं। यदि वह थोडे-से कार्य अच्छी तरह करती है, तो वह बहुत अधिक कार्य करती है। उसके आधिपत्य मे सार्वजनिक प्रशासन के कार्य का नहीं, प्रत्युत उसके बिना अथवा उसके बाहर किये गये कार्य का महत्व होता है। प्रजातत्र से जनता को कुशलतम सरकार नहीं मिलती, किन्तु वह उस वस्तु का निर्माण करती है, जिसका निर्माण बहुधा योग्यतम सरकार भी करने मे असमर्थ रहती है, यथा एक सर्वव्यापी एव अविराम गतिविधि, एक अति बहुल शक्ति और उससे अविभाज्य एक शक्ति का निर्माण होता है, जिनसे प्रतिकूल परिस्थितियो मे भी आश्चर्यजनक कार्य होते हैं। प्रजातत्र के ये वास्तविक लाभ हैं।

आज के युग मे, जब ईसाईयत का भाग्य अनिश्चित प्रतीत होता है, कुछ लोग प्रजातत्र को शत्रुतापूर्ण शक्ति बता कर उसकी निदा करते हैं, जब कि अभी उसका विकास हो रहा है और दूसरे लोग इस नये देवता की, जो अव्यवस्था से उत्पन्न हो रहा है, पहले से ही पूजा कर रहे हैं, किंतु दोनो पार्टियॉ अपनी घृणा अथवा पूजा के उद्देश्यो से पूर्ण परिचित नहीं है, वे अधेरे मे प्रहार करती हैं और उनके प्रहार ऊटपटाग होते है।

हमे पहले यह समझ लेना चाहिए कि समाज और उसकी सरकार से क्या अपेक्षा है? क्या आप मानवीय मस्तिष्क का कुछ उन्नयन करना और उसको इस विश्व की वस्तुओ को उदार भावनाओं से समझना, मनुष्यो मे मात्र सासारिक लाभो के प्रति घृणा की भावना भरना, दृढ धारणाओ का निर्माण एव उनका पालन करना और सम्माननीय भक्ति की भावना को जीवित रखना चाहते है? क्या आपका उद्देश्य आदतो को विशुद्ध करना, व्यवहार मे सुशीलता लाना, कला के प्रति आसक्ति उत्पन्न करना, काव्य, सौदर्य और वैभव के प्रति प्रेम जाग्रत करना है? क्या आप ऐसे व्यक्ति तैयार करना चाहते हे जो अन्य देशों से दृढता का व्यवहार करने योग्य हो और इतिहास मे अमर हो जाने वाले

साहसिक कार्यो को, जिनके परिणाम चाहे जो हो, पूरा करने के लिए तत्पर हो? यदि आप समाज के इस प्रकार के प्रमुख उद्देश्य मे विश्वास करते हैं तो प्रजातान्त्रिक सरकार का परित्याग कीजिये, क्योकि वह आपको लक्ष्य की ओर निश्चित रूप से नहीं ले जायेगी।

परन्तु यदि आपका ऐसा विश्वास है कि मनुष्य की नैतिक और बौद्धिक क्रिया को सुखसुविधाओ के उत्पादन तथा सामान्य कल्याण की अभिवृद्धि की ओर उन्मुख करना वाछनीय है, यदि आपका लक्ष्य वीरोचित गुणो के स्थान पर शात स्वभावो को प्रोत्साहित करने का है, यदि आपने अपराधो के स्थान पर दुर्गुणो को देखना पसन्द किया है और उच्च कार्यों की न्यूनता से ही सतोष कर लिया है, इस शर्त पर कि उसी अनुपात से जुर्म कम हो जायेगे, यदि आपको सम्पन्न समाज के मध्य रहने के स्थान पर अपने आस-पास की समृद्धि देख कर ही सतोप होता है—सक्षेप मे, यह कि आप उन लोगो मे से हैं, जिनके मतानुसार सरकार का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र के स्वरूप को अधिकतम सम्भाव्य शक्ति और गौरव प्रदान करना नही, अपितु अपने प्रत्येक व्यक्ति के लिए अधिकाधिक आनन्द की उपलब्धि करना और उसके अधिकाधिक दुःखो को दूर करना है——यदि आपका ध्येय यही है तो आपको चाहिये कि आप मनुष्यो की परिस्थितियो मे समानता लाये और प्रजातान्त्रिक सस्थाओ का निर्माण करे।

परन्तु यदि इस प्रकार के विकल्प का अवसर हाथ से चला गया है और यदि मनुष्य से अधिक शक्तिशाली कोई अन्य शक्ति हमारी इच्छाओ का विचार किये बिना हमे इन दोनो सरकारों मे से किसी एक को अपनाने के लिए विवश कर रही है, तो हमे चाहिए कि जो कुछ हमारे पास सुलभ है, उसका सर्वश्रेष्ठ रीति से प्रयोग करने का प्रयत्न करे ओर उसकी अच्छी और बुरी दोनो प्रवृत्तियो को जाने ताकि हम यथाशक्ति अच्छी प्रवृत्तियों की समृद्धि और बुरी प्रवृत्तियो का दमन करने में समर्थ हो सके .

१२. बहुमत की असीमित शक्ति और उसके परिणाम

प्रजातान्त्रिक सरकार का सार ही बहुमत की पूर्ण सार्वभौमता मे सन्निहित है क्योंकि प्रजातान्त्रिक राज्यो मे ऐसी कोई व्यवस्था नहीं, जो इसका विरोध करने मे समर्थ हो। अधिकाश अमरीकी सविधानो ने कृत्रिम साधनो से बहुमत की इस प्राकृतिक शक्ति मे वृद्धि करने का प्रयास किया है।

समस्त राजनीतिक सस्थाओ मे से विधानमण्डल ही ऐसी सस्था है, जो बहुमत की इच्छा से सर्वाधिक सरलतापूर्वक प्रभावित हो जाती है। अमरीकियों ने निश्चय किया कि विधानमण्डल के सदस्यो का चुनाव लोगों द्वारा प्रत्यक्षत. किया जाय और वह भी बहुत कम अवधि के लिए, ताकि वे न केवल अपने निर्वाचकों के सामान्य विश्वासों के, बल्कि उनकी दैनिक भावनाओ के भी अधीन हो जाय। दोनो सदनो के सदस्य समाज के एक ही वर्ग से लिये जाते है और एक ही रीति से उनका नामाकन किया जाता है, जिससे विधायिका सस्थाओ की गतिविधियाँ प्रायः उतनी ही तीव्र और अप्रतिरोधक होती हैं, जितनी कि किसी एक ही जन-समुदाय की। इस प्रकार से जिस विधानमण्डल का गठन किया जाता है, उसे ही सरकार की सारी सत्ता सौप दी जाती है।

इसके साथ-साथ कानून उन अधिकारियो की शक्ति मे वृद्धि करता है, जो स्वत. शक्तिशाली होते हें और जो स्वत. कमजोर हैं, उन्हे और अधिक निर्बल बनाता है। यह कार्यपालिका-सत्ता के प्रतिनिधियो को सभी प्रकार के स्थायित्व और स्वतन्त्रता से वचित कर देता है और उन्हे विधानमण्डल की मनमानियो के पूर्ण अधीनस्थ बना कर उन्हे उस क्षीण प्रभाव से भी वञ्चित कर देता है, जो प्रजातान्त्रिक सरकार की प्रकृति से उन्हे उपलब्ध होता। अनेक राज्यो मे न्यायिक अधिकार भी बहुमत द्वारा निर्वाचन का विषय बना दिया गया और सभी राज्यो मे उसका अस्तित्व विधान-निर्मात्री सत्ता की इच्छा पर निर्भर कर दिया गया, क्योंकि प्रतिनिधियों को प्रति वर्ष न्यायाधीशो के भत्ते नियमित करने का अधिकार दे दिया गया।

प्रथाओ ने कानून से भी अधिक कार्य किया है। अमरीका मे एक कार्रवाई अधिकाधिक सामान्य होती जा रही है, जो अन्त मे प्रतिनिधिमूलक सरकार की 'गारटियॉ' समाप्त कर देगी। बहुधा ऐसा होता है कि मतदाता किसी प्रतिनिधि का चुनाव करते समय उसके लिए आचरण का सिद्धान्त बनाते हैं और उस पर

कतिपय निश्चयात्मक दायित्व डाल देते हैं, जिनको पूरा करने के लिए वह वचनबद्ध होता है। उपद्रव को छोडकर, इससे यही प्रतीत होता है मानो बहुमत स्वय सरे-बाजार विचार-विमर्श कर रहा हो।

अन्य अनेक परिस्थितियाँ एक साथ मिल कर, अमरीका मे बहुमत की शक्ति न केवल सर्वप्रधान बना देती हैं, अपितु उसे उस चरम सीमा तक पहुँचा देती हैं, जहाँ उसका विरोध नही किया जा सकता। बहुमत का नैतिक अधिकार अंशत. इस धारणा पर आधारित है कि अनेक सगठित व्यक्तियो की बुद्धि, एक व्यक्ति की बुद्धि की अपेक्षा अधिक होती है और विधायको की सख्या उनके गुण से अधिक महत्वपूर्ण होती है। इस प्रकार समानता का सिद्धान्त मनुष्यो की बुद्धि पर लागू किया जाता है और इस पर, मानवीय गर्व पर एक ऐसे सिद्धान्त से प्रहार किया जाता है, जिसे अल्पमत स्वीकार करने से हिचकिचाता है और जिसे वह धीरे-धीरे स्वीकार किये बिना न रहेगा। अन्य सभी शक्तियों की भाँति और सम्भवतः अन्य किसी भी शक्ति से अधिक अनेक व्यक्तियों की सत्ता समय व्यतीत होने पर ही न्यायसगत प्रतीत होती है। सर्वप्रथम वह दबाव द्वारा आज्ञा पालन कराती है और उसके कानूनो का तब तक सम्मान नहीं होता, जब तक उनको दीर्घ काल तक बनाये नहीं रखा जाता।

समाज पर शासन करने का वह अधिकार, जिसका अधिकारी होने की कल्पना बहुमत अपनी श्रेष्ठतर बुद्धि के बल पर करता है, सयुक्त-राज्य अमरीका मे सर्वप्रथम बसने वाले लोगो द्वारा प्रचलित किया गया और यह विचार जो स्वतः राष्ट्र बनाने के लिए पर्याप्त है, अब लोगो के आचरण और सामाजिक जीवन की छोटी घटनाओ के साथ घुलमिल गया है।

फ्रासवासियो ने पुराने राजतत्र के अतर्गत यह सिद्धान्त निर्धारित कर लिया था कि सम्राट कोई गलती नहीं करता और यदि उससे कुछ गल्ती हुई भी तो इसका सारा दोष उसके सलाहकारो पर मढ़ दिया जाता था। इस धारणा से स्वामिभक्ति अत्यन्त आसान हो गयी, इससे प्रजा को कानून-निर्माता के प्रति निरन्तर सम्मान और प्रेम प्रकट करते हुए भी कानून के विरुद्ध शिकायत करने का अवसर मिला। अमरीकियो की बहुमत के सम्बन्ध मे यही धारणा है।

बहुमत की नैतिक शक्ति एक अन्य सिद्धान्त पर भी आधारित है। वह सिद्धान्त यह है कि कम लोगो के हितों की अपेक्षा अधिक लोगो के हितो को अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए। इससे यह शीघ्र अनुमान लगाया जा सकता है कि बहुमत के अधिकारों के प्रति जिस आदर की उद्घोषणा की गयी, उसमें

स्वभावतः पार्टियो की स्थिति के अनुसार वृद्धि और कमी होनी चाहिए। जब देश अनेक बडे परस्पर-विरोधी हितों मे विभाजित हो जाता है, तब बहुमत के विशेषाधिकार की प्राय उपेक्षा होती है, क्योकि मॉगो की पूर्ति असह्य हो जाती है।

यदि अमरीका मे नागरिको का एक ऐसा वर्ग होता, जिसे विधान-निर्माता बहुमत उन विशिष्ट अधिकारो से वचित करने का प्रयत्न करता, जो उसके पास युग-युग से रहते आये थे और उसे उच्च स्तर से जनसाधारण के स्तर पर लाने का प्रयत्न करता, तो यह सम्भव है कि अल्पमत उसके कानूनो को मानने के लिए कम तैयार होता परन्तु चूँकि अमरीका समान श्रेणी के लोगो का उपनिवेश है, इसलिए अभी तक यहॉ विभिन्न निवासियो के हितों में कोई स्वाभाविक अथवा स्थायी विरोध नहीं है।

ऐसे जनसमुदाय भी होते ह, जिनमे अल्पमत के सदस्य कभी भी बहुमत को अपनी ओर करने की आशा नहीं कर सकते, क्योकि इस स्थिति मे उन्हे उस विषय का ही परित्याग कर देना होगा, जो उन दोनो के बीच विवाद का कारण बना हुआ है, इस प्रकार एक कुलीनतत्र कभी बहुमत नहीं हो सकता, जबकि उसके विशिष्ट विशेषाधिकार पूर्ववत् बने रहते हैं और वह अपना परित्याग किये विना अपने विशेषाधिकारों का परित्याग कर नहीं कर सकता।

अमरीका मे राजनीतिक प्रश्नो पर इतने सामान्य और स्वतत्र तरीके से विचार नहीं किया जा सकता और सभी पार्टियॉ बहुमत के अधिकारो को मान्यता प्रदान करने की इच्छुक हैं, क्योकि सभी यह आशा रखती हैं कि किसी दिन वे उसको अपने हित के अनुकूल बनाने मे सफल हो जायेगी। अत. उस देश मे बहुमत के पास अत्यधिक वास्तविक सत्ता और उतनी ही बडी मत शक्ति होती है और ऐसी कोई बाधा नही होती, जो उसकी प्रगति मे बाधक हो सके, अथवा उसकी गति को अवरुद्ध कर सके, जिससे वह उन लोगो की शिकायते सुन सके, जिनको वह अपने मार्ग मे कुचल देता है। यह स्थिति उसीके लिए हानिकारक है और भविष्य के लिए घातक भी

बहुमत का अत्याचार

मै इसको एक अपवित्र और तिरस्कार योग्य सिद्धान्त मानता हूँ कि राजनीतिक दृष्टि से लोगो को हर कार्य करने का अधिकार होता है, फिर भी मैंने इस बात पर बल दिया है कि सारी सत्ता का स्रोत बहुमत की इच्छा है। तो क्या इस प्रकार मै अपने ही मत का विरोध करता हूँ?

किसी एक देश के बहुमत ने नही, प्रस्तुत मानव जाति के बहुमत ने एक सामान्य विधान का निर्माण और उसकी पुष्टि की है, जिसे न्याय की सज्ञा प्रदान की गयी हे। अतः प्रत्येक जाति के अधिकार न्याय की सीमाओ के अंतर्गत रहते हैं। किसी देश को ऐसा न्यायाधीश माना जा सकता है, जिसे समस्त समाज का प्रतिनिधित्व करने तथा न्याय का, जो समाज का कानून होता है, उपयोग करने का अधिकार है। क्या समाज का प्रतिनिधित्व करने वाले इस प्रकार के न्यायाधीश को स्वय समाज से भी अधिक, जिसके कानूनो को वह कार्यान्वित करता है, अधिकार प्राप्त होने चाहिए ?

जब मै किसी अनुचित कानून का पालन करने से इनकार करता हूँ तब बहुमत के शासन करने के अधिकार का खण्डन नहीं करता, बल्कि मै केवल जनता की सार्वभौमता के विरुद्ध मानवता की सार्वभौमता से अपील करता हूँ। कुछ लोगो ने निर्भीकतापूर्वक मत व्यक्त किया है कि कोई जाति या समाज उन मामलो मे, जो विशुद्ध रूप से उसी के हैं, न्याय और तर्क की सीमाओ का उल्लघन कदापि नही कर सकता और फलस्वरूप उस जाति या समाज का प्रतिनिधित्व करने वाले बहुमत को पूर्ण अधिकार दिया जा सकता है, किंतु यह गुलामो की भाषा है।

सामूहिक दृष्टि से विचार करने पर बहुमत एक व्यक्ति मात्र है, जिसके मत और प्रायः जिसके हित उस अन्य व्यक्ति के हित के विरुद्ध हैं, जिसे अल्पसख्यक कहा जाता है। यदि यह मान लिया जाय कि पूर्ण अधिकार से युक्त व्यक्ति विरोधियो पर अत्याचार कर उसका दुरुपयोग कर सकता है, तब यही आरोप बहुमत पर भी क्यो नही लगाया जा सकता ? मनुष्यो का आचरण परस्पर मिलने पर नही बदलता और न बाधाओ की उपस्थिति मे उनकी शक्ति के साथ-साथ उनके धैर्य मे वृद्धि होती है। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मै यह विश्वास नही कर सकता। मैं अपने समान व्यक्तियो मे से एक व्यक्ति को सब कुछ करने का जो अधिकार प्रदान करने से इनकार करता हूँ, उस अधिकार को मै व्यक्तियों के समूह को कदापि नहीं प्रदान कर सकता।

मै नहीं सोचता कि स्वाधीनता की रक्षा के लिए एक ही सरकार मे अनेक सिद्धान्तों का सम्मिश्रण सभव है, जिससे कि वे एक दूसरे का वास्तविक विरोध करें। सरकार का वह सामान्यतः मिला-जुला रूप, मुझे केवल कल्पनामात्र दिखायी देता है। वस्तुतः मिली-जुली सरकार जैसी कोई वस्तु नहीं है, जैसा कि उस शब्द का सामान्यतः अर्थ लिया जाता है; क्योंकि सभी समुदायो में कार्य

करने के एक ही सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जाता है, जो अन्य से अधिक शक्तिशाली होता है। गत शताब्दि मे, इग्लैंड, जिसका इस प्रकार की सरकार के लिए उदाहरण दिया जाता है, अनिवार्यत. एक कुलीनतत्र राज्य था, यद्यपि इसमे प्रजातन्त्र के कुछ महान तत्त्व सन्निहित थे। फिर भी देश के कानून और नियम ऐसे थे, जिससे कालान्तर मे कुलीनतंत्र प्रभावकारी सिद्ध हुए बिना और सार्वजनिक प्रकार्यों मे अपने इच्छानुसार निर्देश किये बिना नहीं रह सका। दोष उस समय उत्पन्न हुआ जबकि जनता के हितों की कीमत पर निरन्तर रूप से कुलीन व्यक्तियो के हितों का विचार, बिना मूल समस्या पर विचार किये, किया गया, जो कि अधिक महत्वपूर्ण था। जब समुदाय मे वस्तुत मिली-जुली सरकार रहती है अर्थात् जब वह परस्पर-विरोधी सिद्धान्तो के बीच समान रूप से विभाजित है, तब उसे या तो क्रान्ति का अनुभव होना चाहिए अथवा अराजकता के हाथों नष्ट हो जाना चाहिए।

अत' मेरा यह मत है कि सामाजिक शक्ति को, जो अन्य शक्तियो मे सर्वश्रेष्ठ है, कहीं स्थान मिलना चाहिए, किन्तु मेरी दृष्टि से स्वाधीनता उस समय खतरे मे पड जाती है, जब यह शक्ति अपने मार्ग मे कोई ऐसी बाधा नही पाती, जो उसकी प्रगति को रोक सके और उसे स्वय की उग्रता मे कमी करने का अवसर प्रदान कर सके।

असीमित शक्ति अपने आप मे बुरी और खतरनाक है। मानव-प्राणियो मे उसका विवेकपूर्वक प्रयोग करने की क्षमता नहीं होती। केवल ईश्वर ही सर्वशक्तिमान् हो सकता है, क्योंकि उसकी बुद्धि और उसका न्याय सदैव उसकी शक्ति के समान होता है। पृथ्वी पर कोई शक्ति नहीं है जो स्वय आदर के योग्य हो अथवा इतने पावन अधिकार से सम्पन्न हो, जिससे मै उसके अनियन्त्रित एवं सबसे विशिष्ट अधिकार को स्वीकार कर सकूँ। जब मै देखता हूँ कि पूर्ण आधिपत्य के अधिकार और साधन किसी विशिष्ट सत्ता को सौप दिये जाते हैं, चाहे वह प्रजा हो या राजा, कुलीनतत्र हो अथवा प्रजातत्र, राजतत्र हो अथवा गणतंत्र, तो मै कहता हूँ कि निरकुशता का बीजारोपण हो चुका है और मै अन्य स्थान पर अन्य कानूनों के अतर्गत रहना पसन्द करता हूँ।

मेरे मतानुसार अमरीका मे वर्तमान प्रजातान्त्रिक सस्थाओ की मुख्य बुराई उसकी कमजोरी से उत्पन्न नहीं होती, जैसा प्राय' यूरोप के बारे मे कहा जाता है, बल्कि उनकी अदम्य शक्ति से उत्पन्न होती है। मै उस देश में फैली अत्यधिक स्वतंत्रता से उतना चिन्तित नहीं, जितना कि अत्याचार के विरुद्ध व्यक्ति को

उपलब्ध सुरक्षाओ की अपर्याप्तताओ से।

अमरीका मे जब किसी व्यक्ति अथवा पार्टी के साथ अन्याय किया जाता है, तब वह उसके निवारणार्थ किससे आवेदन कर सकता है? क्या वह जनमत से कहे, जो बहुमत का है? क्या वह विधानमण्डल से कहे, जो बहुमत का प्रतिनिधित्व करता है और जिसके आदेश का वह पालन करता है? क्या वह कार्यकारिणी सत्ता के समक्ष जाय, जो बहुमत द्वारा नियुक्त होती है और उसके हाथो मे खिलौने की भाँति कार्य करती है? जन-शक्ति मे सशस्त्र बहुमत रहता है, जूरी न्यायविषयक मामलो की सुनवाई करने के अधिकार से सम्पन्न बहुमत है और कतिपय राज्यो मे न्यायाधीश भी बहुमत द्वारा चुने जाते हैं। आप जिस कानून की शिकायत करते हैं, वह चाहे जितना असमानतापूर्ण और मूर्खतापूर्ण क्यो न हो, आपको उसके सामने यथाशक्य अधिक-से-अधिक झुकना ही पड़ेगा।

दूसरी ओर यदि एक विधायिनी शक्ति का इस प्रकार गठन किया जाय कि वह बहुमत का, उसकी भावनाओ की गुलाम हुए बिना, प्रतिनिधित्व करे, कार्यकारिणी इस प्रकार बने की वह अधिकार का उचित भाग रख सके और न्याय विभाग इस प्रकार स्थापित हो कि वह अन्य दो शक्तियो से पृथक् रहे, तब एक सरकार इस प्रकार बनेगी कि वह अत्याचार का खतरा मोल लिये बिना ही प्रजातान्त्रिक होगी।

मै नहीं कहता कि अमरीका मे आज प्रायः अत्याचार होता रहता है, किन्तु मेरी मान्यता है कि इसके विरुद्ध कोई निश्चित प्रतिबन्ध नही हैं और जिन कारणों से सरकार शात होती है, वे देश के कानूनों की अपेक्षा वहाँ की परिस्थितियो और आचरण मे मिलते हैं।

अमरीकी सार्वजनिक अधिकारियों के स्वच्छन्द अधिकार पर बहुमत की सर्वोच्चता के प्रभाव

क्रूर और निरकुश शासन में भेद स्पष्ट हो जाना चाहिए। क्रूरता का प्रयोग स्वय कानून के साधनो से ही हो सकता है और ऐसी स्थिति मे यह निरकुशता नही। निरकुश सत्ता का प्रयोग जनहित के लिए भी हो सकता है और उस स्थिति मे यह क्रूरता नहीं है। क्रूरता मे सामान्यत. निरकुश साधनों का उपयोग होता है, किन्तु आवश्यकता होने पर वह इसके विना भी कार्य चला सकती है। सयुक्त राज्य अमरीका में बहुमत की सर्वोच्च शक्ति, जो विधानमण्डल की

वैधानिक निरकुशता के अनुकूल है, उसी प्रकार मजिस्ट्रेट के निरकुश अधिकार का समर्थन करती है। बहुमत को कानून बनाने और उसके कार्यान्वय का ध्यान रखने का पूर्ण अधिकार होता। चूँकि उसका सत्तारूढ लोगों पर तथा सारे समुदाय पर समान अधिकार होता है, अत. वह सार्वजनिक अधिकारियों को अपना निष्क्रिय अभिकर्त्ता मानता है और उन्हें अपने कार्यों को पूरा करने का उत्तरदायित्व सौप देता है। उनके पदो और उनके विशेषाधिकारों की पूर्व व्याख्या कभी-कभी ही की जाती है। उनके साथ वैसा ही व्यवहार होता है जैसा कि एक मालिक नौकर के साथ करता है, क्योंकि वे सदैव उनकी निगरानी में काम करते हैं और वह किसी भी समय निर्देश दे सकता है अथवा उनको फटकार बता सकता है।

अमरीकी अधिकारियों के लिए जो क्षेत्र निर्धारित होता है, उस क्षेत्र में वे सामान्यत. फ्रासीसी नागरिक अधिकारियों की अपेक्षा बहुत अधिक स्वतंत्र होते हैं। कभी-कभी लोकप्रिय सत्ता द्वारा उन सीमाओं का अतिक्रमण करने की भी अनुमति उन्हें मिल जाती है और चूँकि बहुमत के विचार और सत्ता द्वारा उन्हे सरक्षण एवं समर्थन प्राप्त होता है, इसलिए वे ऐसा कार्य करने का साहस करते हैं, जिसके प्रति एक यूरोपीय भी, जो निरकुश सत्ता का अभ्यस्त है, आश्चर्य-चकित हो जाता है। इन्हीं साधनों से स्वाधीन देश के भीतर ऐसी प्रवृत्तियॉ पनपती हैं. जो एक दिन स्वतत्रता के लिए घातक सिद्ध हो सकती है।

अमरीका में जनमत पर बहुमत का प्रभाव

सयुक्त राज्य अमरीका में विचारों के प्रयोग-परीक्षण में हम स्पष्टत समझ सकते हैं कि किस प्रकार बहुमत का अधिकार उन सभी अधिकारों का, जिनसे हम यूरोप में परिचित हैं, अतिक्रमण करता है। विचार अदृश्य और सूक्ष्म शक्ति है, जो क्रूरता के सभी प्रयासों का तिरस्कार करता है। आजकल यूरोप में पूर्ण शक्तिशाली शासक भी अपने कतिपय मतों का, जो उनकी सत्ता के विरोध में हैं, अपने क्षेत्रों और न्यायालयों में गुप्त रूप से परिचालन नहीं रोक सकते। परन्तु अमरीका में ऐसा नहीं है, जब तक बहुमत का प्रश्न अनिश्चित रहता है, विचार-विमर्श चलता रहता है किन्तु जब भी निर्णय की घोषणा की जाती है, प्रत्येक शान्त हो जाता है और कार्रवाई के सहयोगी और विरोधी उसकी उपयुक्तता पर स्वीकृति देने के हेतु सगठित हो जाते हैं। इसका कारण स्पष्ट है। कोई भी शासक इतना पूर्ण नहीं है कि वह समाज की सभी शक्तियों को अपने

हाथ मे ले सके और सभी विरोधियो पर विजय पा सके, जैसा कि बहुमत करने मे समर्थ है, जिसको कानून बनाने और उन्हे क्रियान्वित करने का अधिकार है।

राजा की सत्ता पार्थिव होती है और वह मनुष्यो के कार्यों पर उनकी इच्छाओ को दबाये बिना नियत्रण रखती है, किन्तु बहुमत को एक ऐसी सत्ता प्राप्त है जो पार्थिव और नैतिक दोनो ही है और जो इच्छाशक्ति पर उतनी ही प्रक्रिया करती है, जितनी कार्यों पर, और जो केवल सघर्षो को ही नही, वरन् सभी वादविवादो का दमन करती है। मै ऐसा कोई देश नही जानता, जहॉ मस्तिष्क की इतनी कम स्वाधीनता और विचार-विमर्श की इतनी कम वास्तविक स्वतत्रता हो, जैसा कि अमरीका मे है। यूरोप के किसी भी साविधानिक राज्य मे हर प्रकार के धार्मिक और राजनीतिक सिद्धान्त का स्वतंत्रता से प्रचार किया जा सकता है और उसको फैलाया जा सकता है, क्योकि यूरोप मे ऐसा कोई देश नहीं, जो किसी एक ही सत्ता के इतना अधीन हो गया हो, जो अपने कष्टो के फलस्वरूप सत्य की आवाज उठाने वाले व्यक्ति की रक्षा न कर सके। यदि वह पूर्ण सत्ताप्राप्त सरकार के अंतर्गत रहनेवाला अभागा है, तो प्रायः लोग उसकी ओर हो जाते हैं और यदि वह स्वतत्र राष्ट्र मे रहता है, तो वह आवश्यकता पड़ने पर राजसिहासन की शरण ले सकता है। कुछ देशो मे समाज का कुलीन वर्ग उसका समर्थन करता है और अन्य मे प्रजातत्र, किन्तु जहॉ अमरीकी सस्थाओ के समान प्रजातात्रिक सस्था सगठित है, वहॉ केवल एक ही सत्ता है, शक्ति और सफलता का एक ही तत्त्व है और उसके परे कुछ नहीं है।

अमरीका मे बहुमत मत-स्वातत्र्य के चारो ओर प्रबल अवरोध खड़ा कर देता है और इन अवरोधो के अन्तर्गत एक लेखक जो चाहे लिख सकता है, परन्तु मर्यादा का उल्लघन करना उसके लिए घातक होता है। उसको न केवल सजा का ही खतरा मोल लेना पडता है, प्रत्युत निरतर रूप से उसका अपमान किया जाता है। उसका राजनीतिक जीवन सदा के लिए समाप्त हो जाता है, क्योकि उसने उस एकमात्र अधिकार का अपमान किया है, जो उसे राजनीतिक जीवन प्रदान कर सकता है। उसको किसी प्रकार का मुआवजा नही दिया जाता, यहॉ तक कि सम्मान तक से उसको वञ्चित कर दिया जाता है। अपना मत प्रकाशित करने से पूर्व वह मानता है कि उसका मत अन्यो के मतो के सामान है, किन्तु उनके प्रकाशन के तत्काल बाद उस पर विरोधियो द्वारा रोक लगा दी जाती है, जबकि उसके समान मत रखने वाले भी बोलने का साहस न होने के कारण चुप रह जाते हैं। वह प्रतिदिन किये जाने वाले प्रयासो के निष्फल होने से

झुक जाता है और शान्त हो जाता है, जैसे कि वह सत्य बोल कर भी पश्चात्ताप कर रहा हो।

बेडियॉ और वधिक ऐसे प्रसाधन थे, जिनका पहले क्रूर शासन द्वारा प्रयोग किया जाता था, किन्तु हमारे युग की सभ्यता ने स्वय निरकुशता को भी मात कर दिया है, यद्यपि उसको सीखने की गुजाइश नहीं दिखायी देती। यह कहा जा सकता है कि निरकुश शासको ने दमन की नीति को साकार रूप प्रदान किया और आज के प्रजातान्त्रिक गणतत्र ने उसे केवल मस्तिष्क तक ही सीमित रख दिया है, मानो वह इच्छा के दमन की ओर प्रवृत्त होता है। एक व्यक्ति के प्रभुत्व मे आत्मा को अधीनस्थ करने के लिए शरीर पर आक्रमण किया जाता था, किन्तु आत्मा उन आक्रमणो से बच निकली, जो उसके विरुद्ध निर्देशित थे और उसने गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया। प्रजातान्त्रिक गणतत्र के क्रूर शासन मे यह मार्ग नहीं अपनाया जाता, यहॉ शरीर स्वतंत्र रहता है और आत्मा को गुलाम बनाया जाता है। शासक ऐसा अब नहीं कहता—"तुम वैसा ही सोचो, जैसा मै कहता हूँ अन्यथा तुम मर जाओगे।" किन्तु वह कहता है—"तुम मुझसे भिन्न विचार रखने मे स्वतत्र हो, तुम अपना जीवन, सम्पत्ति और जो कुछ भी तुम्हारे पास है, उसको सुरक्षित रख सकते हो, किन्तु तुम आइन्दा से अपने ही लोगो मे एक अजनवी की तरह रहोगे, तुम नागरिक अधिकार रख सकते हो, किन्तु वे तुम्हारे लिए अनुपयोगी होंगे, क्योकि यदि तुम उनसे वोट मॉगोगे तो कभी भी अपने साथी नागरिको द्वारा नहीं चुने जाओगे, यदि तुम उनसे आदर प्राप्त करना चाहोगे तो वे तुम्हारी उपेक्षा करेगे। तुम मनुष्यों के बीच रहोगे, किन्तु तुम मानवता के अधिकारों से वचित रहोगे। तुम्हारे साथी तुमको अपवित्र समझ कर तुमको विलग रखेगे, और वे भी, जो तुम्हारी सज्जनता मे विश्वास करते हैं, तुम्हारा परित्याग कर देगे, क्योकि उनको भी अपने को अलग किये जाने का भय होगा। शान्तिपूर्वक रहो, मैने तुमको तुम्हारा जीवन प्रदान किया है, किन्तु वह जीवन भी मृत्यु से बदतर है।"

पूर्ण स्वेच्छाचारी राजतत्रो ने निरकुशता को बदनाम किया था। हमे सजग रहना चाहिए, ऐसा न हो कि कही प्रजातान्त्रिक गणराज्यों मे वह पुनर्जीवित हो जाय और वे उसको कुछ लोगो के लिए और अधिक कष्टप्रद बना कर बहुजनो की दृष्टि मे इसे कम घृणित और अपमानजनक बना दे।

पुराने विश्व के सर्वाधिक गर्वीले राष्ट्रों मे उस समय की त्रुटियो और बुराइयो को दूर करने के उद्देश्य से ग्रन्थ प्रकाशित किये गये। लेब्रूयेरे उस समय लुई

चौदहवें के प्रासाद में रहता था। जब उसने महान चौदहवें लुई-विषयक अध्याय लिखा था, मोलियरे ने राज दरबार में अभिनीत नाटकों में दरबारियों की ही आलोचना की थी, किन्तु अमरीका में शासक सत्ता को खिलौना नहीं बनाया जा सकता। छोटी-सी निंदा भी उसकी भावना को उभाड देती है और साधारण मजाक भी, जिसका आधार सत्य हो, उसको क्रोधित कर देता है, भाषा के स्वरूप से लेकर चरित्र के गुणों तक, प्रत्येक वस्तु का विषय प्रशंसात्मक होना चाहिए। कोई लेखक, चाहे कितना ही प्रमुख क्यो न हो, अपने साथी नागरिकों की चापलूसी करने से नहीं बच सकता। बहुमत निरन्तर रूप से आत्मश्लाघा के वातावरण में रहता है और ऐसे भी कुछ सत्य हैं, जिन्हें अमरीकी केवल नवागतुकों से अथवा अनुभव से सीख सकते हैं।

यदि अमरीका में अभी तक कोई बड़ा लेखक नहीं हुआ, तो उसका कारण इन तथ्यों से मिल सकता है कि विचार-स्वातन्त्र्य के बिना कोई भी प्रतिभाशाली साहित्यकार पैदा नहीं हो सकता और विचार-स्वातन्त्र्य अमरीका में नहीं है। स्पेन में अनेक धर्मविरोधी पुस्तकों की बिक्री पर सरकार रोक लगाने में कभी भी समर्थ नहीं हुई। अमरीका में बहुमत का शासन अधिक सफल होता है, क्योंकि यह किसी के मत को प्रकाशित नहीं होने देता। अमरीका में सिद्धान्त में विश्वास न करने वाले मिल सकते हैं, किंतु नास्तिकवाद के सार्वजनिक संस्थान नहीं मिलते। कई सरकारों द्वारा अनैतिक पुस्तकों पर प्रतिबन्ध लगाकर नैतिकता की रक्षा का प्रयास किया गया है। अमरीका में इस प्रकार की पुस्तकों के लिए सजा नहीं दी जाती, किन्तु किसी को इस प्रकार की पुस्तकें लिखने के लिए प्रेरित नहीं किया जाता। इसलिए नहीं कि सभी नागरिक निष्कलंक हैं, बल्कि इसलिए कि अधिकांश लोग सभ्य हैं और नियम से रहते हैं।

इस विषय में सत्ता का प्रयोग निर्विवादतः श्रेष्ठ है और मैं स्वयं सत्ता की प्रवृत्ति पर ही विचार कर रहा हूँ। यह अदम्य सत्ता एक निरंतर सत्य है और इसका न्यायिक ढंग से प्रयोग एक संयोग मात्र है।

अमरीकियों के राष्ट्रीय चरित्र पर बहुमत की क्रूरता के प्रभाव

मैंने जिन प्रवृत्तियों का उल्लेख किया है, वे आज भी राजनीतिक समाज में थोड़ी-थोड़ी दृष्टिगोचर होती हैं, किन्तु इनका अमरीकियों के राष्ट्रीय चरित्र पर

प्रतिकूल प्रभाव पहले ही से पड रहा है। अमरीका में बहुमत की इस निरन्तर बढती हुई निरकुशता का कारण राजनीतिक जीवन मे प्रतिष्ठित व्यक्तियो क अत्यल्प सख्या मे होना है। जब अमरीकी क्रान्ति हुई तब ऐसे व्यक्ति बड़ी सख्या मे सामने आये, क्योंकि उस समय जनमत का प्रयोग अत्याचार करने के लिए नहीं, अपितु व्यक्तियो के प्रयासो का निर्देशन करने के लिए किया जात था। उस समय के सामान्य बौद्धिक आन्दोलन मे भाग लेने वाले उन प्रतिष्ठित व्यक्तियो की एक अलग ही शान थी, जिसका प्रतिबिम्ब राष्ट्र पर तो पडा, किन्तु जो किसी भी प्रकार उससे उधार नहीं ली गयी थी।

निरकुश सरकारो मे शासक के निकटतम रहने वाले बडे-बड़े सरदार राज की भावनाओ के अनुकूल कार्य करते ह और स्वेच्छापूर्वक गुलामों की भाँति उसकी आज्ञाओं का पालन करते हे, किन्तु राष्ट्र की आम जनता दासता द्वार अपने को नीचे नही गिराती, वह अपनी निर्बलता से, स्वभाव से, अज्ञान से और कभी-कभी वफादारी के कारण झुकती है। कुछ राष्ट्र आनन्द और गौरव के साथ शासक की इच्छाओ के आगे अपना बलिदान करने के लिए प्रसिद्ध हैं और इस प्रकार वे इस झुकने की कार्रवाई से ही एक प्रकार की मस्तिष्क की स्वतत्रता का परिचय देते हैं। इन राष्ट्रों की दशा दयनीय होती है, किन्तु वे पतित नही होते। वह कार्य करना, जो किसी व्यक्ति को स्वीकार नही और वह जो कुछ करता है, उसकी स्वीकृति का ढोग करना, इन दोनों मे बडा अन्तर है। प्रथम निर्बल व्यक्ति की कमजोरी है और दूसरा दासता की भावना के अनुकूल हे।

निरकुश राजतत्रो की अपेक्षा स्वतत्र राष्ट्रो मे, जहॉ प्रत्येक व्यक्ति को न्यूनाधिक रूप मे राज्य के मामलो मे अपना मत व्यक्त करने के हेतु प्राय आमन्त्रित किया जाता है, प्रजातान्त्रिक गणतत्रो मे जहॉ जन-जीवन निरन्तर रूप से घरेलू मामलो से सम्बद्ध रहता है, जहॉ सार्वभौम सत्ता प्रत्येक क्षेत्र मे व्याप्त है और जहॉ उसका ध्यान जनता की चीख पुकार से आकर्षित होता है, अधिकतर ऐसे लोग मिलते हें, जो उनकी कमजोरी का लाभ उठाते हैं और उनकी भावनाओं को नियन्त्रित रख जीविकोपार्जन करते है। इसका कारण यह नही कि यहॉ के लोग अन्य राष्ट्रो की अपेक्षा अधिक बुरी स्थिति में हे, किन्तु प्रलोभन अधिक तीव्र होते हैं और उनके साथ इनकी पूर्ति आसान होती है। इसके परिणाम स्वरूप चरित्र का अधिक व्यापक रूप से पतन होता है।

प्रजातान्त्रिक गणतत्र मे बहुमत का समर्थन प्राप्त करने की पद्धति अपनायी

जाती है और यह एक साथ सभी वर्गो मे जारी की जाती है, यह गम्भीरतम आक्षेप इस पर लगाया जा सकता है। अमरीकी गणराज्यो की तरह गठित प्रजातान्त्रिक राज्यो मे यह बात विशेषरूप से सही है, जहाँ बहुमत की सत्ता इतनी निरकुश एव अदम्य है कि यदि व्यक्ति निर्धारित मार्ग से अलग होना चाहता है, तो उसे नागरिक के नाते अपने अधिकारो का परित्याग करना पड़ता है और व्यक्ति के रूप मे अपने गुणो को भूल जाना पडता है।

सयुक्त राज्य अमरीका मे सत्ता के लिए लालायित रहने वाले विशाल जन-समूह मे मुझे वह पौरुषपूर्ण स्पष्टता और प्रौढ़ विचार-स्वातन्त्र्य बहुत कम व्यक्तियो मे देखने को मिला, जो बहुधा पूर्ववर्ती कालो मे अमरीकियो की विशिष्टता होती थी और जो सर्वत्र विशिष्ट चरित्र वाले व्यक्तियो के चरित्र का प्रधान अग होती है। अमरीकी एक ही मार्ग पर इतना सही सही चलते हैं कि प्रथम दृष्टि मे ऐसा प्रतीत होता है कि समस्त अमरीकियो के दिमाग एक ही सॉचे मे ढाले गये हैं। निश्चय ही कभी-कभी किसी नवागन्तुक को ऐसे अमरीकी मिलते है जो इन नियमो की कठोरता के प्रति असहमति प्रकट करते हैं, उसे ऐसे व्यक्ति मिलते है, जो कानून की त्रुटियो तथा प्रजातन्त्र की अस्थिरता और अज्ञान पर खेद प्रकट करते हैं, जो राष्ट्रीय चरित्र के लिए बाधक बुरी प्रवृत्तियो तक को देखते हैं और ऐसे उपाय बताते है जिनसे काम लेना सम्भव हो सकता है, किन्तु आपके अतिरिक्त उनकी बातो को सुनने वाला कोई नही होता, और आप, जिसके समक्ष ये गुप्त विचार प्रकट किये जाते हैं, एक नवागन्तुक और एक उडती हुई चिडिया के समान हैं। वे आपको ऐसे सत्य बताने के लिए अत्यन्त तत्पर रहते हैं, जो आपके लिए निरर्थक हैं, किन्तु जनता के समक्ष वे भिन्न ही भाषा मे बात करते हैं।...

बहुमत की सर्वशक्तिमत्ता से अमरीकी गणराज्यों को सबसे बड़ा खतरा

सरकारो का पतन सामान्यतः निर्बलता अथवा अत्याचारों से होता है। प्रथम स्थिति मे सत्ता उनसे छिन जाती है और दूसरी स्थिति मे सत्ता उनके अधिकार से मुक्त हो जाती है। अनेक प्रेक्षको ने, जिन्होने प्रजातान्त्रिक राज्यों मे अराजकता देखी है, अनुमान लगाया है कि उन राज्यों की सरकारें सामान्यतः कमजोर और निर्बल हैं। सत्य यह है कि जब पार्टियों मे सघर्ष प्रारम्भ होता है

तत्र सरकार समाज पर अपना नियन्त्रण खो देती है, किन्तु मै नहीं सोचता कि प्रजातान्त्रिक सरकार के पास स्वभावतः शक्ति अथवा साधन नहीं होते, अथवा यो कहिए कि यह शक्ति के दुरुपयोग और प्रसाधनो के गलत दिशा में प्रयोग करने से निष्फल होती है। अराजकता सदैव उसके अत्याचारो और भूलों से उत्पन्न होती है, न कि उसकी शक्ति की कमी से।

यह महत्वपूर्ण बात है कि स्थायित्व को शक्ति से और वस्तुओं की महानता को उसके काल के साथ नहीं मिलाया जा सकता। प्रजातान्त्रिक गणराज्यो मे समाज का निर्देशन करने वाली सत्ता स्थिर नहीं होती, क्योंकि सरकारे प्रायः बदलती रहती हैं और नया मार्ग निर्धारित करती हैं, किन्तु वे जिस मार्ग पर भी चले, उनकी शक्ति प्रायः निर्विरोध रहती है। अमरीकी गणतत्र की सरकारे मुझे यूरोप के स्वेच्छाचारी राजतत्र से अधिक केन्द्रित और अधिक साहसी प्रतीत होती हैं। मै ऐसी कल्पना नहीं करता कि वे निर्बलता के कारण नष्ट हो जायेंगी।

यदि कभी स्वतत्र अमरीकी सस्थाएँ नष्ट हुई, तो उसका कारण बहुमत की सर्वोच्चता ही होगा, जो भविष्य मे अल्पसख्यकों को हताश कर देगी और उनको शारीरिक बल प्रयोग के लिए बाध्य कर देगी। इसके परिणामस्वरूप अराजकता उत्पन्न होगी, किंतु यह अराजकता अत्याचार से उत्पन्न होगी।

श्री मेडीसन ने 'फेडरलिस्ट' न. ५१ मे यही मत व्यक्त किया है—"किसी गणराज्य मे इस बात का अत्यधिक महत्त्व होता है कि न केवल समाज के दमन से उसकी रक्षा की जाय, प्रत्युत उसके एक भाग के अन्याय से दूसरे भाग की भी रक्षा की जाय। न्याय सरकार का लक्ष्य होता है। यह सभ्य समाज का लक्ष्य होता है। इसके लिए सदा यत्न किया गया है और तब तक सदा यत्न किया जायगा, जब तक उसकी प्राप्ति न हो जाय अथवा इस यत्न से स्वतन्त्रता खो न जाय। यह बात सच्चाई के साथ कही जा सकती है कि ऐसे समाज मे, जिसकी व्यवस्था के अन्तर्गत प्रबलतर पक्ष शीघ्र सगठित होकर, निर्बलतर पक्ष का दमन कर सकता है, उसी प्रकार अराजकता का साम्राज्य होता है, जिस प्रकार प्रकृति की स्थिति मे, जहाँ शक्तिशाली व्यक्ति की हिंसा के विरुद्ध निर्बल व्यक्ति के लिए कोई सुरक्षा नहीं होती और जिस प्रकार दूसरी अवस्था मे सशक्त व्यक्ति भी अपनी अनिश्चितता के कारण ऐसी सरकार के आगे झुकने के लिए प्रेरित होते हैं, जो कमजोरो का भी उनके समान ही सरक्षण कर सकती है, उसी प्रकार पहली स्थिति मे अधिक शक्तिशाली वर्ग धीरे-धीरे इसी प्रकार के उद्देश्य से

प्रेरित होकर एक ऐसी सरकार के लिए कामना करने लगेगा, जो अधिक कमजोर और अधिक शक्तिशाली—सभी दलो की रक्षा करेगी। इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं किया जा सकता कि यदि रोड आइलैण्ड राज्य को महासघ से अलग कर दिया जाय और अकेले छोड़ दिया जाय तो इस प्रकार की सकीर्ण सीमाओ मे लोकप्रिय सरकार के अन्तर्गत दलगत बहुमतो के इस प्रकार के निरन्तर दमन द्वारा अधिकार की अरक्षा का प्रदर्शन होगा और उन्हीं दलो के आवाहन पर शीघ्र ही जनता से बिल्कुल स्वतत्र एक शक्ति की आवश्यकता होगी, जिनके कुशासन ने इसकी आवश्यकता को प्रमाणित किया था।"

जेफर्सन ने भी कहा है—"हमारी सरकार की कार्यकारिणी सत्ता ही मेरी चिन्ता का एकमात्र विषय नहीं है, सम्भवतः वह उसका प्रधान विषय भी नही है। विधानमण्डल की क्रूरता वास्तव मे सबसे अधिक भयानक खतरा है और आगामी अनेक वर्षो तक वह सर्वाधिक भयानक बना रहेगा। कार्यकारिणी सत्ता की क्रूरता भी अवसर आने पर सामने आयेगी, किन्तु इसमें बहुत समय लगेगा।"

इस विषय पर अन्य किसी व्यक्ति के मत की अपेक्षा जेफर्सन के मत को उद्धृत करने मे मुझे प्रसन्नता है, क्योकि मै उसे प्रजातंत्र का सबसे प्रभावशाली अधिवक्ता मानता हूँ।

१३. बहुमत की क्रूरता को शान्त करने वाले कारण

केन्द्रित प्रशासन का अभाव

मै केन्द्रित सरकार और केन्द्रित प्रशासन के बीच का विभेद पहले बता चुका हूँ। प्रथम का अमरीका मे अस्तित्व है, किन्तु दूसरा लगभग अज्ञात है। यदि अमरीकी जातियो की निर्देशिका सत्ता के पास सरकार के ये दोनो प्रसाधन होते और आदेशो को कार्य रूप मे परिणत करने की प्रवृत्ति के साथ आदेश देने के अधिकार को सयुक्त कर देते, यदि वह सरकार के आम सिद्धान्तो की स्थापना के बाद उनके लागू करने के विवरणो तक पहुँच जाती और यदि वह देश के महान् हितो को नियमित कर व्यक्तिगत हितो की पूर्ति मे सलग्न हो जाती, तो नवीन विश्व से स्वतंत्रता शीघ्र ही नष्ट हो जाती।

किन्तु सयुक्त-राज्य अमरीका मे बहुमत, जो प्रायः एक निरकुश शासक की रुचियों और प्रवृत्तियों का प्रदर्शन करता रहता है, अभी तक क्रूरता के पूर्ण प्रसाधनों से युक्त नहीं है। अमरीकी गणराज्यों मे केन्द्रीय सरकार ने किन्हीं ऐसे छोटे उद्देश्यों के सम्बन्ध मे अपने को व्यस्त नहीं रखा, जो उसका ध्यान पूर्ण रूप से आकर्षित कर सके। समाज के अन्य मामले को उसके अधिकारों द्वारा नियमित नहीं किया गया, और अभी तक किसी चीज ने उनमें हस्तक्षेप करने की इच्छा व्यक्त नहीं की। बहुमत अधिकाधिक निरकुश होता गया, किन्तु उसने केन्द्रीय सरकार के परमाधिकारों में वृद्धि नहीं की। ये विशेषाधिकार निश्चित क्षेत्र तक ही सीमित रहे, यद्यपि बहुमत की निरकुशता किसी एक बात मे उत्पीडक हो सकती है, किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि वह सब पर लागू हो सकती है। राष्ट्र मे प्रमुख दल उसकी भावनाओं से चाहे कितना ही उत्तेजित हो जाता हो, अपनी योजनाओं की पूर्ति करने मे वह कितना दृढ क्यो न हो, वह सारे देश मे सभी नागरिको को एक ही ढग से और एक ही साथ अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करने के लिए विवश नहीं कर सकता। जब केन्द्रीय सरकार, जो उस बहुमत का प्रतिनिधित्व करती है, आदेश जारी करती है, तो उसे उस आदेश के कार्यान्वय का कार्य अभिकर्त्ताओ को सौंपना पडता है, जिस पर बहुधा उसका कोई नियन्त्रण ही नहीं होता, और जिसे वह निरतर निर्देश नहीं दे सकती। नगर-प्रशासन, म्यूनिसिपल सस्थाएँ और काउटिया अनेक रहस्यमय बाँध हैं, जो लोकप्रिय बहुमत के निश्चयो पर नियत्रण रखते हैं अथवा उसकी रोकथाम करते हैं। यदि कोई दमनकारी कानून स्वीकार किया जाता है तो भी उस कानून के कार्यान्वय के ढग द्वारा स्वतत्रता की रक्षा की जायगी। बहुमत उसकी सूक्ष्मताओ तक और जिसे हम प्रशासनिक क्रूरता का ओछापन कह सकते हैं—नहीं पहुँच सकता। वह इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता कि वह ऐसा कर सकता है, क्योंकि उसको अपने अधिकार के प्रति पूर्ण जागरूकता नहीं है। वह अपने स्वाभाविक अधिकारो की सीमा को जानता है, किन्तु उनकी वृद्धि करने की कला से अपरिचित है।

इस विषय की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है, क्योकि यदि सयुक्त-राज्य अमरीका की भाँति किसी देश मे प्रजातान्त्रिक गणतत्र की स्थापना हुई है, जहाँ पहले कभी एक व्यक्ति के अधिकार से केन्द्रित प्रशासन की स्थापना हुई हो और जो जनता के कानूनो और प्रवृत्तियों मे अत्यन्त गहराई तक पैठ चुका हो, तो मै इस बात पर बल देने से नहीं हिचकिचाता कि इस प्रकार के गणतंत्र

मे यूरोप या वस्तुतः एशिया के इस भाग मे पाये जाने वाले किसी भी स्वेच्छाचारी राजतन्त्र की अपेक्षा अधिक असह्य निरकुशता का साम्राज्य होगा।

कानून का पेशा प्रजातंत्र को सन्तुलित रखने का कार्य करता है

अमरीकियो से मिलने और उनके कानूनो के अध्ययन करने पर हमें स्पष्टतः ज्ञात होता है कि कानूनी व्यवसाय के सदस्यो को सौपे गये अधिकार और सरकार पर पडने वाले प्रभाव, प्रजातन्त्र के दुरुपयोग के विरुद्ध सुरक्षा के लिए अधिक प्रभावशाली है। कानूनो का विशेष अध्ययन करने वाले व्यक्ति इस व्यवसाय से व्यवस्था की कतिपय प्रवृत्तियो, औपचारिकताओ के प्रति अभिरुचि और विचार-तारतम्य बॉधने की दिशा मे एक प्रेरणा प्राप्त करते है, जिनसे वे क्रातिकारी भावना और बहुसख्यको की सुप्त भावनाओ के प्रति अधिक उग्र बन जाते हैं।

वकीलो को अध्ययन करने से जो विशेष सूचना प्राप्त होती है, उनसे समाज में उनका एक प्रतिष्ठित स्थान बन जाता है और बुद्धिजीवी-वर्ग मे वे एक विशेषाधिकार प्राप्त सस्था के रूप मे रहते हैं। उनकी उच्च धारणा निरतर रूप से उनके व्यवसाय मे सहायक सिद्ध होती है। वे उस विज्ञान के ज्ञाता हैं, जो आवश्यक है, किन्तु जो आम तौर से सबको ज्ञात नही हैं। वे नागरिको के बीच मध्यस्थो का कार्य करते हैं और दलों के मुकदमो के अन्धविश्वास को अपने लक्ष्य मे निर्देशित करने के स्वभाव से उनको बहुसख्यको के निर्णय के विरुद्ध कदम उठाने की प्रेरणा मिलती है। इसके अलावा स्वभावतः वे एक सस्था का निर्माण करते है, जो किसी पूर्व समझौते के परिणामस्वरूप या उस समझौते से जो उनको समान लक्ष्य की ओर ले जाता है, निर्मित नही होती, किन्तु अध्ययन की और कार्य करने की पद्धति की एकरूपता उनके विचारो मे साम्य ला देती है—जैसे समान हितो से उनके प्रयास मिल जाते हों। वकीलो के आचरण मे कुलीनवाद के कुछ स्वभाव और अभिरुचि देखने को मिलती है। वे व्यवस्था और औपचारिकताओ के प्रति एक-सा प्रेम प्रदर्शित करते हैं और बहुसख्यको की कार्रवाइयों के प्रति एक सा उग्र रुख अपनाते हैं और जन-सरकार के प्रति एक ही गुप्त अपमान की धारणा रखते हैं।

मै इस बात पर जोर नही देता कि कानूनी व्यवसाय के सभी सदस्य हर समय शासन के मित्र और नये प्रवाह के विरोधी होते हैं, किन्तु अधिकाश इसी

प्रकार के होते हैं। जिस समाज मे वकीलो को बिना किसी विरोध के उसी उच्च स्थिति मे रहने दिया जाता है, जो स्वभावत. उनकी है, उनकी सामान्य भावना मुख्य रूप से दकियानूसी और प्रजातत्र-विरोधी होगी। जब कुलीनतत्र अपने सदस्यो मे से इस व्यवसाय के नेताओं को अपनी श्रेणियों से अलग कर देता है, वे ऐसे शत्रुओं को उभाडते हैं जो अधिक शक्तिशाली होते हैं, क्योंकि अपने परिश्रम के कारण कुलीनों की प्रवृत्ति से अधिक स्वतत्र होते हैं और अधिकार मे निम्न होते हुए भी बुद्धि में अपने को उनके समान मानते हैं, परन्तु कुलीनतत्र जब कभी भी उन्हीं व्यक्तियों को अपने कुछ अधिकार देना स्वीकार कर लेता हैं, तो दो वर्ग तत्परता से सगठित हो जाते हैं और वे उन अधिकारो को ऐसे ग्रहण कर लेते है जैसे कि वे उनके पारिवारिक हित हों।

वकील अन्य बातो की अपेक्षा सार्वजनिक व्यवस्था से अधिक सम्बन्धित रहते हैं और सार्वजनिक व्यवस्था की सुरक्षा अधिकारियो के हाथ मे है। यह भी नहीं भुलाया जाना चाहिए कि यदि वे स्वतत्रता का अधिक लाभ उठाते हैं, तो सामान्यत. वे वैधानिकता को अधिक महत्त्व देते हैं, वे पच-निर्णय की सत्ता की अपेक्षा क्रूर शासन से कम डरते हैं और यदि विधानमण्डल स्वयं व्यक्ति को उसकी स्वतत्रता से विमुख करने का कदम का उठाता है, तो वे असन्तुष्ट नहीं रखते।

प्रजातान्त्रिक सरकार वकीलों के राजनीतिक अधिकार के अनुकूल होती है, क्योंकि जब धनिको, कुलीनों और राजाओं को सरकार मे शामिल नहीं किया जाता है, तब वकील अपने अधिकार के अनुसार उनका स्थान ग्रहण कर लेते हैं. क्योंकि वे ही उन लोगों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान एव चतुर होते हैं और वे ही ऐसे होते है जिनका सार्वजनिक रूप से चुनाव किया जा सकता है। जब वे अपने स्वभाव से कुलीन व्यक्तियों और राजाओ के प्रति उन्मुख होते हैं, तब वे अपने हितो से जन-सम्पर्क मे आते हैं। वे प्रजातत्र की सरकार को उसके दुर्व्यसनो मे भाग लिये बिना और उसकी निर्बलताओ का अनुकरण किये बिना पसन्द करते हैं और इस प्रकार वे उससे और उसके ऊपर दोहरा अधिकार प्राप्त करते हैं। प्रजातान्त्रिक राज्यों मे लोग कानूनी व्यवसाय के सदस्यो के प्रति अविश्वास नही रखते, क्योंकि यह सर्वज्ञात है कि वे आम जनता की सेवा मे अभिरुचि रखते हैं और लोग किसी प्रकार की उत्तेजना प्रकट किये बिना उनको सुनते हैं, क्योंकि वे उनपर कुप्रवृत्तियों का दोषारोपण नही करते। वस्तुतः वकील ।तत्र की सस्थाओं को समाप्त नहीं करना चाहते, किन्तु वे निरतर रूप से

ऐसे साधनों द्वारा, जो उसकी प्रकृति के अनुकूल नहीं है, उसकी वास्तविक दिशा मोड़ने मे प्रयत्नशील रहते हैं। वकील जन्म और हित से जनता के और स्वभाव तथा अभिरुचि से कुलीनतंत्र वर्ग के होते हैं। उनको समाज के दो महान वर्गो को जोडनेवाली एक कड़ी कहा जा सकता है।

अमरीका मे कुलीन अथवा साहित्यिक व्यक्ति नहीं है और लोगो मे, धनिको मे अविश्वास करने की प्रवृत्ति होती है, फलतः वकील समाज मे एक उच्चतम राजनीतिक श्रेणी का और अत्यन्त सभ्य वर्ग का निर्माण करते हैं। इसलिए नये परिवर्तन से वे कुछ भी नहीं सीख पाते, जो सार्वजनिक व्यवस्था के लिए उनकी स्वाभाविक अभिरुचि मे एक अनुदार हित सयुक्त कर देता है। यदि मुझसे पूछा जाय कि अमरीकी कुलीनतंत्र को कौन-सा स्थान दिया जाय, तो मैं बिना किसी हिचकिचाहट से कह दूँगा कि यह धनिको के मध्य, जो सामान्य शृखला से सगठित नहीं है, नहीं मिलेगा, प्रत्युत यह न्यायालयों और वकीलो मे दिखायी पडता है।

अमरीका मे जो कुछ घटित होता है उस पर हम जितना अधिक विचार करते हैं, उतना ही अधिक हम यह मानने के लिए प्रेरित होगे कि वकील प्रजातांत्रिक तत्व के प्रतिरोध मे यदि एकमात्र नहीं, तो कम-से-कम अत्यन्त शक्तिशाली सस्था का निर्माण करते हैं। उस देश मे हमें सरलता से यह मालूम पड जाता है कि लोकप्रिय सरकार की अन्तर्निहित बुराइयो का शमन करने मे किस प्रकार कानूनी व्यवसाय अपने गुणो द्वारा और यहाँ तक कि अपने दोषों द्वारा भी योग्य सिद्ध होता है। जब अमरीकी आवेग से उन्मत्त होते हैं अथवा अपने विचारों की प्रचण्डता मे बह जाते हैं, तब उनको उनके कानूनी सलाहकारो के प्रायः अदृश्य प्रभाव द्वारा नियंत्रित किया जाता है अथवा रोक दिया जाता है। ये गुप्त रूप से उनकी कुलीन प्रवृत्तियो के स्थान पर राष्ट्र की प्रजातान्त्रिक भावनाओ को उभाडते

रिक्त निष्ठा प्राप्त करता है। उसकी कानूनी सफलताओं ने उसे अपने साथियों मे महत्वपूर्ण स्थान दिया है, उसकी राजनीतिक शक्ति उसके पद की प्रतिष्ठा को बनाये रखती है और विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग मे रहने की भावना उसमे जाग्रत करती है। कानूनो को असाविधानिक घोषित करने के विशेषाधिकारों से युक्त अमरीकी मजिस्ट्रेट निरन्तर राजनीतिक मामलो मे हस्तक्षेप करता रहता है। वह लोगो पर कानून बनाने का दबाव नहीं डाल सकता, किन्तु कम-से-कम वह उन्हे अपने स्वय के अधिनियमों को पालन करने के लिए और अपने अनुकूल आचरण रखने के लिए कह सकता है।

इसके अतिरिक्त यह अनुमान नहीं लगाना चाहिए कि अमरीका मे कानूनी भावना न्यायालयो तक ही सीमित है। इसका क्षेत्र उनसे भी अधिक व्यापक है। चूंकि वकील अत्यन्त सजग वर्ग का निर्माण करते हैं, जिनमे लोग अविश्वास नही करते, अतः स्वाभाविक रूप से उनको अधिकाश सार्वजनिक पदो के लिए आमत्रित किया जाता है। वे विधान-सभा के लिए निर्वाचित होते हैं और प्रशासन मे विशिष्ट पदो पर काम करते हैं। परिणामतः वे कानून बनाने और उसके कार्यान्वय मे काफी प्रभाव रखते हैं। फिर भी वकीलों को तत्कालीन जनमत के आगे झुकना पडता है, जो अधिक प्रबल होता है, और जिसका वे प्रतिरोध नही कर सकते, किन्तु यदि उन्हे कार्य करने की स्वतत्रता दी जाय तो इसका सकेत सरलता से मिल जायगा कि वे क्या करेगे। अमरीकियो ने, जिन्होंने अपने राजनीतिक कानूनो मे अनेक परिवर्तन किये हैं, अपने नागरिक कानून में कम परिवर्तन किये हैं और वे भी काफी कठिनाई से, यद्यपि इनमे से अनेक उनकी सामाजिक स्थिति के प्रतिकूल हैं, इसका कारण यह है कि कानून के विषयो मे बहुमत कानूनी व्यवसाय के अधिकार के प्रतिकूल जाने को उद्यत रहता है और अमरीकी वकील, जब उनको अपने इच्छानुसार कार्य करने के लिए छोड दिया जाता है, नवीनता लाने के प्रति इच्छा नहीं दिखाते।

जैसा कि मैंने उल्लेख किया है, कानूनी प्रवृत्तियो का प्रभाव वास्तविक सीमाओ से अधिक बढ़ जाता है। अमरीका मे शायद ही ऐसा कोई राजनीतिक प्रश्न उत्पन्न होता है जो बाद मे न्यायिक प्रश्न नही बन जाता। अत. सभी दलो को अपने प्रतिदिन के विषयो मे न्यायिक कार्रवाई के विशिष्ट विचार और यहाँ तक उसकी भाषा का प्रयोग करना पडता है। चूंकि अधिकाश साधारण लोग वकील हैं, अथवा रहे हैं, वे सार्वजनिक कार्यों मे अपने व्यवसाय के नियम और टेक्निकल तरीके व्यवहार मे लाते हैं। जूरी पद्धति यह प्रवृत्ति सभी वर्गों मे

डाल देती है। इस प्रकार कुछ अशों मे कानून की भाषा अशिष्ट हो जाती है· कानून की भावना, जो स्कूलो और न्यायालयो मे पनपती है, धीरे-धीरे उनकी दीवारो को भेद कर समाज के भीतर निम्न वर्ग तक पहुँचती है, जिससे अन्त मे सभी न्यायिक मजिस्ट्रेट के स्वभाव और अभिरुचि को ग्रहण कर लेते हैं। अमरीका मे वकील एक दल बनाते हैं, परन्तु वह इतना भयानक नही होता, न स्पष्टतः उसका अनुमान लगाया जा सकता है और न उसका अपना कोई विशिष्ट चिह्न होता है। वह दल समय के प्रवाह के अनुकूल अपने को ढालता है और अपने को समाज की सभी गतिविधियो के अनुकूल बिना किसी प्रतिरोध के बना लेता है, किन्तु यह दल सारे समाज मे व्याप्त रहता है और समाज का निर्माण करने वाले सभी वर्गो मे प्रवेश करता है। यह अप्रत्यक्ष रूप से देश पर शासन करता है, किन्तु अन्त मे वह अपने उद्देश्यो के अनुरूप अपने को परिवर्तित करता है।

जूरी द्वारा सुनवाई

चूँकि मेरे विषय ने मुझे सयुक्त-राज्य अमरीका मे न्यायिक-प्रशासन पर विचार करने के लिए बाध्य किया है—मै जूरी सस्था की ओर ध्यान आकर्षित किये बिना आगे नही बढ़ूँगा। जूरी द्वारा अभियोग-निर्णय पर दो भिन्न दृष्टिकोणो से विचार किया जा सकता है—न्यायिक और राजनीतिक सस्था के रूप मे...।

मेरा वर्तमान उद्देश्य जूरी पर राजनीतिक सस्था के रूप मे विचार करना है। जूरी को केवल न्यायिक सस्था के रूप मे देखना सकीर्ण दृष्टिकोण होगा, क्योंकि न्यायालयो के निर्णयो पर उसका कितना ही अधिक प्रभाव क्यो न पड़ता हो, फिर भी स्वतंत्र समाज के भविष्य पर उससे भी अधिक प्रभाप पडता है। जूरी सर्वोपरि एक राजनीतिक सस्था है और उसका यथोचित मूल्याकन करने के लिए इसी दृष्टिकोण से उस पर विचार करना चाहिए। जूरी से मेरा तात्पर्य समुदाय द्वारा निर्वाचित कतिपय उन नागरिको से हैं, जिन्हे न्याय करने का अस्थायी अधिकार दिया जाता है। जूरी द्वारा अभियोग-निर्णय, जैसा कि उसका प्रयोग अपराध-निरोध के लिए किया जाता है, मुझे निम्न कारणों से सरकार मे विशिष्ट प्रजातान्त्रिक तत्व प्रतीत होता है।

जूरी सस्था उस वर्ग के अनुसार, जिससे जूरी सदस्य चुने जाते हैं, कुलीन-वादी अथवा प्रजातान्त्रिक हो सकती है, परन्तु वह सदैव अपना प्रजातान्त्रिक स्वरूप कायम रखती है। इस गुण के कारण वह समाज का सही निर्देशन

सरकार के हाथों में न सौंपकर प्रजा के या प्रजा के एक भाग के हाथों में सौंपती है। शक्ति सफलता के क्षणिक तत्व के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है और शक्ति के बाद अधिकार की धारणा उत्पन्न होती है। सरकार, जो केवल युद्ध के मैदान में अपने शत्रुओं का सामना करने में समर्थ रहती है, शीघ्र नष्ट होकर रहती है। राजनीतिक कानूनों को सही अधिकार दण्डनीय विधान द्वारा प्राप्त होता है और यदि इस अधिकार का अभाव है तो कानून कभी-न-कभी प्रभावित करने की अपनी शक्ति खो देगा। इसलिए जो व्यक्ति अपराधी को सजा देता है, वस्तुत वही समाज का कर्णधार है। अब जूरी की संस्था स्वयं लोगों को अथवा कम-से-कम नागरिकों के वर्ग को न्यायाधीशों के पद तक पहुँचाती है। परिणामत जूरी की संस्था प्रजा अथवा नागरिकों के उस वर्ग को समाज को निर्देश देने का अधिकार सौंपती है। जूरी-पद्धति राष्ट्रीय चरित्र पर शक्तिशाली प्रभाव डालने में असफल नहीं रह सकती। वह सभी नागरिकों के मस्तिष्क में न्यायाधीशों की भावना उत्पन्न करने का कार्य करती है और यह भावना अपनी सहायक प्रवृत्तियों सहित स्वतंत्र संस्थाओं के लिए ठोस पृष्ठभूमि तैयार करती है। यह सभी वर्गों में न्याय-निर्णयों के प्रति सम्मान और अधिकार की भावना उत्पन्न करती है। यदि इन दो तत्वों को निकाल दिया जाय तो स्वतंत्रता का प्रेम विनाशकारी आवेग मात्र रह जायगा। वह मनुष्यों को समानता का व्यवहार सिखाती है और प्रत्येक मनुष्य अपने पडोसी को उसी दृष्टिकोण से समझने का प्रयत्न करता है मानो स्वयं अपने ही पर विचार किया जा रहा हो। यह दीवानी मामलों पर विचार करने वाली जूरी-पद्धति के लिए विशेषत सही है; क्योंकि ऐसे लोगों की संख्या जिनमें फौजदारी अभियोग को समझने का विवेक हो, कम रहती है और प्रत्येक व्यक्ति मुकदमे का शिकार हो जाता है। जूरी-पद्धति प्रत्येक मनुष्य को स्वय के कार्यों के उत्तरदायित्व को वहन करना सिखाती है और उसे मानवीय आत्मविश्वास से प्रभावित करती है, जिसके बिना किसी राजनीतिक गुण का अस्तित्व नहीं रह सकता। वह प्रत्येक नागरिक को एक प्रकार की न्यायिक प्रतिष्ठा प्रदान करती है, और सभी को उन कर्तव्यों से, जो उन्हें समाज के प्रति पूरा करना पड़ता है, सजग करती है और सरकार में जो भाग लेते हैं उन्हें उससे अवगत कराती है। वह मनुष्यों को उनके स्वयं के अतिरिक्त अन्य कार्यों की ओर ध्यान आकर्षित करने को बाध्य करती है। इस प्रकार वह निजी स्वार्थपरता को नष्ट करती है, जो समाज का एक कलंक है।

जूरी-पद्धति न्याय करने और लोगों के स्वाभाविक ज्ञान की अभिवृद्धि में

मे प्रभावकारी योगदान देती है और मेरे विचार से, यह उसका सबसे बड़ा लाभ है। उसे सदा खुला रहने वाला परोपकारी सार्वजनिक स्कूल कहा जा सकता है, जहाँ प्रत्येक जूरी सदस्य अपने अधिकारो का ज्ञान अर्जित करता है, उच्च वर्ग के अत्यन्त विद्वान और प्रगतिशील व्यक्तियों के सम्पर्क मे वह उन कानूनों से, जो 'बार' के प्रयासो, न्यायाधीश के परामर्श और यहाँ तक कि दलो के आवेगो से उसकी योग्यता की पहुँच के भीतर लाये जाते है, पूर्णतः परिचित हो जाता है। मेरी दृष्टि मे अमरीकियो ने दीवानी मामलो मे जूरी का जो दीर्घकालीन प्रयोग किया है, उसका मुख्य कारण उनकी व्यावहारिक बुद्धि और विशुद्ध राजनीतिक भावना है।

इसलिए जूरी-पद्धति, जो न्यायपालिका के अधिकारो को सीमित करती हुई प्रतीत होती है, वस्तुतः उसकी शक्ति को सचित करती है और अमरीका को छोड़ कर अन्य किसी देश में न्यायाधीश इस प्रकार से शक्तिशाली नहीं हैं कि जहाँ लोग उनके विशेषाधिकारो के भागीदार होते हैं। दीवानी मामलो मे विशेषतः जूरी के कारण ही अमरीकी मजिस्ट्रेट समाज के निम्न वर्गों मे भी अपने व्यवसाय की भावना भरते हैं। इस प्रकार जूरी, जो जन-शासन-निर्माण के लिए अत्यन्त शक्तिशाली साधन हैं, इस बात की शिक्षा देने का भी एक अत्यन्त प्रभावशाली माध्यम है कि कुशल प्रशासन किस प्रकार किया जाय।

१४. प्रजातंत्र को बनाये रखने वाले कारण

आकस्मिक अथवा दैविक कारण

से पडने वाले अप्रत्यक्ष प्रभाव से इनकार करना असम्भव है।

अमरीका मे ऐसा कोई बडा मुख्य नगर नहीं है, जिसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव समस्त देश पर पडता हो। मै समझता हूँ कि सयुक्त-राज्य अमरीका में प्रजातात्रिक सस्थाओ के कायम रखने के मूल कारणो में से यह एक है। नगरा मे लोगों को परस्पर मिलने और पारस्परिक सवेगो को जाग्रत करने से रोका नहीं जा सकता, जिससे आकस्मिक और भावावेगपूर्ण निश्चयो को बढावा मिलता है। नगरो को विशाल विधानमडल कह सकते हैं, जिनके समस्त निवासी उनके सदस्य हैं। नगरो के लोगो का मजिस्ट्रेटो पर विलक्षण प्रभाव पडता है और वे बहुधा सार्वजनिक अधिकारियो के बिना किसी हस्तक्षेप के इच्छानुकूल अपना कार्य कर लेते हैं।

इसलिए प्रान्तों को इन 'मेट्रोपोलिटन' नगरों के अधीन रखना न केवल साम्राज्य के भाग्य को समाज के उन लोगो के हाथो मे सौप देना है, जो अन्यायी हैं, अपितु ऐसी जन-सख्या के हाथों मे सौप देना है, जो अपनी इच्छाओं की पूर्ति करती है। यह एक अत्यन्त खतरनाक प्रवृत्ति है। इसलिए विशाल नगरो की महत्ता प्रतिनिधिमूलक पद्धति के लिए अत्यन्त घातक है। इससे आधुनिक गणराज्यो मे वे ही दुर्बलताएँ पैदा होती हैं जो उन प्राचीन गणराज्यों मे थी, जो सब के सब इस पद्धति से अनभिज्ञ होने से समाप्त हो चुके हैं।

अमरीकियों को अपने अनुकूल जन्मजात अवसर उपलब्ध थे और उनके पूर्वजो ने परिस्थिति और बुराई की उस समानता को इस देश मे उस समय प्रविष्ट किया, जब कि प्रजातात्रिक गणराज्य का वस्तुतः जन्म हुआ था। केवल इतना ही नही था, अपितु समाज की इस प्रजातात्रिक स्थिति के अतिरिक्त प्रारम्भ मे बसनेवाले लोगो ने अपने उत्तराधिकारियो को वसीयत मे जो प्रथाएँ, आचरण और विचार प्रदान किये, वे गणराज्य की सफलता मे अत्यधिक योगदान देते हैं। जब मै इस प्राथमिक तथ्य के परिणामों की ओर दृष्टिपात करता हूँ तो मुझे प्रतीत होता है कि अमरीका का भाग्य उसके तटो पर सबसे पहले चरण रखने वाले 'प्यूरीटन' के ही हाथो मे सुरक्षित था, ठीक उसी तरह जैसे समस्त मानव जाति का प्रतिनिधित्व प्रथम व्यक्ति द्वारा किया गया था।

अमरीका मे प्रजातात्रिक गणराज्य की स्थापना करने और उसे कायम रखने मे जो मुख्य परिस्थिति सहायक हुई है, वह है अमरीकियों की अपने देश की प्राकृतिक स्थिति। उनके पूर्वजो ने उन्हे समानता और स्वतत्रता का प्रेम प्रदान

किया, परन्तु स्वय ईश्वर ने उन्हे विस्तृत महाद्वीप मे रख कर उन्हें समान और स्वतत्र रहने के साधन उपलब्ध किये। सामान्य समृद्धि समस्त सरकारो, विशेषतः प्रजातात्रिक सरकार के स्थायित्व के लिए अनुकूल रहती हैं, जो बहुमत की इच्छा पर और विशेषतः समाज के उस भाग की इच्छा पर, जो अभावो से अत्यन्त ग्रसित है, आधारित है। जब प्रजा शासन करती है, तो यह आवश्यक है कि उसे खुशहाल बनाया जाय, अन्यथा वह राज्य को उलट देगी। यही नहीं, उसके कष्ट उसे उत्तेजित कर उस सीमा तक पहुँचा देते है, जहाँ आकाक्षाए राजाओ का उदय करती है। अमरीका मे कानूनो से स्वतंत्र भौतिक परिस्थितियाँ विश्व के किसी अन्य देश की अपेक्षा अधिक हैं, जो सामान्य समृद्धि मे योगदान देती है। विश्व के इतिहास मे अन्यत्र ऐसा कोई उदाहरण नहीं है। सयुक्त-राज्य अमरीका मे न केवल विधान प्रजातात्रिक है, अपितु स्वय प्रकृति लोगो के हित के अनुकूल है।

प्रारम्भिक काल की तरह इस महाद्वीप मे आज भी अजस्र स्रोतों से बहने वाली नदियाँ, हरेभरे और तर निर्जन प्रदेश और विशाल मैदान हैं, जहाँ किसान ने एक बार भी अपना हल नहीं चलाया है। उस राज्य मे प्रकृति की यह देन उस व्यक्ति को सुलभ हुई है, जो पूर्वकाल की भाँति जगली, अज्ञानी और एकाकी नहीं है, परन्तु जो पहले से ही प्रकृति के अत्यन्त महत्वपूर्ण रहस्यों मे परिचित है, जो अपने साथियो से मिलजुल कर कार्य करता है और जिसे पचास शताब्दियो का अनुभव प्राप्त है। ठीक इसी समय यूरोप के लाखो सभ्य निवासी इन उर्वर मैदानो मे, जिनके साधनो और विस्तार से वे स्वय अभी तक पूर्णरूप से परिचित नहीं हैं, धीरे-धीरे फैलने लगते है। सर्वप्रथम तीन या चार हजार सैनिक भटकते आदिवासियो को खदेड कर आगे ले जाते हैं। उनके बाद आगे चलने वाले वे श्रमिक आते है, जो लकडियों को चीरते हैं, जगली जानवरो को तग कर जगलों के भीतर भगा देते हैं और वहा के जल-स्रोतो की खोज करते हैं। इस प्रकार यह निर्जन देश सभ्यता के गौरवपूर्ण प्रवेश के लिए मार्ग प्रशस्त करता है।

लिये उसे वहाँ जीवन-निर्वाह के लिए मजदूरी करनी पडती है और वह शायद ही कभी समुद्र-तटीय उस क्षेत्र की ओर जा पाता है जो औद्योगिक जनसख्या द्वारा घिरा हुआ है। पूजी या साख के बिना रेगिस्तान का अन्वेषण नही किया जा सकता और प्रत्येक व्यक्ति के लिए, जंगल मे प्रवेश करने के पूर्व उसका नयी आबहवा की कठिनाइयों को सहन करने का अभ्यस्त होना आवश्यक है। वस्तुत. स्वय अमरीकी ही, सुदूर क्षेत्रों में, व्यापक क्षेत्र प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रतिदिन उन स्थानों को छोड कर जाते हैं, जहाँ उन्होंने जन्म लिया है। इस प्रकार यूरोपनिवासी अपने घर को अतलान्तिक तटों पर बसने के लिये छोड़ता है और इन्हीं तटों पर जन्म लेने वाला अमरीकी मध्य अमरीका के वनों में प्रवेश करता है। यह दोहरा प्रवास निरन्तर चलता रहता है। यह यूरोप के मध्य से प्रारभ होकर अतलान्तिक महासागर को पार करता है और नयी दुनिया के निर्जन प्रदेशों को चीरता हुआ आगे बढता है। लाखों व्यक्ति, जिनकी भाषा, जिनका धर्म, जिनके रीतिरिवाज भिन्न होते हैं, एक उद्देश्य अपनाकर, एक ही लक्ष्य की ओर निरन्तर आगे बढ़ रहे हैं। प्रतीत होता है, जैसे उनका भाग्य पश्चिम मे कही छिपा हुआ है और वे उसे खोजने के लिए पश्चिम मे ही आगे बढ रहे हैं।

कभी-कभी मनुष्य की प्रगति तीव्रगामी होती है कि उसके आगे बढ जाने पर रेगिस्तान फिर से प्रकट हो जाते हैं, जगल, जो उसका मार्ग प्रशस्त करने के लिए कट जाते हैं, पुन. खडे हो जाते हैं। पश्चिम के नये राज्यो को पार करते समय सामान्य रूप से जगलों के बीच उजडे हुए निवासस्थान दृष्टिगोचर होते हैं और यात्री को बहुधा अत्यन्त निर्जन स्थानों मे लकडी के मकान के अवशेष प्राप्त होते है, जो मनुष्य की शक्ति और उसकी तीव्र प्रगति के प्रमाण हैं। इन परित्यक्त मैदानो मे और किसी काल के इन अवशेषों पर आदिकालीन जगल शीघ्र नये अकुर पैदा कर देते हैं, जगली पशु इन्ही स्थानो में, जो कभी उनके स्वय के थे, लौट कर पुन. शिकार करने लगते हैं। प्रकृति मनुष्य के अवशेषों को, हरी डालियों और फूलो से ढक कर, पुनः मुस्कराने लगती है और उसके अल्पकालीन मार्ग को फिर लुप्त कर देती है।

मुझे स्मरण है कि वृक्षों से आच्छादित जिले को पार करते समय, जो अब तक न्यूयार्क राज्य मे फैले हुए हैं, मैं एक झील के किनारे पहुँच गया तो देखा वह जगल से अनन्तकाल से चले आ रहे आलिगन मे आबद्ध थी। एक छोटा-सा द्वीप पानी के बीच उठा हुआ था और वह वृक्षो से आच्छादित था,

जिनके पत्तो ने उसके किनारो को ढॅक लिया था। झील के तटो पर, मनुष्यो के रहने के प्रमाणस्वरूप धूम्र-स्तम्भ के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था, जिसे क्षितिज पर वृक्षो से ऊपर उठता हुआ वादलों की ओर जाता हुआ देखा जा सकता है। वह ऐसा दिखायी पडता है मानो वह स्वर्ग की ओर जाने की अपेक्षा वहॉ से लटक रहा है। वहॉ रेड इडियनो की एक डोगी लगी थी। उसी ने सबसे पहले मेरा ध्यान आकर्षित किया और उस द्वीप मे जाने की मेरी उत्कठा जाग्रत हुई। कुछ ही मिनटो मे मैने उसके तटो पर पैर रखा। वस्तुतः सम्पूर्ण द्वीप नयी दुनिया का एक अत्यन्त रमणीय निर्जन प्रदेश था। यहॉ पहुॅच कर सभ्य मनुष्य आदिवासियो के शिकार पर दुःख प्रकट करने लगता है। यहॉ की घनी हरियाली भूमि की अतुल्य उर्वरता की साक्षी है। यहॉ की गहरी निस्तब्धता, जो उत्तरी अमरीका के जंगलो मे सामान्य है, हारिल पक्षियो की कर्णकटु ध्वनि और वृक्षो के तनो पर बैठे कठफोडवो की वृक्षो की छालो को कुतरने की आवाज से भग होती है। इस स्थान को देखकर मैं कल्पना नही कर सका कि यह स्थान कभी बसा होगा, क्योंकि यहा प्रकृति स्वयं अपने यथार्थ रूप मे दिखायी पड रही थी, किंतु जब मै द्वीप के भीतर पहुॅचा तो मुझे मनुष्यों के कुछ अवशेष मिले। तब मै निकट की वस्तुओ का ध्यान-पूर्वक अध्ययन करने लगा और मैने शीघ्र ही अनुमान लगाया कि निश्चय ही किसी यूरोपनिवासी ने यहॉ शरण लेने का प्रयास किया था। फिर भी आज उसके परिश्रम द्वारा किये गये कार्यों मे कितने परिवर्तन हो गये हैं। अपने निवास स्थान के लिए उसने जिन लट्ठो को शीघ्रता मे काटा था, वे नये सिरे से उग आये थे, उनके खम्मे डालियो से गुॅथ गये थे और उसकी कुटिया पर्ण-शाला बन गयी थी। आसपास की झाडियों के मध्य कुछ पत्थर दिखायी दे रहे थे, जो आग से काले पड गये थे और जिन पर महीन राख चमक रही थी। निस्सन्देह यहा अगीठी जली थी और यहा जो एक चिमनी गिरी पडी थी उस पर कूडा-कर्कट पडा हुआ था। मै यहॉ प्रकृति के साधनों और मनुष्य की लघुता की मूक प्रशंसा मे खडा रहा और जब मैं इस रमणीय एकात को छोडने के लिए वाध्य हुआ, तो "क्या यहॉ ये अवशेष पहले से ही थे?" कहते हुए मेरे मुॅह से उदासीभरी आह निकल पडी।

यूरोप मे हम धन-प्राप्ति की व्यग्र प्रवृत्ति, उत्कट अभिलाषा और स्वतन्त्रता के प्रति विशाल प्रेम को समाज के लिए अत्यन्त खतरनाक प्रवृत्तियॉ मानते हैं। परन्तु ये वे ही तत्त्व हैं, जो अमरीका के लिए एक दीर्घकालीन एवं शातिपूर्ण

भविष्य निश्चित करते हैं। इन उद्वेलित भावनाओं के बिना जनता कुछ निश्चित स्थानों पर जमा हो जायगी और उसे पुराने विश्व की भांति आवश्यकताओं का अनुभव होगा जिनको संतुष्ट करना कठिन हो जायेगा क्योंकि नयी दुनिया के वर्तमान समय का भाग्य ऐसा उज्ज्वल है कि वहाँ के निवासियों के अवगुण उनके गुणों की अपेक्षा कम अनुकूल हैं। इस प्रकार की परिस्थितियों से ऐसे अनुमानों पर प्रभाव पडता है, जिनके अनुसार मनुष्य की गतिविधियाँ दो गोलार्धों मे विभाजित होती हे। जिसको हम लालसा कहते हैं, उसे अमरीकी प्राय. प्रशसनीय उद्योग कहते हैं और जिसको हम उदार आकाक्षा का गुण समझते हैं, उस पर वे हृदय की शुष्कता की सज्ञा का आरोप लगाते हे।

अमरीका मे प्रजातान्त्रिक गणराज्यो को बनाये रखने मे देश की भौतिक परिस्थितियों की अपेक्षा कानून और कानूनों की अपेक्षा आचरण अधिक योग देते हैं।

अमरीका मे प्रजातान्त्रिक सस्थाओं का कायम रहना वहाँ की परिस्थितियों कानूनों और आचरण पर निर्भर है। अधिकाश यूरोपीय इन तीन कारणों मे से केवल प्रथम से परिचित हे और वे उसे आवश्यकता से अधिक महत्व दे सकते हैं।

यह सत्य है कि आग्ल-अमरीकी इस नयी दुनिया मे सामाजिक समानता की स्थिति मे बसे थे। उन लोगो मे ऊँच-नीच का कोई भेद नहीं था। व्यावसायिक पूर्वाग्रह, जन्म के पूर्वाग्रहो की भाँति ही सर्वत. अज्ञात थे। अत चूंकि समाज की स्थिति प्रजातान्त्रिक थी, अतः प्रजातत्र का शासन बिना किसी कठिनाई के स्थापित हो गया था, किन्तु यह परिस्थिति अमरीकियों के लिए विचित्र नहीं थी। प्राय. समस्त अमरीकी उपनिवेशो की स्थापना, समान परिस्थितियो मे रहने वाले लोगो द्वारा अथवा उन लोगो द्वारा, जो उन्हे बसाने के बाद समान हो गये थे, की गयी थीं। नयी दुनिया के किसी भाग मे यूरोप निवासी कुलीनतत्र की स्थापना नही कर सके। इसके अतिरिक्त प्रजातान्त्रिक सस्थाएँ अमरीका को छोड कर और कहीं फली-फूली नही।

अमरीकी सघ के लिए ऐसा कोई शत्रु नहीं है, जिससे होड की जाय। वह समुद्र मे द्वीप की तरह जगलो मे अकेला खडा है, किन्तु दक्षिण अमरीका के स्पेनियार्ड प्रकृति द्वारा उनसे कम विलग स्थिति मे नहीं हैं, फिर भी उनकी परिस्थिति ने उन्हे सेना को तैयार रखने के आरोप से मुक्त नहीं किया है। विदेशी शत्रु के अभाव मे वे एक दूसरे पर आक्रमण कर बैठते हैं, परन्तु

आंग्ल-अमरीकी प्रजातन्त्र ही एकमात्र ऐसा है, जो अब तक अपने को शांतिमय स्थिति में रखता आया है।

संघ की सीमाएँ मानव समाज की गतिविधियों के लिए असीम क्षेत्र और श्रम के लिए अक्षय सामग्री प्रस्तुत करती हैं। धन का उद्वेग महत्वाकांक्षा का रूप धारण कर लेता है और समृद्धि की चेतना से गुटबन्दी की गरमी शान्त हो जाती है, परन्तु विश्व में, दक्षिण अमरीका को छोड़कर, क्या अन्य किसी भाग में इतनी अधिक उपजाऊ भूमि, विशाल नदियाँ या अधिक अज्ञात और अक्षय सम्पत्ति है। फिर भी दक्षिण अमरीका प्रजातांत्रिक संस्थाओं को कायम रखने में असमर्थ रहा है। यदि राष्ट्रों का कल्याण, निवासयोग्य असीमित क्षेत्र के साथ, उनको विपरीत स्थिति में रख दिये जाने पर निर्भर करता तो दक्षिण अमरीका के स्पेनियार्ड लोगों को अपने भाग्य की शिकायत करने का कोई कारण नहीं मिलता। यद्यपि उस स्थिति में संयुक्त राज्य अमरीका के निवासियों से वे कम समृद्ध होते, फिर भी उनका भाग्य, यूरोप के कुछ राष्ट्रों की ईर्ष्या उत्तेजित करने के लिए पर्याप्त होता। फिर भी पृथ्वी पर दक्षिण अमरीका के राष्ट्रों से बढ़कर किसी की भी इतनी अधिक दयनीय स्थिति नहीं है।

इस प्रकार, दक्षिण अमरीका की भौतिक परिस्थितियाँ न केवल उत्तरी अमरीका की तरह परिणाम उत्पन्न करने के लिए अपर्याप्त हैं, अपितु वे दक्षिण अमरीका की जनसंख्या को यूरोप के राज्यों के स्तर से ऊँचा नहीं उठा सकतीं। वस्तुतः वे वहां विपरीत परिणाम उत्पन्न करती हैं। इसलिए भौतिक परिस्थितियाँ राष्ट्रों

विशिष्ट व्यवहार का अनुसरण करने के विचार से नहीं, जैसा कि अमरीकियों ने अपने लिए किया था, यदि वे उस सामाजिक परिस्थिति के लिए, जो इस युग की सतान पर ईश्वरीय इच्छा से लादी गयी है, अपने को अनुकूल बनाने का प्रयत्न करे और उसमे उस निरकुशता और अराजकता से, जो उसके लिए खतरा उत्पन्न करती हैं, बचे रहें—तो फिर यह सोचने का क्या कारण है कि उनके प्रयत्नो को सफलता नहीं मिलेगी? ईसाई समाज में प्रजातत्र को सघटित करना और उसकी स्थापना करना हमारे युग की महान् राजनीतिक समस्या है। अमरीकियो ने निश्चय ही इस समस्या का निराकरण नहीं किया है, परन्तु उन्होंने इस समस्या का समाधान करने वालो के लिए उपयोगी सामग्री प्रस्तुत की है।

यूरोप की स्थिति के परिणामों की महत्ता

जिस प्रश्न पर यहाँ विचार किया गया है, वह केवल सयुक्त-राज्य अमरीका के लिए ही नहीं, परन्तु सारे विश्व के लिए महत्वपूर्ण है। उसका सम्बन्ध किसी राष्ट्र से नहीं, समस्त मानव जाति से है। यदि वे राष्ट्र, जिनकी सामाजिक परिस्थिति प्रजातान्त्रिक हो, केवल उसी अवस्था मे स्वतत्र रह सकते हैं जब कि वे विशाल बजर क्षेत्रो मे बसे हों, तो हमे इस स्थिति से मानव जाति के भविष्य के सम्बन्ध मे निराशा होगी, क्योकि प्रजातत्र द्रुतगति से अधिक व्यापक प्रभुत्व प्राप्त कर रहा है और जगल धीरे-धीरे मनुष्यों द्वारा बसाये जा रहे हैं। यदि यह सत्य होता कि कानून और रीति-रिवाज प्रजातान्त्रिक सस्थाओं को कायम रखने के लिए अपर्याप्त हैं तो फिर राष्ट्रों के सम्मुख एक व्यक्ति की निरकुशता को स्वीकार कर लेने के अतिरिक्त और क्या मार्ग रह जाता? मैं भली प्रकार जानता हूँ कि इस समय ऐसे अनेक योग्य व्यक्ति हैं, जो इस विकल्प से भयभीत नही हैं और जो स्वाधीनता से इतने क्लान्त हैं कि वे उसके तूफानो से अलग विश्राम करने मे खुश रहते हैं, परन्तु ये व्यक्ति जिस भाग्य से बधे हुए हैं, उससे अपरिचित हैं। पूर्व स्मृतियो से युक्त वे निरकुश शक्ति का निर्णय इसी तथ्य से करते हैं कि वह अब तक कैसी रही है—न कि इस बात से कि हमारे युग मे वह कैसी हो सकती है।

यदि यूरोप के राष्ट्रो मे निरकुश शक्ति पुनःस्थापित हुई तो मेरी यह निश्चित धारणा है कि वह नया रूप धारण करेगी और उन लक्षणों के साथ प्रकट होगी जो हमारे पूर्वजो को अज्ञात थे। यूरोप मे एक ऐसा समय भी था जब प्रजा के

कानून और सहमति द्वारा राजाओं को प्रायः असीमित शक्ति प्राप्त हो गयी थी, परन्तु स्वयं उन्होंने कदाचित् ही उसका कभी प्रयोग किया था। मैं कुलीनता के उन परमाधिकारो की, न्यायालयों और निगमों की शक्ति और उनके चार्टर-अधिकारो की या प्रान्तीय विशेषाधिकारों की चर्चा नही करता, जिन्होने सार्वभौम सत्ता के प्रहारों को तोडने के लिए और राष्ट्र मे प्रतिरोध की भावना को बनाये रखने के लिए कार्य किया। इन राजनीतिक संस्थाओ से अलग राष्ट्र के आचरण और विचारों ने, जिन्होंने भले ही व्यक्तिगत स्वाधीनता का विरोध किया हो, मस्तिष्क मे स्वतन्त्रता के प्रेम को प्रज्ज्वलित किये रखा और जिन्होंने राजकीय सत्ता को, जो स्पष्टतः कम दृष्टिगोचर होने से कम शक्तिशाली नहीं थी, मर्यादाओं मे सीमित कर दिया था। धर्म, प्रजा का स्नेह, राजाओं की परोपकारिता, प्रतिष्ठा की भावना, पारिवारिक गौरव, प्रान्तीय पक्षपात, रीति-रिवाज और जनमत ने राजाओ की शक्ति को मर्यादित कर दिया। उनके अधिकारों को एक अदृश्य परिधि में सीमित कर दिया। उस समय राष्ट्रो का संविधान निरंकुश था, परन्तु उनके आचरण स्वतंत्र थे। राजाओं को अधिकार प्राप्त थे, परन्तु स्वेच्छापूर्वक कार्य करने के लिए न तो उनके पास साधन थे और न ऐसी इच्छा ही थी।

परन्तु निरंकुशता पर प्रतिबन्ध लगाने वाली पहले जैसी सीमाएँ अब कहाँ रही हैं? जब से मनुष्यों की आत्मा से धर्म का प्रभाव उठ चुका है, तभी से वह अत्यन्त महत्वपूर्ण सीमा, जो बुराई और अच्छाई का भेद कर लेती थी, टूट चुकी है। नैतिक जगत् में प्रत्येक वस्तु सन्देहात्मक और अनिश्चित-सी प्रतीत होती है; सम्राट् और राष्ट्र संयोग मे निर्देशित होते हैं और यह कोई भी नहीं बता सकता कि निरंकुशता की स्वाभाविक सीमाएँ और स्वतन्त्रता की मर्यादाएँ कहाँ हैं? दीर्घकालीन राज्य-क्रान्तियो ने राज्य के शासकों की प्रतिष्ठा को समाप्त कर दिया है और प्रजा के आदर के बोझ से मुक्त होने के बाद ही राजाओं ने स्वयं मनमाने शासन की मदांधता के सामने बिना किसी भय के आत्मसमर्पण कर दिया होगा।

की आज्ञा पर मन-ही-मन बडबडाहट कर सकती है, परन्तु वह उसे अप्रसन्न नहीं करना चाहती, ऐसा करने पर उसे दुःख होता है और सार्वभौम राजा पैतृक स्नेह के कोमल हाथो मे प्रजा को थपथपाता है।

जब एक बार भी राज्यक्रान्ति के उपद्रव मे राजकीय जादू समाप्त हो जाता है, जब सिंहासन पर राजाओं के उत्तराधिकार का अन्त हो जाता है जिससे जनता को उनके अधिकारो की दुर्बलता और उनकी शक्ति की निर्दयता का ज्ञान हो जाता है, तब कोई राजा पहले की तरह राज्य का पिता नहीं समझा जाता और स्वामी के रूप मे सभी उससे भयभीत होते हैं। यदि वह निर्बल है तो वह तिरस्कृत कर दिया जाता है, यदि वह शक्तिशाली है, तो उससे घृणा की जाती है। राजा को महसूस होता है जैसे वह स्वय अपने देश मे कोई अजनबी है और वह अपने प्रजा के साथ हारे हुए शत्रु की भाति व्यवहार करता है।

जब प्रान्तो और नगरो ने अपने ही देश मे इतने विभिन्न राष्ट्रों का निर्माण कर लिया तब हरेक की अपनी स्वतत्र इच्छा थी जो अधीनता की सामान्य भावना की विरोधी थी, परन्तु अब एक ही साम्राज्य के समस्त भाग अपनी स्वतन्त्रताओं अपनी प्रथाओं, अपने पूर्वाग्रहो, अपनी परम्पराओ और यहाँ तक कि अपने नामो को खो देने के पश्चात् समान कानूनों का पालन करने के लिए अभ्यस्त हो चुके हैं। इसलिए पूर्व की अपेक्षा, जब उनमे से प्रत्येक का अलग से दमन किया जाता था, आज उनका एक साथ दमन करना अधिक कठिन है।

जबकि कुलीन व्यक्तियो ने अपनी शक्ति का उपभोग किया और वस्तुतः उस शक्ति के लोप हो जाने के बाद दीर्घकाल तक कुलीनतत्र की प्रतिष्ठा ने उनके व्यक्तिगत विरोध को असाधारण शक्ति प्रदान की थी, उस समय ऐसे व्यक्ति मिल सकते थे, जो अपनी दुर्बलता के बावजूद अपनी व्यक्तिगत महत्ता के प्रति उच्च धारणा रखते थे और जो अकेले ही सार्वजनिक अधिकारी का सामना करने का साहस रखते थे, परन्तु वर्तमान समय मे जब कि समस्त श्रेणियाँ अधिक-से-अधिक घुलमिल रही हैं, जब व्यक्ति भीड मे अदृश्य हो जाता है और सामान्य अगम्यता मे सरलता से खो जाता है, जब राजतत्र की प्रतिष्ठा बिना किसी गुण को धारण किये अपनी शक्ति को प्रायः खो देती है और जब कोई भी शक्ति मनुष्य को अपने से ऊपर उठने के लिए समर्थ नहीं बना सकती तब किस बिन्दु पर शक्ति की अनिवार्यता और दुर्बलता की दासता का अन्त हो जायगा, यह कौन बतायेगा ?

जब तक पारिवारिक भावना जीवित रही, क्रूरता का विरोधी कभी भी

अकेला नहीं रहा। जब कभी उसने अपने सम्बन्ध मे विचार किया, उसे अपने अनुयायी, अपने मित्र और अपने साथी मिले। यदि उसे समर्थक का अभाव रहा तो उसने स्वय अपने पूर्वजो से प्रेरणा प्राप्त की और वश-परम्परा से चेतना प्राप्त की, परन्तु जब पैतृक सम्पत्ति विभाजित होती है और जब कुछ ही वर्षो मे जातिभेद घुलमिल कर समाप्त हो जाते है तब पारिवारिक भावना कहॉ मिल सकती है? उस देश की प्रथाओ मे क्या शक्ति हो सकती है, जिसमे परिवर्तन आ गया है और जिसमे निरन्तर परिवर्तन होता जा रहा है, जिसमे क्रूरता के प्रत्येक कार्य का पहले से ही दृष्टात और प्रत्येक अपराध का उदाहरण रहा है, जिसमे कोई भी वस्तु इतनी पुरानी नही है कि उसकी प्राचीनता उसके विनाश को रोक सके, और न कोई ऐसी विलक्षण वस्तु है जिसकी विशेषता ऐसे परिवर्तन को रोक सके? इतने कोमल आचरणो से, जो बहुधा पूर्व मे ही आत्मसमर्पण कर देते हैं, किस प्रकार का प्रतिरोध किया जा सकता है? जनमत की भी उस समय क्या शक्ति है, जब बीस व्यक्ति भी सामान्य शृखला मे आबद्ध नहीं हैं, जब उस मत का प्रतिनिधित्व करने या उसे क्रियाशील बना देने की शक्ति न किसी मनुष्य मे, न किसी परिवार मे, न किसी वैधानिक निगम मे, न किसी वर्ग मे और न किसी स्वतत्र सस्था से रहती है और जब प्रत्येक नागरिक के पास उसके समान रूप से निर्बल, समान रूप से गरीब और समान रूप से एकाकी होने से सरकार की सघटित शक्ति का विरोध करने के लिए सिवाय व्यक्तिगत अक्षमता के कुछ भी नहीं है?

फ्रास के ऐतिहासिक अभिलेखो मे उस परिस्थिति के समान, जो उस समय उस पर लादी गयी थी, अन्य कोई उदाहरण देखने को नहीं मिलता, परन्तु उसे अधिक चतुरता से उस प्राचीन समय से और रोमन अत्याचार के उन भयानक युगो में आत्मसात् किया जा सकता है, जबकि लोगो के आचरण भ्रष्ट हो गये थे उनकी परम्पराऐ मृतप्राय हो गयी थी, उनकी प्रवृत्तियॉ समाप्त हो गयी थी उनकी धारणाऍ हिल उठी थीं और जब स्वतन्त्रता कानूनो से निष्कासित हो चुकी थी और उसे देश मे कोई आश्रय नहीं मिल सकता था जब नागरिको की किसी भॉति रक्षा नहीं हो सकती थी, जब नागरिक स्वय पहले की भॉति अपनी रक्षा नहीं कर सकते थे, जब मानव स्वभाव मनुष्य के हाथो खिलवाड हो गया था और राजाओ ने अपनी प्रजा के धैर्य को समाप्त करने के पूर्व ही नैसर्गिक उदारता का परित्याग कर दिया था। जो लोग हेनरी चतुर्थ या लुई १४ वें लुई की राजशाही को पुनर्जीवित करना चाहते है मेरे ख्याल से वे

बौद्धिक अन्धता से पीडित हैं। जब मै यूरोप के विभिन्न राष्ट्रों की वर्तमान दशा पर विचार करता हूँ, तो मुझे विश्वास करना पड़ता है कि शीघ्र ही उन राष्ट्रो के पास इसके सिवाय और कोई विकल्प नहीं रह जायगा कि या तो वे प्रजातान्त्रिक स्वाधीनता अंगीकार कर लें या सीजर की निरकुशता को।

क्या यह बात विचारणीय नहीं है? यदि मनुष्य वस्तुत. इस निर्णय पर पहुँच जायें कि उन्हे पूर्णत स्वतत्र रहना है या पूर्णतः दास, उनके समस्त अधिकार समान हों या वे समस्त अधिकारो से वञ्चित रहे, समाज के नियम ऐसे हों जो धीरे-धीरे जनसमूह को अपने स्तर तक ऊँचा उठाने को विवश करे या सारे नागरिको को मानवता से नीचे गिरने दिया जाय, तो उससे क्या अनेक व्यक्तियो के सन्देहो का निराकरण नहीं हो पायेगा, अनेक व्यक्तियों की चेतना स्थिर नहीं हो जायेगी और समाज थोड़ी-सी कठिनाई के साथ महान त्याग करने के लिए तत्पर नहीं हो जायेगा? उस स्थिति मे लोकतान्त्रिक आचरणों और सस्थाओ के उत्तरोत्तर विकास को सर्वश्रेष्ठ न समझ कर स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखने का केवल साधन माना जाय और लोकतत्र की सरकार को पसन्द किये बिना भी, उसे अत्यन्त व्यावहारिक समझकर अगीकृत किया जा सकता है और समाज की वर्तमान बुराइयों को दूर करने का सर्वोत्तम साधन यही है।

लोगो को सरकार मे भाग लेने के लिए बाध्य किया जाय, यह कठिन कार्य है, परन्तु उन्हे अनुभव प्रदान करना और उन भावनाओ से, जो सरकार को व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए आवश्यक हैं, प्रेरित करना और भी कठिन है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि लोकतत्र की प्रवृत्तिया परिवर्तनशील हैं, उसके साधन अपरिमार्जित हैं, उसके कानून अपरिपूर्ण हैं, परन्तु यदि ऐसा सत्य है कि प्रजातत्र शासन और एक व्यक्ति के शासन के बीच शीघ्र कोई समुचित माध्यम नही निकल पाता, तो क्या हम एक व्यक्ति के अधिराज्य के सम्मुख स्वेच्छा से आत्मसमर्पण करने के बजाय प्रजातत्र की ओर उन्मुख नहीं होते? और यदि पूर्ण समानता हमारे भाग्य मे लिखी है तो निरकुश शासक के स्थान पर स्वतत्र सस्थाओ द्वारा समानता प्राप्त करना क्या हमारे लिए उचित नहीं है?

इस पुस्तक को पढने के पश्चात् जो लोग यह कल्पना करे कि इस पुस्तक के लिखने का मेरा उद्देश्य यह प्रस्तावित करने का है कि आग्ल-अमरीकियो के कानून और आचरण समस्त प्रजातान्त्रिक समुदायों के लिए अनुकरणीय हैं, वे महान गलती करेंगे। उन्हे मेरे विचार के स्वरूप के बजाय तत्व की ओर ध्यान देना चाहिए। मेरा उद्देश्य अमरीका के उदाहरण द्वारा यह दर्शाने

का है कि कानून और विशेषत: आचरण प्रजातान्त्रिक समाज को स्वतंत्र बनाये रख सकते हैं, परन्तु मेरा यह मत नहीं है कि अमरीकी लोकतन्त्र के उदाहरण का अनुकरण करना चाहिए और उन माध्यमों की नकल करनी चाहिए जो उसने उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अपना रखे हैं, क्योंकि मै देश की प्रकृति और उसकी पूर्ववर्ती राजनीतिक स्थिति वहाँ के राजनीतिक सघटनों पर जो प्रभाव डालती है, उससे भली प्रकार परिचित हूँ। यदि सारे विश्व में स्वाधीनता समान लक्षणों के साथ स्थित रही, तो मै इसे मानवता के लिए बडा दुर्भाग्य समझूगा।

मेरा ऐसा मत है कि यदि फ्रास मे लोकतान्त्रिक सस्थाओं का क्रमिक विकास करने मे हम सफल नहीं हुए, यदि हम समस्त नागरिकों मे उन विचारों और भावों को, जो पहले उन्हें स्वतत्रता के लिए तैयार करते हैं और तत्पश्चात् उनका उपयोग करने की अनुमति देते हैं, जगाने मे सफल नहीं हुए, तो इसका परिणाम यह होगा कि किसी प्रकार की स्वतत्रता न रहेगी, न मध्यम वर्ग या कुलीन लोगों के लिए और न गरीबों या अमीरों के लिए, अपितु सर्वत्र समान रूप से निरंकुशता का प्रभाव छा जायेगा और मेरा अनुमान है कि यदि समय पर बहुमत का शान्तिपूर्ण राज्य हमारे बीच स्थापित नहीं हुआ तो किसी-न-किसी दिन हम पर एक व्यक्ति की अपरिमित शक्ति का प्रभुत्व छा जायेगा।

१५ – संयुक्त-राज्य अमेरिका की भावी सम्भावनाएँ

उनके मकान एक घने समूह के रूप मे दृष्टिगोच्चर होते हैं, वह सार्वजनिक चौराहो को स्पष्टता से नहीं देख सकता, और बडे मार्गो को बडी कठिनाई से देख पाता है, परन्तु नगर की चहारदीवारी को सहज ही देख लेता है और उसे प्रथम बार सारे नगर का आकार सम्पूर्ण रूप मे दिखायी पडता है। ठीक उसी प्रकार मेरी दृष्टि मे ब्रिटिश जाति के भावी प्रारब्ध का स्वरूप है, जिसके विस्तृत चित्र की सूक्ष्मताएँ छाया मे विलीन हो जाती है, परन्तु सम्पूर्ण विषय का एक स्पष्ट चित्र मेरे सामने प्रस्तुत हो जाता है।

संयुक्त-राज्य अमरीका के पास इस समय जो भूमि-क्षेत्र है या उसके अधिकार मे है, वह निवास-योग्य पृथ्वी के कुल भाग का बीसवॉ भाग है, परन्तु यह नहीं समझ लेना चाहिए कि सीमाओ का जितना विस्तार अभी है, वही आंग्ल-अमरीकियो की जाति के लिए चिरस्थायी रहेगा। वस्तुत. उनमे पहले से ही विस्तार हो चुका है।

एक समय था, जब हम भी अमरीकी जगलो मे महान् फ्रास राष्ट्र की स्थापना, नयी दुनिया के भाग्य पर पडने वाले अग्रेजो के प्रभाव को सतुलित करने के लिए कर सकते थे। पहले उत्तरी अमरीका मे फ्रास का भूमि-क्षेत्र था, जिसका विस्तार लगभग सारे यूरोप के बराबर था, महाद्वीप की तीन नदियॉ उसके अधिराज्य मे बहती थीं, रेड इण्डियन आदिवासी सेंट लारेन्स के उद्गम और मिस्सीसीपी नदी के डेल्टा के बीच बसे हुए थे, उस जाति को हमारी भाषा के सिवाय और कोई भाषा समझ मे नहीं आती थी, उस विस्तृत भूखण्ड पर बसे सारे यूरोपीय उपनिवेशो पर हमारे देश की परम्पराओ की छाप अंकित थी। लुई बर्ग, मोंटमोरेंसी, ड्यूक्वेसनी, सेण्ट लुई, विनसेन्स, न्यूओरलियन्स (ऐसे नाम थे उनके) फ्रास के प्यारे शब्द थे और हमारे कानो को प्रिय थे।

परन्तु एक विशिष्ट घटना-चक्र ने, जिसका ब्योरा देना कठिन होगा, हमे इस महान् उत्तराधिकार से वचित कर दिया। जहॉ भी फ्रासीसी उत्प्रवासियो की सख्या कम हुई, वहॉ पूर्णरूपेण उपनिवेश न स्थापित होने से उनका लोप हो चुका है। शेष फ्रासीसी देश के एक छोटे भाग पर बसे हुए हैं और अब वे अन्य कानूनो के अधीन है। लोअर कनाडा मे, बसे ४००,००० फ्रासीसी वर्तमान समय मे उस पुराने राष्ट्र के अवशेष मात्र हैं, जो नये नये लोगो के बीच विलीन हो चुका है। अब उनके चारो ओर विदेशी जन-सख्या निरन्तर बढती जारही है, जो पहले से ही देश के भूतपूर्व नियन्ताओ मे घुलमिल चुकी है और नगरो मे उनकी ही प्रमुखता है। ये ही विदेशी उनकी भाषा को बिगाड रहे है।

यह जनसख्या सयुक्त-राज्य अमरीका की जनसख्या से मिलती-जुलती है। इसलिए मै सचमुच इस तथ्य पर बल देता हूँ कि ब्रिटिश जाति सघ की सीमाओ मे परिसीमित नही है, क्योकि वह पहले से ही पूर्वोत्तर दिशा मे अपना फैलाव कर चुकी है। पश्चिमोत्तर मे कुछ नगण्य रूसी उपनिवेशों के सिवाय और कुछ नही है, परन्तु दक्षिण-पश्चिम मे मेक्सिको आग्ल-अमरीकियो के आगे एक दीवार जैसा है। सच पूछा जाय तो स्पेनियार्डस और आग्ल-अमरीकी—ये ऐसी दो जातियाँ है जो नयी दुनिया के आधिपत्य का बँटवारा किये हुए है। उनके मध्य विभाजन की सीमाएँ सधि द्वारा निश्चित हुई है, यद्यपि सन्धि की शर्ते आग्ल-अमरीकियो के पक्ष मे है, मुझे इस बात मे किंचित् भी सन्देह नही है कि वे शीघ्र ही इसका उल्लघन करेगे। वे बडे प्रान्त, जो सघ की सीमाओ से परे मैक्सिको की ओर फैले हुए है, वहाँ आज भी निवासियो का अभाव है। सयुक्त-राज्य अमरीका के निवासी इन एकान्त भू-क्षेत्रो मे अधिकृत लोगो के बसने के पहले ही बस जायँगे। वे भूमि पर अधिकार कर वहा सामाजिक सस्थाओ की स्थापना कर लेगे, ताकि जब अन्त मे कानून से अधिकृत व्यक्ति आयेगा, तो पायेगा कि जगलो मे खेती हो चुकी है और आगन्तुक लोग उसके पैतृक भूखण्ड पर चुपचाप बस चुके है।

नयी दुनिया के भू-क्षेत्र का स्वामित्व वहाँ सर्वप्रथम बसने वालो का है, फिर भी ये भू-क्षेत्र उनके लिए प्राकृतिक पारितोषिक है, जो वहाँ पहुँचने मे अग्रणी रहे। यहाँ तक कि उन देशो को भी, जहाँ पहले ही लोग बस चुके है, इस हमले से सुरक्षित रहने के लिए कुछ कठिनाई का सामना करना पडेगा। मै प्रकारान्तर से पहले ही उल्लेख कर चुका हूँ कि टेक्सास प्रान्त मे क्या हो रहा है। सयुक्त-राज्य अमरीका के निवासी निरतर टेक्सास मे जाकर बसने लगे है, जहाँ वे भूमि खरीद लेते है और यद्यपि वे देश के कानूनो का पालन करते है, तथापि धीरे-धीरे वे वहाँ अपनी भाषा और आचरणो का साम्राज्य स्थापित कर रहे है। टेक्सास प्रान्त अभी तक मेक्सिको के अधिराज्यो का भाग है परन्तु शीघ्र ही वहाँ कोई मैक्सिको-निवासी दिखाई नहीं पडेगा। जहाँ कहीं भी आग्ल-अमरीकी अपने से भिन्न मूल के निवासियों के सम्पर्क मे आये, वहाँ ऐसा ही हुआ।

उसे अपने मार्ग मे घनी बस्तियों से सामना नहीं पडता, जिससे उसकी प्रगति मे बाधा होती है, वह निश्चय ही अविराम गति मे आगे बढती रहेगी। सन्धियों द्वारा जो सीमाएँ निर्धारित हैं, वे भी उसके मार्ग को नहीं रोक सकेगी, बल्कि हर क्षेत्र मे वह इन काल्पनिक सीमाओ को पार कर लेगी।

नयी दुनिया मे ब्रिटिश जाति की भौगोलिक परिस्थिति उसकी शीघ्रगामी वृद्धि के लिए विशेषरूप से अनुकूल है। उसकी उत्तरी सीमाओं से ऊपर ध्रुव का विस्तृत बर्फीला क्षेत्र फैला हुआ है और उसकी दक्षिणी सीमा से कुछ डिग्री नीचे विषुवत-रेखा की उष्ण जलवायु का प्रदेश है, इसलिए आंग्ल-अमरीकी महाद्वीप के अत्यन्त समशीतोष्ण और निवास योग्य क्षेत्र में पड़ गये है।

सामान्य रूप से माना जाता है कि सयुक्त-राज्य अमरीका की जनसख्या की असाधारण वृद्धि स्वतन्त्रता के घोषणा-पत्र के उत्तर काल मे हुई है, परन्तु ऐसा समझना गलत है कि औपनिवेशिक पद्धति के अन्तर्गत जनसख्या की वृद्धि उतनी ही शीघ्रता से हुई, जितनी कि वर्तमानकाल मे, अर्थात्—करीब बाइस वर्षों मे वह द्विगुणित हो गयी, परन्तु यह अनुपात, जो आज लाखों के लिए निर्धारित किया जाता है, उस समय हजारो पर लागू होता था और यही तथ्य, जो एक शताब्दी पूर्व शायद ही किसी के ध्यान मे आया था, आज प्रत्येक निरीक्षक को स्पष्टतः दिखलायी पडता है।

सम्राट पर आश्रित कनाडा के अंग्रेजों की वृद्धि और विस्तार, जो रिपब्लिकन सरकार के अधीन हैं, सयुक्त-राज्य अमरीका मे बसने वाले ब्रिटिश लोगो की भाँति ही शीघ्रता से हुआ था। यहाँ तक कि स्वातन्त्र्य-सग्राम के दिनो मे भी, जो लगातार आठ वर्ष तक चलता रहा, बिना किसी प्रकार की बाधा के उनकी निरन्तर वृद्धि होती रही। यद्यपि इस समय शक्तिशाली इण्डियन जातियो ने पश्चिमी सीमाओ पर बसे हुए अंग्रेजो से मित्रता बनाये रखी थी, फिर भी पश्चिम की ओर बढते हुए प्रवास को कभी नहीं रोका गया। जब कि शत्रुओं ने अतलान्तिक के तटों को उजाड कर दिया था, उस समय केण्टुकी, पेन्सीलवानिया के पश्चिमी भाग, वरमाट के प्रान्त और मेन के राज्य निवासियो द्वारा भर रहे थे। युद्धोत्तर काल की अव्यवस्थित परिस्थिति भी न तो जनसख्या की वृद्धि को रोक सकी और न उजाड प्रदेशो मे उसके विस्तार को। अतः कानूनो की विभिन्नता, शान्ति और युद्ध, व्यवस्था या अराजकता की विभिन्न परिस्थितियो ने आंग्ल-अमरीकियो की निरन्तर वृद्धि पर प्रत्यक्ष कुछ भी प्रभाव नहीं डाला। यह तथ्य

सरलता से समझा जा सकता है, क्योकि इतने विस्तृत भूखण्ड के सारे भाग पर साथ-साथ प्रभाव डालने के लिए कोई भी कारण पर्याप्त नही है। देश का एक भाग हमेशा दूसरे भाग को आक्रान्त करने वाली आपदाओ से बचाने के लिए आश्रय प्रदान करता है ओर आपदा चाहे कितनी महान् हो, किन्तु उपलब्ध प्रतिकार उससे भी महान् है।

अतः इस प्रकार का अनुमान लगाना कि नयी दुनिया मे ब्रिटिश जाति की भावनाओ पर अकुश लगाया जा सकता है, उचित नहीं है। सघ का विभाजन और विरोध, जो तत्पश्चात् उत्पन्न हो सकते है और लोकतान्त्रिक सस्थाओं की समाप्ति और निरकुश सरकार, जो उनकी उत्तराधिकारिणी हो सकती है, इस प्रकार की भावना को रोक सकती हैं, परन्तु वे लोगों को अन्ततः अपने भाग्यो की सिद्धि प्राप्त करने से नहीं रोक सकते। इस पृथ्वी पर कोई भी शक्ति उत्प्रवासियो को उस उर्वर भूखण्ड की ओर आकर्षित होने से नहीं रोक सकती जो सारे उद्योगों के लिए साधन हैं और समस्त अभावों को दूर करने के लिए विभिन्न मार्ग निर्देशित करते हैं। भावी घटनाए चाहे जो हो, वे अमरीकियो को उनकी जलवायु या उनके भीतरी समुद्र, उनकी महान नदियों या उनके प्रचुर क्षेत्रों से वचित नही कर सकती। न निकृष्ट कानून, क्रान्तियॉ और अराजकता ही समृद्धि के प्रति प्रेम और साहसपूर्ण कार्य करने की भावना को, जो उनकी जाति के प्रमुख और विशिष्ट लक्षण हैं, समाप्त कर सकते हैं, न उस ज्ञान को पूर्णतः नष्ट करने में समर्थ हैं जो उनका मार्गदर्शन करता है।

इस प्रकार अनिश्चित भविष्य के बीच कम-से-एक घटना सुनिश्चित है। एक समय ऐसा भी होगा, जिसे निकट भी कहा जा सकता है, क्योंकि हम राष्ट्र के समूचे जीवन पर विचार व्यक्त कर रहे हैं। जब अकेले अमरीकी ध्रुव प्रदेशो और उष्ण कटिबन्धों के मध्य, अतलान्तिक महासागर से लेकर प्रशान्त महासागर तक फैले हुए विस्तृत भूखण्ड पर अपना आधिपत्य कर लेगे। आग्ल-अमरीकियो के अधिकार मे कदाचित् जो भूमि-क्षेत्र होगा, उसका विस्तार यूरोप के तीन चौथाई के बराबर होगा।

सर्वोपरि सघ की जलवायु यूरोप से अच्छी है, और उसके प्राकृतिक लाभ भी बहुत अधिक हैं। इसलिए यह स्पष्ट है कि उसकी जनसख्या भविष्य मे किसी-न-किसी दिन हमारी जनसख्या के अनुपात मे हो जायगी। यूरोप मे, जो इतने अधिक राष्ट्रो मे विभाजित है, और जो मध्य युग के बर्बर आचरणो से उत्पन्न निरन्तर युद्धो से विनष्ट हो चुका है, आज भी एक वर्ग लीग मे ४१० व्यक्ति निवास

करते है। तब कौन-सा कारण है जो सयुक्त-राज्य अमरीका को किसी समय जन-सख्या मे वृद्धि करने से रोक सकता है?

जब अमरीका मे ब्रिटिश जाति की विभिन्न परिस्थितियाँ समान भौतिक स्वरूप नहीं प्रस्तुत कर सकेगी, उसके पूर्व अनेक युग व्यतीत हो जायेंगे और उस काल की, जब परिस्थितियों की स्थायी समानता नयी दुनिया में स्थापित हो सकती है, भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। शान्ति या युद्ध से, स्वतत्रता या दमन से, समृद्धि या अभाव से महान् आग्ल-अमरीकी परिवार के विभिन्न वशजो के भाग्यो के बीच कितनी ही विभिन्नताएँ उत्पन्न क्यो न हो, वे सब कम-से-कम समान सामाजिक स्थिति को और उस स्थिति को और उस स्थिति मे उत्पन्न समान रीति-रिवाजो और विचारो को सामान्य रूप से बनाये रखेगे।

मध्य युग मे धर्म का बन्धन ही सभ्यता के अन्तर्गत यूरोप की विभिन्न जातियो को एक सूत्र मे बाँध रखने के लिए पर्याप्त रूप से शक्तिशाली था। नयी दुनिया के ब्रिटिश लोगो के पास अन्य इसी प्रकार के हजारो बन्धन हैं—और वे उस काल मे रह रहे है जब समानता की प्रवृत्ति मानव जाति मे व्यापक रूप से देखने मे आती है। मध्ययुग का समय ऐसा था, जब प्रत्येक वस्तु विशृखलित थी, जब प्रत्येक समुदाय, प्रत्येक प्रान्त, प्रत्येक नगर और प्रत्येक परिवार की विशिष्ट प्रवृत्ति अपने व्यक्तित्व को सशक्त बनाने की थी, परन्तु इस समय इसके ठीक विपरीत प्रवृत्ति काम कर रही है और राष्ट्र एकता की ओर अग्रसर होते दिखायी दे रहे हैं। बौद्धिक ससर्ग के हमारे साधन पृथ्वी के दूरस्थ भागो को सयुक्त करते है और मनुष्य एक दूसरे से अपरिचित या विश्व के किसी भाग मे क्या घटित हो रहा है, इससे अनभिज्ञ नहीं रह सकते। परिणामत इस समय यूरोपनिवासियो और नयी दुनिया मे रहने वाले उनके वशजो मे बहुत कम विभिन्नता देखने को मिलती है, अपेक्षा उस विभिन्नता के जो तेरहवीं शताब्दी मे कतिपय नगरो मे, जो नदी द्वारा विभाजित थे, देखने को मिलती थी। बावजूद इसके आज उनके बीच एक महासागर स्थित है। यदि मेल-मिलाप की यह प्रवृत्ति विदेशी राष्ट्रो को एक दूसरे के सन्निकट लाती है, तो निश्चय ही वह एक समाज के वशजो को परस्पर विरुद्ध होने से रोकेगी।

इसलिए एक समय आयेगा जब पन्द्रह करोड मनुष्य उत्तरी अमरीका मे समान परिस्थिति मे निवास करेगे। उनका मूल उद्भव एक होने से वे एक ही परिवार के सदस्य होगे। समान सभ्यता, समान भाषा, समान धर्म, समान

स्वभाव, समान आचरण को सुरक्षित रखेंगे और एक ही स्वरूप के अन्तर्गत प्रचारित समान धारणाओ से ओतप्रोत रहेंगे। शेष सभी कुछ अनिश्चित है, परन्तु यह निश्चित है, यह तथ्य विश्व के लिए नया है और यह एक ऐसा तथ्य है, जिसे कल्पना आसानी से ग्रहण नहीं कर सकती।

इस समय विश्व मे दो महान राष्ट्र हैं, जिनका जन्म दो विभिन्न बिन्दुओ से हुआ है, परन्तु वे एक लक्ष्य की ओर उन्मुख प्रतीत होते है। प्रकारान्तर से मै उल्लेख कर चुका हूं, वे दोनो है रूसी और अमरीकी। दोनों की वृद्धि अज्ञात रूप से हुई है और जब मानव जाति का ध्यान कही अन्यत्र केन्द्रित था, तब उन्होंने एकाएक राष्ट्रो की अग्र श्रेणी मे स्थान ग्रहण कर लिया और विश्व को उनके अस्तित्व और उनकी महानता का ज्ञान एक ही साथ हुआ।

ऐसा प्रतीत होता है कि सारे राष्ट्र अपनी स्वाभाविक सीमाओं तक पहुँच चुके ह और अब उन्हे केवल अपनी शक्ति को बनाये रखना है, परन्तु इन दोनो राष्ट्रो का विकास अभी तक हो रहा है। अन्य राष्ट्रो की गति अवरुद्ध हो चुकी है या बडी कठिनता से वे आगे बढ पा रहे है, परन्तु ये अकेले बडी सुगमता और तीव्र गति से उस पथ की ओर अग्रसर हो रहे है, जिसकी कोई सीमा दिखायी नहीं पडती। अमरीकी उन बाधाओ से, जिसको प्रकृति ने उनके सामने प्रस्तुत किया है, सघर्ष कर रहे हैं, जब कि रूसियों को मनुष्यो के विरोध का सामना करना पड रहा है। अमरीकी असभ्यता और जगली जीवन से द्वन्द्व करता है जब कि रूसी को अपनी समस्त सेना के बल पर सभ्यता से सघर्ष करना पडता है। जबकि अमरीकी की विजय हल से हुई है, रूसी की तलवार से। एक आग्ल-अमरीकी अपने उद्देश्यो की पूर्ति के लिए व्यक्तिगत हितो पर विश्वास करता है और लोगो की अनिर्देशित शक्ति और सहज बुद्धि को स्वतत्रता से कार्य करने का अवसर प्रदान करता है। एक रूसी समाज की सारी शक्ति को एक व्यक्ति के हाथो मे केन्द्रित करता है। अमरीकी का मुख्य साधन स्वतत्रता है, जब कि रूसी की दासता। उनकी शुरुआत का बिन्दु भिन्न है और उनके मार्ग भी समान नहीं है—फिर भी उनमे से प्रत्येक यही समझता है कि वह आधी दुनिया के भाग्य का निर्देशन ईश्वर की इच्छा से करता है।

द्वितीय भाग : खण्ड १

१६ — अमरीकियों की दार्शनिक पद्धति

मेरी दृष्टि मे सभ्य जगत के किसी भी राष्ट्र मे दर्शन-शास्त्र पर इतना कम ध्यान नहीं दिया जाता, जितना सयुक्त-राज्य अमरीका मे। अमरीकियो का अपना कोई दार्शनिक सम्प्रदाय नही है और यूरोप मे जो दार्शनिक सम्प्रदाय प्रचलित हैं, उनकी वे किंचित् भी परवाह नहीं करते, यहॉ तक कि उनके वास्तविक नामो का भी उनको पता नहीं है। फिर भी, बड़ी सरलता से यह मालूम हो जाता है कि संयुक्त-राज्य अमरीका के प्रायः सभी निवासी अपनी बुद्धि का प्रयोग एक ही प्रकार करते हैं और एक ही प्रकार के नियमों से उस पर नियत्रण रखते हैं—अर्थात् नियमो की व्याख्या करने का वे कभी कष्ट नहीं करते, परन्तु फिर भी सारे समाज के लोग आचरण मे सामान्य दार्शनिक पद्धति को काम मे लाते हैं। रीति और स्वभाव, पारिवारिक नीतियो, विभिन्न सम्प्रदायो की विचारधाराओ और कुछ अशो मे राष्ट्रीय पूर्वाग्रहो के बन्धनों को तोडना, परम्परा को केवल ज्ञान के स्रोत के रूप मे और वर्तमान तथ्यो को भावी कार्यो को अच्छे ढंग से सम्पादित करने के लिए मार्गदर्शन के रूप में स्वीकार करना, अपने निमित्त केवल अपने भीतर विवेक के आधारभूत सिद्धान्त को ढूँढ़ना, साधनो से मोह रखे बिना लक्ष्य की ओर प्रवृत्त होना और रूप के माध्यम से तत्व की आकाक्षा करना—ये वे मुख्य लक्षण हैं, जिन्हे मैं अमरीकियों की दार्शनिक पद्धति पुकारता हूँ, परन्तु यदि मैं और अधिक सूक्ष्मता से विचार करूँ और इन लक्षणो मे से उस प्रमुख लक्षण को ढूँढने का प्रयत्न करूँ जिसमे शेष सारे लक्षण समा जाते हो, तो मुझे यह मालूम होगा कि मस्तिष्क के अधिकाश कार्यो मे प्रत्येक अमरीकी केवल अपनी बुद्धि से किये जाने वाले खुद से सम्बन्धित कार्य की ओर ही ध्यान दे पाता है।

अतः अमरीका उन देशो में से है, जहा डेसकार्ट के दर्शन-सिद्धान्तो का बहुत ही कम अध्ययन होता है, परन्तु उनका पालन सर्वश्रेष्ठ रीति से होता है। इसमें

आश्चर्य की कोई बात नहीं। अमरीकी डेसकार्ट की पुस्तकों का मनन नहीं करते, क्योंकि उनकी सामाजिक स्थिति ही ऐसी है कि परिकाल्पनिक अध्ययन मे उनकी प्रवृत्ति नहीं, परन्तु वे उनके सिद्धान्तों का अनुसरण करते हैं, क्योंकि वही सामाजिक स्थिति उनके मस्तिष्क को स्वभावत. उन सिद्धान्तो को अंगीकार करने के लिए प्रवृत्त करती है। लोकतान्त्रिक समाज को आन्दोलित करने वाले निरन्तर परिवर्तनो के बीच जब एक पीढ़ी को दूसरी पीढी से बाँधने वाला बन्धन शिथिल पड जाता है, तब प्रत्येक मनुष्य उस स्थिति मे शीघ्र ही अपने पूर्वजों की विचार-परम्परा को विस्मृत कर देता है या उनके प्रति कोई ध्यान नही देता। समाज की ऐसी स्थिति मे रहने वाले उस वर्ग की विचारधाराओं से अपने विश्वास अर्जित नहीं कर सकते, जिनसे वह स्वय सम्बन्धित है—अर्थात् कहने का तात्पर्य यह है कि पहले की तरह किसी प्रकार के वर्ग नहीं रह जाते, या वे वर्ग, जो अभी तक अस्तित्व मे है, वे ऐसे गतिशील तत्वो से निर्मित होते हैं कि समाज अपने सदस्यो पर कभी वास्तविक नियन्त्रण नहीं रख सकता। किसी व्यक्ति की बौद्धिकता पर किसी दूसरे व्यक्ति की बौद्धिकता का जो प्रभाव पड सकता है, उसका जहाँ तक प्रश्न है, वह उस देश मे आवश्यक रूप से बहुत ही सीमित होगी, जहाँ नागरिकों को एक समान स्तर पर रखा जाता है और जहाँ एक दूसरे को निकट से देखने का अवसर मिलता है और जहाँ उन्हे निरन्तर सत्य के स्पष्टतम और घनिष्ठतम साधन मान लेने के लिए अपने विवेक का ही सहारा लेना पडता है, क्योंकि उनमें से किसी मे भी निर्विवाद महानता अथवा उच्चता के चिन्ह नहीं दिखायी देते। किसी भी व्यक्ति मे जो विश्वास रहता है, केवल वही नष्ट नहीं होता, बल्कि किसी भी व्यक्ति के अधिकार मे विश्वास कर लेने की प्रवृत्ति भी नष्ट हो जाती है। हर व्यक्ति अपने भीतर ही अपने को बन्द कर लेता है और विश्व को उसी दृष्टिकोण से देखने लगता है।

अमरीकियो मे यह प्रवृत्ति देखने को मिलती है कि वे अकेले अपने मे ही अपने निर्णय का मापदण्ड निर्धारित कर लेते हैं, इससे मस्तिष्क की अन्य प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। यथा, जब वे देखते हैं कि उन्होंने बिना सहायता के व्यावहारिक जीवन मे पैदा होने वाली सभी छोटी-मोटी कठिनाइयों को पार कर लेने मे सफलता प्राप्त कर ली है, तो वे शीघ्र ही इस परिणाम पर पहुँच जाते हैं कि विश्व मे प्रत्येक वस्तु की व्याख्या की जा सकती है और ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जो समझ की सीमा से बाहर हो। इस प्रकार जिस चीज को वे नहीं समझ सकते, उसको वे मानते ही नहीं, जिसके परिणामस्वरूप प्रत्येक

असाधारण वस्तु में उनका तनिक भी विश्वास नहीं रह जाता और प्रत्येक अलौकिक वस्तु के प्रति उनमें एक अजेय कुरुचि उत्पन्न हो जाती है। चूँकि वे स्वयं अपने ही प्रमाण पर विश्वास करने के अभ्यस्त होते हैं, इसलिए जो वस्तु उनका ध्यान आकर्षित करती है, उसकी छानबीन वे अत्यधिक स्पष्टता से करना पसन्द करते हैं। इसलिए वे उसे ढँके रहने वाले समस्त आवरणों को यथासम्भव अधिकाधिक उतार फेंकते हैं और जो कोई वस्तु उन्हें उससे पृथक रखती है, उससे वे अपना पिण्ड छुड़ा लेते हैं तथा दृष्टि से ओझल करने वाली जो भी बाधाएँ होती हैं, उन्हें हटा देते हैं, जिससे वे उसे अधिक सन्निकटता से और उज्ज्वल रोशनी में देख सकें। इस मनोवृत्ति के कारण वे उन स्वरूपों की निन्दा करने लगते हैं जिन्हें वे अपने और सत्य के बीच रखा हुआ निरर्थक और असुविधाजनक समझते हैं। यही कारण है कि अमरीकियों ने अपनी दार्शनिक पद्धति को पुस्तकों से न प्राप्त करके उसे अपने अनुभवों से अर्जित किया है। यूरोप में जो कुछ घटित हुआ है उसके सम्बन्ध में भी यही बात कही जा सकती है। यूरोप में जिस अनुपात में समाज की स्थिति अधिक समानता की ओर उन्मुख हुई और मनुष्यों में अधिक समानता दिखायी देने लगी, उस अनुपात में वहाँ भी यही पद्धति स्थापित हुई और इसी पद्धति ने लोकप्रियता हासिल की।

प्रहार कर सकता है और जिसका न कोई बचाव करता है। अमरीकियो ने चूंकि ईसाई धर्म के मुख्य सिद्धान्तों को निर्विवाद अगीकार कर लिया है, इसलिए उस धर्म से उत्पन्न होने वाले और उससे सम्बद्ध अनेक नैतिक सत्यो को स्वीकार कर लेने के लिए वे बाध्य है। इसलिए व्यक्तिगत विश्लेषण की गतिविधि सकुचित सीमाओं मे बॅधी हुई है और अनेक महत्वपूर्ण मानवीय विचारधाराओं को उसके प्रभावो से अलग रखा जाता है।

दूसरी परिस्थिति, जिसका मै प्रकारान्तर से उल्लेख कर चुका हूॅ, यह है कि अमरीकियों की सामाजिक परिस्थिति और विधान लोकतान्त्रिक है, परन्तु उनके यहॉ लोकतान्त्रिक क्रान्ति कभी नहीं हुई। जब वे आये तो उस भूमि की हालत, जो आज उनके अधिकार मे है, लगभग वही थी जो आज हम देखते हैं और इस बात का महत्त्व बहुत अधिक है।

ऐसी क्रान्तियाँ नहीं होतीं जो विद्यमान विश्वासों को हिला नहीं देतीं, जो शासन की शक्ति को क्षीण नहीं करतीं और जो सामान्य रूप से स्वीकृत विचारों के सम्बन्ध मे शकाऍ उत्पन्न नहीं करतीं। अतः समस्त क्रान्तियो का न्यूनाधिक रूप से परिणाम यही होता है कि मनुष्य स्वय के नेतृत्व के सामने झुक जाते हैं और प्रत्येक मनुष्य की बुद्धि के सामने कल्पना का शून्य और प्रायः असीमित क्षेत्र खुल जाता है। जब पुराने समाज का निर्माण करने वाले विभिन्न वर्गो के दीर्घकालीन सघर्ष के बाद स्थितियॉ समान हो जाती है तब ईर्ष्या, घृणा, अनुदारता, अहकार और अतिरजित आत्म-विश्वास मानव-हृदय पर अधिकार कर लेते हैं और कुछ दिनों के लिए अपने प्रभुत्व को उसमे आरोपित कर देते हैं। यह स्थिति स्वय समानता से स्वतत्र होकर मनुष्यों को विभाजित करने मे सशक्त रूप से प्रवृत्त होती है और पारस्परिक निर्णय मे अविश्वास की भावना को बढावा देती है और उसी से प्रेरित होकर लोग सत्य के प्रकाश को अन्यत्र कही नहीं, अपने मे ही ढूँढने लगते हैं। तब प्रत्येक व्यक्ति स्वय ही अपना यथेष्ट मार्गदर्शक बनने का प्रयत्न करता है और समस्त विषयो के सम्बन्ध मे निजी मत रखने की गर्वोक्ति करने लगता है। अब मनुष्य विचारो से नही, परन्तु हितों से सामीप्य मे बॅधते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि, जैसे मानवीय विचारधाराऍ एक प्रकार के ज्ञान के धूल मे परिणत होकर हर स्थान पर बिखर गयी है, जिसे एक स्थान पर बटोरना कठिन है और जिसे एक स्थान पर सटाकर रखना दुर्लभ है।

इस प्रकार बुद्धि की वह स्वतत्रता, जिसके अस्तित्व की कल्पना समानता द्वारा की जाती है, इतनी महान कभी नही रहती और न इतनी विपुल प्रतीत होती है, जैसी कि वह उस समय प्रतीत होती है, जब समानता अपनी स्थापना का कार्य प्रारम्भ करती है और जैसी कि वह उस कष्ट-प्रद श्रम की अवधि मे प्रतीत होती है, जिसके द्वारा उसकी स्थापना की जाती है। अतः जो बौद्धिक स्वतत्रता समानता द्वारा प्रतिष्ठित की जाती है, उसमे और क्रान्ति द्वारा उत्पन्न होने वाली अराजकता मे अत्यन्त सावधानी के साथ भेद किया जाना चाहिए। इन दोनो मे से प्रत्येक पर अलग-अलग रूप से विचार करना चाहिए, ताकि भविष्य की विपुल आशाओ और आशकाओं के सम्बध में अतिरजित कल्पना न की जा सके।

मेरी धारणा है कि जो मनुष्य समाज के नये आदर्शों के अन्तर्गत रहेंगे, वे बहुधा अपने व्यक्तिगत विवेक का प्रयोग करेगे, पन्रतु वे प्रायः इसका दुरुपयोग करेगे, ऐसा तो मै सोच नहीं सकता। यह एक ऐसा कारण है जो सभी लोक-तात्रिक राष्ट्रो के सम्बन्ध मे अधिक सामान्य रूप से लागू होता है और अन्ततो-गत्वा व्यक्तिगत कल्पना की स्वतत्रता को निश्चित और कभी-कभी सकुचित सीमाओ के भीतर सीमित कर देने की आवश्यकता पड़ेगी। विभिन्न युगो में अन्धविश्वास न्यूनाधिक रूप से प्रचलित रहता है, उसका उदय विभिन्न रूपो में होता है। वह अपना विषय और अपना रूप बदल सकता है, किन्तु किसी भी दशा मे उसका अस्तित्व नही मिटेगा। दूसरे शब्दो मे, यह कहा जा सकता है कि मनुष्य विश्वास के आधार पर तथा बिना वादविवाद के कुछ विचारो को ग्रहण करना कभी नहीं छोडेगा। यदि हरेक व्यक्ति अपनी ही राय कायम करने लगेगा और केवल अपने द्वारा बनाये गये एकाकी मार्गों से सत्य की खोज करने लगेगा, तो उसका परिणाम यही होगा कि कभी किसी भी सामान्य विश्वास पर बहुसख्यक मनुष्य एक मत नहीं होंगे, परन्तु यह बात तो स्पष्ट है कि बिना सामान्य विश्वास के कोई भी समाज विकास नही कर सकता, बल्कि कहना यह चाहिए कि किसी भी समाज का अस्तित्व नहीं रह सकता, क्योकि बिना सामान्य विचारो के सामान्य कार्रवाई नहीं हो सकती और बिना सामान्य कार्रवाई के मनुष्य भले ही रह सकते हैं, परन्तु किसी भी सामाजिक सस्था का निर्माण नहीं हो सकता। समाज का अस्तित्व बनाये रखने के लिए और प्रबल कारणों से समाज की समृद्धि के लिए यह आवश्यक है कि सभी नागरिकों के मस्तिष्क कतिपय विशिष्ट विचारो से एकमत होकर एक साथ जुटे रहे और यह स्थिति उस समय तक नहीं हो

सकती जब तक कि उनमें से हरेक व्यक्ति कभी-कभी किसी सामान्य स्रोत मे अपनी राय कायम न करे और कतिपय बातो को पूर्ण निश्चित विश्वासो के आधार पर अगीकार करना स्वीकार न करे।

यदि मै अब मनुष्य की एकाकी स्थिति पर विचार करता हूँ तो मुझे यह ज्ञात होता है कि उसे अकेले रहने के लिए भी अन्धविश्वास उतना ही अनिवार्य है, जितना उसे हमजोलियो के साथ मिलकर कार्य करने के योग्य बनाने के लिए है। यदि मनुष्य को उन समस्त सत्यो को, जिन्हे वह प्रतिदिन व्यवहार मे लाता है, अपने लिए प्रदर्शित करने के लिए विवश किया जाय तो उसके इस कार्य का कभी अन्त नहीं होगा, उसके प्रारम्भिक प्रदर्शनो मे ही उसकी शक्ति का क्षय हो जायगा और वह कभी उनसे आगे नहीं बढ सकेगा। जीवन की लघुता के कारण न तो उसके पास समय है और बुद्धि के मर्यादित होने के कारण न उसमे ऐसी योग्यता है। अत. कार्य को पूरा करने के लिए उसे ऐसे अनेक तथ्यो और विचारो पर विश्वास कर लेना पडता है, जिनकी पुष्टि स्वय करने के लिए उनके पास न तो समय था और न शक्ति थी, किन्तु जिनका अनुसधान अधिक योग्यता वाले व्यक्तियो ने किया है अथवा जिन्हे ससार ने अगीकार कर लिया है। इस पूर्व प्रतिष्ठित आधार पर वह अपने लिए अपनी विचाराधाराओ का निर्माण करता है। वह स्वेच्छापूर्वक ऐसा नहीं करता, प्रत्युत उसे अपनी परिस्थितियो के कठोर नियमो से विवश होकर ऐसा करना पडता है। ससार मे इतने अधिक विषयो का कोई दार्शनिक नही है, किन्तु वह अन्य लोगो के विश्वास पर लाखो वस्तुओ पर विश्वास करता है और वह जितने सत्यो का निरूपण करता है, उससे बहुत अधिक और सत्यो की कल्पना कर लेता है।

यह आवश्यक ही नहीं, वाछनीय भी है। जो व्यक्ति प्रत्येक वस्तु की छानबीन का कार्य स्वय करता है, वह प्रत्येक वस्तु के लिए बहुत कम समय और बहुत कम ध्यान दे सकता है। इसका कार्य उसके मस्तिष्क को निरतर अशान्त बनाये रखेगा, जिसके फलस्वरूप वह किसी भी सत्य की गहराई मे नहीं पैठ सकेगा और न उसका मस्तिष्क किसी विश्वास को अच्छी तरह पकड सकेगा, उसकी बौद्धिकता शीघ्र ही शक्तिहीन हो जायगी। अत उसे माननीय विश्वास के विभिन्न पदार्थों मे से चुनाव करना चाहिए और बिना किसी विवाद के अनेक विचारधाराओ को मान लेना चाहिए, ताकि वह उन थोडे विषयो मे उचित रीति से खोज कर सके, जिन्हे वह अपनी खोज के लिए अलग रख देता है। यह सत्य है कि जो मनुष्य किसी

दूसरे व्यक्ति के कथन पर अपनी राय कायम करता है, वह अपने मस्तिष्क को दास बना देता है—परन्तु यह कल्याणकारी दासता है, जो उसे स्वतन्त्रता का सदुपयोग करने की स्वाधीनता प्रदान करती है।

इसलिए सभी परिस्थितियो मे नैतिक और बौद्धिक जगत के किसी-न-किसी भाग मे सत्ता का एक सिद्धान्त हमेशा आवश्यक रूप से उपस्थित होता है। उसका स्थान निश्चित नही होता, परन्तु उसका स्थान होता अवश्य है। व्यक्तिगत मस्तिष्को की स्वतन्त्रता अधिक हो सकती है या कम हो सकती है; परन्तु वह असीमित नहीं हो सकती। अतः प्रश्न इस तथ्य को जानने का नही हैं कि लोकतत्र के युगो मे बौद्धिक प्रभुत्व की स्थिति रहती है या नहीं, प्रत्युत केवल यह है कि उसका वास कहाँ है और वह कौन-सा मापदण्ड है, जिससे उसकी नाप-जोख करनी है।

मैने पूर्व अध्याय मे यह बताया है कि परिस्थितियों की समानता किस प्रकार मनुष्यो मे, अलौकिक के प्रति एक प्रकार की आन्तर्बौद्धिक अविश्वास जगाती है, और किस प्रकार उसके फलस्वरूप मानव बुद्धि के सम्बन्ध मे अत्यन्त उच्च और अतिशयोक्तिपूर्ण मत बनता है। यही कारण है कि वे मनुष्य, जो सामाजिक समानता के युग मे रहते हें, उस बौद्धिक प्रमुख को, जिसके सामने वे झुकते हैं, मानवता से परे या मानवता से ऊपर सफलतापूर्वक नही रख पाते। वे सामान्य रूप से सत्य के स्रोतो को अपने आप मे या अपने जैसे ही लोगो मे ढूंढते है। इससे यह बात पर्याप्त रूप से सिद्ध हो जायगी कि ऐसे कालो में कोई भी नया धर्म स्थापित नही हो सकता और ऐसे उद्देश्य की सारी योजनाएँ न केवल अपवित्र होगी, परन्तु हास्यास्पद और असगत भी होगी। यह भविष्यवाणी की जा सकती है कि लोकतान्त्रिक लोग धार्मिक मिशन मे सहज ही विश्वास नही करेगे और वे आधुनिक पैगम्बरो पर हँसेगे और अपने भीतर ही अपने विश्वास के मुख्य निर्णय की खोज करेगे। वे उसे अपने जैसे लोगो की सीमाओं से बाहर नही जाने देगे।

जब समाज की श्रेणियों मे असमानता रहती है और उस स्थिति मे जब व्यक्तियों मे भी समानता नही रहती, तब कुछ व्यक्तियो के पास उच्च बौद्धिकता ज्ञान और प्रकाश की शक्ति रहती है, जबकि अधिकाश लोग अज्ञान और पूर्वाग्रहो मे डूबे रहते है। इसलिए इन कुलीनवादी कालो मे रहने वाले लोग स्वाभाविक रूप से किसी उच्च व्यक्ति के या व्यक्तियों के किसी उच्च वर्ग के मानदण्ड से अपने विचारो का निर्माण करने के लिए प्रेरित होते है जबकि वे

यह मानने के लिए प्रस्तुत नहीं होते कि जनसमूह दोषातीत होता है अथवा वह कोई गलती नहीं कर सकता। समानता के युगों मे इससे विपरीत बात होती है। लोगों को ज्यो-ज्यों समान और एक-सी स्थिति के सामान्य स्तर के निकट लाया जाता है, त्यो-त्यो वे किसी विशेष व्यक्ति या व्यक्तियों के विशेष वर्ग के विचारों में निर्विवाद विश्वास कर लेने के लिए उद्यत नहीं होते, परन्तु समाज मे विश्वास करने की उनकी तत्परता बढ जाती है और मत सदा से अधिक विश्व का शासक मान लिया जाता है। न केवल सामान्य मत ऐसा मार्गदर्शक होता है, जिसे व्यक्तिगत निर्णय लोकतान्त्रिक समाज में बनाये रखता है, अपितु ऐसे समाज मे अन्य स्थानों की अपेक्षा उसकी शक्ति अनन्त रहती है। समानता के युगों मे सामान्य समरूपता के कारण मनुष्यों मे परस्पर विश्वास नहीं होता, परन्तु यही समरूपता जनता के निर्माण में असीम विश्वास उत्पन्न कर देती है, चूँकि उन सब के पास निर्णयों के समान साधन उपलब्ध हैं, इसलिए ऐसा सम्भव प्रतीत नहीं होता, परन्तु महत्तर बहुसख्या के पास ही होना चाहिए।

लोकतान्त्रिक देश का निवासी जब व्यक्तिगत रूप से अपनी तुलना अपने से सम्बन्धित सब लोगों के साथ करता है, तब वह गौरव से यह महसूस करता है कि वह उनमें से हर एक के बराबर है, परन्तु जब वह अपने साथियों के समष्टिगत रूप का पर्यवेक्षण और इतने विशाल जनसमूह के साथ अपनी तुलना करने लगता है तब उसी क्षण उसे अनुभव होता है कि वह तो एक तुच्छ और निर्बल प्राणी है—वही समानता जो उसे अपने साथियों मे से प्रत्येक से अलग स्वतन्त्रता प्रदान करती है, उसे बहुजन के प्रभाव के सामने अकेला और अरक्षित छोड देती हैं। इसलिए लोकतान्त्रिक समाज मे प्रजा की एकमात्र शक्ति होती है, जिसकी कल्पना कुलीनतान्त्रिक राष्ट्र मे नहीं कर सकते, क्योंकि वह कुछ निश्चित विचार-धाराओ के मानने के लिए अनुनय नहीं करती, परन्तु वह सब लोगो पर दबाव डालती है और एक प्रकार से प्रत्येक के विवेक के आधार पर सब के दिमागो के सम्मिलित विशाल दबाव से उनकी बुद्धि मे उन विचार-धाराओ को ठूँस देती है।

सयुक्त-राज्य अमरीका मे बहुमत व्यक्तियो के उपयोग के लिए अनेक पूर्व-निर्मित मत प्रदान करने का कार्य अपने हाथ मे लेता है और इस प्रकार व्यक्ति अपने मतों का निर्माण स्वय करने की आवश्यकता से मुक्त हो जाता है। वहाँ हरेक व्यक्ति दर्शन, नीति और राजनीति के अनेक सिद्धान्तो को समाज के विश्वास के आधार पर निर्विवाद रूप से स्वीकार कर लेता है। यदि हम बहुत

ही निकट से देखें तो यह दिखायी पड़ेगा कि वहाँ धर्म का प्रभाव सामान्य रूप से गृहीत मत के रूप में जितना है उससे बहुत कम प्रभाव ईश्वरीय सिद्धान्त के रूप में है।

अमरीकियों के राजनीतिक कानून ऐसे हैं कि बहुमत समाज पर सार्वभौम सत्ता के साथ शासन करता है और यह तथ्य मस्तिष्क पर बहुमत के स्वाभाविक अधिकार को बहुत अधिक बढ़ा देता है। मनुष्य में अपने ऊपर शासन करने वाले की बुद्धि की श्रेष्ठता को मान्यता देने से बढ़ कर अन्य कोई प्रवृत्ति दिखायी नहीं देती। निस्सन्देह संयुक्त-राज्य अमरीका में बहुमत की यह राजनीतिक सर्वशक्ति-सम्पन्नता उस प्रभाव में वृद्धि कर देती है, जो प्रभाव जनमत समाज के प्रत्येक सदस्य के मस्तिष्क पर इसके बिना डालता। किन्तु उस प्रभाव की नींव इस पर आधारित नहीं होती। इन आधारों की खोज उन लोकप्रिय संस्थाओं में, जिसका निर्माण उस परिस्थिति के अन्तर्गत रहने वाले लोग अपने आप कर सकते हैं, न करके समानता के सिद्धान्त में ही करनी चाहिए। राजा द्वारा शासित होने वाले लोकतान्त्रिक समाज में बहुसंख्यकों का बौद्धिक प्रभुत्व उन क्षेत्र के लोगों के बौद्धिक प्रभुत्व से सम्भवतः कम पूर्ण होगा, जहाँ शुद्ध लोकतंत्र प्रतिष्ठित है, किन्तु वह सदा अत्यन्त पूर्ण रहेगा और समानता के युगों में चाहे जैसे राजनीतिक कानूनों ने मनुष्यों पर शासन किया जाय, इस बात की पूर्व कल्पना की जा सकती है कि वहाँ जनमत में विश्वास एक प्रकार का धर्म बन जायेगा तथा बहुमत उसको आदेश देने वाला पैगम्बर होता है।

गये थे, छिन्न-भिन्न कर अधिकतम सख्या की सामान्य इच्छा से घनिष्ठतापूर्वक जकड जायगा। जो विभिन्न शक्तियॉ व्यक्तियो के मस्तिष्को की शक्ति को रोकती अथवा अवरुद्ध करती है, उन सभी के स्थान पर यदि प्रजातात्रिक राष्ट्र बहुमत की निरकुश सत्ता को स्थापित कर दें, तो इससे केवल बुराई का स्वरूप परिवर्तित हो जायगा। इससे मनुष्यो को स्वतत्र जीवन का साधन नही उपलब्ध होगा, उन्हे केवल दासता के एक नये स्वरूप का पता चलेगा। (और यह कोई सरल कार्य नही है।) मै इस कथन की पुनरावृत्ति बारबार नहीं कर सकता कि जो लोग विचार-स्वातत्र्य को एक पुनीत वस्तु मानते हैं और जो न केवल अत्याचारी से, अपितु अत्याचार से घृणा करते हैं, उनके लिए यह अत्यधिक विचार करने का विषय है। जहॉ तक मेरा सम्बन्ध है, जब मै सत्ता के मजबूत हाथो से जकडा हुआ अनुभव करता हूँ तब मै यह जानने की तनिक भी परवाह नहीं करता कि मेरा दमन कौन कर रहा है और केवल इस कारण भी जुए मे जुतने की मेरी प्रवृत्ति नही होती कि जुए को लाखों व्यक्तियो के हाथो ने पकड रखा है।

१७—धर्म पर प्रजातंत्र का प्रभाव

मनुष्य रूढिवादी विश्वास के विना काम नही चला सकते और यह अत्यन्त वाछनीय भी है कि इस प्रकार का अन्धविश्वास उन लोगो मे बना रहे। समस्त प्रकार के रूढिवादी विश्वासो मे से मुझे धर्मविषयक रूढिवादी विश्वास सर्वाधिक वाछनीय प्रतीत होता है और यह निष्कर्ष इस ससार के हितो की दृष्टि से भी एक स्पष्ट निष्कर्ष है। ऐसा कोई भी मानवीय कार्य नहीं है, चाहे वह कितना ही विशिष्ट क्यो न हो, जिसका उद्गम ईश्वर, मनुष्य जाति के साथ उसके सम्बन्ध, मनुष्यो की आत्मा के स्वरूप और अपने सह-प्राणियो के प्रति मनुष्यों के सम्बन्धो मे मनुष्यो द्वारा निर्मित किसी अत्यन्त सामान्य धारणा से न हुआ हो। न कोई वस्तु इन धारणाओ को ऐसा सामान्य स्रोत बनने से ही रोक सकती है, जिससे शेष समस्त धारणाएँ निसृत होती हैं। इसलिए मनुष्य ईश्वर के विषय मे, आत्मा के विषय मे, अपने रचयिता और अपने सहप्राणियो के प्रति अपने कर्तव्यो के विषय मे निश्चित विचारो को ग्रहण करने मे बहुत अधिक रुचि लेते हैं क्योकि इन प्राथमिक (मूल) सिद्धान्तो के विषय मे उत्पन्न होने

वाले सन्देह उनके समस्त कार्यों को संयोगाधीन बना देंगे और वे किसी-न-किसी रूप में अव्यवस्था और निष्क्रियता के अपराधी हो जायगे।

इसलिए यह एक ऐसा विषय है, जिस पर हरेक के लिए निश्चित धारणा बनाना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और दुःख की बात यह है कि यह एक ऐसा भी विषय है, जो हरेक के लिए कठिन है और कोई भी व्यक्ति स्वतंत्र होकर एकमात्र अपने तर्क की शक्ति से राय कायम नहीं कर सकता। इतने आवश्यक इन सत्यों की गहराई तक केवल वे मस्तिष्क ही पहुँच सकते हैं, जो जीवन की साधारण चिन्ताओं से पूर्णरूपेण मुक्त हों तथा जो मस्तिष्क गहराई तक पहुँचने वाले, श्रम एवं चिन्तन द्वारा प्रशिक्षित हों, भले ही ऐसा करने में उन्हें बहुत अधिक समय लगे तथा बहुत अधिक सावधानी से काम लेना पड़े। वास्तव में हम देखते हैं कि दार्शनिक लोग भी प्रायः अनिश्चितताओं से घिरे रहते हैं और हर कदम पर नैसर्गिक ज्योति, जो उनके पथ का मार्गदर्शन करती है, अधिक मंद और कम सुरक्षित होती जाती है। हम यह भी देखते हैं कि अपने समस्त प्रयत्नों के बावजूद वे अभी तक केवल कुछ परस्पर-विरोधी विचार ही ढूँढ़ पाये हैं, जिन पर हजारों वर्षों से मानव-मस्तिष्क आन्दोलित होता रहा है, किन्तु वह सत्य को कभी दृढ़तापूर्वक नहीं पकड़ सका अथवा उसकी त्रुटियों में भी नवीनता को नहीं प्राप्त कर सका। इस प्रकार के अध्ययन मनुष्यों की औसत योग्यता से बहुत अधिक ऊपर हैं और यदि मानव-जाति के बहुमत में ऐसी खोज की क्षमता हो भी, तो यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की खोजों के

उसका अध्ययन पहुँच के बाहर होता है। इसलिए ईश्वर और मानव-स्वभाव के सम्बन्ध में सामान्य विचार सभी अन्य विचारों से अलग होते हैं, जिन्हें निजी निर्णय की सहज क्रिया से मुक्त रखना सर्वाधिक उपयुक्त है और जिनमें प्रामाणिकता के एक सिद्धान्त को मान्य कर लेने में लाभ ही लाभ है तथा हानि तनिक भी नहीं।

धर्म का प्रथम उद्देश्य और उसके प्रमुख लाभों में से एक लाभ यह है कि वह इन मूलभूत प्रश्नों में प्रत्येक के लिए एक ऐसा हल प्रस्तुत करता है, जो स्वाभाविक रूप से समाज के जनसमूह के लिए स्पष्ट, सूक्ष्म, बोधगम्य और स्थायी होता है। कुछ ऐसे धर्म हैं, जो मिथ्या और अत्यन्त मूर्खतापूर्ण हैं, परन्तु यह दृढ़तापूर्वक कहा जा सकता है कि कोई भी धर्म, जो उस सीमा के अन्तर्गत रहता है, जिसका मैंने अभी वर्णन किया है और जो उसका अतिक्रमण करने का आडम्बर नहीं रचता, (जैसा कि अनेक धर्मों ने प्रत्येक दिशा में मानव-मस्तिष्क के स्वतंत्र क्रियाकलापों पर प्रतिबन्ध लगाने के उद्देश्य से प्रयत्न किया है) बुद्धि पर स्वस्थ नियंत्रण रखता है और इस बात को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि यदि वह परलोक में मनुष्यों की रक्षा नहीं करता, तो कम-से-कम इस संसार में उनकी प्रसन्नता और उनकी महानता के लिए अत्यन्त लाभदायक होता है। यह बात विशेषरूप से स्वतंत्र राष्ट्रों में रहने वाले लोगों के लिए लागू होती है। जब लोगों का धर्म नष्ट हो जाता है, तब सन्देह बुद्धि की उच्चतर शक्तियों को ग्रस्त कर लेता है और अन्य शक्तियाँ आंशिक रूप से क्षीण हो जाती हैं। प्रत्येक मनुष्य, उन विषयों के सम्बन्ध में, जो उसके सहभागियों और स्वयं उसके लिए अत्यन्त रुचिकर होते हैं, केवल भ्रमपूर्ण और परिवर्तनशील धारणाएँ बनाने का अभ्यस्त होता है। उसकी धारणाएँ अतर्कपूर्ण और सरलता से त्याज्य होती हैं और जब वह मनुष्य की भाग्य-सम्बन्धी कठिन समस्याओं का हल ढूँढते निराश हो जाता है, तब वह लज्जाजनक रूप से उसके सम्बन्ध में विचार करना ही छोड़ देता है। इस प्रकार की स्थिति आत्मा को दुर्बल बनाने, आत्मबल के स्रोतों को शिथिल करने और लोगों को दासता के लिए तैयार करने के सिवाय और कुछ नहीं कर सकती। इस स्थिति में केवल यही नहीं होता कि वे अपनी स्वतंत्रता को छीन लेने की अनुमति दे देते हैं, प्रत्युत वे बहुधा अपने आप उसे समर्पित कर देते हैं। राजनीति की भाँति ही जब धर्म में भी सत्ता का कोई सिद्धान्त नहीं रह जाता, तब मनुष्य इस असीमित स्वतंत्रता के पहलू से शीघ्र भयभीत हो जाते हैं। चारों ओर की वस्तुओं का निरन्तर आन्दोलन

उन्हें आशंकित और निर्बल कर देता है। चूँकि मस्तिष्क के क्षेत्र में प्रत्येक वस्तु भ्रातिपूर्ण रहती है, इसलिए वे कम-से कम यह निर्णय कर लेते हैं कि रचना दृढ और स्थिर रहेगी और चूँकि वे अपने विश्वासो को ग्रहण नहीं कर सकते, इसलिए वे अपने लिए एक स्वामी चुन लेते हैं।

जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मुझे इस बात मे सन्देह नहीं है कि मनुष्य कभी पूर्ण धार्मिक स्वाधीनता और समग्र राजनीतिक स्वतंत्रता का एक साथ समर्थन कर सकेगा और मेरा विचार है कि यदि मनुष्य मे विश्वास का अभाव है तो वह अवश्य पराधीन होगा और यदि वह स्वतत्र है, तो उसमे विश्वास अवश्य होगा।

फिर भी सम्भवतः धर्मों की यह महान उपयोगिता उन राष्ट्रों मे जहाँ तमाम परिस्थितियों की स्थापना रहती है, अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा और अधिक स्पष्टतः दिखायी पड़ती है। यह मानना ही पड़ेगा कि समानता, जो इस विश्व में महान सुविधाएँ उपलब्ध करती है, फिर भी मनुष्यों को (जैसा कि आगे चलकर बताया जायगा) कुछ अत्यन्त खतरनाक प्रवृत्तियों की ओर सकेत कर देती है। इसकी प्रवृत्ति प्रत्येक मनुष्य को एक दूसरे से विलग करने तथा प्रत्येक मनुष्य के ध्यान को निजी स्वार्थ में केन्द्रित करने की रहती है और वह मन मे भौतिक सुखोपभोग के प्रति एक असाधारण मोह पैदा कर देती है। धर्म का सब से बड़ा लाभ यह है कि वह परस्पर-विरोधी सिद्धान्तों को प्रेरित करता है। ऐसा कोई धर्म नहीं है, जो मनुष्य की आकाक्षाओं के प्रयोजन को सासारिक सुख-भोग से ऊपर और परे न रखता हो और जो स्वाभाविक रूप से उनकी आत्मा को विषयानन्द के क्षेत्र से काफी ऊपर उठा न देता हो और न कोई ऐसा धर्म है, जो मनुष्य के लिए मानव-जाति के प्रति कुछ कर्त्तव्य न निर्धारित करता हो और इस प्रकार कभी-कभी उसे स्वय अपने विषय मे सोचने से विमुख न करता हो। ऐसा सर्वाधिक मिथ्या और सर्वाधिक खतरनाक धर्मों में होता है।

अतः जिन बातों मे प्रजातान्त्रिक राष्ट्र कमजोर होते हैं, उन्हीं बातों में धार्मिक राष्ट्र स्वभावतः अत्यन्त शक्तिशाली होते हैं। इससे यह प्रकट होता है कि परिस्थितियों के अधिक समान होने पर, मनुष्यों के लिए धर्म को सुरक्षित रखना

दृष्टिकोण से विचार कर रहा हूँ। मेरा उद्देश्य जाँच करने का है कि किन साधनों से लोकतांत्रिक युग मे, जिसमे हम प्रवेश कर रहे हैं, धर्म अपनी स्थिति को बनाये रख सकते हैं। यह बताया जा चुका है कि सामान्य सभ्यता और समानता के युग मे मानव मस्तिष्क रूढ़िवादी धारणाओ को अनिच्छापूर्वक ही स्वीकार करता है और केवल आध्यात्मिक विषयो मे उनकी तीव्र आवश्यकता महसूस करता है। इससे प्रथमत. यह सिद्ध होता है कि ऐसे समय धर्मों को अन्य समयो की अपेक्षा अधिक सावधानी से अपनी निर्दिष्ट सीमाओं मे मर्यादित रहना चाहिए। यदि वे धार्मिक विषयों से परे खोज करने के लिए अपनी शक्ति का विस्तार करेंगे, तो उन पर से बिल्कुल ही विश्वास उठ जाने की सम्भावना का खतरा बना रहेगा। इसलिए उस क्षेत्र का, जिसके भीतर उन्हे मानव बुद्धि को मर्यादित रूप से प्रभावित करना है, सतर्कतापूर्वक निर्देशन होना चाहिए और उस निर्दिष्ट सीमा से बाहर मस्तिष्क को अपना मार्गदर्शन स्वय करने के लिए पूर्णत. मुक्त कर देना चाहिए।

अमरीकियो की दार्शनिक पद्धति के सम्बन्ध मे विचार अभिव्यक्त करते समय मैंने बताया था कि समानता के युग मे मानव-मन के लिए स्वरूपो की अधीनता से अधिक घृणाजनक और कुछ नहीं है। ऐसे युग मे रहने वाले लोग आकृतियो के प्रति बडे अधीर रहते है, उनकी दृष्टि मे प्रतीक उस सत्य को छिपाने और मिटाने के लिए प्रयुक्त की जानेवाली कृत्रिमताओं के समान प्रतीत होते हैं, जिन्हें अधिक स्वाभाविक रूप से दिन के प्रकाश मे उन्मुक्त रखना चाहिए। इसीलिए वे समारोहात्मक कार्यों से प्रभावित नहीं होते और सार्वजनिक पूजा सम्बन्धी रीतियो को केवल गौण महत्त्व देते है।

लोकतांत्रिक युग मे जिन लोगों को धर्म के बाह्य स्वरूपो को नियमित करना पडता है, उन्हे चाहिए कि वे मानव-मन की स्वाभाविक प्रवृत्तियों पर सूक्ष्म ध्यान दे ताकि अनावश्यक रूप से उनका विरोध न करना पडे।

स्वरूपो की आवश्यकता मे मेरा दृढ विश्वास है, जो मानव-मस्तिष्क को निराकार सत्य के चिन्तन पर केन्द्रित करते है और उन निराकार सत्यो को हार्दिक रूप से ग्रहण करने तथा उन पर दृढतापूर्वक अटल बने रहने मे उसकी सहायता करते है। मै यह भी नही मानता हूँ कि बिना बाह्य आचरणों से किसी धर्म को बनाये रखना सम्भव है, परन्तु दूसरी ओर मेरा यह दृढ विश्वास है कि जिस युग मे हम प्रवेश कर रहे हैं, उसमे उनकी अत्यधिक वृद्धि खतरनाक होगी। उस सिद्धान्त को शाश्वत बनाये रखने के लिए, जो धर्म का

मूल्य तत्व है और कर्मकाण्ड जिसका एक स्वरूप मात्र है, जितना नितान्त आवश्यक हो, उसी सीमा तक वाह्य आचरणो को सीमित कर दिया जाना चाहिए। उस समय, जब मनुष्य अधिक समानता की ओर अग्रसर हो रहे हैं, वह धर्म, जिसे अधिक सूक्ष्म, अधिक सुनिश्चित और लघु आचरणो से मुक्त होना चाहिए, शीघ्र ही नास्तिक लोगो के समाज मे कुछ धर्मोन्मत्त व्यक्तियो के हाथो मे कठपुतली मात्र हो कर रह जायगा।

मै इस आपत्ति का पूर्व अनुमान करता हूँ कि चूकि सभी धर्मों का उद्देश्य सामान्य और शाश्वत सत्य की खोज करना है, इसलिए प्रत्येक युग की बदलती हुई प्रवृत्तियो के अनुसार वे अपने आपको नही बदल सकते, क्योकि ऐसा करने पर लोगो की दृष्टि मे उनके प्रति जो आस्था है, वह नष्ट हो जायगी। मै इसका उत्तर पुन. यही देता हूँ कि उन प्रमुख धारणाओ को, जो किसी धर्म का निर्माण करती हैं और जिन्हे आध्यात्मिक पुरुष धर्म के वाध्यकारी सिद्धान्त पुकारते हैं, बडी सर्तकतापूर्वक सम्बन्धित सहायक तत्त्वो से विलग रखना चाहिए। युग की कैसी ही विशिष्ट भावना क्यो न हो, धर्म अपने वाध्यकारी सिद्धान्तों से विलग नहीं होते, परन्तु इस बात की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है कि वे उसी रूप मे सहायक तत्वो से न जुडे रहे—विशेषतः उस समय जब कि प्रत्येक वस्तु सक्रमण की अवस्था मे हो—जब मस्तिष्क मानवीय कार्यों की क्रियाशील तडक-भड़क से आकर्षित होने का अभ्यस्त हो और जो बडी कठिनता से किसी एक विषय मे स्थिर हो पाता हो। शाश्वत और सहायक वस्तुओ का निरूपण उसी युग मे किया जा सकता है जब स्वयं सभ्य समाज स्थिर हो। इसके सिवाय अन्य परिस्थितियो के अन्तर्गत ऐसा करना मेरे विचार से खतरनाक होगा।

हम देखेंगे कि समानता से उत्पन्न होने वाली या उससे पोषित होने वाली समस्त भावनाओं मे एक ऐसी भावना है, जिसे समानता विशेष रूप से प्रबल बना देती है और जिसे वह प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में प्रविष्ट कर देती है, मेरा तात्पर्य सुख-सुविधा के प्रति प्रेम की भावना से है। सुख-सुविधा के प्रति यह अभिरुचि लोकतान्त्रिक युग का प्रमुख और अमिट लक्षण है।

ऐसा विश्वास किया जा सकता है कि जो धर्म इतनी बद्धमूल भावना को नष्ट करने का कार्य अपने हाथो मे लेगा, वह अन्त मे स्वयं उस भावना द्वारा नष्ट हो जायगा और यदि उसने इस जगत की अच्छी वस्तुओं के सम्बन्ध मे चिन्तन करने से मनुष्यो को सर्वथा रोकने का प्रयत्न किया, जिससे वे अपनी बुद्धि को

अनन्य रूप से एक दूसरे जगत के विषय मे विचार करने मे लगा सकें, तो यह भविष्यवाणी की जा सकती है कि अन्त मे मनुष्य के मस्तिष्क उसकी पकड़ से मुक्त होकर वर्त्तमान और भौतिक आनन्दो का ही उपभोग करने मे तल्लीन हो जायगे। समानता के युग मे मनुष्यो मे पायी जाने वाली सुख की अपरिमेय और एकमात्र भावना को, परिशोधित करना, नियमित करना और मर्यादित करना धर्म का मुख्य उद्देश्य है। परन्तु उस पर पूर्ण रूप से विजय प्राप्त करने या उसे समाप्त करने का प्रयत्न करना एक गलत कदम होगा। भौतिक सुखों के प्रति मनुष्य मे जो मोह है, उसे मिटाया नहीं जा सकता, परन्तु उन्हे और कुछ नहीं तो पवित्र साधनो को अपनाने के लिए प्रेरित अवश्य किया जा जा सकता है।

इस विश्लेषण से मै एक अन्तिम निर्णय पर पहुँचता हूँ, जिसमे अन्य सभी बाते सम्मिलित हैं। मनुष्यो की परिस्थितियों मे जितनी अधिक समानता आती है और जितनी अधिक वे एक दूसरे से घुलमिल जाती हैं, धर्म के लिए उतनी ही अधिक महत्वपूर्ण बात होती है, जबकि वह सासारिक कार्यो के दैनिक झझटो से सतर्कतापूर्वक अलग रहता है ताकि उसे आवश्यक रूप से, उन विचारो से, जो सामान्यत' समाज मे प्रचलित रहते हैं या उन स्थायी हितो से, जो समाज के लोगो मे स्थित रहते हैं, प्रतिरोध न करना पड़े क्योंकि जब जनमत अधिक-से-अधिक प्रबल होता जाता है, तब वर्तमान शक्तियो मे से प्रथम और अधिक अदम्य शक्ति धार्मिक सिद्धान्त को, कोई पर्याप्त शक्तिशाली बाह्य सहारा नहीं मिल पाता, जिससे वह उसके आक्रमणों का निरन्तर सामना करने मे समर्थ हो सके। यह बात जिस प्रकार गणतन्त्र के लिए लागू है, उसी प्रकार निरकुश शासन की लोकतान्त्रिक प्रजा के लिए भी लागू है। समानता के युगो मे बहुधा सम्राट की आज्ञाओं का पालन हो सकता है, किन्तु विश्वास सदा बहुमत मे किया जाता है। इसलिए जो बाते धर्म के प्रतिकूल नहीं होती हैं, उन सभी बातों मे बहुमत का सम्मान किया जाता है।

मैंने इस पुस्तक के पूर्व भाग मे यह बताया है कि किस प्रकार अमरीकी पादरी सासारिक प्रकार्यो से अलग रहता है। यह उनके आत्म-सयम का अत्यन्त प्रत्यक्ष उदाहरण है, किन्तु यह एकमात्र उदाहरण नहीं है। अमरीका मे धर्म का एक भिन्न क्षेत्र है, जिसका सर्वेसर्वा पादरी है, जो कभी अपनी मर्यादा भग कर बाहर जाने का प्रयत्न नहीं करता। वह अपनी सीमाओं मे सब लोगों का मार्गदर्शक है, परन्तु उन सीमाओ से बाहर मनुष्यो को स्वय उन्हीं के

भरोसे छोड़ देता है तथा उन्हे और उनके युग से सम्बन्धित स्वाधीनता और अस्थिरता के सामने समर्पित कर देता है। मैने सयुक्त-राज्य अमरीका को छोड कर अन्य कोई ऐसा देश नही देखा, जहॅा ईसाई धर्म के इतने कम स्वरूप, सम्प्रदाय और आचार हो या जहॅा वह बुद्धि के सामने इतनी अधिक स्पष्ट, सरल और सामान्य धारणाऍ प्रस्तुत करता हो। यद्यपि अमरीका के ईसाई अनेक मतमतान्तरो मे विभाजित हैं, तथापि वे अपने धर्म को एक ही दृष्टि से देखते है। यह बात रोमन कैथोलिक तथा अन्य सम्प्रदाय के लोगो के लिए समान रूप से लागू होती है। सयुक्त-राज्य अमरीका के रोमन कैथोलिक पादरियो को छोड़ कर अन्य कोई ऐसे रोमन कैथोलिक पादरी नही है, जो सूक्ष्म वैयक्तिक आचारो के प्रति तथा मुक्ति के असाधारण या विशिष्ट साधनो के प्रति कम अभिरुचि दिखलाते हो या जिनका झुकाव नियमो की अपेक्षा भावनाओ की ओर अधिक होता हो। ईसाई धर्म, जो ईश्वर मात्र की पूजा का विधान तथा सतो की पूजा का निषेध करता है, वह अमरीका को छोड कर अन्यत्र कहीं भी इतना स्पष्ट रूप से नही समझा जाता और न कहीं उसका इतना व्यापक प्रभाव ही है। फिर भी अमरीका के रोमन कैथोलिक अत्यन्त विनम्र और ईमानदार है।

एक दूसरी बात प्रत्येक सम्प्रदाय के पादरी के लिए लागू होती है। ईसाई मत के अमरीकी पादरी मनुष्य के सभी विचारो को भावी जीवन के प्रति प्रेरित नही करते। वे इस ससार की वस्तुओ को गौण समझते हुए भी उन्हे उतने ही महत्वपूर्ण पदार्थ समझते हुए प्रतीत होते हैं और इसलिए वे मनुष्य-हृदय के एक अश को वर्त्तमान की चिन्ताओ के समक्ष समर्पित कर देने के लिए उद्यत रहते है। यदि वे स्वय उत्पादक श्रम मे भाग नही लेते तो कम-से-कम उसकी प्रगति मे अभिरुचि लेते है और उसके परिणामो की प्रशसा करते है, जब कि वे धार्मिक व्यक्ति की भावी आशाओ और आशकाओ के महान उद्देश्य के रूप मे परलोक की ओर इगित करने से कभी नहीं चूकते, फिर भी उसे ईमानदारी के साथ इस जगत की समृद्धि मे भाग लेने से नहीं रोकते। वे कभी यह बताने का प्रयत्न नही करते कि ये दोनो चीजे भिन्न और परस्पर विरोधी है, बल्कि वे इस बात को जानने का प्रयत्न करते हैं कि किस विषय मे वे दोनो अत्यन्त निकट और घनिष्ठतापूर्वक सम्बद्ध ह।

समस्त अमरीकी पादरी बहुमत की बौद्धिक श्रेष्ठता से परिचित हैं और उसे सम्मान की दृष्टि से देखते है। वे कभी आवश्यक सघर्षों को छोड कर उसके साथ कोई झगड़ा नही पैदा होने देते। वे दलो के विवादो मे कोई भाग नहीं लेते,

परन्तु बडी शीघ्रता से अपने देश तथा अपने युग की विचारधाराओं को अपना लेते हैं और वे धारणाओ तथा भावो के उस प्रवाह मे, जिसमे आसपास की सारी वस्तुए बह जाती हैं, स्वय बिना प्रतिरोध के बह जाते हैं। वे अपने समकालीन व्यक्तियो के विचारों मे सशोधन करने का पूरा प्रयत्न करते हैं, परन्तु वे यह कार्य बडी शान्ति के साथ करते हैं, जिससे उनकी मित्रता बनी रहे। इसीलिए जनमत कभी उनके विरोध मे नहीं होता, बल्कि वह उनका समर्थन करता है, उनकी रक्षा करता है तथा उनके विश्वास मे जो सत्ता होती है, उसका कारण उस विश्वास की निजी शक्ति तथा बहुमत के विचारों से ग्रहण की गयी बाते, दोनों होती हैं।

इस प्रकार धर्म उन समस्त लोकतांत्रिक प्रवृत्तियो का, जो एकदम उसके विपरीत नहीं हैं, आदर करके और उनमे से अनेक प्रवृत्तियो का अपने लिए उपयोग करके व्यक्तिगत स्वातंत्र्य की उस भावना के साथ, जो सबसे खतरनाक शत्रु है, सफलतापूर्वक सघर्ष करता है।

इस विश्व मे अमरीका अत्यन्त लोकतांत्रिक देश है और साथ ही साथ (विश्वसनीय रिपोर्ट के अनुसार) वह एक ऐसा देश है, जहॉ रोमन कैथोलिक धर्म बहुत अधिक प्रगति करता है। प्रथम दर्शन मे यह बात आश्चर्यजनक लगेगी। समानता की दो प्रवृत्तियॉ है, जिनके वास्तविक भेद को पहचानना अत्यन्त आवश्यक है। समानता एक ओर मनुष्यो मे अपने निजी विचारो का निर्माण करने की इच्छा जाग्रत करती है, परन्तु इसके साथ ही दूसरी ओर वह उनमे समाज को नियत्रित करने वाली सत्ता मे एकता, सरलता और निष्पक्षता की रुचि और विचार जाग्रत कर देती है। इसलिए लोकतांत्रिक युग मे रहने वाले लोग धार्मिक सत्ता को हिला देने मे गहरी अभिरुचि लेते हैं, परन्तु यदि वे स्वय इस प्रकार की किसी सत्ता के अधीन रहने की सहमति देते हैं तो वे कम-से-कम यह निर्णय करते हैं कि वह सत्ता एक ही हो और समरूप हो। एक सामान्य केन्द्र से विकीर्ण नही होनेवाली धार्मिक शक्तियॉ उनके मस्तिष्क के लिए स्वभावत अरुचिकर होती हैं और जिस तत्परता से वे यह भी सोचने लगते हैं कि अनेक धर्म होने चाहिए, लगभग उसी तत्परता से वे यह भी सोचने लगते हैं कि धर्म होना ही नहीं चाहिए।

इस समय पिछले युगो से अधिक रोमन कैथोलिक नास्तिकता की ओर झुक रहे हैं और प्रोटेस्टेंट रोमन कैथोलिक धर्म ग्रहण करते जा रहे हैं। यदि रोमन कैथोलिक धर्म पर चर्च की चहारदिवारी के भीतर विचार किया जाय, तो वह

असफल-सा दिखायी पड़ेगा और यदि उसे चहारदिवारी के बाहर रखा जाय, तो वह आगे प्रगति करता हुआ प्रतीत होगा। इस तथ्य का स्पष्टीकरण करना कठिन नहीं है। हमारे युग के लोगो मे विश्वास ग्रहण करने की अभिरुचि बहुत कम है, परन्तु ज्योही उन्हे कोई धर्म आकर्षित कर लेता है, तो एकाएक उनकी अन्तर्हित भावना अचेतन रूप से उन्हे कैथोलिक धर्म की ओर प्रवृत्त करती है। रोमन चर्च के अनेक सिद्धान्त और व्यवहार उन्हे आश्चर्य मे डाल देते है, परन्तु उसके अनुशासन के प्रति उनके भीतर-ही-भीतर एक प्रकार का मोह उत्पन्न हो जाता है और वे उसकी महान एकता के प्रति आकर्षित हुए बिना नहीं रहते। यदि कैथोलिक धर्म उन राजनीतिक शत्रुओ से, जो उसी के द्वारा उत्पन्न हुए है, हमेशा के लिए अलग हो जायॅ, तो मुझे विश्वास है कि युग की वही भावना, जो उसका इतना विरोध करती रही है, शीघ्र ही उसके इतने पक्ष में हो जायगी कि वह उसकी महान और एकाएक हुई उन्नति को स्वीकार कर लेगी।

मानव बुद्धि की एक अत्यन्त सामान्य कमजोरी यह है कि वह प्रतिकूल सिद्धान्तो को मिलाने का प्रयत्न करती है और तर्क की कीमत पर शान्ति का सौदा करती है। इसलिए ऐसे मनुष्य सदा हुए है और सदा होते रहेगे, जो अपने धार्मिक विश्वास के कुछ अश सत्ता के सिद्धान्तो के समक्ष समर्पित करने के बाद, अपने धर्म के अन्य कई भागो को उससे मुक्त कराने तथा अपने मस्तिष्को को स्वाधीनता और दासता के बीच निरुद्देश्य इधर-उधर भटकते रखने का प्रयास करेगे, किन्तु मेरा यह विश्वास है कि ऐसे विचारको की सख्या अन्य युगो की अपेक्षा लोकतात्रिक युग मे कम होगी और हमारी भावी पीढी की अधिकाधिक प्रवृत्ति केवल दो भागो मे विभाजित होने की रहेगी, कुछ लोग तो ईसाई धर्म का सर्वथा त्याग कर देगे और कुछ लोग रोमन कैथोलिक धर्म को अगीकार कर लेगे।

१८. अनिश्चित पूर्णता

समानता मानव-मस्तिष्क को अनेक ऐसे विचार प्रदान करती है, जो अन्य किसी स्रोत से उत्पन्न नही हो सकते थे तथा वह पूर्व के प्रायः समस्त विचारो का परिशोधन करती है। उदाहरणार्थ, मै मानव परिपूर्णतावाद के सिद्धान्त को लेता हूँ, क्योकि यह उन प्रमुख धारणाओ मे से है, जिनकी कल्पना बुद्धि कर

सकती है, क्योंकि वह स्वय एक महान दार्शनिक सिद्धान्त है, जिसको मानवीय कार्यों के सचालन के परिणामो मे सर्वत्र ढूँढा जा सकता है। यद्यपि मनुष्य अनेक बातो मे पशुओं से मिलता है, तथापि एक विशिष्ट लक्षण उसका यह है कि वह अपने मे सुधार कर सकता है, जबकि पशु सुधार के योग्य नही हैं। मनुष्या ने इस भेद को प्रारम्भ से ही पहचान लिया था। इसीलिए परिपूर्णता का विचार ससार की तरह बहुत पुराना है। यद्यपि समानता ने इस सिद्धान्त को जन्म नहीं दिया, तथापि उसने इस सिद्धात को नया स्वभाव प्रदान किया है।

जब किसी समाज के नागरिको का वर्गीकरण पद, व्यवसाय और जन्म के आधार पर किया जाता है और जब सभी मनुष्य जीविकोपार्जन के उस मार्ग को अपनाने के लिए विवश होते है, जिसे सयोग ने उनके सामने, प्रस्तुत कर रखा है, तब प्रत्येक व्यक्ति यह महसूस करता है कि उसे मानव-शक्ति की उच्चतम सीमाओ को अपने निकट ढूँढना चाहिए और वह यह भी महसूस करता है कि कोई भी व्यक्ति अपने भाग्य के अनिवार्य विधान को किसी भी दशा मे बदल नहीं सकता। निश्चय ही कुलीन समाज मनुष्य की आत्मसुधार की क्षमता को पूर्णत. अस्वीकार नहीं करते, परन्तु उसे अनिश्चित मानने को तैयार नहीं होते। वे सुधार का अनुमान कर सकते हैं, परन्तु परिवर्तन का नही। वे कल्पना करते हैं कि समाज की भावी स्थिति श्रेष्ठ हो सकती है, परन्तु तत्वतः भिन्न नही हो सकती और जबकि वे यह स्वीकार करते है कि मानवता ने प्रगति की है और भविष्य मे भी कुछ और प्रगति कर सकती है, तब वे पहले से ही उसके लिए कतिपय दुर्गम्य सीमाएँ निर्धारित कर देते है।

इस प्रकार वे ऐसा नही मानते कि उन्होने सर्वोच्च कल्याण अथवा परम सत्य को प्राप्त कर लिया है। (क्या कोई भी समाज या कोई भी व्यक्ति कभी इस प्रकार की कल्पना करने का साहस कर सकता है?) परन्तु वे इस विश्वास से चिपटे रहते हैं कि वे महानता और ज्ञान की प्राय. उस सीमा के निकट पहुँच गये है, जिसे हमारी अपूर्ण प्रकृति स्वीकार करती है और चूँकि उनके सम्बन्ध मे कोई हलचल उन्हे दिखायी नही पडती, इसलिए वे सहज ही यह कल्पना कर लेते है कि प्रत्येक वस्तु अपने सुनिश्चित स्थान पर स्थिर है। ऐसे समय विधायक शाश्वत नियमो की रचना करने का प्रयत्न करता है, सम्राट और राष्ट्र अनश्वर स्मारको का निर्माण करते है तथा वर्तमान पीढी भावी पीढियो को आपने भाग्यो का नियमन करने की चिन्ता से मुक्त रखने का कार्य अपने ५ मे लेती है।

जिस अनुपात मे, जातियॉ विनष्ट होती हैं और समाज के वर्ग एक दूसरे के निकटतम आते है, जिस अनुपात मे आचार, रीतियॉ और कानून मनुष्यो के कोलाहलपूर्ण समागम से बदलते है, नये तत्त्वो का जन्म होता है, नये सत्यो को प्रकाश मे लाया जाता है, जिस अनुपात मे प्राचीन धारणाओ का लोप हो जाता है और नयी धारणाऍ उनका स्थान ग्रहण करती है, उसी अनुपात मे मानव-मन के सामने आदर्श मूर्ति प्रकट होती है, परन्तु वह सदा अस्थिर रहती है। तब प्रत्येक मनुष्य के निरीक्षण के अन्तर्गत प्रत्येक क्षण निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। कुछ की स्थिति और अधिक खराब हो जाती है और वह भली-प्रकार जान जाता है कि कोई भी समाज और कोई भी व्यक्ति, चाहे कितना ही बुद्धिमान क्यो न हो, पूर्ण होने का दावा नही कर सकता। अन्यो की स्थिति सुधरती है, जिससे वह यह निष्कर्ष निकालता है कि मनुष्य मे सुधार की असीमित क्षमता है। उसकी विफलताऍ उसे सिखाती हैं कि किसी ने भी परम कल्याण का पता नहीं लगाया है, उसकी सफलता उसे उसके अनुसधान मे निरन्तर रत रहने के लिए प्रेरित करती है। इस प्रकार वह निरन्तर प्रयत्नशील रह कर, निरन्तर गिरता और उठता रह कर, बहुधा निराश होता हुआ, किन्तु कभी हतोत्साह न होता हुआ, उस असीम महानता की ओर अग्रसर रहता है जो एक लम्बे पथ के अन्तिम छोर पर, जिसे मानवता को अभी पार करना बाकी है, अस्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है।

मनुष्य की अनिश्चित परिपूर्णता के दार्शनिक सिद्धान्त से स्वाभाविक रूप से इतने तत्वो का प्रादुर्भाव होता है अथवा उसका उन लोगो पर भी, जो केवल कार्य करने के उद्देश्य से जीवित रहते हैं, विचारो के लिए नहीं और जो इसके सम्बन्ध मे कुछ भी जाने बिना अपने कार्यो को उसके अनुरूप बनाते हुए प्रतीत होते हैं, इतना शक्तिशाली प्रभाव पड़ता है कि उस पर मुश्किल से विश्वास किया जा सकता है।

मैंने एक अमरीकी नौसैनिक से बात की और पूछा कि उसके देश में जहाजों का निर्माण ऐसा क्यों होता है कि वे थोडे समय के लिए ही उपयोगी रहते हैं। उसने बिना हिचकिचाहट के उत्तर दिया कि नौपरिवहन की कला प्रतिदिन इतनी उन्नति करती जा रही है कि अच्छे-से-अच्छे जहाज कुछ वर्ष के बाद प्रायः अनुपयोगी हो जाते। किसी विशिष्ट विषय में बिना सिखाये व्यक्ति के इन शब्दों ने, जो अनायास ही निकल पड़े, मुझे उस सामान्य और व्यवस्थित विचार का ज्ञान हो जाता है, जिस पर एक महान जाति का समस्त ध्यान केन्द्रित रहता है।

कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रो मे स्वाभाविक रूप से मानव परिपूर्णतावाद के विस्तार को सकुचित करने की और लोकतान्त्रिक राष्ट्रो मे तर्क की सीमा से परे उसका विस्तार करने की प्रवृत्ति होती है।

१९. प्रजातांत्रिक जनता में विज्ञान, साहित्य अथवा कला के प्रति अभिरुचि

इस बात को स्वीकार करना पडेगा कि आज के सभ्य राष्ट्रो मे ऐसा कोई नहीं है, जिसने सयुक्त-राज्य अमरीका की तुलना मे उच्चतर विज्ञान की दिशा मे कम प्रगति की हो या वहॉ महान कलाकारो, लब्धप्रतिष्ठ कवियो अथवा श्रेष्ठ लेखको की कमी हो। इस तथ्य से प्रभावित होकर अनेक यूरोपियनों ने उसे समानता का स्वाभाविक और अनिवार्य परिणाम समझ लिया है और उन्होंने यह सोचा कि यदि कभी समस्त विश्व मे प्रजातान्त्रिक समाज-व्यवस्था और प्रजातान्त्रिक सस्थाएँ प्रचलित हो गयी, तो शनैः-शनैः मानव-बुद्धि का प्रकाश-स्तम्भ धुँधला हो जायगा और मनुष्य फिर से अन्धकार के गर्त मे गिर जायेंगे।

मैं समझता हूँ कि इस प्रकार से तर्क करना कई विचारो को एक मे मिला देने के तुल्य है, जिनको विभाजित करना और पृथक् पृथक् रूप से जिनका परीक्षण करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह प्रजातान्त्रिक वस्तु को मात्र अमरीकी वस्तु के साथ, बिना जाने-बूझे, मिश्रित करने के तुल्य हैं। प्रारम्भिक उत्प्रवासी जिस धर्म को मानते थे और जिसे उन्होंने अपने वशजो को वसीयत मे सौपा था, उसका स्वरूप सरल था। उसके सिद्धान्त सयमी और प्रायः कठोर थे और वह बाह्य प्रतीको एवं समारोह-पूर्ण आडम्बर के विरुद्ध था। यह धर्म स्वाभाविक रूप से ललितकलाओ के लिए अनुपयुक्त है और केवल अनिच्छापूर्वक ही साहित्य के आनन्दों मे समाविष्ट हो सका है। अमरीकी बहुत पुराने हैं, अत्यन्त ज्ञानी हैं, जिन्हे एक नया और विस्तृत देश मिल गया है, जहॉ वे इच्छानुसार अपना विस्तार कर सकते हैं तथा जिसे वे बिना किसी कठिनाई के उर्वर बना सकते हैं। इस प्रकार की स्थिति विश्व के इतिहास मे अतुल्य है। अमरीका में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी समृद्धि को बनाने और बढाने के लिए अनेक सुविधाएँ मिलती हैं, जो अन्यत्र कही नहीं मिलतीं। लाभ उठाने की प्रवृत्ति सदा बढती जाती है और कल्पना तथा बौद्धिक श्रम के आनन्द से

विमुख मानव मस्तिष्क निरन्तर धन प्राप्त करने की भावना में बहता जाता है। सयुक्त-राज्य अमरीका में न केवल उत्पादक वर्ग या व्यावसायिक श्रेणियाँ ही देखने को मिलती हैं, जैसा कि वे अन्य सब देशों को मिलती हैं, प्रत्युत वहाँ एक ऐसी स्थिति देखने को मिलती है, जो और कहीं नहीं मिलती है। वह यह कि समस्त समाज उत्पादक उद्योग और व्यवसाय करने मे एक ही साथ व्यस्त रहता है, परन्तु मैं यह मानता हूँ कि यदि अमरीकी अपने पूर्वजो द्वारा अर्जित स्वतंत्रता और ज्ञान तथा अपने स्वयं के भावों के साथ इस ससार मे एकाकी रहते, तो वे कदापि यह बात ज्ञात करने मे पीछे नही रहते कि वैज्ञानिक सिद्धान्तो का ज्ञान प्राप्त किये बिना विज्ञानों का व्यावहारिक प्रयोग करने से अधिक दिनों तक प्रगति नहीं की जा सकती तथा समस्त कलाएँ एक दूसरे द्वारा पूर्ण होती हैं और वे अपनी आकाक्षाओं के परम उद्देश्य की खोज मे चाहे जितने डूबे होते, इस बात को वे शीघ्र ही स्वीकार कर लेते कि कभी-कभी अपने को उससे विलग करने की भी आवश्यकता है, जिससे अन्त मे उसे अधिक अच्छी तरह प्राप्त किया जा सके।

इसके अतिरिक्त बौद्धिक आनन्द प्राप्त करने की लालसा सभ्य पुरुष के हृदय की इतनी स्वाभाविक वृत्ति है कि उन उदार राष्ट्रो में भी, जिनमे इन खोजो मे अपने आप को खो देने की न्यूनतम प्रवृत्ति होती है, कुछ ऐसे लोग अवश्य मिलेंगे, जो ऐसी खोजो मे व्यस्त रहते है। इस बौद्धिक लालसा का एक बार अनुभव होने के बाद उसे बहुत शीघ्र पूरा किया जा सकता था, परन्तु जिस समय अमरीकी स्वाभाविक रूप से, केवल उपयोगी कलाओ और जीवन को सुखमय बनाने के साधनो मे विज्ञान का विशेष रूप से प्रयोग करने के लिए प्रेरित हुए, उस समय शिक्षित और साहित्यिक यूरोप सत्य के सामान्य तत्वो की खोज मे और साथ ही साथ मनुष्य की आकाक्षाओं और आनन्द-वृद्धि के साधनों के सुधार मे व्यस्त था।

संयुक्त-राज्य अमरीका के निवासियों ने पुरानी दुनिया के सभ्य राष्ट्रों मे सबसे अधिक एक राष्ट्र को विशेष प्रतिष्ठा प्रदान की, जिसके साथ वे सामान्य मूल तथा समान आदतो के कारण घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित थे। इस समाज मे उन्हे प्रतिष्ठित वैज्ञानिक, कुशल कलाकार, प्रसिद्ध साहित्यिक मिले, जिनके कारण बौद्धिक कोषों के सग्रह के लिए श्रम किये बिना ही वे उनका आनन्दोपभोग करने मे समर्थ हो गये। यद्यपि यूरोप और अमरीका के मध्य व्यवधान के रूप मे एक विशाल सागर लहरा रहा है, परन्तु मैं ऐसा स्वीकार नहीं कर सकता कि

इससे अमरीका यूरोप से अलग हो गया है। मेरे विचार से सयुक्त-राज्य अमरीका के लोग उन्हीं अंग्रेजों मे से हैं, जिन्हें नयी दुनिया के जगलों की खोज करने का कार्य सौपा गया है, जबकि राष्ट्र के शेष लोग अधिक सुख-सुविधाओ का आनन्द लेते हुए तथा जीवन की कठोरताओं से कम प्रपीड़ित होकर, अपनी शक्तियों को विचार की ओर प्रवृत्त कर सके तथा मस्तिष्क के साम्राज्य का समस्त दिशाओ मे विस्तार कर सके।

इसलिए अमरीकियो की स्थिति सर्वथा अपवाद के रूप मे है और ऐसा विश्वास किया जा सकता है कि कोई भी लोकतात्रिक समाज इस प्रकार की विशिष्ट स्थिति मे कभी नहीं होगा। उनका 'प्यूरीटेनिकल' (शुद्धतावादी) मूल-उद्भव—उनकी सब से अलग व्यावसायिक आदते, यहाँ तक कि वह देश भी, जहाँ वे निवास करते हैं और जो उनके मस्तिष्कों को विज्ञान, साहित्य और कलाओ की खोज से विमुख करता हुआ प्रतीत होता है, यूरोप के साथ घनिष्ठता, जो उन्हे पुनः बर्बरता की ओर न ले जाकर भी उन्हें इन अनुसन्धानों की उपेक्षा करने की अनुमति प्रदान करती है, अन्य हजारों ऐसे विशेष कारण, जिनमे से केवल अत्यन्त महत्वपूर्ण कारणो का ही मै उल्लेख कर सका हूँ—ये सब ऐसी बाते हैं, जिन्होंने संयुक्त रूप से अमरीकी मस्तिष्क को शुद्ध व्यावहारिक उद्देश्यों की ओर उन्मुख किया है। एक अमरीकी की भावनाएँ, उसकी आवश्यकताएँ, उसकी शिक्षा और उसके आस-पास की प्रत्येक वस्तु एक साथ मिलकर, सयुक्त-राज्य अमरीका के निवासी को सासारिकता की ओर खीचती हुई प्रतीत होती हैं ' अकेला उसका धर्म उसे समय-समय पर स्वर्ग की ओर क्षण भर के लिए तथा उदासीनतापूर्वक दृष्टिपात करने के लिए प्रेरित करता है। इसलिए हम अमरीकी लोगो को उदाहरण मान कर समस्त लोकतात्रिक राष्ट्रो के सम्बन्ध मे एक-सा दृष्टिकोण नहीं बना सकते, और इसलिए हमे उनके खुद के लक्षणो के साथ सूक्ष्म रूप से उनका पर्यवेक्षण करने का प्रयत्न करना चाहिए।

ऐसे समाज की कल्पना करना सम्भव है, जो जाति या पदो की विभिन्न श्रेणियों मे उप-विभाजित न हो, जहाँ कानून किन्हीं विशेषाधिकारो को मान्यता न देता हुआ, पैतृक सम्पत्ति का विभाजन समान भागों मे कर देता हो, परन्तु ऐसी स्थिति मे यह समाज बिना ज्ञान और स्वतत्रता के होना चाहिए। यह कोई खोखला अनुमान मात्र नहीं है। निरकुश व्यक्ति यह समझ सकता है कि उसका हित प्रजा के लिए समान स्थिति उत्पन्न करने और उन्हे अज्ञान के अधकार मे छोड देने मे सुरक्षित है ताकि वह बडी सरलता से उन्हे दास बनाये रख सके।

इस प्रकार का लोकतान्त्रिक समाज न केवल विज्ञान, साहित्य या कला के प्रति उत्कण्ठा या अभिरुचि प्रदर्शित नही कर सकेगा, प्रत्युत सम्भवतः वह कभी उनकी प्राप्ति नहीं कर सकेगा। स्वय उत्तराधिकार कानून ही प्रत्येक पीढी मे विशाल सम्पत्ति का नाश कर देगा और उन लोगों को हमेशा नयी सम्पत्ति अर्जित करनी पडेगी। गरीब व्यक्ति बिना ज्ञान या स्वतन्त्रता के धन प्राप्त करने के ऐसे विचार की कल्पना नही कर पायेगा और अमीर आदमी सुरक्षा की भावना के बिना गरीब होने को विवश हो जायगा। समाज के इन दोनो सदस्यो के बीच परिपूर्ण और अजेय समानता शीघ्र ही स्थापित हो जायगी। तब किसी को बौद्धिक आनन्द प्राप्त करने या उसकी खोज करने का न तो अवकाश होगा और न अभिरुचि, किन्तु समस्त मनुष्य सामान्य अज्ञान और समान दासता की स्थिति मे शक्तिहीन हो जायगे।

जब मै इस प्रकार के लोकतान्त्रिक समाज की कल्पना करता हूँ, तब मुझे लगता है जैसे मै स्वय उनमे से किसी एक निम्न कोटि के सकुचित और अन्धकारमय स्थान मे बैठा हूँ, जहाँ बाहर से आनेवाली प्रकाश की किरण शीघ्र ही फीकी पड़ कर विलुप्त हो जाती है।

उस समय एकाएक मुझे किसी बोझ का अनुभव होता है और मै अन्धे की तरह चारो ओर व्याप्त अन्धकार मे एक ऐसे द्वार को ढूँढ़ने के लिए भटकने लगता हूँ जो मुझे पुनः हवा और खुला प्रकाश उपलब्ध कर देगा, परन्तु ये सब उन व्यक्तियो के सम्बन्ध मे लागू नहीं होती जो पहले से ही ज्ञान प्राप्त कर चुके होते हैं और जो उन विलक्षण एवं वंशानुगत अधिकारों को, जो कतिपय व्यक्तियो अथवा कतिपय वर्गो के हाथो मे सम्पत्ति को शाश्वत बना देते है, समाप्त करने के बाद अपनी स्वतत्रता को बनाये रखते हैं।

लोकतान्त्रिक समाज-व्यवस्था मे रहनेवाले व्यक्ति जब ज्ञानवान होते हैं, तब वे शीघ्र ही यह मालूम कर लेते हैं कि वे किसी भी सीमा से, जो उन्हे वर्तमान प्रारब्ध से सन्तोष करने के लिए विवश करती है, परिसीमित या आबद्ध नहीं ह। इसलिए वे सब उसकी वृद्धि की कल्पना करते हैं। यदि वे स्वतत्र ह तो सब इसके लिए प्रयत्न करते हें, परन्तु सभी लोगो को एक ही प्रकार से सफलता प्राप्त नहीं होती। यह सही है कि अब विधान उन्हे विशेषाधिकार प्रदान नही करता, परन्तु प्रकृति उन्हे प्रदान करती है। चूकि प्राकृतिक विषमता अत्यन्त व्यापक है, इस लिए सम्पत्ति भी असमान हो जाती है और इस स्थिति के उत्पन्न होते ही हरेक व्यक्ति अमीर बनने के लिए अपनी सारी शक्ति लगा देता है।

उत्तराधिकार कानून धनी परिवारों की स्थापना मे बाधक है, परन्तु वह धनी व्यक्तियों के अस्तित्व को नहीं रोकता। वह निरन्तर समाज के सदस्यों को पुनः उस सामान्य स्तर पर लाता रहता है, जहाँ से वे उतने ही निरन्तर रूप से हटते रहते है और जिस अनुपात मे उनके ज्ञान का विस्तार होता है एवं उनकी स्वाधीनता मे वृद्धि होती है, उसी अनुपात मे सम्पत्ति की असमानता मे वृद्धि होती है।

एक वर्ग ने, जिसका उदय हमारे समय में हुआ और जो अपनी प्रतिभा और अपव्यय के लिए प्रसिद्ध था, सारी सम्पत्ति को एक ऐसी केन्द्रीय शक्ति के हाथों मे केद्रित कर देने का विचार किया, जिसका कार्य बाद में उस सम्पत्ति को सभी व्यक्तियों मे योग्यतानुसार वितरित कर देना होना चाहिए। यह उस परिपूर्ण और शाश्वत समानता से हटने की एक पद्धति होती, जो लोकतान्त्रिक समाज के लिए खतरा प्रतीत होती है, परन्तु सरल और कम खतरनाक उपाय यह होगा कि किसी को भी विशेषाधिकार न दिया जाय और सबको कृषि-उत्पादन के लिए बराबर भूमि और समान अवसर दे दिया जाय और प्रत्येक व्यक्ति को स्वय अपनी स्थिति का निर्माण करने के लिए मुक्त कर दिया जाय। इसका परिणाम यह होगा कि स्वाभाविक असमानता का शीघ्र ही लोप हो जायगा और साथ-ही-साथ सम्पत्ति अत्यन्त योग्य व्यक्तियों के हाथो मे आ जायगी।

तब स्वतंत्र और लोकतान्त्रिक समाजो मे समृद्धि और योग्यता का सुख भोगने वाले व्यक्तियों का एक समूह सदा बना रहेगा। धनी लोगो का पारस्परिक सम्बन्ध समाज के पूर्ववर्ती कुलीन वर्ग के सदस्यो के पारस्परिक सम्बन्ध की भाँति घनिष्ठ नहीं होगा, उनकी प्रवृत्तियाँ भिन्न होगी और वे मुश्किल से उतने सुरक्षित अथवा पूर्ण अवकाश का आनन्द उठा सकेगे, किन्तु उनकी सख्या समाज के उस वर्ग की सख्या से बहुत अधिक होगी।

ये व्यक्ति व्यावहारिक जीवन की चिन्ताओ से ही पूर्णतः आबद्ध नहीं होंगे, वे बौद्धिक आनन्दो का अनुसन्धान करने मे समर्थ होंगे, यद्यपि वे भिन्न-भिन्न मात्राओं मे ही ऐसा कर सकेगे। वे उन आनन्दो मे सम्मिलित होंगे, क्योंकि एक ओर यदि यह सत्य है कि मानव-मस्तिष्क सीमित, भौतिक और उपयोगी वस्तुओं की ओर झुकता है, तो दूसरी ओर यह भी सत्य है कि वह असीमित, आध्यात्मिक और सुन्दर वस्तुओं की ओर भी झुकता है। भौतिक आवश्यकताएँ उसे पृथ्वी के साथ आबद्ध करती हैं, किन्तु ज्योही यह बन्धन [illegible] हो जायगा, वह अपने से ऊपर उठ जायगा।

न केवल ऐसे लोगो की संख्या बढ जायगी जो मस्तिष्क की सृष्टियो मे अभिरुचि ले सकते है, प्रत्युत उन लोगो मे भी धीरे-धीरे बौद्धिक आनन्द का स्वाद उत्पन्न हो जायगा, जिनके पास कुलीन समाजो के इन आनन्दों मे सम्मिलित होने का न तो समय होता है और न योग्यता। जब पैतृक सम्पत्ति, पद का विशेषाधिकार और जन्म का परमाधिकार समाप्त हो जाता है और जब प्रत्येक व्यक्ति केवल खुद के भीतर से अपनी शक्ति ग्रहण करने लगता है तब यह स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्यों की सम्पत्ति की असमानता का मुख्य कारण बुद्धि है। जो कोई भी वस्तु मस्तिष्क को शक्तिशाली, विस्तृत एवं सुशोभनीय बनाती है, उसका मूल्य तत्काल ऊँचा उठ जाता है। ज्ञान की उपयोगिता जनसमुदाय की आखों के सामने भी अत्यधिक स्पष्ट हो जाती है, जिन लोगो मे उसके प्रति कोई दिलचस्पी नहीं होती, वे उसके परिणामो से प्रभावित होते हैं और उसे प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते है।

स्वतंत्र और सभ्य लोकतान्त्रिक युग मे न तो कोई वस्तु मनुष्यों को एक दूसरे से पृथक् कर सकती है, और न उनको पूर्व स्थिति मे रखे रह सकती है। उनका उत्थान या पतन बड़ी शीघ्रता से होता है। सभी वर्ग निरन्तर अपनी महान घनिष्ठता से एक दूसरे से सम्बद्ध रहते है। वे प्रतिदिन परस्पर मिलते हैं और बातचीत करते हैं तथा एक दूसरे का अनुकरण करते हैं। इससे समाज मे अनेक विचार, धारणाएँ और आकांक्षाएँ उत्पन्न होती हैं, जो सम्भवतः कभी भी नहीं होती, यदि श्रेणीगत भेदभाव निश्चित हो जाता और समाज गतिशील न होकर स्थिर रहता।

इस प्रकार के राष्ट्रों मे सेवक कभी अपने मालिक के आनन्द और परिश्रम से अपने को पूर्ण रूप से अनभिज्ञ नहीं समझता और न गरीब आदमी अमीर से अपने को उसी भाँति भिन्न समझता है। गॉव की जनता नगर की जनता से और प्रान्तीय जनता केन्द्रीय जनता से घुल मिल जाती है। कोई भी व्यक्ति जीवन में केवल भौतिक आनन्द मे लीन रहने को बडी सरलता से प्रेरित नहीं होता और छोटे-से-छोटा कारीगर भी कभी-कभी बुद्धि के उन क्षेत्रो की ओर उत्सुकतापूर्ण और डरती हुई दृष्टि डालता है। लोग उन्हीं विचारों के साथ या उसी तरह से अध्ययन नहीं करते, जैसा कि वे कुलीन समाजों में करते है, परन्तु पाठकों का क्षेत्र निरन्तर विस्तृत होता ही रहता है, जब तक कि सभी लोग उसमें सम्मिलित न हो जाय।

ज्योंही जन-समुदाय बौद्धिक श्रमो में रुचि लेना प्रारम्भ करता है, त्योंही उन्हें

यह ज्ञात होता है कि बुद्धि के इन श्रमो मे से कुछ में सबसे आगे बढ जाना प्रसिद्धि, शक्ति एव सम्पत्ति पाने का एक प्रबल साधन है। समानता जिस उत्कट महत्त्वाकाक्षा को जन्म देती है, वह तत्काल इस दिशा को ग्रहण कर लेती है, जिस प्रकार वह अन्य सभी दिशाओं को ग्रहण करती है। विज्ञान, साहित्य और कलाओं मे अभिरुचि लेने वाले लोगों की सख्या मे अपार वृद्धि हो जाती है। बौद्धिक जगत आश्चर्यजनक कार्य करने लगता है और प्रत्येक व्यक्ति वहाँ अपने लिए मार्ग निर्दिष्ट करने का और जनता के ध्यान को अपनी ओर खीचने का प्रयत्न करता है। संयुक्त-राज्य अमरीका के समाज मे कोई विलक्षण बात होने पर उसे राजनीतिक महत्ता प्रदान की जाती है। जो कुछ होता है, वह प्रायः अपूर्ण है, परन्तु उसके लिए असख्य प्रयत्न होते है और यद्यपि व्यक्तिगत प्रयत्नो के फल सामान्यत' बहुत कम होते हैं, परन्तु उनकी कुल सख्या हमेशा बड़ी रहती है। अत. इस प्रकार की धारणा बनाना ठीक नहीं है कि लोकतात्रिक युग में रहनेवाले लोग स्वाभाविक रूप से विज्ञान, साहित्य और कला से विमुख होते हैं, परन्तु सच्ची बात तो यह है कि वे उन्हे अपनी रुचि के अनुकूल ढालते हैं और अपनी विशिष्ट योग्यताओं और दुर्बलताओ के अनुसार इस कार्य को पूर्ण करते हैं।

२०. व्यावहारिक विज्ञान की ओर झुकाव

यदि समाज की प्रजातात्रिक स्थिति और प्रजातात्रिक सस्थाएँ मानव-मस्तिष्क की प्रगति मे बाधक नहीं होती हैं तो निश्चय ही वे दूसरे की अपेक्षा उसे एक दिशा की ओर निर्देशित करती है। अतः उनके प्रयत्न सीमित रहते हुए भी अब भी महान है और इस पर भी उनकी सख्या अत्यधिक है। यदि मै उनका चिन्तन करने के लिए क्षण भर को ठहरता हूँ, तो मुझे क्षमा किया जाय।

अमरीकियो की दार्शनिक पद्धति पर विचार व्यक्त करते समय हमे अनेक बातो की चर्चा करने का अवसर मिला था, जिनको यहाँ पुन. दोहराना आवश्यक है। समानता मनुष्य में प्रत्येक वस्तु को स्वय अपने दृष्टिकोण से देखने की प्रवृत्ति उत्पन्न करती है। परिणामत समस्त वस्तुओ को पार्थिव और यथार्थ रूप मे देखने का और परम्परा तथा स्वरूपों का तिरस्कार करने का उसका स्वभाव हो जाता है। इन्हीं सामान्य प्रवृत्तियो पर मुख्यत' प्रकाश डालना इस अध्याय का विशिष्ट विषय है।

प्रजातान्त्रिक राष्ट्र में जो लोग विज्ञान का विकास करते हैं, उन्हें हमेशा भय बना रहता है कि वे काल्पनिक विचार से अपना मार्ग भूल जायेंगे। वे रीतियों में विश्वास नहीं करते। वे तथ्यों को सूक्ष्मता से पकड़ते हैं और उनका अध्ययन अपनी बुद्धि से करते हैं। चूँकि वे किसी साथी के नाम मात्र से उसके मत को आसानी से स्वीकार नहीं करते, इसलिए किसी भी मनुष्य के अधिकार पर अवलम्बित रहने की उनकी प्रवृत्ति कभी नहीं होती, परन्तु इसके विपरीत वे अपने पड़ोसियों के सिद्धान्त के कमजोर पक्षों को मालूम करने के लिए जी-तोड़ श्रम करते हैं। उनके लिए वैज्ञानिक दृष्टान्त बहुत कम महत्व के होते हैं। वे दीर्घकाल तक विभिन्न मतों की सूक्ष्मताओं पर विश्वास नहीं करते और न कोरी कल्पनाओं के लिए बड़ी बातों को स्वीकार करने के लिए तत्पर रहते हैं। वे जिस विषय में व्यस्त रहते हैं, उसके मुख्य अंगों की यथाशक्य छानबीन करते हैं और साधारण भाषा में उसकी व्याख्या करना पसन्द करते हैं। इसलिए वैज्ञानिक अनुसंधानों का मार्ग स्वतंत्र और सुरक्षित रहता है, परन्तु वह कम उत्कृष्ट होता है।

मस्तिष्क, जैसा कि मुझे दिखलायी देता है, विज्ञान को तीन अंगों में विभाजित कर सकता है। प्रथम अंग वह है जिसमें सैद्धान्तिक आदर्श और अधिक काल्पनिक धारणाएँ निहित रहती हैं, जिनका व्यवहार या तो अज्ञात है अथवा दूरवर्ती है। द्वितीय अंग उन सामान्य सत्यों से बना है जो आज भी शुद्ध सिद्धान्त से सम्बन्धित हैं, परन्तु फिर भी वह सीधे और संक्षिप्त मार्ग द्वारा व्यावहारिक परिणामों की ओर प्रवृत्त करता है। व्यवहार की रीतियाँ और निष्पादन के साधन तीसरे अंग का निर्माण करते हैं। विज्ञान के इन तीनों विभिन्न मार्गों में प्रत्येक का अलग से विकास किया जा सकता है, यद्यपि तर्क और अनुभव सिद्ध करते हैं कि उनमें से यदि एक भी दोनों से पूर्णत. भिन्न हो जाता है, तो उनमें से कोई भी दीर्घकाल तक समृद्धि नहीं कर सकता।

यह प्रवृत्ति सभी प्रजातात्रिक राष्ट्रों मे, यद्यपि कुछ कम अंश मे, देखी जा सकती है।

उत्कृष्ट विज्ञानों के विकास के लिए या विज्ञान के अधिक उन्नत विभागों के लिए चिंतन से बढकर अन्य कोई वस्तु इतनी आवश्यक नहीं है और चिंतन के लिए प्रजातात्रिक समाज के ढॉचे से बढकर अन्य कोई चीज कम अनुपयुक्त नहीं है। प्रजातात्रिक समाज मे कुलीन समाज की भॉति हमे दो वर्ग देखने को नहीं मिलते, एक वह वर्ग, जो समृद्धिशाली होने से आराम करता है और दूसरा वह, जो किसी प्रकार की हलचल करने का साहस नहीं करता, क्योंकि वह अपनी परिस्थिति मे सुधार न होता देखकर निराश रहता है। प्रजातन्त्र मे सभी व्यक्ति गतिशील रहते है, कुछ शक्ति की खोज मे, अन्य लाभ प्राप्ति की आशा मे। इस विश्वव्यापक हलचल मे—परस्पर हितों के इस अविराम सघर्ष तथा धन के लिए मानव के निरन्तर प्रयास के बीच ऐसी शाति कहॉ मिलती है, जो बुद्धि के गहरे ससर्ग के लिए अनिवार्य है? जब मस्तिष्क के चारो ओर सारी वस्तुऍ चक्कर काटती हैं और मनुष्य स्वय उन प्रचड लहरो द्वारा, जो सारी वस्तुओं को अपने प्रवाह मे समेट लेती हैं, विवश होकर बह जाता है, तब वह किस प्रकार एक बिन्दु पर स्थिर रह सकता है?

परन्तु उस स्थायी आन्दोलन को, जो प्रशात और व्यवस्थित प्रजातन्त्र के भीतर सक्रिय रहता है, उन उपद्रवकारी और क्रान्तिकारी आन्दोलनों से, जो प्रायः प्रजातात्रिक समाज के जन्म और विकास मे सहायता पहुॅचाते है, भिन्न समझना चाहिए। जब उच्च सभ्य समाज मे हिसात्मक क्रान्ति होती है, तो वह उनकी भावनाओं और विचारो को आकस्मिक प्रेरणा देने मे असफल नहीं रहती। यह बात विशेपत. प्रजातात्रिक क्रान्तियो के लिए अधिक सत्य है, जो समाज का निर्माण करने वाले समस्त वर्गों को तुरन्त उभाड देती हैं और साथ-ही-साथ समाज के प्रत्येक सदस्य के मन मे अपरिमित महत्वाकाक्षा उत्पन्न करती हैं। फ्रासवासियों ने ठीक उसी समय, जब वे अपने पूर्व के सामती समाज के अवशेषों के विनाश का कार्य पूर्ण कर रहे थे, परिपूर्ण विज्ञानों के क्षेत्र मे आश्चर्य-जनक उन्नति की थी। फिर भी ऐसा नहीं कहा जा सकता कि इस आकस्मिक परिपक्वता का कारण प्रजातत्र था, बल्कि वह अद्वितीय क्रान्ति थी, जिसने उसके विकास मे सहायता पहुॅचायी। उस काल मे जो कुछ हुआ, वह एक विशिष्ट घटना थी और उसे सामान्य सिद्धात का प्रमाण मानना बुद्धिमानी न होगी।

अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा प्रजतात्रिक राष्ट्रो मे महान क्रान्तियॉ अधिक सामान्य

नहीं होती हैं। मैं तो यहाँ तक विश्वास करता हूँ कि वे वहाँ बहुत ही कम होती हैं, परन्तु प्रजातान्त्रिक देशों के लोगो मे छोटी-सी वेदानापूर्ण गति, एक प्रकार की पारस्परिक उछल-कूद व्याप्त रहती है, जो मस्तिष्क को, बिना उत्तेजित किये या उभाड़े परेशान और क्षुब्ध करती है।

प्रजातान्त्रिक समाजो मे रहने वाले लोग न केवल कदाचित् ही चितन करते है, बल्कि वे स्वभावतः इसके प्रति बहुत ही कम श्रद्धा रखते हैं। समाज की प्रजातान्त्रिक स्थिति और प्रजातान्त्रिक संस्थाएँ अधिकाश मनुष्यों को निरन्तर क्रियाशील बनाये रखती हैं और मस्तिष्क की प्रवृत्तियाँ, जो सक्रिय जीवन के लिए अनुकूल होती हैं, सर्वदा चिन्तनशील मस्तिष्क के लिए उपयुक्त नहीं रहती। कर्मशील मनुष्य को बहुधा, जो कुछ भी उसे प्राप्त हो सकता है, उसी से सतोष कर लेना पड़ता है, क्योकि यदि वह परिपूर्णता की प्रत्येक सूक्ष्मता को क्रियान्वित करने का निर्णय करता हे, तो वह कभी भी अपने उद्देश्य मे सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। उसे उन विचारो पर विश्वास करने के लिए निरन्तर अवसर मिलता है, जिनके मूल मे जाकर खोज करने का अवसर उसे नहीं मिला। कारण यह है कि उसे विचार की नितान्त शुद्धता की अपेक्षा उसकी समयानुकूलता से अधिक निरन्तर सहायता मिलती है और कालान्तर मे सत्य के आधार पर अपने समस्त सिद्धान्तो का निरूपण करने मे समय व्यतीत करने की अपेक्षा कुछ असत्य सिद्धान्तो के प्रयोग में उसे कम जोखिम उठानी पड़ती है। विश्व लम्बे या विद्वत्तापूर्ण प्रदर्शनो से प्रभावित नही होता। किन्हीं विशेष घटनाओं पर डाली गयी सरसरी निगाह, जनसमूह के सवेदनशील आवेगों का दैनिक अध्ययन, समय पर घटित होनेवाली दुर्घटनाओं और उनका विवरण तैयार करने की कला का ही विश्व के सभी कार्यो मे हाथ रहता हे।

इसलिए उस युग मे, जहाँ सक्रिय जीवन प्रायः प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक शर्त है, मनुष्य प्रायः शीघ्रगामी विस्फोटो और बुद्धि की वाह्य धारणाओं को आवश्यकता से अधिक महत्त्व देने लगते है। दूसरी ओर ये ही लोग उसके मन्द और गहन श्रम को अत्यन्त ही कम महत्व देते है। इस प्रकार का जनमत उन मनुष्यों के निर्णय को प्रभावित करता है जो विज्ञानों का विकास करते हैं। उन्हे इस बात का विश्वास दिलाया जाता है कि वे उन खोजो मे बिना चितन के सफलता कर सकते हें या उन्हे इस प्रकार की खोजो से, जैसा कि आवश्यक समझा जाता है, रोका जाता है।

विज्ञानों के अध्ययन की अनेक पद्धतियाँ हैं। जनसमूह के मध्य आपको मस्तिष्क

के अनुसधानो के लिए स्वार्थपूर्ण व्यावसायिक तथा व्यापारिक रुचि देखने को मिलेगी, जिन्हे उस निःस्वार्थ भावना के साथ, जो कुछ लोगों के हृदय में प्रज्वलित हैं, मिश्रित नहीं कर देना चाहिए। ज्ञान के उपयोग की इच्छा एक बात है और ज्ञान प्राप्ति की शुद्ध इच्छा और बात है। मुझे इस बात म सन्देह नहीं है कि कतिपय मस्तिष्कों में और दीर्घ अन्तर्विरामों से, सत्य के प्रति अक्षय प्रेम प्रकट होता है, जो बिना पूर्ण सन्तोष धारण किये आत्मनिर्भर और निरन्तर आनन्दमय होता है। सत्य का यह उत्कट, गौरवपूर्ण और नि.स्वार्थ प्रेम मनुष्यों को सत्य के सारभूत तत्वों तक अपने स्वय का ज्ञान प्राप्त करने के लिए पहुँचा देता है।

यदि पासकल की दृष्टि मे कुछ बडे लाभ के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता या यदि वह केवल ख्याति की लालसा से अनुप्रेरित होता, तो मै नहीं समझता कि वह अपने मस्तिष्क की समस्त शक्ति केन्द्रित कर सृष्टि-रचयिता के अत्यन्त गुप्त रहस्यों की उत्कृष्ट खोज उस ढग से कर पाता, जैसा कि वह कर सका। जब मैं उसे सही रूप मे देखता हूँ, तो मुझे लगता है कि उसने इन खोजों के लिए पूर्णतः समर्पित जीवन की समस्त चिन्ताओ से अपनी आत्मा को मुक्त कर लिया था और देह के ढाचे को जीवन से जोडनेवाली कडियाँ असमय में ही विलग कर दी थी। तभी वह चालीस वर्ष की उम्र से पहले ही वृद्धता प्राप्त कर चल बसा। मै स्तब्ध हो कर सोचता हूँ कि कोई भी सामान्य कारण इतने असाधारण प्रयत्नों को उत्पन्न नहीं कर सकता है।

यह बात तो भविष्य ही सिद्ध करेगा कि क्या इतने दुर्लभ और परिणाम-कारक आवेग प्रजातत्र म उतनी ही शीघ्रता से और आसानी से उत्पन्न होते और बढते है जितने कि कुलीनतात्रिक समुदाय मे ? जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मै यह स्वीकार करता हूँ कि मैं इस पर इतनी जल्दी विश्वास नहीं करता।

कुलीन समाजो मे वह वर्ग, जो मत को मूल स्वरूप प्रदान करता है और समस्त समाज के ऊपर स्थायी और आनुवशिक रूप से प्रतिष्ठित होकर उसके प्रकार्यो का निर्देशन करता है, स्वाभाविक रूप से स्वय अपने बारे मे और मानव के बारे में उत्कृष्ट विचार धारण कर लेता है। वह बड़ी लगन से उच्च आनन्दो का अन्वेपण करता है और अपनी महत्त्वाकाक्षा के लिए सुन्दर पदार्थो का निर्माण करता है। कुलीनतत्र बहुधा अत्यन्त क्रूर और अमानवीय कार्य करते है, परन्तु वे कदाचित् ही निम्न कोटि के विचारो का पोपण करते हैं। वे क्षुद्र आनन्द के लिए एक प्रकार से उद्दण्ड तिरस्कार प्रकट करते हैं, उस समय भी, जब कि वे स्वय उनमे फँसे होते हैं। इससे समाज के सामान्य स्तर को ऊँचा

उठाने मे बड़ा प्रभाव पडता है। कुलीनतन्त्रीय युगो मे प्रतिष्ठा, शक्ति और मानव की महानता के सम्बन्ध मे महान विचार सामान्य रूप से पाये जाते हैं। ऐसे विचारो का उन व्यक्तियो पर, जो विज्ञानों की खोज मे सलग्न रहते है, तथा शेष समाज पर भी प्रभाव पडता है। वे विचार मस्तिष्क की स्वाभाविक प्रवृत्ति को बड़ी सुगमता से उच्च विचारो की ओर प्रेरित करते है और उसे सहज रूप से सत्य के अति उदात्त और प्रायः नैसर्गिक प्रेम को धारण करने के लिए तैयार करते है।

परिणामतः ऐसे युग मे विज्ञान के प्रवर्तक सिद्धान्त की ओर बह जाते है और यहाँ तक कि वे उसके व्यवहार के लिए बहुधा अविचारपूर्ण तिरस्कार प्रकट करने लगते है। प्लुटार्च ने कहा है कि "आर्कीमिडिज इतने उच्च विचारो का व्यक्ति था कि युद्ध मे काम आने वाले इजिनो के निर्माण के तरीको पर निबन्ध लिखने के लिए वह कभी तैयार नहीं हुआ। चूँकि उसके विचार से इजिनो का निर्माण करने वाला यह विज्ञान और सारे कौशल सामान्यतः व्यवहार में किसी हितकारी उद्देश्य की पूर्ति का दम भरते है, परन्तु वस्तुतः अधम, निम्न और भाडे का टट्टू बनने मे मदद करते हैं, इसलिए उसने अपनी प्रतिभा और अपने श्रम-शील समय को केवल उन्हीं विषयों का प्रतिपादन करने मे व्यय किया, जिनकी सुन्दरता और कोमलता के साथ आवश्यकता का कोई मिश्रण नही था। यह है विज्ञान का कुलीनतान्त्रिक उद्देश्य। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो मे यही उद्देश्य नही रह सकता।

इन राष्ट्रो का निर्माण करने वाले लोगो मे अधिकाश वास्तविक और भौतिक आनन्द की खोज मे अत्यन्त व्यग्र रहते हैं। चूँकि वे सर्वदा अपनी वर्तमान स्थिति से असन्तुष्ट और उसे छोडने के लिए सदा स्वतत्र रहते है, इसलिए वे अपने भाग्य को बदलने या उसमें वृद्धि करने वाले साधनो को छोड कर किसी और चीज का ध्यान नहीं करते। अतः इस प्रकार के पूर्वप्रभावित मस्तिष्क के लिए, प्रत्येक नयी प्रणाली, जो धन प्राप्ति के लिए छोटे मार्ग का निर्माण करती है, प्रत्येक मशीन, जो श्रम की बचत करती है, प्रत्येक यंत्र, जो उत्पादन के व्यय को घटाता है और प्रत्येक आविष्कार, जो आनन्द को सुगम बनाता अथवा उसमे वृद्धि करता है, मानव-बुद्धि के उच्चतम प्रयास प्रतीत होते हैं। मुख्यतः इन्हीं उद्देश्यो से प्रजातान्त्रिक समाज अपने को वैज्ञानिक खोजो मे सलग्न करता है अर्थात् वह उन्हें समझता है और उनका सम्मान करता है। कुलीनतान्त्रिक युगों मे विज्ञान विशेषत मानसिक आनन्द की ओर प्रजातान्त्रिक युगो मे शारीरिक आनन्द की सृष्टि करता है।

आपको विश्वास होना चाहिए कि राष्ट्र जितना ही अधिक प्रजातान्त्रिक, सुसंस्कृत और स्वतत्र रहता है, उतनी अधिक सख्या वैज्ञानिक प्रतिभाओं को योगदान देनेवालों की होती है और उतना ही अधिक तत्काल उत्पादक उद्योगों मे व्यवहृत होनेवाले आविष्कार अपने प्रणेताओं को लाभ, ख्याति और शक्ति भी प्रदान करते हैं। कारण यह है कि प्रजातान्त्रिक देशो मे श्रमिक वर्ग सार्वजनिक कार्यो मे भाग लेता है और सार्वजनिक प्रतिष्ठा और आर्थिक पारिश्रमिक उन लोगो को प्रदान किये जा सकते हैं, जो इसके योग्य होते हैं।

इस प्रकार से सगठित समाज मे सरलता से यह देखा जा सकता है कि मानव-मस्तिष्क को बिना किसी चेतना के, सिद्धान्त को उपेक्षित करने की ओर प्रवृत्त किया जा सकता है। इसके विपरीत, उसे अतुल शक्ति से, विज्ञान के या कम-से-कम सैद्धान्तिक विज्ञान के उस भाग के व्यवहार के लिए, जो उन लोगों के लिए आवश्यक है, जो ऐसा व्यवहार करते हैं, उत्तेजित किया जाता है। कुछ अन्त.प्रेरित प्रवृत्तियाँ मस्तिष्क को बुद्धि के उच्चतर क्षेत्रों की ओर प्रवृत्त करने का निरर्थक प्रयत्न करती हैं। स्वार्थ उसे उस मध्य स्तर पर ले आता है, जहाँ वह अपनी समस्त शक्ति और अविराम गतिविधि का विकास कर सकता है और आश्चर्यजनक परिणाम उत्पन्न कर सकता है। इन्हीं अमरीकियो ने, जिन्होंने यत्र-विज्ञान के किसी भी सामान्य नियम का आविष्कार नहीं किया, जहाजरानी मे एक ऐसे इजिन का प्रवेश किया है, जो विश्व के स्वरूप को ही बदल देता है।

निश्चय ही मुझे सदेह नहीं होता कि हमारे युग के प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो के भाग्य मे महान मेधावी शक्तियों का लोप हो जाना बदा है, यहाँ तक कि वे कभी भी नये प्रकाश की ज्योति नहीं प्रज्वलित कर सकेगे। आज के युग मे और उत्पादक उद्योगों की सरगरमी से निरन्तर उत्तेजित अनेक सभ्य राष्ट्रो मे विज्ञान के विभिन्न भागो को जोडने वाले बन्धन निरीक्षक की दृष्टि मे आये बिना नहीं रह सकते और स्वय व्यावहारिक विज्ञान की प्रवृत्ति, यदि वह ज्ञानवर्धक है तो, मनुष्यो को सिद्धान्त की उपेक्षा नहीं करने देगी।

प्रतिदिन दोहराये जानेवाले विज्ञान के इतने अधिक प्रयोगों के प्रयासों के बीच यह प्रायः असम्भव सा है कि सामान्य विधान निरन्तर प्रकाश मे न आये। इससे महान आविष्कार प्राय होते रहेगे, यद्यपि महान आविष्कारक बहुत थोडे होंगे।

जो भी हो, मै उच्च वैज्ञानिक व्यवसायो मे विश्वास करता हूँ। यदि प्रजातान्त्रित सिद्धान्त, एक ओर, मनुष्यो को स्वयं अपने लिए विज्ञान की उन्नति करने को प्रेरित नहीं करता है, तो दूसरी ओर, ऐसे लोगों की सख्या मे अपार वृद्धि करता है, जो उसका विकास करते हैं। यह भी विश्वसनीय नही है कि केवल सत्य के प्रेम से अनुप्राणित चिन्तनशील प्रतिभाएँ इतने विशाल जनसमूह मे समय-समय पर उत्पन्न नहीं होगी। हमे विश्वास होना चाहिए कि कोई-न-कोई ऐसी प्रतिभा अवश्य उत्पन्न होगी, जो प्रकृति के अत्यन्त गहरे रहस्यो की खोज मे डूब जायेगी, भले ही उसके देश और उसके युग की भावना कुछ भी हो। उसे अपने मार्ग मे किसी प्रकार की सहायता की आवश्यकता नहीं होगी। उसके मार्ग मे बाधाएँ न आये, बस इतना ही उनके लिए पर्याप्त होगा। यह सब कहने का मेरा अभिप्राय यह है कि परिस्थितियों की स्थायी असमानता से मानव अपने को सूक्ष्य तथ्यो की उद्दण्ड और निष्फल शोध करने तक ही सीमित कर देता है, जब कि सामाजिक स्थिति और प्रजातंत्र की सस्थाएँ उसे विज्ञानों के तात्कालिक और उपयोगी व्यावहारिक परिणामो को प्राप्त करने के लिए तैयार करती है। यह प्रवृत्ति स्वाभाविक और अनिवार्य है। उससे परिचित होना एक विलक्षण बात है और उसका बताना आवश्यक हो सकता है।

यदि वे लोग, जिन पर हमारे युग के राष्ट्रों के मार्गदर्शन का उत्तरदायित्व सौपा जाता है, इन नयी प्रवृत्तियो को, जो शीघ्र ही अजेय हो जायेगी, काफी दूर से ही स्पष्ट पहचान ले, तो उन्हे इस बात का ज्ञान हो जायगा कि प्रजातान्त्रिक युग मे रहने वाले मनुष्य, जो शिक्षित और स्वतत्र रहते हैं, विज्ञान के औद्योगिक भाग को सुधारने मे कभी असफल नहीं हो सकते और उसके बाद स्थापित सत्ताओ के सारे प्रयत्नो को शिक्षा की उच्चतम शाखाओ का समर्थन करने और स्वय विज्ञान के लिए उच्च भावनाओं का पोषण करने में लगा देना पड़ेगा। वर्तमान युग मे मानव-मस्तिष्क को सैद्धान्तिक अध्ययनो मे सलग्न होने के लिए बाध्य किया जाना चाहिए। उसके बाद वह अपने आप व्यावहारिक उपयोगो की ओर प्रवृत्त होगा। उसके गौण प्रभावो का निरन्तर सूक्ष्म परीक्षण करने के बजाय कभी-कभी उसका मार्ग बदल देना उचित होगा ताकि मूल कारणों पर विचार करने के लिए उसे ऊँचा उठाया जा सके...।

२१. कला के प्रति अमरीकियों की भावना

यदि मैं यह दिखाने का प्रयत्न करूँ कि किस प्रकार सम्पत्ति के सामान्यत मध्यम कोटि के होने के कारण, अत्यधिक और अनावश्यक धन के अभाव के कारण, सुख की सर्वव्यापी इच्छा के कारण तथा उसे प्राप्त करने के लिए निरन्तर किये जानेवाले प्रयत्नों के कारण, मनुष्य के हृदय में विद्यमान सौन्दर्य-प्रेम पर उपयोगी वस्तुओं के प्रति रुचि का आधिपत्य हो जाता है, तो यह पाठकों का और स्वय मेरा समय नष्ट करने के तुल्य होगा। अत जिन प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे ये सभी वस्तुएँ विद्यमान होती हैं, वे जीवन को शोभा सम्पन्न बनानेवाली कलाओं की अपेक्षा जीवन को सरल बनानेवाली कलाओं को अधिक पसन्द करेंगे। वे अभ्यासवश सुन्दर वस्तुओं की अपेक्षा उपयोगी वस्तुओं को अधिक पसन्द करेंगे और उनकी इच्छा यह होगी कि सुन्दर वस्तुएँ उपयोगी भी हों।

सामान्यत ऐसा होता है कि विशेषाधिकार के युगों में लगभग समस्त कलाओं का अभ्यास एक विशेषाधिकार बन जाता है तथा प्रत्येक व्यवसाय एक पृथक् क्षेत्र बन जाता है, जिसमे प्रवेश करने की अनुमति सभी को नहीं होती। उत्पादन-शील उद्योग के स्वतंत्र होने पर भी कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों का निश्चित स्वरूप शनैः-शनैः उन समस्त व्यक्तियों को पृथक् कर देता है जो एक ही कला का अभ्यास करते हैं। ऐसा तब तक होता रहता है, जब तक उनका एक ऐसा पृथक् वर्ग नहीं बन जाता जिसमे सदा वही परिवार सम्मिलित रहते हैं, जिनके सदस्य एक दूसरे से परिचित होते हैं और जिनके मध्य शीघ्र ही एक निजी जनमत और एक प्रकार के सामूहिक गर्व का विकास हो जाता है। इस प्रकार के वर्ग अथवा समूह मे प्रत्येक शिल्पकार को न केवल अपनी सम्पत्ति का अर्जन करना होता है, प्रत्युत उसे अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा भी करनी पडती है। उसे मात्र अपने अथवा ग्राहक के हित पर ही ध्यान नहीं देना पडता, प्रत्युत उसे उस समाज के हित पर ध्यान देना पडता है, जिसका वह सदस्य होता है तथा उस समाज का हित यह होता है कि प्रत्येक शिल्पकार यथासम्भव सर्वोत्कृष्ट शिल्प-कौशल का प्रदर्शन करे। अत कुलीनतान्त्रिक युगों में कलाओं का उद्देश्य सुन्दर वस्तुओं का निर्माण करना होता है, न कि अधिकतम शीघ्रता से अथवा न्यूनतम मात्रा में निर्माण करना।

इसके विपरीत, जब प्रत्येक व्यवसाय सभी के लिए मुक्त रहता है, जब

असंख्य व्यक्तियों का समूह निरन्तर उसे ग्रहण करता है और उसका परित्याग करता रहता है और जब उसके अनेक सदस्य एक दूसरे से अपरिचित तथा उदासीन रहते है, तथा अपनी सख्या के कारण एक दूसरे को देख नहीं पाते, तब सामाजिक बन्धन छिन्न-भिन्न हो जाता है और प्रत्येक कारीगर अकेला रह जाता है और केवल इस बात का प्रयास करता है कि निम्नतम व्यय पर अधिकतम धन प्राप्त किया जाय। तब उसकी एकमात्र सीमा ग्राहक की इच्छा रहती है, किन्तु साथ-ही-साथ ग्राहक मे भी उसी प्रकार का परिवर्तन होता है। जिन देशों मे धन तथा सत्ता कुछ थोड़े-से व्यक्तियो के हाथ मे केन्द्रित होती है, वहॉ थोडे-से व्यक्ति ही, जो सदा वही होते है, इस ससार की अधिकाश वस्तुओ का प्रयोग करते है। आवश्यकता, जनमत तथा साधारण इच्छाओं के कारण अन्य सभी व्यक्ति उनके आनन्दोपभोग से वञ्चित हो जाते हैं। चूॅकि यह अभिजात वर्ग महानता के जिस शिखर पर खड़ा रहता है, उसी पर स्थिर रहता है और उसमे कमी अथवा वृद्धि नहीं होती, अतः उसकी इच्छा-आकाक्षाऍ समान रहती हैं और वह उनसे एक ही प्रकार से प्रभावित होता है। जिन व्यक्तियों से इस वर्ग का निर्माण होता है, उन व्यक्तियों में स्वभावतः अपनी उच्चतर एव वंशानुगतिक स्थिति से स्थायी एवं सुनिर्मित वस्तुओ के प्रति रुचि उत्पन्न हो जाती है। इसका प्रभाव कला के सम्बन्ध मे राष्ट्र की सामान्य विचार-प्रणाली पर पडता है। ऐसे समाजों मे बहुधा ऐसा होता है कि किसान भी अपनी अभीप्सित वस्तु को अपूर्णता की स्थिति मे प्राप्त करने की अपेक्षा उसके बिना रह जाना अधिक पसन्द करता है। अतः कुलीनतान्त्रिक समाजो मे शिल्पकार केवल ऐसी सीमित सख्या वाले ग्राहको के लिए काम करते हैं, जिनकी रुचि को सतुष्ट कर सकना कठिन होता है; वे जिस लाभ की आशा करते हैं, वह मुख्यतः उनकी कारीगरी की उत्कृष्टता पर निर्भर करता है।

जब समस्त विशेषाधिकार नष्ट कर दिये जाते हैं, श्रेणियॉ एक दूसरे मे मिल जाती हैं और मनुष्य निरन्तर एक सामाजिक तुला पर ऊपर-नीचे होते रहते हैं, तब इस प्रकार की स्थिति नहीं रह जाती। प्रजातान्त्रिक समाज मे ऐसे नागरिक सदा बने रहते हैं, जिनकी पैतृक संपत्ति विभक्त और कम होती रहती है। वे अधिक समृद्धिमय परिस्थितियो मे कतिपय ऐसी आकाक्षाऍ कर लेते हैं, जो इस प्रकार की आकाक्षाओ की पूर्ति के साधनों में समाप्त हो जाने पर भी बनी रहती हैं, और वे चिन्तापूर्वक किसी ऐसी पद्धति की खोज करते रहते हैं जिसके द्वारा चोरी-चोरी इन आकाक्षाओं की पूर्ति की जा सके। दूसरी ओर

प्रजातत्रों मे सदा भारी संख्या मे ऐसे व्यक्ति रहते हैं, जिनकी समृद्धि वृद्धि पर रहती है, किन्तु जिनकी इच्छाएँ उनकी समृद्धि से भी तीव्रतर गति से बढती रहती हैं और जो सम्पत्ति के वरदानो के साधन प्राप्त करने से बहुत पहले उनकी पूर्व-कल्पना करके उनकी ओर शरारतभरी प्रसन्नता की दृष्टि से देखते हैं। ये व्यक्ति उन सुखो तक, जो पहले से ही लगभग उनकी पहुँच के अन्तर्गत हैं, शीघ्र पहुँचने के लिए उत्सुक रहते हैं। इन दो कारणो के मिलन का परिणाम यह होता है कि प्रजातन्त्रो मे सदा ऐसे व्यक्ति विद्यमान रहते हैं, जिनकी आकाक्षाएँ उनके साधनों से परे रहती हैं और जो अपनी इच्छा का पूर्ण रूप से परित्याग कर देने की अपेक्षा अपूर्ण सन्तोष प्राप्त करने के लिए अत्यन्त लालायित रहते हैं। कारीगर इन प्रबल भावनाओ को तत्काल समझ लेता है, क्योकि वह स्वय इस प्रकार की प्रबल भावनाएँ रखता है। कुलीनतत्र में वह अपनी कारीगरी को ऊँचे मूल्य पर थोडे-से व्यक्तियो को बेचने का प्रयत्न करता है। अब वह देखता है कि शीघ्र धनवान बन जाने का मार्ग यह है कि अपनी कारीगरी की वस्तुओ को कम मूल्य पर सभी को बेचा जाय, किन्तु सामग्रियो के मूल्य मे कमी करने के केवल दो मार्ग हैं। प्रथम मार्ग यह है कि उनके उत्पादन की कोई अधिक अच्छी, अधिक शीघ्रतापूर्ण तथा अधिक चतुरतापूर्ण प्रणाली ढूँढ निकाली जाय। दूसरा मार्ग यह है कि अधिक परिमाण मे वस्तुओं का, जो लगभग समान हों, किन्तु जिनका मूल्य अपेक्षाकृत कम हो, निर्माण किया जाय। प्रजातान्त्रिक देश मे कारीगर की सारी बुद्धि इन दो उद्देश्यों की पूर्ति मे लगी रहती हैं। वह ऐसी पद्धतियो के आविष्कार करने के प्रयत्न मे रहता है जिनके द्वारा वह न केवल अधिक अच्छा, प्रत्युत शीघ्रतापूर्वक और अधिक सस्ता काम कर सके, अथवा यदि वह इसमे सफल नहीं हो सकता, तो वह अपने द्वारा निर्मित होने वाली वस्तुओं की आन्तरिक अच्छाई मे कमी कर देने का प्रयास कर देता है, किन्तु साथ-ही साथ वह उन वस्तुओ को पूर्णतया अनुपयुक्त नहीं बना देता। जब केवल धनिको को छोडकर और किसी के पास घडियाँ नहीं होती थी, तब लगभग सभी घडियाँ बहुत अच्छी होती थी, अब बहुत कम अच्छी घडियाँ बनायी जाती हे, किन्तु प्रत्येक व्यक्ति की जेब मे एक घडी होती है। इस प्रकार प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त न केवल मानव-मस्तिष्क को उपयोगी कलाओ की ओर प्रवृत्त करता है, प्रत्युत वह कारीगर को अधिक शीघ्रता से अनेक अपूर्ण वस्तुओं का निर्माण करने के लिए तथा ग्राहक को इन ...ओं से सतोप कर लेने की ओर प्रेरित करता है।

ऐसी बात नहीं है कि प्रजातान्त्रिक देशो मे कलाओ मे आवश्यकता उपस्थित होने पर चमत्कारपूर्ण वस्तुओ का निर्माण करने की क्षमता नहीं होती। यदि ऐसे ग्राहक आ जॉय, जो ऐसी वस्तुओ के निर्माण मे लगने वाले समय और कष्ट का मूल्य चुकाने के लिए तैयार हो तो कभी-कभी चमत्कारपूर्ण वस्तुओं का निर्माण हो सकता है। प्रत्येक प्रकार के उद्योग की इस प्रतियोगिता मे विशाल प्रतिद्वन्द्विता और इन असख्य प्रयोगो के मध्य कुछ उच्च कोटि के शिल्पकार मिलते है, जो अपने शिल्प-कौशल की चरम-सीमा पर पहुँच जाते है, किन्तु उन्हे अपने कौशल के प्रदर्शन का अवसर बहुत कम मिलता है। वे जानबूझ कर अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं करते, वे एक परिपूर्ण उदासीनता की स्थिति मे रहते हें, जो अपने सम्बन्ध मे स्वय निर्णय करती है और जिसमे यद्यपि लक्ष्य से आगे सन्धान करने की क्षमता होती है, तथापि जो उसी वस्तु को लक्ष्य बनाती हैं, जिसका वह सन्धान करती है। इसके विपरीत कुलीनतान्त्रिक देशो मे कारीगर सदा अपनी पूरी क्षमता के साथ काम करते है और जब वे रुकते हे तो इस कारण रुकते हैं कि वे अपनी कला की चरम सीमा पर पहुँच जाते हैं।

जब मै किसी ऐसे देश मे आता हूँ, जहॉ मुझे कला की कतिपय सर्वोत्कृष्ट कृतियॉ देखने को मिलती हैं, तब मुझे इस तथ्य से उस देश की सामाजिक स्थिति अथवा राजनीतिक सविधान के विषय मे कोई ज्ञान नहीं प्राप्त होता, किन्तु जब मै देखता हूँ कि कलाकृतियॉ सामान्यतः निम्न कोटि की प्रचुर मात्रा मे तथा अत्यन्त सस्ती हे तो मुझे विश्वास हो जाता है कि जिस देश मे ऐसा होता है, वहॉ विशेषाधिकार ह्रासोन्मुख है, श्रेणियो का अन्तर्मिश्रण प्रारम्भ हो रहा है तथा शीघ्र ही वे एक दूसरे मे मिल जानेवाली हें।

प्रजातान्त्रिक युगो के शिल्पकार अपनी उपयोगी कृतियों को समस्त समाज की पहुँच के अन्तर्गत लाने का ही प्रयत्न नहीं करते, बल्कि वे अपनी समस्त सामग्रियों मे वह आकर्षण लाने का प्रयत्न करते हैं, जो वास्तव मे उसमे नहीं होता। समस्त श्रेणियो के मिल जाने पर प्रत्येक व्यक्ति अपने को ऐसे रूप मे दिखाने की आशा रखता है कि जो रूप उसका नहीं होता और इस उद्देश्य मे सफल होने के लिए वह महान प्रयास करता है। निश्चय ही इस भावना की सृष्टि, जो मानव हृदय के लिए अत्यन्त स्वाभाविक होती है, प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त से नही होती, किन्तु वह सिद्धान्त इसे भौतिक पदार्थो पर लागू करता है। पुण्य का ढोग प्रत्येक युग मे होता है, किन्तु विलास का ढोग विशेष रूप से प्रजातन्त्र के युग में होता है।

कला मानवीय अहम् की इन लालसाओ की परितृप्ति के लिए हर प्रकार की छलनाओ से काम लेती है और कभी-कभी ये कृत्रिम उपाय इतने आगे बढ जाते हैं कि वे अपने ही उद्देश्य को विफल बना देते है। आजकल ऐसे नकली हीरे बनाये जाते हैं, जिन्हे आसानी के साथ असली हीरे मान लेने की भूल की जा सकती है और ज्योही नकली हीरे बनाने की कला इतनी पूर्ण हो जायगी कि नकली और असली हीरो मे भेद न किया जा सकेगा, त्योंही यह सम्भव है कि दोनो का परित्याग कर दिया जायगा और वे पुनः ककड-पत्थर मात्र समझे जाने लगेगे।

इसके बाद मै उन कलाओ का वर्णन करूँगा, जिन्हें भेद करने की दृष्टि से ललित कलाएँ कहा जाता है। मै यह विश्वास नहीं करता कि जो लोग ललित कलाओ का अभ्यास करते हैं, उनकी सख्या मे प्रजातान्त्रिक सामाजिक स्थिति और प्रजातान्त्रिक सस्थाओ के प्रभाव के कारण आवश्यक रूप से कमी हो जाती है, किन्तु जिस ढग से इन कलाओं का अभ्यास किया जाता है, उस पर इन कारणों का शक्तिशाली प्रभाव पडता है। जिन लोगों मे ललित कलाओ के प्रति पहले से ही एक रुचि विकसित हो चुकी होती है, उनमे से अनेक निर्धन हो जाते हैं। दूसरी ओर जो लोग अभी धनी नहीं हो पाये हैं, उनमे से अनेक कम-से-कम अनुकरण द्वारा उस रुचि को धारण करना प्रारम्भ कर देते हैं, उपभोक्ताओ की सख्या बढ जाती है, किन्तु समृद्ध और ऐसे उपभोक्ता, जिनकी रुचि की परितुष्टि कठिनता से होती है, अधिक दुर्लभ हो जाते हैं। तब उपयोगी कलाओ के विषय मे मै पहले ही जो कुछ कह चुका हूँ, उससे मिलती-जुलती कुछ बात ललित कलाओ के सम्बन्ध मे भी होती है। कलाकारो की कृतियो की सख्या अधिक होती है, किन्तु प्रत्येक कृति की विशिष्टता घट जाती है, उसमे महानता तक पहुँचने की योग्यता नहीं रह जाती और वे तुच्छ एव रोचक कृतियों का उत्पादन करने लगती हैं और वास्तविकता की अपेक्षा वाह्य रूप पर अधिक ध्यान दिया जाने लगता है।

कुलीनतान्त्रिक व्यवस्था मे थोडे-से महान चित्रो की सृष्टि की जाती है, प्रजातान्त्रिक देशों मे अधिकाधिक सख्या मे महत्त्वहीन चित्रो का निर्माण किया जाता है। कुलीनतान्त्रिक व्यवस्था में कान्स्य मूर्तियो का निर्माण किया जाता है, प्रजातान्त्रिक देशों मे उनका निर्माण पलस्तर से किया जाता है।

जब मै अतलान्तक महासागर के उस भाग से, जिसे ईस्ट रिवर (पूर्व नदी) ‍‍‍‍‍ाम से पुकारा जाता है, प्रथम बार न्यूयार्क मे पहुँचा, तब मुझे नगर से

कुछ दूर तट पर सफेद सगमरमर के कई छोटे-छोटे महलों को देखकर आश्चर्य हुआ। इनमें से अनेक महलो की स्थापत्य कला प्राचीन युग की थी। जब मैं दूसरे दिन एक महल का, जिसने मेरा ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट किया था, अधिक निकटता से निरीक्षण करने गया, तब मैंने देखा कि उसकी दीवारे सफेदी की हुई ईंटो से निर्मित थी तथा उसके स्तम्भ रँगी हुई लकडी के बने हुए थे—एक रात पूर्व मैंने जिन भवनों की प्रशसा की थी, वे सब एक ही प्रकार के थे।

इसके अतिरिक्त प्रजातत्र की सामाजिक स्थिति तथा संस्थाएँ समस्त अनुकरणात्मक कलाओ को कतिपय विलक्षण मनोवृत्तियाँ प्रदान करती हैं, जिनकी ओर इगित करना सरल है। वे बहुधा उन्हे आत्मा की रेखाओ से दूर कर देती हैं और मात्र शरीर से आबद्ध कर देती हैं और वे भावना एव विचार के प्रतिनिधित्व के स्थान पर गति और प्रत्यक्ष अनुभव के प्रतिनिधित्व को स्थापित कर देती हैं, एक शब्द मे, आदर्श के स्थान पर यथार्थ को स्थापित करती हैं।

मुझे इस बात में सन्देह है कि हमारे युग के चित्रकारो ने मानव-शरीर-रचना की सूक्ष्म बारीकियो का जितना गहन अध्ययन किया है, उतना गहन अध्ययन राफेल ने किया था अथवा नहीं। वह अपने विषय को एकदम ठीक-ठीक रखने को उतना महत्त्व नहीं देता था, जितना हमारे युग के चित्रकार देते हैं, क्योंकि वह प्रकृति का अतिक्रमण करने की महत्वाकाक्षा रखता था। वह मनुष्य को मनुष्य से उच्चतर बनाने का प्रयत्न करता था और स्वय सौंदर्य को सुन्दर बनाने का प्रयत्न करता था। इसके विपरीत डेविड और उसके शिष्य जितने अच्छे चित्रकार थे, उतने ही अच्छे वे शरीर-रचना-विज्ञान के ज्ञाता थे। वे अपने नेत्रों के सामने उपस्थित माडलों को आश्चर्यजनक रूप से चित्रित करते थे, किन्तु वे उनके परे मुश्किल से कोई कल्पना कर पाते थे। वे ईमानदारी के साथ प्रकृति का अनुगमन करते थे, जबकि राफेल प्रकृति से भी सुन्दरतर सृष्टि करने का प्रयास करता था। दूसरे कलाकार हमारे लिए मनुष्य का ठीक-ठीक चित्रण कर गये हैं, जब कि राफेल की कृतियों मे हमें ईश्वरीयता के दर्शन मिलते हैं।

समय से दूर शक्तिशाली विषयो की खोज करते थे, जिससे उनकी कल्पना को असीम क्षेत्र प्राप्त होता था। हमारे युग के चित्रकार बहुधा अपनी प्रतिभा का उपयोग निजी जीवन के विवरणो का यथातथ्य अनुकरण करने में करते हैं, जो उनकी आखो के समक्ष सदा विद्यमान रहते हैं और वे सदा तुच्छ पदार्थों की अनुकृति करते रहते हैं जिनके मूलरूप प्रकृति में अत्यधिक सख्या मे मिलते हैं।

२२. प्रजातान्त्रिक युग की साहित्यिक विशिष्टताएँ

जब कोई यात्री सयुक्त-राज्य अमरीका मे किसी पुस्तक-विक्रेता की दूकान मे प्रवेश करता है और खानों मे रखी हुई अमरीकी पुस्तको का निरीक्षण करता है, तब उसे पुस्तको की सख्या बहुत अधिक प्रतीत होती है। जब कि इसके विपरीत सुज्ञात लेखको की रचनाओं की सख्या अत्यन्त कम प्रतीत होती है। उसे सर्वप्रथम मानवीय ज्ञान के प्रारम्भिक सिद्धान्तो की शिक्षा देने वाले अनेक प्राथमिक निबन्ध दिखायी देगे। इनमे से अधिकाश पुस्तके यूरोप मे लिखी होती हैं, अमरीकी उन्हे अपने उपयोग के योग्य बनाकर पुनर्मुद्रित करते हैं। उसके बाद विशाल सख्या मे धार्मिक पुस्तके, बाइबिले, उपदेश, धार्मिक भावनाओ को सुदृढ बनाने वाले कथानक, विवादास्पद धर्मग्रन्थ और दातव्य सस्थाओ के प्रतिवेदन मिलेंगे, अन्त मे राजनीतिक पुस्तिकाओ की एक लम्बी सूची दिखायी देती है। अमरीका मे पार्टियॉ एक दूसरे के मतो का खण्डन करने के लिए पुस्तके नहीं लिखती हैं, अपितु वे पुस्तिकाए लिखती हैं, जो एक दिन के लिए अविश्वसनीय तीव्रता के साथ प्रसारित होती हैं और तत्पश्चात् समाप्त हो जाती है।

मानव-मस्तिष्क की इन समस्त अज्ञात कृतियों के मध्य थोडे-से लेखकों की अधिक उल्लेखनीय रचनाएँ दिखायी देती हैं, जिनके नाम यूरोप निवासियों को ज्ञात हे अथवा ज्ञात होने चाहिए।

यद्यपि हमारे युगों मे अमरीका सम्भवत वह सभ्य देश है जिसमे साहित्य पर न्यूनतम ध्यान दिया जाता है, फिर भी, वहॉ काफी व्यक्ति मस्तिष्क की सृष्टियो मे रुचि रखते है और उन्हे यदि जीवन का अध्ययन नहीं, तो ''-से-कम अपने अवकाश के क्षणों का आकर्षण अवश्य बनाते हैं, किन्तु जो पुस्तके चाहते हैं, उनमे से अधिकाश पुस्तके उन्हे इग्लैण्ड से

प्राप्त होती हैं। लगभग समस्त महत्वपूर्ण अंग्रेजी पुस्तकें सयुक्त-राज्य अमरीका मे पुनः प्रकाशित होती हैं। ग्रेट ब्रिटेन की साहित्यिक प्रतिभा अब भी नव विश्व के अरण्यो के आन्तरिक भागो मे अपनी किरणे प्रसारित करती है। ऐसा कोई घर मुश्किल से मिलेगा जहाँ शेक्सपियर के इक्के-दुक्के नाटक न मिले। मुझे याद है कि मैंने हेनरी पंचम का सामन्ती नाटक सर्वप्रथम लकड़ी से बनी एक झोपडी मे पढा था।

न केवल अमरीकी अंग्रेजी साहित्य की निधि का निरन्तर उपयोग करते हैं, प्रत्युत सच्चाई के साथ कहा जा सकता है कि वे इग्लैण्ड के साहित्य को अपनी भूमि पर पनपता हुआ देखते हैं। सयुक्त-राज्य अमरीका मे जो थोडे-से व्यक्ति साहित्यिक कृतियों की रचना मे लगे हैं, उनमे से अधिकाश सारतः और उससे भी अधिक स्वरूपतः अंग्रेज हैं। इस प्रकार वे प्रजातंत्र के मध्य उन विचारों और साहित्यिक फैशनो को प्रविष्ट करते हैं, जो उस कुलीनतान्त्रिक राष्ट्र से प्रचलित हैं, जिन्हें उन्होंने अपना आदर्श बनाया है। वे विदेशी प्रणालियों से उधार लिये गये रगो से चित्र बनाते हैं और चूँकि वे अपने जन्म के देश के वास्तविक रूप का प्रतिनिधित्व मुश्किल से करते हैं, इसलिए वे वहाँ बहुत ही कम लोकप्रिय होते है।

सयुक्त-राज्य अमरीका के नागरिको को स्वय इस बात का, कि पुस्तको का प्रकाशन उनके लिए नहीं होता, इतना अधिक विश्वास होता है कि जिस प्रकार किसी मूल चित्र का निर्माता उस चित्र की प्रतिलिपि की विशेषता के विषय मे निर्णय करने के लिए योग्य अधिकारी माना जाता है, उसी प्रकार अमरीकी नागरिक अपने लेखकों मे से किसी लेखक की विशेषता के सम्बन्ध मे निर्णय करने से पूर्व सामान्यत. तब तक प्रतीक्षा करते है, जब तक उसकी प्रसिद्धि की सम्पुष्टि इगलैण्ड मे नहीं हो जाती। अतः ठीक-ठीक कहा जाय तो सम्प्रति सयुक्त-राज्य अमरीका के निवासियो के पास कोई साहित्य नहीं है। केवल पत्रकार ही ऐसे लेखक हैं, जिन्हे मैं अमरीकी लेखको के रूप मे मान्य करता हूँ। निश्चय ही वे महान लेखक नहीं है, किन्तु वे अपने देश की भाषा बोलते हैं और उनकी बाते सुनी जाती हैं। अन्य लेखक विदेशी हैं, वे अमरीकियो के लिए उसी प्रकार हैं जिस प्रकार ज्ञान के पुनरुत्थान के समय यूनानियों और रोमनों के अनुकरणकर्त्ता हमारे लिए थे—अर्थात् वे सामान्य सहानुभूति के नहीं, प्रत्युत उत्सुकता के पात्र हैं। वे मस्तिष्क का अनुरजन करते हैं, किन्तु वे जनता की रीति-नीतियों को प्रभावित नही करते।

मै पहले ही कह चुका हूँ कि इस स्थिति का उद्भव केवल प्रजातन्त्र में नहीं होता तथा इसके कारणो की खोज प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त से पृथक् अनेक विलक्षण परिस्थितियों मे करनी होगी। अमरीकियो के जो कानून और जो सामाजिक स्थिति है, उसे बनाये रखते हुए भी यदि उनका मूल भिन्न प्रकार का होता, तो मुझे सन्देह नहीं कि उनके पास एक साहित्य होता। मुझे विश्वास है कि वे जैसे हैं, वैसा होते हुए भी अन्ततोगत्वा उनके पास एक साहित्य हो जायगा, किन्तु उसका स्वरूप हमारे युग की अमरीकी साहित्यिक कृतियो के स्वरूप से भिन्न होगा और वह स्वरूप विशिष्ट रूप से उसका निजी स्वरूप होगा। इस स्वरूप का पहले से ही पता लगा लेना असम्भव नहीं है।

मै एक ऐसे कुलीनतान्त्रिक जन समुदाय की कल्पना करता हूँ, जिसमे साहित्य का अभ्यास किया जाता है। वहॉ मस्तिष्क के तथा राज्य के भी कार्यों का सचालन समाज के एक शासक-वर्ग द्वारा किया जाता है। साहित्यिक और राजनीतिक जीवन लगभग पूर्णरूपेण इस वर्ग तक ही अथवा पद की दृष्टि से उसके निकटतम वर्ग तक सीमित रहता है। ये बाते शेष बाते समझने के लिए पर्याप्त हैं।

जब एक ही प्रकार के थोड़े-से व्यक्ति एक ही समय एक ही प्रकार के कार्य मे लगे होते हैं, तब वे सरलतापूर्वक एक दूसरे से मिलते हैं और कतिपय ऐसे प्रधान नियमो को स्वीकार करते है, जिससे वे भी शासित रहते हैं। यदि इन व्यक्तियो के ध्यान को आकृष्ट करने वाली वस्तु साहित्य हो तो वे भी शीघ्र ही मस्तिष्क की सृष्टियो को ऐसे सुनिश्चित सिद्धान्त मे आबद्ध कर देगे, जिनसे विचलित होने की अनुमति नहीं रह जायगी। यदि देश मे ऐसे व्यक्तियो की वशानुगत स्थिति हो, तो स्वभावत वे अपने लिए न केवल कतिपय सुनिश्चित नियम स्वीकार करने की ओर उन्मुख होगे, प्रत्युत उन नियमो पर चलने की ओर भी उन्मुख होंगे, जिन्हे उनके पूर्वजों ने अपने पथ-प्रदर्शन के लिए निर्धारित किया था। उनका व्यवहार एक साथ ही कठोर और परम्परागत होगा। चूँकि वे आवश्यक रूप से जीवन की दैनिक चिन्ताओ मे तल्लीन नहीं होते—जैसा कि वे अपने पूर्वजो से तनिक भी अधिक इन चिन्ताओं से ग्रस्त नहीं रहे हैं—इसलिए पिछली कई पीढियों से उन्होने मानसिक श्रमों मे रुचि लेना सीखा है। उन्होंने साहित्य को एक कला के रूप मे समझना, अन्त मे साहित्य के लिए साहित्य से प्रेम करना तथा उसके नियमो का पालन करने वाले व्यक्तियो को देखकर विद्वान-सदृश सन्तोष का अनुभव करना सीखा है।

। सब कुछ नहीं है, जिन व्यक्तियों की बात मैं करता हूँ उन्होंने अपना

जीवन विघ्न-हीन अथवा समृद्धिमय परिस्थितियो मे प्रारम्भ किया था और ऐसी ही परिस्थितियों मे उनके जीवन का अन्त होगा। अतः स्वभावतः उनमे उत्कृष्ट कोटि के सन्तोषो के प्रति रुचि एव परिष्कृत तथा कोमल आनन्दों के प्रति प्रेम उत्पन्न हो गया है। इतना ही नहीं, दीर्घ काल तक और शान्तिपूर्वक इतनी अधिक समृद्धि का आनन्दोपभोग करने से बहुधा उनमे जो एक प्रकार की मानसिक एवं हार्दिक कोमलता आ जाती है, उसके परिणामस्वरूप वे अपने आनन्द से भी उन वस्तुओ को पृथक् कर देते है, जो अत्यन्त उत्तेजनाकारी अथवा अत्यधिक तीव्रतापूर्ण होती है। वे अत्यधिक उत्तेजित होने की अपेक्षा मनोरजन को अधिक पसन्द करते है, वे रुचि के लिए इच्छुक होते हैं, किन्तु भावाभिभूत हो जाने के इच्छुक नहीं होते।

मैंने अभी-अभी जिन व्यक्तियों का वर्णन किया है, उनकी साहित्यिक कृतियों अथवा उनके लिए निर्मित साहित्यिक कृतियो की एक भारी सख्या की यदि हम कल्पना करे, तो हमे तत्काल एक ऐसी साहित्यिक शैली के दर्शन मिलेंगे, जिसमे प्रत्येक वस्तु नियमित और पूर्वव्यवस्थित होगी। छोटी-से-छोटी कृति के छोटे-से-छोटे विवरणो की भी सावधानीपूर्वक परीक्षा की जायगी। प्रत्येक वस्तु मे कला और श्रम के स्पष्ट दर्शन मिलेंगे। प्रत्येक प्रकार के लेखन मे उसके निजी नियम होंगे, जिन नियमो से विचलित होने की अनुमति नहीं होगी तथा जो नियम उसे अन्य समस्त प्रकार की लेखन-शैलियो से पृथक् करते हैं। शैली को विचार के समान ही महत्वपूर्ण समझा जायगा तथा रूप पर विषय-वस्तु के समान ही ध्यान दिया जायगा। शब्दावली सुरुचिपूर्ण, नपीतुली और एकरूप होगी। मस्तिष्क का स्वर सदा गौरवपूर्ण होगा, वह बहुत कम उत्तेजनापूर्ण होगा तथा लेखक अपनी कृतियो की सख्या मे वृद्धि करने की अपेक्षा उन्हें पूर्ण बनाने की अधिक चिन्ता करेंगे। कभी-कभी ऐसा होगा कि अपने मध्य ही जीवन व्यतीत करने वाले तथा केवल अपने लिए लिखने वाले साहित्यिक वर्ग के सदस्य शेष ससार से पूर्णतया विमुख हो जायगे, जिससे उसकी शैली मिथ्या एव श्रमसाध्य हो जायगी। वे मात्र अपने प्रयोग के लिए सूक्ष्म साहित्यिक नियम निर्धारित करेंगे, जिसके परिणामस्वरूप वे अनजाने ही सामान्य बुद्धि के मार्ग से विपथ हो जायंगे और अन्त मे प्रकृति की सीमाओं का अतिक्रमण कर जायगे। वार्तालाप की एक ऐसी पद्धति के लिए, जो अश्लील से भिन्न हो, प्रयास करते-करते वे एक ऐसी अभिजात्य शब्दावली पर पहुँच जायंगे जो मुश्किल से जनता की टूटी-फूटी बोली की अपेक्षा शुद्ध भाषा से कम

दूर होगी। कुलीनतत्रियों के मध्य साहित्य के ये स्वाभाविक खतरे हैं। अपने को जनता से पूर्णत. पृथक् रखने वाला प्रत्येक कुलीनतत्र निर्वीर्य हो जाता है—यह तथ्य साहित्य मे भी उतना ही सत्य है, जितना कि राजनीति मे।

अब हम चित्र को घुमा कर उसके दूसरे पहलू पर विचार करें। हम अपने को एक प्रजातत्र के मध्य ले चले, जो प्राचीन परम्पराओं तथा वर्तमान सस्कृति द्वारा मस्तिष्क के सुखों मे सम्मिलित होने के लिए अप्रस्तुत न हो। वहॉ श्रेणियॉ अन्तर्मिश्रित और अव्यवस्थित होती हैं, ज्ञान और सत्ता दोनो के अनन्त उपविभाग होते हैं और, यदि मै ऐसा कह सकूँ, वे प्रत्येक दशा मे बिखरे होते हैं। अत. यहॉ एक ऐसा मिलाजुला जनसमूह होता है, जिसकी बौद्धिक आवश्यकताओं की पूर्ति करनी होती है। मानसिक आनन्द के इन सभी उपासकों को एक ही प्रकार की शिक्षा नहीं मिली होती, वे अपने पिताओं से नहीं मिलते, उनका रूप निरन्तर बदलता रहता है, क्योंकि वे निरन्तर स्थान-परिवर्तन, भावना-परिवर्तन और सम्पत्ति-परिवर्तन की स्थिति मे रहते हैं। अतः प्रत्येक का मस्तिष्क परम्परा अथवा समान आदतो द्वारा अपने साथियों के मस्तिष्क के साथ सम्बद्ध नहीं रहता और एक साथ सगठित होने की शक्ति प्रेरणा अथवा समय उन्हें कभी नहीं मिला। फिर भी इसी विभिन्नता-मूलक और आन्दोलित जन-समूह के मध्य से लेखक उत्पन्न होते हैं और उसी स्रोत से उनके लाभ तथा उनकी ख्याति का वितरण होता है।

मै बिना कठिनाई के समझ सकता हूँ कि उन परिस्थितियों के अन्तर्गत ऐसे व्यक्तियों के साहित्य मे मुझे कुलीनतात्रिक युगो के पाठकों और लेखकों द्वारा स्वीकृत कठोर परम्परागत नियमो को कम सख्या मे ही देखने की आशा करनी चाहिए। यदि ऐसी बात हो जाय कि किसी एक युग के व्यक्ति इस प्रकार के किन्हीं नियमो से सहमत थे, तो इससे परवर्ती युग के सम्बन्ध मे कुछ भी प्रमाणित नहीं होगा, क्योंकि प्रजातात्रिक राष्ट्रो मे प्रत्येक नयी पीढी के लोग नये ही प्रकार के होते हैं। अतः इस प्रकार के राष्ट्रो मे साहित्य को सरलतापूर्वक कठोर नियमो मे आबद्ध नहीं किया जा सकता, और इस प्रकार के नियमो का स्थायी होना असम्भव है।

ऐसी बात नहीं है कि प्रजातत्रो मे जो लोग साहित्य का अभ्यास करते हैं, उन सभी को साहित्यिक शिक्षा प्राप्त हुई हो और जिन्हे सत्साहित्य से थोड़ा अनुराग होता है उनमे से अधिकाश व्यक्ति या तो राजनीति मे या किसी ऐसे व्यवसाय मे लगे रहते हैं, जिससे उन्हें कभी-कभी और छुक छिप कर ही

मस्तिष्क के आनन्द का अवसर मिल पाता है। अतः ये आनन्द उनके जीवन के मुख्य आकर्षण नहीं होते, प्रत्युत उन्हे जीवन के कठिन श्रम के मध्य एक क्षणभगुर और आवश्यक मनोविनोद के रूप मे समझा जाता है। इस प्रकार के व्यक्ति कभी साहित्य की कला का इतना पर्याप्त घनिष्ठ ज्ञान नही प्राप्त कर सकते, जिससे वे साहित्य के अधिक मर्मस्पर्शी सौन्दर्य की सराहना कर सके और उनकी समझ मे अभिव्यक्ति की सूक्ष्मताएँ आ भी नहीं सकती। चूँकि वे साहित्य मे अत्यन्त कम समय लगा पाते है, अतः वे इस सारे समय का सर्वोत्तम उपयोग करने का प्रयत्न करते है। वे ऐसी पुस्तको को पसन्द करते है, जिन्हे आसानी से प्राप्त किया जा सके, शीघ्रतापूर्वक पढा जा सके और जिन्हे समझने के लिए विद्वत्तापूर्ण गवेषणाओ की आवश्यकता नहीं होती। वे ऐसा सौन्दर्य चाहते हें, जो स्वतः प्रस्तुत हो जाय और जिसका आनन्द सरलतापूर्वक लिया जा सके। सर्वोपरि बात यह है कि उन्हे अप्रत्याशित और नयी वस्तु चाहिए। व्यावहारिक जीवन के संघर्ष एवं एकरसता के अभ्यास होने के कारण उन्हे प्रबल एव तीव्र भावनाओ, विस्मयकारी परिच्छेदो तथा ऐसे सत्यो एवं त्रुटियों की आवश्यकता होती है, जो इतने प्रतिभाशाली ढग से लिखे गये हो कि उन्हे उत्तेजित कर दे और उन्हें तत्काल, मानो उग्रता के साथ विषय के मध्य ढकेल दे।

इससे अधिक कहने की मुझे आवश्यकता ही क्या है—अथवा मेरे कहने से पूर्व ही कौन इस बात को नहीं समझता कि आगे क्या कहा जाने वाला है? सब कुछ कहने का साराश यह है कि कुलीनतत्र के युगो की भाँति प्रजातान्त्रिक युगों मे साहित्य व्यवस्था, नियमितता, विज्ञान और कला के पहलू को कभी प्रस्तुत नही कर सकता, इसके विपरीत साधारणत: उसके रूप-विधान का अपमान किया जायेगा, और कभी-कभी उससे घृणा की जायेगी। शैली बहुधा अवास्तविक, अशुद्ध, अतिबोझिल और शिथिल होगी—वह लगभग सदा प्रचण्ड और साहसिक होगी। लेखक विवरण को पूर्णतया प्रदान करने की अपेक्षा रचना को शीघ्र समाप्त करना अपना लक्ष्य बनायेगे। मोटे-मोटे ग्रन्थो की अपेक्षा छोटी-छोटी पुस्तके अधिक सामान्य हो जायंगी। विद्वत्ता की अपेक्षा बुद्धिकौशल अधिक होगा, ज्ञान की गहनता की अपेक्षा कल्पना अधिक होगी और साहित्यिक कृतियो मे विचार के अशिक्षित एवं रुक्ष श्रम के चिह्न होंगे—बहुधा उनमें अत्यधिक विविधता और बहुलता होगी—लेखकों का उद्देश्य आनन्दित करना नहीं—अपितु विस्मित करना, रुचि को आकृष्ट करने से अधिक भावनाओ को उत्तेजित करना मात्र होगा।

निश्चय ही यत्र-तत्र ऐसे लेखक असदिग्ध रूप से मिलेगे, जो एक भिन्न मार्ग को चुनेंगे और यदि वे श्रेष्ठ योग्यता से सम्पन्न हों तो अपनी त्रुटियों अथवा अपनी उच्चतर योग्यताओं के बावजूद पाठको को प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं, किन्तु ये अपवाद दुर्लभ होगे और जो लेखक अपनी रचनाओं के मुख्य विषय मे प्रचलित पद्धति से इस प्रकार हटेंगे, वे भी अपेक्षाकृत छोटी-छोटी बातों मे सदा ही पुन. उसी मार्ग पर चलने लगेंगे।

मैने अभी दो चरम-स्थितियों का चित्रण किया है, कोई राष्ट्र जिस सक्रमण द्वारा एक स्थिति से दूसरी स्थिति मे गुजरता है, वह आकस्मिक नहीं होता—प्रत्युत वह कमिक होता है और उसमे अत्यन्त विभिन्न गहनता की छायाएँ रहती हैं। किसी राष्ट्र को एक स्थिति से दूसरी स्थिति मे पहुँचने में जो समय लगता है, उस समय मे सदा एक क्षण ऐसा होता है कि जिसमे प्रजातात्रिक राष्ट्रों की साहित्यिक प्रतिभा का कुलीनतात्रिक राष्ट्रो की साहित्यिक प्रतिभा के साथ सगम होता है और दोनो मानव-मस्तिष्क पर सयुक्त आधिपत्य स्थापित करने का प्रयत्न करती हैं। इस प्रकार के युग क्षणिक किन्तु अत्यन्त उज्ज्वल होते हैं। उनमे उर्वरता होती है, किन्तु बहुलता नहीं, उत्तेजना होती है, किन्तु भ्रान्ति नहीं। अठारहवीं शताब्दी का फ्रासीसी साहित्य उदाहरण का काम दे सकता है।

यदि मै बलपूर्वक यह कहना चाहूँ कि किसी राष्ट्र का साहित्य सदा उसकी सामाजिक स्थिति और उसके राजनीतिक सविधान के अधीनस्थ होता है—तो मुझे अपने आशय से अधिक कहना चाहिए। मै इस बात से अवगत हूँ कि इन कारणो से स्वतंत्र अनेक ऐसे कारण है, जो साहित्यिक कृतियो को कतिपय विशिष्टताएँ प्रदान करते है, किन्तु ये कारण मुझे प्रमुख प्रतीत होते है। किसी जाति की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति तथा उसके लेखको की प्रतिभा के मध्य सदा अनेक सम्बन्ध विद्यमान रहते है, जो कोई भी एक सम्बन्ध को जानता है, वह कभी दूसरे सम्बन्ध से पूर्णतया अपरिचित नहीं रहता।

२३. प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में कविता के कतिपय स्रोत

'कविता' शब्द के भिन्न-भिन्न अर्थ लगाये गये हैं। यदि मै इस प्रश्न पर .ं। करूँ कि इन परिभाषाओं में से किसको चुना जाय तो इससे मेरे

पाठक थक जायेंगे। मैं उन्हे तत्काल बता देना पसन्द करता हूँ कि मैंने किस परिभाषा को चुना है। मेरे मतानुसार आदर्श के अन्वेषण तथा रेखाकन का नाम कविता है।

कवि वह है, जो अस्तित्वशील वस्तु के एक भाग का दमन कर चित्र मे कतिपय काल्पनिक स्पर्शों की वृद्धि कर और कतिपय ऐसी वास्तविक परिस्थितियो को, जो यथार्थतः एकत्र नहीं होतीं, सयुक्त कर, प्रकृति के कार्य को पूर्ण करता है और उसका विस्तार करता है। इस प्रकार कविता का लक्ष्य सत्य का प्रतिनिधित्व करना नहीं, अपितु इसको आकर्षक बनाना और मस्तिष्क के समक्ष उच्चतर कल्पना को उपस्थित करना होता है। पद्य, जिसे भाषा का आदर्श सौन्दर्य समझा जाता है, अत्यधिक कवित्वपूर्ण हो सकता है, किन्तु पद्य अपने आप में कविता नहीं होता।

जब मैं इस बात का पता लगाने के लिए अग्रसर होता हूँ कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के कार्यों, भावनाओं और मतो में क्या कुछ ऐसे हैं, जो आदर्श की कल्पना कराते है और इस कारण जिन्हें कविता का प्राकृतिक स्रोत समझा जा सकता है।

सर्वप्रथम इस बात को मान्य करना ही होगा कि आदर्श-सौन्दर्य के प्रति रुचि तथा उसकी अभिव्यक्ति से प्राप्त होने वाला आनन्द कुलीनतान्त्रिक जनता में जितना प्रबल अथवा व्यापक होता है, उतना प्रबल अथवा व्यापक वह प्रजातान्त्रिक जनता के मध्य नहीं होता। कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में कभी-कभी ऐसा होता है कि शरीर मानो स्वतः स्फूर्त कार्य करता है, जब कि उच्चतर शक्तियाँ निष्क्रियता से आबद्ध एवं बोझिल होती हैं। इन राष्ट्रों मे जनता बहुधा कवित्वमय रुचियों का प्रदर्शन करती है और कभी-कभी उसकी कल्पना उसकी आसपास की स्थिति का अतिक्रमण कर उससे बहुत ऊपर चली जाती है।

वर्णन से विमुख कर देता है, वह उन पदार्थों की सख्या में भी कमी कर देता है, जिनका वर्णन करना होता है।

कुलीनतत्र निश्चित धर्मों की सुदृढता और दीर्घ जीवन के लिए तथा राजनीतिक सस्थाओ के स्थायित्व के लिए भी अनुकूल होता है, क्योंकि वह समाज को एक निश्चित स्थिति मे रखता है। वह न केवल मानव-मस्तिष्क को विश्वास के निश्चित क्षेत्र के अतर्गत रखता है, बल्कि वह एक दूसरे धर्म की अपेक्षा एक ही धर्म को स्वीकार करने के लिए पूर्ण रूप से तैयार कर देता है। कुलीनतात्रिक जनता सदैव परमात्मा और मनुष्य के मध्य मध्यस्थ शक्तियों को रखने की ओर उन्मुख होती है। इस सम्बन्ध मे यह कहा जा सकता है कि कुलीनतात्रिक तत्त्व कविता के लिए अनुकूल होता है। जब जगत मे ऐसे अप्राकृतिक प्राणी निवास करते हैं, जिनका अनुभव इन्द्रियों द्वारा नहीं किया जा सकता, प्रत्युत जिनका पता मस्तिष्क द्वारा लगाया जाता है, तब कल्पना स्वतत्र उडान भर सकती है और कवियो को वर्णन के लिए हजारो विषय तथा उनकी कृतियो मे रुचि लेने वाले असख्य पाठक मिलते है। इसके विपरीत प्रजातात्रिक युगो मे कभी-कभी ऐसा होता है कि मनुष्य धर्म के मामलो मे भी उतने ही अस्थिर रहते हैं जितने अपने कानूनों के मामलो मे। तब सशय कवियो की कल्पना को पुन: पृथ्वी पर खीच लाता है तथा उन्हे यथार्थ एव दृश्य जगत मे आबद्ध कर देता है। जब समानता का सिद्धान्त धार्मिक विश्वास को विक्षुब्ध नहीं करता, तब भी उसकी प्रवृत्ति उसका सरलीकरण करने, गौण अभिकर्ताओं से ध्यान हटाने तथा उसे मुख्यतः सर्वोच्च सत्ता पर आधारित करने की होती है।

कुलीनतत्र स्वभावतः मानव-मस्तिष्क को भूतकाल पर विचार करने की दिशा मे ले जाता है। उसे वहीं जमा देता है। इसके विपरीत प्रजातत्र मनुष्यों मे प्राचीनता के प्रति एक आन्तरिक अरुचि उत्पन्न कर देता है। इस सम्बन्ध मे कुलीनतत्र कविता के अत्यधिक अनुकूल होता है, क्योंकि जो वस्तुएँ जितनी अधिक दूर होती हैं वे उतनी ही अधिक बडी और अस्पष्ट हो जाती है और इन दो कारणों से वे आदर्श के रेखाकन के लिए अधिक उपयुक्त होती है। कविता को भूतकाल से वचित करने के पश्चात् समानता का सिद्धान्त अशतः उसे वर्तमान से भी वचित कर देता है। कुलीनतात्रिक राष्ट्रो मे विशेषाधिकार-प्राप्त कतिपय ऐसे व्यक्ति होते हैं, जिनकी स्थिति मनुष्य की स्थिति के बाहर और उससे परे कही जा सकती है। इन व्यक्तियो के पास सत्ता, सम्पत्ति, ख्याति, बुद्धि, सस्कार [illegible] बातों मे एक विलक्षण विशिष्टता प्रतीत होती है। जनसमूह उन्हें

कभी अत्यन्त निकटता से नहीं देख पाता, अथवा वह उनका निरीक्षण सूक्ष्मता-पूर्वक नहीं कर पाता और ऐसे व्यक्तियों के वर्णन को कवित्वमय बनाने के लिए किसी भी बात की आवश्यकता नहीं होती। दूसरी ओर, उन्हीं व्यक्तियों के मध्य आपको ऐसे अज्ञान, निम्न और पराधीनता के पाश मे बॅधे हुए वर्ग मिलेंगे जो अपने असस्कार और दयनीयता के कारण उतने ही उपयुक्त विषय होते हैं, जितने कि पहले वर्ग के व्यक्ति अपनी महत्ता और सस्कार के कारण होते हैं। इसके अतिरिक्त जिन विभिन्न वर्गों से कुलीनतात्रिक समाज का निर्माण होता है, वे एक दूसरे से पृथक् एव इतने अपूर्ण रूप से परिचित होते हैं कि उनकी वास्तविक स्थिति में कुछ जोड कर अथवा कुछ घटा कर कल्पना द्वारा सदा उनका प्रतिनिधित्व किया जा सकता है।

प्रजातात्रिक समुदायो में, जहॉ सभी व्यक्ति महत्त्वहीन और बहुत अधिक समान होते हैं, प्रत्येक व्यक्ति, जब वह अपना सर्वेक्षण करता है, अपने समस्त साथियों को तत्काल देख लेता है। अतः प्रजातात्रिक युगो के कवि कभी किसी व्यक्ति विशेष को अपनी कविता का विषय नहीं बना सकते, क्योकि कोई अल्प महत्त्ववाला और सर्वत्र स्पष्टतापूर्वक दिखायी देने वाला पदार्थ कभी आदर्श कल्पना का विषय नहीं बन सकता।

इस प्रकार विश्व मे जिस प्रकार समानता के सिद्धान्त की प्रतिष्ठा हुई है, उसी अनुपात मे कविता के अधिकाश प्राचीन स्रोत शुष्क हो गये हैं। अब हम यह दिखाने का प्रयत्न करेंगे कि वह कितने नवीन स्रोतो को जन्म दे सकता है।

जब सशयवाद के कारण स्वर्ग वीरान बन गया और समानता की प्रगति के कारण मनुष्य तुच्छतर और अधिक ज्ञातव्य बन गया, तब कवियों ने, जिन्हे अभी तक इस बात का पता नहीं था कि वे कुलीनतत्र के साथ ही विदा हो जाने वाली महान विषय-वस्तुओ का स्थान किस वस्तु को दे सकते है, निर्जीव प्रकृति की ओर दृष्टिनिक्षेप किया। चूॅकि देवता और वीर उनकी दृष्टि से

मेरी मान्यता है कि अन्त मे प्रजातत्र कल्पना को समस्त पदार्थों से हटा कर मनुष्य की ओर ले आता है और उसे केवल मनुष्य पर केन्द्रित कर देता है। प्रजातात्रिक राष्ट्र प्रकृति की सृष्टियों पर विचार कर कुछ क्षणों तक अपना मनोरजन कर सकते है, किन्तु वास्तव में उन्हे प्रेरणा केवल अपने ही सर्वेक्षण से मिलती है। इस प्रकार के राष्ट्रों मे कविता के वास्तविक स्रोत यहाॅ और केवल यहीं मिल सकते हैं और यह विश्वास किया जा सकता है कि जो कवि यहाॅ से अपनी प्रेरणाएॅ नहीं प्राप्त करेगे, उनका उन मस्तिष्को पर कोई प्रभाव नहीं रह जायगा, जिन्हे वे मुग्ध करेगे और अन्त में भावनाहीन दर्शकों के अतिरिक्त उनकी कृतियों को पढने वाला कोई नहीं रह जायगा।

मै बता चुका हूॅ कि किस प्रकार प्रजातात्रिक युगों मे प्रगति और मानव-जाति की अनिश्चित पूर्णता की धारणाएॅ मिलती हैं। प्रजातात्रिक राष्ट्र भूतकाल की तनिक भी चिन्ता नहीं करते, किन्तु भविष्य की कल्पनाओं मे सदा तल्लीन रहते हैं, इस दिशा मे उनकी अपरिसीम कल्पना उनकी समस्त सीमाओ का अतिक्रमण कर जाती है। अत॰ यहाॅ कवियों की प्रतिभा के लिए व्यापकतम क्षेत्र मिलता है, जिससे वे अपनी रचनाओ को दृष्टि से पर्याप्त दूर ले जाते है। प्रजातत्र, जो कवि के दृष्टि-पथ से भूतकाल को विलुप्त कर देता है, भविष्य को उसके समक्ष खोल कर रख देता है।

चूॅकि प्रजातात्रिक समाज का निर्माण करने वाले समस्त नागरिक समान और सदृश होते हैं, इसलिए कवि उनमे से किसी एक का वर्णन नही कर सकता, अपितु वह अपनी प्रतिभा का उपयोग स्वय राष्ट्र के लिए करता है। व्यक्तियों की सामान्य एकरूपता के कारण, जिससे उन मे से कोई एक व्यक्ति पृथक् रूप से कविता का उचित विषय नहीं बन सकता, कवि उन सभी व्यक्तियो को एक ही कल्पना-चित्र में सम्मिलित कर लेता है और स्वय समाज का सामान्य सर्वेक्षण करता है। अपने सम्बन्ध मे प्रजातात्रिक राष्ट्रो की दृष्टि अन्यो की अपेक्षा स्पष्टतर होती है और इतना प्रभावोत्पादक पहलू आदर्श के चित्राकन के लिए सराहनीय रूप से उपयुक्त होता है।

मै निस्सकोच रूप से स्वीकार करता हूॅ कि अमरीकियो मे कवि नहीं हैं, मैं इस बात को स्वीकार नहीं कर सकता कि उनमे कवित्व की भावनाएॅ नहीं हैं। यूरोप मे लोग अमरीका के जगलो के विषय में बहुत अधिक बाते करते हैं, किन्तु अमरीकी स्वय उनके विषय मे कुछ नही सोचते। वे निर्जीव प्रकृति के चमत्कारों के प्रति उदासीन हैं और यह कहा जा सकता है कि वे अपने चारों

ओर स्थित प्रचण्ड बनो को तब तक नहीं देखते, जब तक उन्हे काटा नही जाता। उनकी ऑखे एक दूसरे दृश्य पर जमी रहती हैं। अमरीकी जनता इन जगलों के मध्य अपने अभिमान को ही—दलदलों का सुखाया जाना, नदियों का मार्ग-परिवर्तन, निर्जन स्थानो का बसाया जाना और प्रकृति को वशीभूत करना—देखती है। अपने सम्बन्ध मे अमरीकियो का यह कल्पना-चित्र उनके समक्ष केवल कभी-कभी उपस्थित नहीं होता। यह कहा जा सकता हैं कि वह प्रत्येक अमरीकी के कम-से-कम तथा अधिक-से-अधिक महत्त्वपूर्ण कार्यो मे परिलक्षित होता है तथा उसके मस्तिष्क के सामने सदा घूमता रहता है।

सयुक्त-राज्य अमरीका मे एक व्यक्ति का जीवन तुच्छ, नीरस, क्षुद्र स्वार्थों से ओत-प्रोत अर्थात् एक शब्द मे कवित्वहीन होता है। उतनी कवित्वहीन वस्तु की कल्पना नही की जा सकती, किन्तु वह जिन विचारो की ओर इगित करता है, उनमें से कोई-न-कोई विचार सदा ऐसा होता है, जो कविता से सदा ओतप्रोत होता है और यही वह गुप्त स्नायु है जो समस्त शरीर को स्फूर्ति प्रदान करता है।

कुलीनतात्रिक युगो मे प्रत्येक समुदाय तथा प्रत्येक व्यक्ति अन्य समस्त समुदायो तथा व्यक्तियो से पृथक् और असम्बद्ध रहता है। प्रजातात्रिक युगों मे मनुष्यो के तीव्र आरोहावरोह तथा उनकी अभिलाषाओं की अधीरता उन्हे निरन्तर आगे बढाती रहती है, जिससे विभिन्न देशो के निवासी आपस मे मिलते हैं, एक दूसरे को देखते-सुनते हैं तथा एक दूसरे से आदान-प्रदान करते हैं। अतः केवल एक समुदाय के सदस्यो मे ही अधिक समानता का विकास नहीं होता, स्वयं समुदाय एक दूसरे मे विलीन हो जाते हैं और यह समस्त समूह दर्शक की ऑखो के समक्ष एक विशाल प्रजातत्र का दृश्य उपस्थित करता है, जिसका प्रत्येक नागरिक एक राष्ट्र होता है। यह मानव जाति के स्वरूप को प्रथम बार अधिकतम प्रकाश मे प्रदर्शित करता है। जो कुछ समस्त मानव जाति के अस्तित्व, उसके उतार-चढाव और उसके भविष्य से सम्बन्ध रखता है, वह कविता का एक प्रचुर कोष बन जाता है।

कुलीनतात्रिक युगों मे रहने वाले कवि किसी समाज अथवा व्यक्ति के जीवन की कतिपय घटनाओ का वर्णन करने मे अत्यधिक सफल हुए हैं, किन्तु उनमे से किसी ने अपनी कृतियो मे मानव जाति के भाग्य को सम्मिलित करने का कभी साहस नहीं किया—यह एक ऐसा कार्य है जिसके लिए प्रजातात्रिक युगो मे लिखने वाले कवि प्रयत्न कर सकते है।

जिस समय प्रत्येक व्यक्ति अपनी आँखों को अपने देश से ऊपर उठाकर समस्त मानव जाति को विस्तारपूर्वक देखना प्रारम्भ कर देता है, उसी समय ईश्वर अपनी पूर्ण एव समस्त महिमा के साथ मानव-मतिष्क के समक्ष अधिक सुस्पष्ट हो जाता है। यदि प्रजातान्त्रिक युगों मे सत्त्वार्थक धर्म मे विश्वास बहुधा डिग जाता है और मध्यस्थ अभिकर्ताओं मे, चाहे उन्हे जिस नाम से पुकारा जाय, विश्वास अधिक बढ जाता है, तो दूसरी ओर मनुष्यों में स्वय ईश्वर की एक अत्यधिक व्यापक कल्पना करने की प्रवृत्ति भी होती है और मानवीय कार्यों मे उसका हस्तक्षेप उनकी दृष्टि के समक्ष एक नूतन एवं अधिक प्रभावोत्पादक रूप मे उपस्थित होता है। मानव जाति को एक अखण्ड समुदाय के रूप मे देखते हुए वे सरलतापूर्वक इस बात को समझते हैं कि नियतियाँ एक ही विधान से नियमित होती ह और वे प्रत्येक व्यक्ति के कार्यों मे उस सार्वजनीन एव शाश्वत योजना का चिह्न देखते हैं, जिस योजना द्वारा ईश्वर हमारी जाति पर शासन करता है। इस विचार को प्रजातान्त्रिक युगों मे कविता का एक दूसरा प्रभूत स्रोत माना जा सकता है।

यदि प्रजातान्त्रिक कवि देवताओं, दानवो और देवदूतों को साकार रूप प्रदान करने और पृथ्वी की सर्वोच्चता को अस्वीकार करने के लिए स्वर्ग से उन्हें नीचे खींच कर लाने का प्रयत्न करेगे, तो वे सदा उपहासास्पद एव नीरस प्रतीत होंगे, किन्तु वे जिन महान घटनाओं को समारोहपूर्वक स्मरण करते हैं, उनको यदि विश्व पर शासन करने वाले सामान्य ईश्वरीय विधानो के साथ सम्बद्ध करने का प्रयत्न करे तथा सर्वोच्च शासक के अस्तित्व को दिखाये बिना सर्वोच्च मस्तिष्क के विचारों का रहस्योद्घाटन करे, तो उनकी रचनाओं को समझा जायगा और उनकी सराहना की जायगी, क्योकि उनके समकालीन व्यक्तियो की कल्पना स्वेच्छापूर्वक इसी दिशा को ग्रहण करती है।

इसी प्रकार इस बात की पूर्व कल्पना की जा सकती है कि प्रजातान्त्रिक युगों मे रहने वाले कवि व्यक्तियों और सफलताओं का वर्णन करने की अपेक्षा भावनाओं और विचारो के वर्णन को अधिक पसन्द करेगे। प्रजातन्त्रो मे मनुष्यो की भाषा, वेशभूषा और दैनिक कार्य आदर्श की कल्पनाओं के लिए अरुचिकर होते हैं। ये वस्तुएँ अपने आप मे कवित्वमय नहीं होतीं और यदि बात इससे भिन्न होती, तो उसका स्वरूप वही नहीं रह जाता, क्योकि कवि जिन व्यक्तियों के समक्ष उनका वर्णन करेगा वे उन वस्तुओं से अधिक परिचित होते हैं।

होकर कवि इन्द्रियो के लिए बोधगम्य बाह्य आवरण के नीचे निरन्तर

अनुसंधान करता रहता है, जिससे वह अन्तरात्मा को पढ सके और मनुष्य की अपार्थिव प्रकृति की गुप्त गहराइयो का अध्ययन-निरीक्षण आदर्श के चित्रा-कन के लिए जितना उपयुक्त होता हैं, उतनी उपयुक्त कोई वस्तु नहीं होती। विरोधाभासों, महत्ता और क्षुद्रता, गहन अंधकार और विस्मयजनक प्रकाश से युक्त एक ऐसे आश्चर्यजनक पदार्थ का, जो एक साथ ही उत्तेजनाजनक दया, प्रशसा और भय तथा घृणा की सृष्टि करने की क्षमता रखता हो, पता लगाने के लिए मुझे पृथ्वी और आकाश के एक छोर से दूसरे छोर तक जाने की आवश्यकता नहीं है। मुझे केवल अपने पर दृष्टिपात करने की आवश्यकता है। मनुष्य शून्य से उत्पन्न होता है, समय को पार करता है और सदा के लिए परमात्मा मे विलीन हो जाता है। वह केवल एक क्षण के लिए दो अतल खन्दको के तट पर विचरण करता हुआ दिखायी पड़ता है और वहीं खो जाता है।

यदि मनुष्य अपने से पूर्णतया अपरिचित होता तो उसमे कोई कविता नहीं होती, क्योकि मस्तिष्क जिस वस्तु की कल्पना नहीं करता, उसका वर्णन करना असम्भव हैं। यदि मनुष्य स्वय अपनी प्रकृति को स्पष्ट देख पाता तो उसकी कल्पना निष्क्रिय हो जाती और चित्र में कुछ भी वृद्धि नहीं कर पाती, किन्तु मनुष्य की प्रकृति उसके लिए इतने पर्याप्त रूप मे प्रकट होती है कि वह अपने विषय मे कुछ समझ सके, किन्तु अन्य सभी के लिए वह इतनी अन्धकारमय होती है कि उसके अस्तित्व के विषय मे कुछ अधिक पूर्ण धारणा बनाने के लिए गहन अंधकार में प्रवेश करना पडता है, जिसमे वह सदा निष्फल भटकता रहता है।

प्रजाताान्त्रिक समाज मे कविता काल्पनिक कथाओ अथवा प्राचीन परम्पराओं के स्मारकों पर आधारित नही होगी। कवि जगत में अतिमानवीय प्राणियों को, जिनमे उसके पाठकों का तथा स्वयं उसका विश्वास नहीं रह गया है, बसाने का प्रयत्न नहीं करेगा, न वह पुण्य और पाप को, जिन्हे उनके अपने ही स्वरूप में अधिक अच्छी तरह ग्रहण किया जाता है, शुष्क रीति से साकार बनायेगा। ये सभी साधन उसके किसी काम नही आते, किन्तु मनुष्य बना रहता है और कवि को इससे अधिक की आवश्यकता नहीं है। मानव-जाति का भविष्य—अपने देश और अपने युग से पृथक और अपनी भावनाओं, अपने सशयो, अपनी दुर्लभ समृद्धि और कल्पनातीत दयनीयता के साथ प्रकृति और परमात्मा की उपस्थिति मे खडा मनुष्य स्वय इन राष्ट्रो में कविता का एकमात्र नहीं, तो प्रमुख विषय बन जायगा।

यदि हम विश्व मे प्रजातंत्र की स्थापना होने के बाद उत्पन्न हुए महानतम कवियों की कृतियों पर विचार करे, तो अनुभव द्वारा इस कथन की पुष्टि हो सकती है। हमारे युग के जिन लेखकों ने फास्ट, चाइल्ड, हैरोल्ड, रेने और जोसलिन की आकृतियो का इतने सराहनीय ढग से रेखाकन किया है, उन्होंने किसी व्यक्ति के कार्यो को अभिलिखित करने का नहीं, प्रत्युत मानव हृदय के कतिपय अधिक अन्धकारमय कोनों को विस्तृत करने तथा उन पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया।

ऐसी होती हैं प्रजातत्र की कविताएँ। अत. समानता का सिद्धान्त कविता के समस्त विषयों को नष्ट नहीं करता, यह उनकी सख्या को कम, किन्तु उनको विशालतर बना देता है।

२४. असरीकी लेखकों और वक्ताओं की अतिरेकपूर्ण शैली

मैने अनेक बार कहा है कि जो अमरीकी व्यवसाय मे स्पष्ट, सीधी-सादी, समस्त आडम्बरों से रहित और इतनी अधिक सरल भाषा काम मे लाते हैं, जो बहुधा रूक्ष हो जाती है, वे ही ज्योंही अधिक कवित्वमय शब्दावली का प्रयोग करने का प्रयत्न करते हें, त्योही वे अतिरेकपूर्ण हो जाते हें। तब वे भाषण के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक अपने आडम्बर का प्रदर्शन करते हैं और उन्हें प्रत्येक अवसर पर प्रचुर मात्रा मे कल्पना-चित्रो की सृष्टि करते हुए सुन कर यह कल्पना की जा सकती है कि वे कभी सरल भाषा मे कोई बात नहीं करते।

अग्रेज इस प्रकार की त्रुटियॉ अपेक्षाकृत कम करते हैं। इसका कारण बिना विशेष कठिनाई के बताया जा सकता है। प्रजातान्त्रिक समुदायो मे प्रत्येक व्यक्ति अभ्यासवश एक अत्यन्त क्षुद्र पदार्थ के विषय मे अर्थात् स्वय अपने विषय मे सोचने मे तल्लीन रहता है। यदि वह कभी अपनी दृष्टि को ऊपर ले जाता है, तो वह केवल विशाल समाज के विशाल आकार को अथवा मानव जाति के उससे भी अधिक प्रभावोत्पादक रूप को देखता है। उसके समस्त विचार या तो अत्यन्त सूक्ष्म और स्पष्ट होते हैं या अत्यन्त सामान्य एव अस्पष्ट होते हैं, बीच मे जो कुछ होता है, वह शून्य होता है। अतः जब वह अपने निजी क्षेत्र से बाहर खींच लाया जाता है, तब वह सदा यह आशा

करता है कि उसके ध्यान में कोई आश्चर्यजनक वस्तु लायी जायगी और केवल इन शर्तो पर ही वह एक क्षण के लिए अपने को उन तुच्छ, जटिल चिन्ताओं से पृथक् करना स्वीकार करता है, जिनसे उसके जीवन मे आकर्षण एवं उत्तेजना की सृष्टि होती है।

मेरी समझ मे इससे इस बात का पर्याप्त रूप से स्पष्टीकरण हो जाता है कि प्रजातन्त्रो में मनुष्य, जिनकी चिन्ताएँ सामान्यतः इतनी तुच्छ होती है, क्यो अपने कवियो को इतनी विशाल कल्पनाओ और इतने असीमित वर्णन के लिए कहते हैं। जहाँ तक लेखको का सम्बन्ध है, वे उस प्रवृत्ति के अनुसार कार्य करने मे पीछे नहीं रहते, जो प्रवृत्ति स्वयं उनकी भी होती है और उनका विस्तार सीमाओ के पार करते हुए वे बहुधा बृहदाकार तक पहुँचने के लिए महान का परित्याग कर देते हैं। इन साधनो द्वारा वे समूह की दृष्टि को आकृष्ट करने तथा उसे सरलतापूर्वक स्वय अपने ऊपर केन्द्रित कर लेने की आशा रखते है, उनकी आशाएँ निष्फल भी नहीं होतीं, क्योकि चूँकि समूह कविता मे विशाल सीमाओ वाले पदार्थों के अतिरिक्त और कुछ नहीं ढूँढता, इसलिए उसके पास न तो इतना समय होता है कि वह अपने समक्ष उपस्थित किये गये समस्त पदार्थो के स्वरूप की सही-सही माप कर सके, न उसके पास इतनी शुद्ध रुचि होती है कि वह तत्काल इस बात को देख सके कि वे पदार्थ कहाँ सीमा से बाहर हो गये हैं। लेखक और जनता एक साथ ही एक दूसरे को दोषपूर्ण बनाते हैं।

हमने यह भी देखा है कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे कविता के स्रोत वैभवपूर्ण होते हैं, किन्तु प्रचुर मात्रा मे नहीं होते। वे स्रोत शीघ्र ही समाप्त हो जाते हैं और कवियों को चूँकि यथार्थ एवं सत्य मे आदर्श के तत्त्व नहीं मिलते, इसलिए वे उनका पूर्ण रूप से परित्याग कर देते हैं और दानवों की सृष्टि करते हैं। मुझे इस बात का भय नही है कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो की कविता नीरस सिद्ध होगी अथवा उसकी उडान पृथ्वी के अत्यन्त निकट होगी; बल्कि मुझे यह आशका है कि वह सदा बादलों मे लुप्त होती रहेगी तथा अन्त मे उसकी पहुँच विशुद्ध काल्पनिक क्षेत्रों तक ही सीमित होगी। मुझे आशंका है कि प्रजातान्त्रिक कवियो की रचनाएँ बहुधा प्रभूत एव असम्बद्ध कल्पना-चित्रों से अतिरंजित वर्णनों और विचित्र प्राणियो से ओतप्रोत होगी तथा उनके मस्तिष्क के काल्पनिक प्राणियों के कारण हमे कभी-कभी यथार्थ जगत पर खेद प्रगट करना पड़ सकता है।

२५. प्रजातांत्रिक इतिहासकारों की कतिपय विशिष्टताएँ

कुलीनतान्त्रिक युगो मे लिखने वाले इतिहासकार समस्त घटनाओ का कारण कतिपय व्यक्तियों की किसी विशेष इच्छा और चरित्र को बताते हैं और उनकी प्रवृत्ति सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्रान्तियों का कारण तुच्छ घटनाओं को बताने की होती है। वे तुच्छतम कारणो का पता अत्यत दूरदर्शिता से लगाते हें और बहुधा महानतम कारणो को अदृष्ट ही छोड देते हैं।

प्रजातान्त्रिक युगों मे रहने वाले इतिहासकारों मे इसके ठीक विपरीत विशिष्टताएँ दिखायी देती हैं। उनमे से अधिकाश जाति के भविष्य पर व्यक्ति का अथवा जनता के भाग्य पर नागरिकों का कोई प्रभाव मुश्किल से बताते हैं, किन्तु दूसरी ओर वे छोटी-छोटी घटनाओ के महान सामान्य कारण बताते हैं। इन विरोधी प्रवृत्तियों से एक दूसरी का स्पष्टीकरण हो जाता है।

जब कुलीनतान्त्रिक युगों का इतिहासकार विश्व के दृश्य का सर्वेक्षण करता है, तब वह तत्काल ऐसे अत्यन्त थोड़े प्रमुख अभिनेताओं को देखता है, जो समस्त भूमिकाओ को सम्पन्न करते हैं। ये महान व्यक्ति, जो रगमच के अग्रभाग में स्थित होते हैं, ध्यान को आकृष्ट कर लेते हे और उसे अपने ही ऊपर केन्द्रित कर लेते हैं। जब कि इतिहासकार उन गुप्त उद्देश्यों का अनुसधान करने के लिए सन्नद्ध रहता है जिन उद्देश्यो से ये व्यक्ति बोलते और कार्य करते हैं, अन्य उद्देश्य उसके ध्यान मे नहीं आते। कतिपय व्यक्ति जिन कार्यो को करते हुए देखे जाते हैं, उनके महत्व से वह एक व्यक्ति के शक्य प्रभाव के विषय मे अतिरजित अनुमान लगाता है और उसके परिणामस्वरूप वह स्वभावत. यह सोचने लगता है कि समूह की आकस्मिक प्रेरणाओ का स्पष्टीकरण करने के लिए यह आवश्यक है कि उनका कारण किसी एक व्यक्ति के विशेष प्रभाव को बताया जाय।

इसके विपरीत जब समस्त नागरिक एक दूसरे से स्वतत्र होते हैं और उनमे से प्रत्येक व्यक्तिगत रूप से दुर्बल होता है, तब समुदाय के ऊपर महान अथवा उससे भी कम स्थायी प्रभाव रखता हुआ नहीं दिखाई देता। प्रथम दृष्टि मे उसके ऊपर व्यक्तियो का कोई प्रभाव नहीं प्रतीत होता और समाज उन सभी व्यक्तियो के, जिनसे उसका निर्माण होता है, स्वतत्र एव ऐच्छिक कार्य से अकेला आगे बढता हुआ प्रतीत होगा। इससे स्वभावत. मस्तिष्क को उस सामान्य कारण की खोज करने की प्रेरणा मिलती है, जो एक साथ ही एक ही दिशा में ले जाता है।

ही यदि हम स्वयं स्थिति की विपमता के तथ्य को, जिससे कतिपय व्यक्ति शेष समस्त कारणों की स्वाभाविक प्रवृत्तियो को भूल जाते हैं, एक सामान्य कारण न मानते हों।

अतः जो इतिहासकार प्रजातात्रिक समाजों मे होने वाली घटनाओं का वर्णन करने का प्रयत्न करते है, उनका इनमे से अधिकाश घटनाओं को सामान्य कारणों से उत्पन्न बताना तथा अन्य सामान्य कारणो को ढूँढने पर प्रमुख ध्यान देना ठीक है, किन्तु उनका व्यक्तियों के विशेष प्रभाव को पूर्णरूप से अस्वीकृत करना गलत है, क्योंकि वे सफलतापूर्वक उसका अनुसधान अथवा अनुसरण नहीं कर सकते।

प्रजातात्रिक युगों के इतिहासकारों मे न केवल प्रत्येक घटना का एक महान कारण बताने को प्रवृत्ति होती है, प्रत्युत उनमे घटनाओ को एक साथ सम्बद्ध करने की प्रवृत्ति होती है, जिससे उनसे एक पद्धति का निर्माण किया जा सके। कुलीनतात्रिक युगो मे इतिहासकारों का ध्यान चूँकि निरतर व्यक्तियो की ओर आकृष्ट रहता है, इसलिए वे घटनाओं के सम्बन्ध पर ध्यान नहीं दे पाते अथवा यह कहा जा सकता है कि वे इस प्रकार के किसी सम्बन्ध में विश्वास नहीं कर सकते। उनके लिए इतिहास का सूत्र प्रत्येक क्षण मनुष्य के चरणों से उल्लघित एव टूटा हुआ प्रतीत होता है। इसके विपरीत प्रजातात्रिक युगों में चूँकि इतिहासकार अभिनेताओ की अपेक्षा कार्यो को बहुत अधिक देखता है, इसलिए वह कार्यों के मध्य सफलतापूर्वक किसी-न-किसी प्रकार के सम्बन्ध और व्यवस्थित क्रम की स्थापना कर सकता है।

प्राचीन साहित्य में, जो सुन्दर ऐतिहासिक रचनाओं से इतना अधिक ओतप्रोत है, एक भी महान ऐतिहासिक पद्धति नहीं, जबकि निर्धनतम आधुनिक साहित्यों में उसकी भरमार है। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे इतिहास-लेखक जिन सामान्य सिद्धान्तों की अति करने के लिए सदा प्रस्तुत रहते हैं, उनका पर्याप्त उपयोग प्राचीन इतिहासकारों ने नहीं किया।

प्रजातात्रिक युगों में लिखने वालों मे एक दूसरी अधिक खतरनाक प्रवृत्ति होती है। जब राष्ट्रों पर व्यक्तिगत कार्य के चिह्न लुप्त हो जाते हैं, तब बहुधा ऐसा होता है कि विश्व आगे बढ़ने लगता है, यद्यपि आगे बढाने वाली शक्ति का पता नहीं लगाया जा सकता। समाज के प्रत्येक सदस्य की इच्छा को पृथक्-पृथक् रूप से प्रभावित करते हुए जो कारण अन्त में एक साथ मिलकर समस्त समुदाय मे आन्दोलन उत्पन्न कर देते हैं, उन कारणों को देखना और उनकी विवेचना

करना चूँकि अत्यन्त कठिन हो जाता है, इसलिए मनुष्य यह विश्वास करने लगते हैं कि यह आन्दोलन ऐच्छिक नहीं है तथा समाज अचेतन रूप से अपने ऊपर शासन करने वाली किसी उच्चतर शक्ति का आज्ञा-पालन करते हैं, किन्तु समस्त व्यक्तियो की निजी इच्छा पर शासन करने वाले सामान्य तथ्य का पृथ्वी पर अनुसधान कर लिये जाने की कल्पना कर लेने पर भी मानव की स्वतंत्र इच्छा का सिद्धान्त सुरक्षित नहीं हो पाता। एक ऐसा कारण, जो इतना अधिक व्यापक हो कि एक साथ ही लक्ष लक्ष मनुष्यों को प्रभावित कर सके और जो इतना अधिक शक्तिशाली हो कि उन सभी को एक ही दिशा मे एक साथ मोड़ सके, अदम्य प्रतीत हो सकता है। यह देख लेने पर कि मानव जाति को उसके सामने झुकना ही पड़ता है, मस्तिष्क यह निष्कर्ष निकाल लेता है कि मानव जाति उसका प्रतिरोध नहीं कर सकती।

अतः प्रजाताांत्रिक युगो में रहने वाले इतिहासकार न केवल इस बात को अस्वीकार करते हैं कि थोडे से व्यक्तियो मे समाज के भविष्य को प्रभावित करने की कोई शक्ति होती है, अपितु वे स्वय जनता को ही अपनी स्थिति मे सुधार करने की शक्ति से वचित कर देते हैं और वे उसे या तो एक अटल ईश्वरीय विधान के या किसी परिहार्य स्थिति के अधीनस्थ बना देते हैं। उनके कथनानुसार प्रत्येक राष्ट्र कुछ हद तक अपनी स्थिति, अपने मूल, अपने भूतकाल और अपने चरित्र से घनिष्ठतापूर्वक आबद्ध रहता है, जिसमें कभी परिवर्तन नहीं हो सकता। वे पीढी-दर-पीटी को सम्मिलित करते हैं और इस प्रकार एक युग से दूसरे युग तक और एक स्थिति से दूसरी स्थिति तक और फिर विश्व के आरम्भ तक जाकर वे एक ऐसी निकट एवं विशाल शृंखला का निर्माण करते हैं, जो मानव जाति को आवेष्टित एवं आबद्ध कर लेती है। वे इतना ही दिखा देना पर्याप्त नहीं समझते कि कौन-सी घटनाएँ घटित हुई हैं, वे यह दिखाने का प्रयत्न करते हैं कि इन घटनाओं का दूसरा रूप हो ही नहीं सकता था। वे एक ऐसे राष्ट्र को लेते हैं, जो अपने इतिहास की निश्चित अवस्था में पहुँच चुका होता है और घोषित करते हैं कि वह जिस मार्ग द्वारा वहाँ पहुँचा, उसके अतिरिक्त दूसरे मार्ग पर वह चल ही नहीं सकता था। यह सिद्ध करने की अपेक्षा, कि राष्ट्र एक अधिक अच्छे मार्ग पर चल सकता था, इस प्रकार की घोषणा करना अधिक सरल कार्य है।

है और अपने सह-प्राणियों पर शासन कर सकता है, जब वह स्वयं अपना स्वामी हो। हमारे युग में लिखे गये ऐतिहासिक ग्रन्थों को पढने से यह विदित होगा कि मनुष्य का अपने ऊपर तथा अपने आस-पास की समस्त वस्तुओं पर कोई अधिकार नहीं है। प्राचीन काल के इतिहासकार शासन करने की शिक्षा देते थे, हमारे युग के इतिहासकार केवल आज्ञा-पालन सिखाते हैं, उनकी रचनाओं में लेखक बहुधा महान प्रतीत होता है, किन्तु मानवता सदा अत्यन्त तुच्छ प्रतीत होती है।

प्रजातान्त्रिक युगों के इतिहासकारों को इतना आकर्षक प्रतीत होनेवाला आवश्यकता का यह सिद्धान्त यदि लेखकों से गुजर कर उनके पाठकों तक पहुँच जाय और समस्त समुदाय में व्याप्त होकर जन-मन पर अधिकार कर ले, तो वह शीघ्र ही आधुनिक समाज की गतिविधि को नष्ट कर देगा और ईसाइयों को तुर्कों के स्तर पर ला देगा।

मेरा यह भी मत है कि हम जिस युग में पहुँच गये हैं, उस युग में इस प्रकार के सिद्धान्त विशेष रूप से खतरनाक हैं। हमारे समकालीन व्यक्तियों में मानव की स्वतंत्र इच्छा मे सन्देह करने की प्रवृत्ति बहुत अधिक है, क्योंकि उनमें से प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक दिशा मे अपनी ही दुर्बलताओं से जकडा हुआ अनुभव करता है, किन्तु वे अब भी समाज में सयुक्त मनुष्यों की शक्ति और स्वतन्त्रता को स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत हैं। इस सिद्धान्त को आँखों से ओझल नहीं होने देना चाहिए, क्योंकि हमारे युग का महान उद्देश्य मनुष्यों की विशिष्टताओं का विकास करना है, उनके पतन को पूर्णता तक पहुँचाना नहीं।

२६. स्वतंत्रता की अपेक्षा समानता के प्रति प्रबलतर एवं अधिक स्थायी प्रेम

मुझे यह बताने की कोई आवश्यकता नहीं है कि समानता से जो सर्वप्रथम और प्रबलतम भावना उत्पन्न होती है, वह समानता के प्रति प्रेम की भावना होती है। अत यदि मैं इस भावना का वर्णन सबसे पहले करूँ, तो मेरे पाठकों को कोई आश्चर्य नहीं होगा।

प्रत्येक व्यक्ति ने कहा है कि हमारे समय मे और विशेषत. फ्रास मे समानता

के प्रति यह प्रबल भावना मानव-हृदय में प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। सैकड़ों बार यह बात कही जा चुकी है कि हमारे समकालीन व्यक्ति स्वतन्त्रता के प्रति जितना अनुराग एवं प्रेम रखते हैं, उससे बहुत अधिक और प्रबलतर प्रेम वे समानता के प्रति रखते हैं, किन्तु चूँकि मुझे ऐसा नहीं दिखाई देता कि इस तथ्य के कारणों का पर्याप्त रूप से विवेचन किया गया है, इसलिए मैं उन कारणों की ओर इंगित करने का प्रयत्न करूँगा।

एक ऐसे सुदूरवर्ती बिन्दु की कल्पना की जा सकती है, जहाँ स्वतन्त्रता एवं समानता का मिलन होगा और वे एक दूसरे में मिल जायंगी। आइए, हम इस बात की कल्पना करें कि समस्त व्यक्ति सरकार में भाग लेते हैं तथा उनमें से प्रत्येक व्यक्ति को सरकार में भाग लेने का समान अधिकार है। चूँकि कोई भी व्यक्ति अपने साथियों से भिन्न नहीं है, इसलिए कोई भी व्यक्ति अत्याचार नहीं कर सकता, मनुष्य पूर्णतया स्वतंत्र होंगे, क्योंकि वे सभी पूर्णतया समान हैं और वे सभी पूर्णतया समान होंगे, क्योंकि वे पूर्णतया स्वतंत्र हैं। प्रजातान्त्रिक राष्ट्र इस आदर्श स्थिति की ओर उन्मुख होते हैं। समानता पृथ्वी पर केवल यही पूर्ण रूप ग्रहण कर सकती है, किन्तु हजारों अन्य रूप भी हैं, जिनकी कामना वे राष्ट्र समान रूप से पूर्ण न होते हुए भी कम नहीं करते।

राजनीतिक जगत में परिव्याप्त न होते हुए भी समानता के सिद्धान्त की स्थापना नागरिक समाज में की जा सकती है। एक ही प्रकार के सुखों का उपभोग करने, एक ही प्रकार का व्यवसाय अपनाने तथा एक ही प्रकार के स्थानों पर आने-जाने के अर्थात् एक शब्द में एक ही प्रकार से जीवन-यापन करने तथा एक ही प्रकार के साधनों द्वारा सम्पत्ति अर्जित करने में समान अधिकार रह सकते हैं, यद्यपि सरकार में सभी व्यक्तियों का समान भाग नहीं होता। राजनीतिक जगत में भी एक प्रकार की समानता की स्थापना की जा सकती है। कोई व्यक्ति, केवल एक को छोड़कर, अपने समस्त देशवासियों के समान हो सकता है और वह एक देशवासी बिना भेद-भाव के समस्त देशवासियों का स्वामी होता है और उनके मध्य से अपनी सत्ता के समस्त अभिकर्त्ताओं का समानतापूर्वक चयन करता है। ऐसे अन्य अनेक संयोगों की कल्पना सरलतापूर्वक की जा सकती है, जिनके द्वारा न्यूनाधिक मात्रा में स्वतंत्र संस्थाओं के साथ अथवा स्वतंत्रता से नितान्त रहित संस्थाओं के साथ भी अधिक समानता संयुक्त होगी।

विलीन हो सकती है, तथापि दोनों में अन्तर करने के लिए पर्याप्त कारण है। स्वतन्त्रता और समानता के प्रति मनुष्यों की जो अभिरुचियाँ होती हैं, वे दो भिन्न वस्तुएँ होती हैं और मैं इतना और जोड देने में भय का अनुभव नहीं करता कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में वे दो असमान वस्तुएँ होती हैं।

सूक्ष्म रूप से निरीक्षण करने पर इस बात का पता चलेगा कि प्रत्येक युग मे एक विशिष्ट एव सर्वोपरि तथ्य होता है, जिसके साथ अन्य सभी तथ्य सम्बद्ध होते हैं। यह तथ्य लगभग सदा ही किसी अर्थगम्भीर विचार अथवा किसी सर्वोपरि भावना को जन्म देता है, जो युग की समस्त भावनाओं और विचारों को अपनी ओर आकृष्ट करती है और उन्हें अपने साथ बहा ले जाती है। वह एक महान प्रवाह के तुल्य होती है, जिसकी दिशा में आसपास की प्रत्येक धारा प्रवाहित होती हुई प्रतीत होती है।

स्वतन्त्रता विश्व के विभिन्न युगों में और विभिन्न रूपों मे प्रकट हुई है। वह किसी एक सामाजिक स्थिति के साथ ही समृद्ध नहीं रही है और वह प्रजातंत्रों तक ही सीमित नहीं होती। अतः स्वतन्त्रता प्रजातान्त्रिक युगों की विशिष्टता नहीं बन सकती। उन युगों को उल्लेखनीयता प्रदान करने वाला विशिष्ट और सर्वोपरि तथ्य स्थिति की समानता होती है। उन युगों में इस समानता के प्रति प्रेम की भावना मनुष्यो में प्रबलतम होती है। यह न पूछिए कि प्रजातान्त्रिक युगों में मनुष्य समान होने मे कौन-सा एकमात्र आकर्षण देखते हैं अथवा समाज उन्हें जो अन्य लाभ प्रदान करता है, उन लाभों की अपेक्षा समानता के साथ इतनी दृढता से उनके चिपके रहने के कौन-से विशेष कारण होते हैं। समानता उनके युग की विशिष्टता होती है। इसीसे यह बात पर्याप्त रूप से स्पष्ट हो जाती है कि वे अन्य सभी बातों की अपेक्षा इसे अधिक पसन्द करते हैं, किन्तु इस कारण के अतिरिक्त अन्य अनेक कारण भी हैं जो सभी युगों में मनुष्य को स्वभावत स्वतन्त्रता की अपेक्षा समानता को अधिक पसन्द करने के लिए प्रेरित करेगे।

यदि कोई जाति समानता को, जो अपने ही शरीर में व्याप्त रहती है, नष्ट करने में अथवा कम करने मे भी, कभी सफल हो सकती है, तो वह दीर्घकालीन एव श्रमसाध्य प्रयासों द्वारा ही ऐसा कर सकती है। इसके लिए उस जाति की सामाजिक स्थिति मे परिवर्तन करना, उसके कानूनों को रद्द करना, उसके विचारों का दमन करना, उसकी आदतों मे परिवर्त्तन करना और उसके तौर-तरीकों को बिगाडना आवश्यक है, किन्तु राजनीतिक स्वतन्त्रता अधिक सरलता से लुप्त हो

जाती है, यदि उस पर दृढ न रहा जाय, तो वह चली जाती है। अतः मनुष्य समानता से केवल इसलिए नहीं लिपटे रहते कि वह उन्हे प्यारी होती है, प्रत्युत वे इससे इसलिए भी चिपके रहते हैं कि वे सोचते हैं कि यह सदा बनी रहेगी। संकीर्ण एवं विचार-शून्य व्यक्ति भी इस बात को स्पष्ट रूप से जानते हैं कि राजनीतिक स्वतंत्रता की अति हो जाने पर व्यक्तियों की शान्ति, सम्पत्ति, एवं जीवन के लिए खतरा उपस्थित हो सकता है। इसके विपरीत केवल सावधान और स्पष्ट दृष्टि रखनेवाले व्यक्ति ही समानता के खतरों को देख सकते हैं और वे सामान्यतः उन खतरों की ओर इंगित करने से दूर रहते हैं। वे जानते हैं कि उन्हें जिन विपत्तियों की आशंका है, वे दूर हैं तथा वे इस बात से सन्तोष करते हैं कि वे केवल भावी पीढ़ियों को ही, जिनके लिए वर्त्तमान पीढ़ी तनिक भी चिन्ता नहीं करती, अपना शिकार बनायेगी। कभी-कभी स्वतंत्रता अपने साथ जो बुराइयाँ लेकर आती है, वे तात्कालिक होती हैं। उन्हें सभी देखते हैं और उनसे न्यूनाधिक मात्रा मे सभी व्यक्ति प्रभावित होते हैं। आत्यन्तिक समानता से उत्पन्न होनेवाली बुराइयाँ धीरे-धीरे प्रकट होती हैं वे समाज के ढाँचे में धीरे-धीरे प्रवेश करती हैं, वे कभी-कभी ही दिखाई देती हैं। उस समय पहले से ही बनी हुई आदत के कारण उनका अनुभव नहीं किया जाता।

स्वतंत्रता से जो लाभ होते हैं, वे समय व्यतीत होने पर ही दिखाई देते हैं और जिन कारणों से वे लाभ उत्पन्न होते हैं, उनके विषय मे सदा सरलतापूर्वक गलती की जा सकती है। समानता के लाभ तात्कालिक होते हैं और उनके स्रोत का पता सदा लगाया जा सकता है।

राजनीतिक स्वतंत्रता समय-समय पर कतिपय नागरिकों को आत्यन्तिक आनन्द प्रदान करती है। समानता प्रतिदिन प्रत्येक व्यक्ति को कुछ तुच्छ आनन्द प्रदान करती है। समानता के आकर्षणों का अनुभव प्रति क्षण किया जाता है और उनका सुख-लाभ सभी कर सकते हैं, उच्चतम व्यक्ति भी उनसे विमुख नहीं रहते और निकृष्टतम प्राणी उनसे अत्यधिक प्रसन्न होते हैं। अत. समानता जिस भावना की तुष्टि करती है, वह अवश्य ही प्रबल और सामान्य होगी। मनुष्य कुछ बलिदान किये बिना राजनीतिक स्वतंत्रता का आनन्दोपभोग नहीं कर सकते

प्रजातान्त्रिक राष्ट्र सदा समानता के प्रेमी होते हैं, किन्तु कुछ युग ऐसे होते हैं, जब उनका समानता-प्रेम उन्माद की चरम सीमा पर पहुँच जाता है। ऐसा उस समय होता है, जब दीर्घ काल से सकटग्रस्त पुरानी समाज-व्यवस्था एक उग्र आतरिक सघर्ष के पश्चात् उखाड फेंकी जाती है और श्रेणीगत बन्धनों को छिन्न-भिन्न कर दिया जाता है। ऐसे अवसरों पर मनुष्य समानता पर उसी प्रकार टूट पड़ते हैं, जिस प्रकार लूट की सामग्री पर और वे उससे उसी प्रकार चिपक जाते हैं, मानो वह कोई ऐसा मूल्यवान खजाना हो, जिसके खो जाने की उन्हे आशका हो। समानता के प्रति प्रबल भावना मनुष्यों के हृदयो में सभी दिशाओं से प्रवेश करती है, वहाँ वह अपना विस्तार करती है और उन्हें पूर्ण रूप से ओत-प्रोत कर देती है। उनसे यह मत कहिए कि वे अकेली भावना के समक्ष इस अन्ध आत्मसमर्पण द्वारा अपने प्रियतम स्वार्थों के लिए खतरा उपस्थित करते हैं, क्योकि वे कुछ सुनने की स्थिति मे नहीं होते। उन्हें यह मत बताइए कि जिस समय वे एक दूसरी दिशा मे देख रहे हैं, तब स्वतत्रता उनकी पकड़ से बाहर होती जा रही है, क्योकि वे कुछ देख सकने की स्थिति में नही होते अथवा यो कहा जा सकता है वि वे जगत मे केवल एक अभीप्सित पदार्थ को देख सकते हैं।

मैने जो कुछ कहा है, वह समस्त प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के सम्बन्ध मे चरितार्थ होता है, मै जो कुछ कहने जा रहा हूँ, वह केवल फ्रासीसियों से सम्बन्धित है। अधिकाश आधुनिक राष्ट्रों मे और विशेषतः यूरोपीय महाद्वीप के समस्त राष्ट्रों मे जिस समय सामाजिक स्थितियाँ समानता की ओर उन्मुख हो रही थी, उसी समय और उसी समानता के परिणामस्वरूप स्वतत्रता की रुचि और भावना का अस्तित्व एव विकास प्रारम्भ हुआ। सर्वसत्तासम्पन्न राजा अपनी प्रजा मे श्रेणियो को समान बनाने मे सर्वाधिक कुशल थे। इन राष्ट्रों मे स्वतत्रता से पहले समानता की स्थापना हुई। अत समानता एक ऐसा तथ्य था, जो कुछ काल से चला आ रहा था, जबकि स्वतत्रता अभी तक एक नवीनता ही थी। समानता पहले ही अपनी प्रथाओ, विचारो और कानूनो की सृष्टि कर चुकी थी, जबकि स्वतत्रता अकेली और प्रथम बार वास्तविक अस्तित्व मे आयी। इस प्रकार स्वतत्रता अभी तक रुचि और मत का विषय मात्र थी, जबकि समानता पहले ही जनता की आदतो मे प्रवेश कर चुकी थी, उनके तौर-तरीकों पर अधिकार जमा चुकी थी तथा उनके जीवन के तुच्छतम कार्यों को एक विशेष दिशा मे मोड चुकी थी। क्या इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया जा सकता है

कि हमारे युग के मनुष्य एक को दूसरे की अपेक्षा अधिक पसंद करते हैं ?

मेरा विचार है कि प्रजातात्रिक समुदायो मे स्वतंत्रता के प्रति स्वाभाविक रुचि होती है। यदि उन्हें स्वयं अपने उपर छोड दिया जाय, तो वे उसके लिए प्रयास करेंगे, उसकी कामना करेंगे तथा उससे किसी भी प्रकार वंचित होने पर दुःखी होंगे, किन्तु समानता के प्रति उनकी भावना प्रबल, अतृप्त, शाश्वत और अजेय होती है। वे स्वतत्रता मे समानता चाहते हैं और यदि वे उसे नहीं प्राप्त कर सकते, तो वे दासता मे भी समानता चाहते हैं। वे निर्धनता, दासता और बर्बरता को सहन कर लेंगे, किन्तु वे कुलीनतंत्र को नहीं सहन करेंगे।

यह बात सभी युगों के लिए सत्य है और हमारे युग के लिए विशेष रूप से सत्य है। यह अदम्य भावना अपना सामना करने का प्रयत्न करने वाले समस्त व्यक्तियो और शक्तियों को उखाड़ फेकेगी और नष्ट कर डालेगी। हमारे युग मे इसके बिना स्वतत्रता की स्थापना नहीं हो सकती और स्वयं निरकुशता इसके समर्थन के बिना शासन नहीं कर सकती।

२७. प्रजातांत्रिक देशों में व्यक्तिवाद

मैने बताया है कि किस प्रकार समानता के युगो में प्रत्येक व्यक्ति अपने ही भीतर अपने मतों की खोज करता है। अब मैं यह बतानेवाला हूँ कि किस प्रकार उन्हीं युगों में उसकी समस्त भावनाएँ अकेले उसी की ओर उन्मुख होती हैं। 'व्यक्तिवाद' एक अभिनव शब्द है, जिसका जन्म एक अभिनव भावना से हुआ है। हमारे पूर्वज केवल 'अहम्वाद' (स्वार्थपरता) से परिचित थे। अपने प्रति प्रबल एव अतिरजित प्रेम को स्वार्थपरता कहते हं, जिसके परिणामस्वरूप मनुष्य प्रत्येक वस्तु को अपने से ही सम्बद्ध करता है तथा अपने को विश्व की प्रत्येक वस्तु से अधिक पसन्द करता है। व्यक्तिवाद एक परिपक्व

जितना उत्पन्न होता है, उतना ही मस्तिष्क की दुर्बलताओं से भी उत्पन्न होता है।

स्वार्थपरता समस्त पुण्यों के तत्व को नष्ट कर डालती है, व्यक्तिवाद सर्वप्रथम केवल सार्वजनिक जीवन की अच्छाइयों को समाप्त करता है, किन्तु अन्ततोगत्वा वह अन्य समस्त अच्छाइयों पर प्रहार करके उन्हें नष्ट कर डालता है और पूर्ण रूप से स्वार्थपरता मे विलीन हो जाता है। स्वार्थपरता एक ऐसी बुराई है, जो उतनी ही पुरानी है, जितना पुराना विश्व है। यह किसी एक ही समाज मे नहीं होती। व्यक्तिवाद का जन्म प्रजातन्त्र में हुआ है और स्थिति की समानता के ही अनुपात में उसके फैलने का भी खतरा है।

कुलीनतात्रिक राष्ट्रो मे चूॅकि परिवार शताब्दियों तक एक ही स्थिति में और बहुधा एक ही स्थान पर रहते हैं, इसलिए सभी पीढियॉ मानो समसामयिक हो जाती हैं। व्यक्ति लगभग सदा अपने पूर्वजों को जानता है और उनका सम्मान करता है। वह सोचता है कि वह अपने भावी वशजों को पहले से ही देख रहा है और वह उनसे प्यार करता है। वह स्वेच्छापूर्वक अपने पूर्वजो और भावी वशजों के प्रति उत्तरदायित्व स्वीकार कर लेता है और वह बहुधा अपने पूर्व पुरुषों तथा अपनी भावी पीढियों के लिए अपने व्यक्तिगत सुखों का बलिदान करेगा। इसके अतिरिक्त कुलीनतात्रिक सस्थाऍ प्रत्येक व्यक्ति को उसके कई सहनागरिकों के साथ घनिष्ठतापूर्वक सम्बद्ध करती हैं। चूॅकि कुलीनतात्रिक समाज के वर्ग अत्यन्त पृथक् एव अस्थायी होते हैं, इसलिए प्रत्येक वर्ग के सदस्य उसे एक प्रकार का छोटा-सा देश मानते हैं, जो देश की अपेक्षा अधिक स्पर्शनीय और अधिक प्रिय होता है। चूॅकि कुलीनतात्रिक समुदायो मे समस्त नागरिकों की स्थिति, एक के ऊपर दूसरी निर्धारित होती है, इसलिए प्रत्येक नागरिक सदा अपने ऊपर एक को देखता है, जिसका सरक्षण उसके लिए आवश्यक होता है और अपने नीचे वह एक दूसरे व्यक्ति को देखता है, जिसके सहयोग के लिए वह दावा कर सकता है। अत. कुलीनतात्रिक युगो मे रहने वाले व्यक्ति लगभग सदा किसी ऐसी वस्तु के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध होते हैं, जो उनके निजी क्षेत्र से बाहर रखी होती है और उनमे बहुधा अपने आप को भूल जाने की प्रवृत्ति होती है। यह सच है कि इन युगों मे मानवीय सौहार्द की भावना अस्पष्ट होती है और मनुष्य मानव जाति के लिए अपना बलिदान करने की बात बहुत कम सोचते हैं, किन्तु वे बहुधा दूसरे व्यक्तियों के लिए अपना बलिदान कर देते हैं। इसके विपरीत प्रजातात्रिक युगों मे, जब जाति के प्रति प्रत्येक व्यक्ति के कर्त्तव्य बहुत अधिक स्पष्ट रहते हैं, किसी एक व्यक्ति की निष्ठा-पूर्ण सेवा अधिक दुर्लभ हो जाती है,

मानवीय प्रेम का बन्धन विस्तृत हो जाता है, किन्तु वह शिथिल होता है।

प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में नये परिवार निरन्तर प्रकट होते हैं, अन्य परिवार निरन्तर लुप्त होते रहते हैं और जो शेष बच जाते हैं, वे अपनी स्थिति बदल देते हैं। समय का ताना प्रतिक्षण टूटता रहता है और पीढ़ियों का पथ विलुप्त हो जाता है। पूर्ववर्ती पीढ़ियों का शीघ्र विस्मरण कर दिया जाता है: भावी पीढ़ियों के सम्बन्ध में कोई कुछ भी नहीं जानता। मनुष्य की रुचि केवल उन व्यक्तियों तक सीमित रहती है, जो उसके अत्यत निकट होते हैं। चूंकि प्रत्येक वर्ग अन्य वर्गों के अत्यन्त निकट होता है और उनके साथ मिल जाता है, इसलिए उसके सदस्य एक दूसरे के प्रति उदासीन और एक दूसरे के लिए अपरिचित के समान हो जाते हैं। कुलीनतन्त्र ने कृषक से लेकर राजा तक समाज के समस्त सदस्यों की एक कड़ी बना रखी थी, प्रजातन्त्र उस कड़ी को तोड देता है और उसके जोड़-जोड को पृथक् कर देता है।

जब सामाजिक स्थितियाँ अधिक समान हो जाती हैं, तब उन व्यक्तियो की सख्या बढ़ने लगती हैं, जो अपने साथियो पर कोई महान प्रभाव डालने के लिए पर्याप्त रूप से धनी अथवा शक्तिशाली न होने हुए भी, अपनी निजी आकाक्षाओ की परितुष्टि के लिए पर्याप्त शिक्षा और धन से सम्पन्न होते हैं। वे किसी व्यक्ति के ऋणी नहीं होते, वे किसी से कुछ पाने की आशा नहीं रखते। उनमे अपने को सदा अकेला समझने की आदत पड़ जाती है और उनमे यह कल्पना करने की प्रवृत्ति होती है कि हमारा सारा भाग्य हमारे ही हाथों मे है।

इस प्रकार प्रजातन्त्र मे न केवल व्यक्ति अपने पूर्वजों को भूल जाता है, अपितु प्रजातंत्र उसके भावी वशजों को छिपा रखता है तथा उसके समकालीनो को उससे पृथक् कर देता है, वह उसे सदा के लिए स्वार्थी बना देता है तथा अन्त मे उसे पूर्णतया अपने हृदय के एकान्त में सीमित कर देने का खतरा उत्पन्न कर देता है।

२८. व्यक्तिवाद के प्रभावों का प्रतिकार अमरीकी स्वतंत्र संस्थाओं द्वारा करते हैं

रखती है और सामान्यतः वह अपने समस्त प्रभाव का उपयोग इसी उद्देश्य के लिए करती है। मानव-हृदय की कोई भी बुराई उसे स्वार्थपरता जितनी ग्राह्य नहीं होती। निरकुश शासक अपने प्रति प्रेम न रखने के लिए अपने प्रजाजनों को सरलतापूर्वक क्षमा कर देता है, बशर्ते वे एक दूसरे से प्रेम न करते हों। वह राज्य के शासन मे उनसे सहायता नहीं मागता। उसके लिए इतना ही पर्याप्त है कि वे स्वय अपने ऊपर शासन करने की महत्वाकाक्षा न रखे। वह उन लोगों को अशातिजनक और उपद्रवकारी तत्व कह कर कलकित करता है, जो समुदाय की समृद्धि के लिए सयुक्त रूप से प्रयास करते हैं और शब्दो के स्वाभाविक अर्थ को विकृत बना कर वह उन लोगो को अच्छा नागरिक बताता है, जो केवल अपने को छोड़ कर अन्य किसी के प्रति कोई सहानुभूति नहीं रखते।

इस प्रकार निरकुशता उन्हीं असत्प्रवृत्तियो को उत्पन्न करती है, जिन्हें समानता प्रोत्साहित करती है। ये दोनो वस्तुएँ पारस्परिक एव घातक रूप से एक दूसरे की पूरक एव सहायिका हैं। समानता में मनुष्य बिना किसी सामान्य बन्धन के एक दूसरे के पार्श्व मे रहते हें, निरकुशता उन्हे पृथक् रखने के लिए अवरोधों का निर्माण करती है। समानता मे मनुष्यो मे अपने सहप्राणियों के विषय मे विचार न करने की प्रवृत्ति पहले से ही होती है, निरकुशता सामान्य उदासीनता को एक सार्वजनिक सद्गुण बना देती है।

अत. प्रजातात्रिक युगो मे निरकुशता की, जो सदा खतरनाक होती हे, विशेष आशका रहती है। यह बात आसानी से देखी जा सकती है कि इन्हीं युगो मे मनुष्यो को स्वतत्रता की सर्वाधिक आवश्यकता रहती है। जब किसी समुदाय के सदस्य सार्वजनिक कार्यो मे भाग लेने के लिए विवश हो जाते हें, तब आवश्यक रूप से उन्हें उनके निजी हितो के क्षेत्र से लिया जाता है और कभी-कभी उन्हे आत्म-पर्यवेक्षण से घसीट लाया जाता है। ज्यो ही कोई व्यक्ति सार्वजनिक कार्यो को सार्वजनिक रूप से करना आरम्भ करता है, उसे यह विदित होने लगता है कि वह अपने साथियों से उतना स्वतत्र नही है, जितना स्वतत्र होने की उसने पहले कल्पना की थी तथा उनका समर्थन प्राप्त करने के लिए उसे बहुधा उनके साथ सहयोग करना ही पडेगा।

जब जनता का शासन होता है, तब ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिलेगा, जो सार्व-जनिक सद्भावना के महत्व का अनुभव न करता हो तथा जो उन व्यक्तियों का, जिनके मध्य उसे रहना है, सम्मान एव स्नेह प्राप्त कर उस सद्भावना को प्राप्त

करने का प्रयास न करता हो। उस समय मानव-हृदयो को कठोर बनाने वाली एवं पृथक् रखने वाली अनेक भावनाएँ विवश हो कर निष्क्रिय हो जाती हैं तथा धरातल के नीचे छिप जाती हैं। उस समय अभिमान छद्म वेश धारण कर लेता है, घृणा प्रकट होने का साहस नहीं करती; स्वार्थपरता अपने आपसे डरने लगती है। स्वतत्र सरकार के अन्तर्गत चूँकि अधिकाश सार्वजनिक पद निर्वाचनात्मक होते हैं, इसलिए जिन व्यक्तियो के उच्च मस्तिष्क अथवा महत्वाकाक्षापूर्ण आशाएँ निजी जीवन मे अत्यधिक सीमित रहती हैं, वे निरन्तर अनुभव करते है कि वे अपने आसपास के व्यक्तियों के बिना नहीं रह सकते। ऐसे समयो मे मनुष्य महत्त्वाकाक्षापूर्ण उद्देश्यो से अपने साथियो के विषय मे सोचने का ढग सीखते हैं और एक प्रकार से वे अपना विस्मरण कर देने मे बहुधा अपना कल्याण देखते है।

यहाँ निर्वाचन-कुचक्रों, उम्मीदवारो की नीचता और उनके विरोधियों की निन्दाओं पर आधारित एक आपत्ति की जा सकती है। ये शत्रुतापूर्ण अवसर होते हैं, जो उतनी ही जल्दी-जल्दी आते हैं, जितनी जल्दी-जल्दी चुनाव आते हैं। इस प्रकार की बुराइयाँ निस्सन्देह बडी होती हे, किन्तु वे क्षणिक होती हैं, जबकि उनके साथ जो लाभ आते हैं, वे बने रहते हैं। निर्वाचित होने की अभिलाषा के परिणामस्वरूप कुछ व्यक्ति कुछ समय तक के लिए अत्यधिक शत्रुता रखने लगते हैं, किन्तु इसी अभिलाषा के परिणामस्वरूप अन्ततोगत्वा सभी व्यक्ति एक दूसरे का समर्थन करने लगते हैं और यदि संयोगवश कभी किसी चुनाव के फलस्वरूप दो मित्र अलग हो जाते हैं, तो निर्वाचन-पद्धति अनेक नागरिको को स्थायी रूप से एकत्र भी कर देती है जो अन्यथा एक दूसरे से सदा अपरिचित ही बने रहते। स्वतंत्रता निजी शत्रुताओ को जन्म देती है, किन्तु निरकुशता से सामान्य उदासीनता की सृष्टि होती है।

अमरीकियो ने स्वतत्र सस्थाओं द्वारा मनुष्यो को पृथक् रखने की समानता की प्रवृत्ति का प्रतिरोध किया है और उन्होने उसे वशवर्ती बना लिया है। अमरीकी विधायकों ने यह कल्पना नहीं की थी कि प्रजातान्त्रिक समाज के ढाचे के लिए इतनी स्वाभाविक और इतनी घातक अव्यवस्था का निराकरण करने के लिए समस्त राष्ट्र को सामान्य प्रतिनिधित्व प्रदान कर देना पर्याप्त होगा। उन्होंने यह भी सोचा कि देश के प्रत्येक भाग मे राजनीतिक जीवन का सचार करना अच्छा होगा, जिससे समाज के समस्त सदस्यों के लिए संगठित रूप से कार्य करने के सुअवसरो का अनन्त विस्तार हो सके तथा वे निरन्तर इस बात को अनुभव करते

रहें कि वे परस्पर एक दूसरे पर निर्भर करते हैं। यह योजना बुद्धिमत्तापूर्ण थी। प्रमुख राजनीतिज्ञों का ध्यान केवल देश के सामान्य कार्यों की ओर आकृष्ट होता है, जो समय-समय पर एक ही स्थान पर मिलते हैं और बाद में वे चूँकि एक दूसरे की आँखो से ओझल हो जाते हैं, इसलिए उनके मध्य कोई स्थायी सम्बन्ध नहीं स्थापित हो पाता, किन्तु यदि उद्देश्य यह हो कि किसी जिले के स्थानीय कार्यो का सचालन वहाँ के निवासियों द्वारा ही हो, तो उन व्यक्तियों का सम्पर्क सदा बना रहता है और वे, एक प्रकार से, एक दूसरे से परिचित होने तथा अपने को एक दूसरे के अनुकूल बनाने के लिये विवश हो जाते हैं।

राज्य के भाग्य-निर्माण मे रुचि लेने के लिए किसी व्यक्ति को उसके निजी क्षेत्र से बाहर खींच लाना कठिन होता है, क्योंकि वह इस बात को साफ-साफ नहीं समझता कि स्वयं उसके भाग्य पर राज्य के भाग्य का क्या प्रभाव पडेगा, किन्तु यदि उसके राज्य के सिरे से होकर एक सडक का निर्माण करने का प्रस्ताव किया जाय, तो उसे एक दृष्टि मे ही मालूम हो जायगा कि इस छोटे-से सार्वजनिक कार्य और उसके बड़े-से-बडे निजी कार्यों के मध्य एक सम्बन्ध है और बिना बताये ही उसे निजी हित तथा सामान्य हित को सयुक्त करने वाली घनिष्ठ कडी का पता चल जायगा। इस प्रकार नागरिको को महत्वपूर्ण कार्यों का नियत्रण सौपने की अपेक्षा उनके हाथों मे छोटे-छोटे कार्यो का प्रशासन सौप कर सार्वजनिक कल्याण मे उनकी बहुत अधिक रुचि उत्पन्न की जा सकती है तथा उन्हे इस बात का विश्वास दिलाया जा सकता है कि इस सार्वजनिक कल्याण के लिए उन्हें एक दूसरे की निरन्तर आवश्यकता है। किसी महान सफलता द्वारा आप एक बारगी ही जनता का समर्थन प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु आपके आस-पास रहने वाली जनसख्या का प्रेम एव सम्मान प्राप्त करने के लिए अनेक छोटी-छोटी सेवाओं और अज्ञात अच्छे कार्य—निरन्तर उदारता बरतने की आदत और निस्स्वार्थता की स्थापित प्रतिष्ठा—की आवश्यकता होती है। अत. स्थानीय स्वतंत्रता, जिसके परिणामस्वरूप नागरिक भारी सख्या मे अपने पडोसियों और उनके प्रियजनों के प्रेम को मूल्यवान मानते हैं, शाश्वत रूप से मनुष्यों मे एकता लाती है तथा पृथकतावादी प्रवृत्तियों के बावजूद उन्हें एक दूसरे की सहायता करने के लिए बाध्य करती है।

सयुक्त-राज्य अमरीका में अधिक समृद्ध व्यक्ति इस बात का अधिक ध्यान रखते हैं कि वे जनता से विलग न हो जाय, इसके विपरीत वे निम्नतर वर्गों के साथ निरन्तर अच्छे सम्बन्ध बनाये रखते हैं। वे उनकी

बाते सुनते हैं, प्रति दिन उनसे वार्तालाप करते हैं। वे जानते है कि प्रजातत्रो मे धनिको को सदा निर्धनो की आवश्यकता बनी रहती है तथा प्रजातान्त्रिक युगों मे निर्धन व्यक्ति लाभ की अपेक्षा आपके व्यवहार द्वारा आपसे अधिक प्रेम रखता है। इस प्रकार के लाभों की अतिशयता, जो स्थिति के अन्तर को दूर कर देती है, उन लोगो मे गुप्त क्रोध उत्पन्न करती है, जो उनसे लाभान्वित होते हैं, किन्तु सरल व्यवहार का आकर्षण लगभग अदम्य होता है। मधुर व्यवहार मनुष्य का अपने प्रवाह मे बहा ले जाता है और परिष्कार का अभाव भी सदा अप्रसन्नताजनक नहीं होता। यह सत्य धनिको के मस्तिष्क मे अपनी जडे एकदम नहीं जमा लेता। जब तक प्रजातान्त्रिक क्रान्ति जारी रहती है, वे सामान्यतः इसका प्रतिरोध करते हैं और वे क्रान्ति के सफल हो जाने के तत्काल बाद ही इसे स्वीकार नहीं कर लेते। वे जनता की भलाई करने के लिए बहुत अधिक तैयार रहते है, किन्तु फिर भी वे जनता को दूर ही देखते है, वे इसे पर्याप्त समझते है, किन्तु यह उनकी भूल है। इस प्रकार वे अत्यधिक धन व्यय कर देगे, किन्तु इससे उनके आस-पास रहनेवाले लोगो के हृदयो मे उनके प्रति प्रेम नहीं उत्पन्न होगा, जनता उनसे अपने धन का त्याग करने के लिए नहीं, प्रत्युत अपने दर्प का परित्याग करने के लिए कहती है।

ऐसा प्रतीत होता है कि अमरीका मे प्रत्येक कल्पना का उपयोग जनता की सम्पत्ति मे वृद्धि तथा उसकी आकाक्षाओं की पूर्ति करने के साधनो का आविष्कार करने के लिए किया जाता है। प्रत्येक जिले के सर्वोत्तम ज्ञान रखनेवाले निवासी अपने ज्ञान का उपयोग निरतर ऐसे सत्यो का अनुसंधान करने मे करते हैं, जिससे सामान्य समृद्धि में वृद्धि हो सके और वे यदि ऐसा कोई अनुसधान कर लेते हैं, तो वे उत्सुकतापूर्वक इन अनुसधानो को जनता को समर्पित कर देते हैं।

अमरीका मे जो लोग शासन करते है, उनके द्वारा बहुधा प्रदर्शित दुर्गुणों और त्रुटियो की जब सावधानीपूर्वक परीक्षा की जाती है, तब जनता की समृद्धि को देख कर आश्चर्य होता है, किन्तु यह आश्चर्य अनुचित होता है। अमरीकी प्रजातन्त्र निर्वाचित मजिस्ट्रेटों के कारण नहीं पनपता, वह इसलिए पनपता है कि मजिस्ट्रेटो का निर्वाचन किया जाता है।

यह मान लेना अनुचित होगा कि प्रत्येक अमरीकी, जो देशभक्ति और अपने सहनागरिकों के कल्याण के प्रति जो उत्साह दिखाता है, वह पूर्णतया अवास्तविक होता है। यद्यपि अमरीका में तथा अन्य स्थानों पर भी अधिकाश मानवीय

कार्य निजी हित द्वारा प्रेरित होते हैं तथापि निजी हित समस्त मानवीय कार्यों का नियमन नहीं करता। मैं इतना अवश्य कहूंगा कि मैंने बहुधा अमरीकियों को सार्वजनिक कल्याण के लिए महान और वास्तविक त्याग करते हुए देखा है और मैने ऐसे सैकडों उदाहरणों का वर्णन किया है, जब वे एक दूसरे की निष्ठापूर्वक सहायता करने मे विफल नहीं हुए। सयुक्त-राज्य अमरीका की स्वतत्र सस्थाएँ तथा वे राजनीतिक अधिकार, जिनका वे इतना अधिक प्रयोग करते हैं, प्रत्येक नागरिक को हजारों प्रकार से इस बात की याद दिलाते रहते हैं कि वे समाज मे रहते हैं। वे प्रत्येक क्षण उसके मस्तिष्क में यह बात जमाते रहते हैं कि अपने साथियों के लिए अपने को उपयोगी बनाना मनुष्यों का कर्तव्य है तथा इसी मे उनका कल्याण भी है और जब वह उनके प्रति शत्रुता रखने का कोई विशेष कारण नहीं देखता, क्योंकि वह न तो उनका स्वामी और न उनका दास होता है, तब उसका हृदय उदारता की ओर तत्परतापूर्वक झुक जाता है। मनुष्य पहले आवश्यकतावश और बाद मे सोच-विचार कर जनता के हितों पर ध्यान देते हे। जो कार्य जान-बूझ कर किया जाता है, वह अन्त:प्रेरणा बन जाता है और अपने सहनागरिकों के कल्याण के लिए कार्य करते-करते उनकी सेवा करने की आदत बन जाती है और अन्त मे इसके प्रति रुचि जाग्रत हो जाती है।

फ्रास मे अनेक व्यक्ति स्थिति की समानता को पहली बुराई और राजनीतिक स्वतन्त्रता को दूसरी बुराई मानते हैं। जब वे स्थिति की समानता को स्वीकार करने के लिए बाध्य हो जाते हैं, तब वे कम-से-कम राजनीतिक स्वतन्त्रता से भागने का प्रयत्न करते हैं, किन्तु मेरी दलील है कि समानता से उत्पन्न होने वाली बुराइयों का सामना करने के लिए एकमात्र प्रभावशाली उपाय है राजनीतिक स्वतन्त्रता।

२९. नागरिक जीवन में सार्वजनिक संघों का प्रयोग

मै उन राजनीतिक सघो के विषय मे कुछ नहीं कहना चाहता, जिनकी सहायता से मनुष्य बहुमत के अत्याचार अथवा राज-शक्ति के आक्रमण से अपनी रक्षा करने का प्रयत्न करते हें। उस विषय का वर्णन मै पहले ही कर चुका हूँ। चूंकि प्रत्येक नागरिक अकेला होने पर अधिक दुर्बल और परिणाम-

स्वरूप अकेले अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए अधिक अक्षम हो जाता है, इसलिए, यदि वह उसकी रक्षा के लिए अपने सह-नागरिकों के साथ सयुक्त होना नहीं सीखेगा, तो यह स्पष्ट है कि अत्याचार समानता के साथ-साथ अनिवार्य रूप से बढेगा।

यहॉ केवल उन्हीं सघों का उल्लेख किया गया है, जिनका निर्माण नागरिक जीवन मे बिना किसी राजनीतिक उद्देश्य के किया जाता है। सयुक्त-राज्य अमरीका मे जो राजनीतिक सस्थाऍ विद्यमान हैं, वे उस देश मे विद्यमान असख्य सस्थाओं के बीच एक लघु रूप मे हैं। सभी अवस्थाओ, सभी स्थितियों और सभी प्रवृत्तियो के अमरीकी निरन्तर सस्थाओ का निर्माण करते रहते हैं। वहॉ न केवल ऐसी व्यावसायिक और औद्योगिक कम्पनियॉ हैं, जिनमे सभी भाग लेते हैं, प्रत्युत धार्मिक, नैतिक, गम्भीर, निरर्थक, सामान्य अथवा सीमित, विशाल अथवा तुच्छ, अन्य हजारो प्रकार की सस्थाऍ भी है। अमरीकी मनोरजन प्रदान करने, धार्मिक विद्यालयो की स्थापना करने, सरायें बनाने, गिरजाघरो का निर्माण करने, पुस्तको का प्रचार करने, ध्रुवो पर मिशनरी भेजने के लिए सस्थाऍ बनाते हैं, इसी प्रकार वे अस्पतालों, कारागारो और विद्यालयो की भी स्थापना करते हैं। यदि किसी महान आदर्श के प्रोत्सहन द्वारा किसी सत्य की शिक्षा देने अथवा किसी भावना को बढावा देने का विचार किया जाता है, तो अमरीकी एक सस्था बना लेते हैं। फ्रास में आप जहॉ किसी नये कार्य का नेतृत्व करते हुए सरकार को अथवा इग्लैण्ड मे किसी ऊॅचे ओहदे वाले व्यक्ति को देखेंगे, वहॉ अमरीका मे निश्चित रूप से आपको एक सस्था दिखायी देगी।

अमरीका मे मैने अनेक प्रकार की सस्थाऍ देखी, जिनके सम्बन्ध मे मुझे पहले से कुछ भी ज्ञान नहीं था तथा सयुक्त-राज्य अमरीका के निवासी जिस कुशलता के साथ एक सामान्य लक्ष्य के लिए प्रयास करने के निमित्त अनेक व्यक्तियो को प्रेरित करने मे सफल होते है तथा उन्हें स्वेच्छापूर्वक उस लक्ष्य की पूर्ति की दिशा मे आगे बढने की ओर प्रवृत्त करते हैं, उसकी मैने बहुधा सराहना की है।

उसके बाद मैने इंग्लैण्ड की यात्रा की, जहॉ से अमरीकियो ने अपने कतिपय कानूनों तथा अपने अनेक रीति-रिवाजो को ग्रहण किया है और मुझे प्रतीत हुआ कि उस देश मे सघ के सिद्धात का प्रयोग इतने अनवरत रूप से अथवा इतनी कुशलता के साथ नहीं किया जाता। अग्रेज बहुधा अकेले ही महान

कार्य सम्पन्न करते हैं, जब कि अमरीकी छोटे से-छोटे कार्य के लिए भी सघों का निर्माण करते हैं। यह स्पष्ट है कि अग्रेज सघ को कार्य करने का एक शक्तिशाली साधन मानते हैं, जबकि अमरीकी ऐसा मानते हुए प्रतीत होते हैं कि सघ उनके पास कार्य करने का एकमात्र साधन है।

इस प्रकार ससार का सर्वाधिक प्रजातात्रिक देश वह है, जिसमें मनुष्यों ने, हमारे युग मे, अपनी सामान्य इच्छाओं के लक्ष्य की पूर्ति सामान्य रूप से करने की कला को पूर्णता की चरम सीमा तक पहुँचा दिया है तथा इस नये विज्ञान का उपयोग अधिकतम कार्यों मे किया है। क्या यह एक सयोग की बात है अथवा सघ के सिद्धान्त तथा समानता के सिद्धान्त के मध्य वास्तव मे कोई आवश्यक सम्बन्ध है ?

कुलीनतात्रिक समुदायो मे, सत्ताहीन व्यक्तियों के समूह के मध्य, सदा थोडे-से ऐसे शक्तिशाली और धनवान व्यक्ति होते हैं, जिनमें से प्रत्येक अकेले ही महान कार्य सम्पन्न कर सकता है। कुलीनतात्रिक समाजों मे मनुष्यों को कार्य करने के लिए सयुक्त होने की आवश्यकता नहीं रहती, क्योकि वे सुदृढ रूप से एक दूसरे के साथ आबद्ध रहते हैं। प्रत्येक धनवान और शक्तिशाली नागरिक एक स्थायी और अनिवार्य सघ का प्रमुख होता है। इस सघ में सभी व्यक्ति ऐसे होते हैं, जो उसके आश्रित रहते है अथवा जिनसे वह अपनी इच्छाओं की पूर्ति करता है।

इसके विपरीत प्रजातात्रिक राष्ट्रों मे समस्त नागरिक स्वतन्त्र और निर्बल होते हैं। वे स्वय कोई कार्य मुश्किल से कर सकते हैं तथा उनमें से कोई भी अपने सहनागरिकों को अपनी सहायता करने के लिए विवश नहीं कर सकता। अत. यदि वे स्वेच्छापूर्वक एक दूसरे की सहायता करना नहीं सीखते, तो वे सभी शक्तिहीन बन जाते हैं। यदि प्रजातात्रिक देशों में निवास करने वाले व्यक्तियों के पास राजनीतिक उद्देश्यो के लिए सघबद्ध होने का अधिकार और प्रवृत्ति न होती, तो उनकी स्वतन्त्रता महान सकट मे पड़ जाती, किन्तु वे अपनी सम्पत्ति और कृषि को दीर्घकाल तक सुरक्षित रख पाते, जब कि यदि वे सामान्य जीवन मे सघ-निर्माण की आदत कभी नहीं डालते, तो स्वय सभ्यता के लिए सकट उपस्थित हो जाता। जिस जाति के व्यक्तियो मे अकेले ही महान कार्य सम्पन्न करने की शक्ति नहीं रह जायगी तथा सयुक्त प्रयासो द्वारा महान कार्य करने का साधन भी नहीं रह जायगा, वह शीघ्र ही बर्बरता के युग में चली जायगी।

यह दुःख की बात है जिस सामाजिक स्थिति के कारण प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में सघ इतने आवश्यक होते हैं, वही सामाजिक स्थिति अन्य समस्त राष्ट्रो की अपेक्षा प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो मे सघ के निर्माण को अधिक कठिन बना देती है। जब किसी कुलीन वर्ग के अनेक सदस्य सगठित होना स्वीकार करते हैं, तब वे सरलतापूर्वक ऐसा करने मे सफल हो जाते हैं। चूँकि उनमे से प्रत्येक सदस्य इस भागीदारी में भारी शक्ति के साथ सम्मिलित होता है, इसलिए उसके सदस्यो की सख्या अत्यन्त सीमित हो सकती है और जब किसी सघ के सदस्यो की सख्या सीमित होती है, तब वे सरलतापूर्वक एक दूसरे से परिचित हो सकते हैं, एक दूसरे को समझ सकते हैं तथा निश्चित नियमो की स्थापना कर सकते हैं। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो में यही सुविधाएँ नहीं उपलब्ध होतीं। वहाँ सघबद्ध सदस्यो की सख्या इतनी अधिक होती है कि उनके संघ के पास कोई शक्ति नहीं रह जाती। मै इस बात से अवगत हूँ कि मेरे अनेक देशवासी इस कठिनाई से चिन्तित नहीं हैं। वे यह तर्क प्रस्तुत करते है कि नागरिक जितने ही अधिक निर्बल एव अक्षम होंगे, सरकार को उतना ही अधिक योग्य एव सक्रिय होना चाहिए, जिससे व्यक्ति जिस कार्य को सम्पन्न नही कर सकते, उसे समस्त समाज सम्पन्न कर सके। उनका विश्वास है कि इससे सारी कठिनाई का निराकरण हो जाता है, किन्तु मेरा विचार है कि वे गलती पर हैं।

एक सरकार कतिपय विशालतम अमरीकी कम्पनियों का कार्य सम्पन्न कर सकती है और कई राज्यो तथा सघ के सदस्य पहले ही ऐसा करने का प्रयत्न कर चुके हैं, किन्तु सघ के सिद्धान्त की सहायता से अमरीकी नागरिक प्रतिदिन विशाल मात्रा मे जो अपेक्षाकृत छोटे कार्य करते हैं, उन कार्यो को क्या कभी कोई राजनीतिक शक्ति कर सकती है? इस बात की सरलतापूर्वक भविष्यवाणी की जा सकती है कि वह समय निकट आ रहा है, जब मनुष्य मे, अकेले, जीवन की सामान्यतम आवश्यकताओं का उत्पादन करने की योग्यता न्यून से न्यूनतर हो जायगी। अतः शासक-सत्ता के कार्य मे शाश्वत वृद्धि होगी और उसके प्रयत्नो से ही प्रतिदिन उसका विस्तार होता जायगा। वह जितना ही अधिक सघों का स्थान ग्रहण करेगी, एक साथ सयुक्त होने की भावना से रहित व्यक्तियों को उसकी सहायता की उतनी ही अधिक आवश्यकता होगी। ये कारण और कार्य हैं, जो अनवरत रूप से एक दूसरे की सृष्टि करते रहते हैं। क्या देश का प्रशासन अन्ततोगत्वा उन समस्त उत्पादनो का प्रबन्ध अपने हाथ मे ले लेगा, जिनका प्रबन्ध कोई भी नागरिक अकेले नहीं कर सकता? और

अन्त मे यदि ऐसा समय आ जाय, जब भूसपत्ति के उपविभाजन के चरम सीम पर पहुँच जाने के परिणामस्वरूप भूमि के असख्य ऐसे छोटे-छोटे टुकडे हं जाय कि उन पर केवल कृपकों की कम्पनियो द्वारा ही कृषि की जा सके, तः क्या यह आवश्यक होगा कि सरकार का प्रमुख राज्य के कार्यों का परित्याग कर हल की मुठिया पकडे ? यदि सरकार ने कभी पूर्णत' निजी कम्पनियों वे स्थान पर अधिकार कर लिया, तो प्रजातात्रिक जनता की नैतिकता और प्रतिभ के लिए उतना ही अधिक सकट उत्पन्न हो जायगा, जितना उसके व्यवसाव एव उत्पादनों के लिए। जब मनुष्यो का एक दूसरे पर पारस्परिक प्रभाव पडता है, तभी भावनाओं और मतों मे स्वस्थता आती है, हृदय मे विशालत आती है तथा मानव-मस्तिष्क का विकास होता है। मैंने दिखाया है कि प्रजातात्रिक देशो मे इन प्रभावो का प्राय अस्तित्व ही नहीं होता, अत. कृत्रिम रूप से उनका निर्माण करना आवश्यक होता है और यह कार्य केवल सघो द्वारा ही सम्पन्न हो सकता है।

जब किसी कुलीनतात्रिक समुदाय के सदस्य किसी नये विचार को ग्रहण करते हैं अथवा किसी नयी भावना की कल्पना करते हैं, तब वे उस उच्च आसन पर, जिस पर वे खड़े रहते हैं, अपने पार्श्व मे उसे स्थान प्रदान करते हैं और जो विचार अथवा भावनाएँ समूह की दृष्टि के समक्ष इतनी अधिक स्पष्ट रहती हैं, उन्हे सरलतापूर्वक समस्त व्यक्तियों के मस्तिष्को और हृदयो मे प्रविष्ट किया जा सकता है। प्रजातात्रिक देशो मे अकेली शासक सत्ता ही स्वभावत इस प्रकार का कार्य कर सकने की स्थिति मे होती है, किन्तु यह देख सकना सरल है कि उसका कार्य सदा अपर्याप्त और बहुधा खतरनाक होता है। जिस प्रकार कोई सरकार उत्पादनशील उद्योग की अटकलबाजियो (सट्टों) की व्यवस्था नहीं कर सकती, उसी प्रकार इसमे एक महान जाति के मध्य विचारों और भावनाओ के संचार को जीवित रखने तथा उसका पुनः नवीनीकरण करने की क्षमता नहीं हो सकती। ज्योंही कोई सरकार अपने राजनीतिक क्षेत्र से बाहर जाने तथा इस नये मार्ग पर चलने का प्रयत्न करती है, त्योही वह अनजाने ही एक ऐसा अत्याचार करती है, जिसका समर्थन नहीं किया जा सकता, क्योकि कोई सरकार केवल कठोर नियमो का आदेश दे सकती है, वह जिन विचारों का समर्थन करती है, उन्हें कठोरतापूर्वक कार्य रूप मे परिणत किया जासकता है तथा उसके परामर्श एव उसके आदेशो मे विभेद करना कभी सरल कार्य नहीं होता। यदि सरकार

वास्तव मे यह विश्वास रखती हो कि वह विचारो के समस्त प्रचार को अवरुद्ध करने में रुचि रखती है, तो स्थिति और भी अधिक बुरी हो जायगी, तब वह ऐच्छिक निष्क्रियता के भारीपन से पीडित और गतिहीन हो जायगी। अतः सरकारों की ही एकमात्र सक्रिय शक्ति नहीं होनी चाहिए, प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो में उन शक्तिशाली निजी व्यक्तियों के स्थान पर, जिन्हे स्थितियो की समानता बहा ले गयी है, सघो को खडा होना चाहिए।

जैसे ही सयुक्त राज्य अमरीका के कुछ निवासी किसी ऐसे विचार अथवा भावना को ग्रहण करते हैं, जिसका प्रचार वे विश्व मे करना चाहते है, वैसे ही वे पारस्परिक सहायता के लिए दृष्टि दौडाते है और ज्यो ही वे एक दूसरे को पा लेते हैं, त्यों ही वे सयुक्त हो जाते है। उस क्षण से वे पृथक् एव असम्बद्ध नहीं रह जाते, प्रत्युत वे दूर से एक शक्ति के रूप मे दिखायी देते है, जिसके कार्य एक उदाहरण के रूप मे होते है और जिसकी बातो को सुना जाता है। जब मैने पहले-पहल अमरीका में सुना कि एक लाख व्यक्तियो ने मद्यपान न करने की सार्वजनिक रूप से प्रतिज्ञा की है, तब मुझे यह बात एक गम्भीर प्रतिज्ञा के बजाय एक मजाक प्रतीत हुई और तत्काल मेरी समझ में यह बात नहीं आयी कि इन मद्यपान-विरोधी नागरिको ने अपनी अँगीठियों के पास बैठकर पानी पीने से ही सन्तोष क्यों नहीं कर लिया? अन्त मे मैने समझा कि इन एक लाख अमरीकियों ने अपने आस-पास मद्यपान की प्रगति से सत्रस्त हो कर मद्य-निपेध का समर्थन करने का संकल्प किया था। उन्होने उसी प्रकार का कार्य किया, जिस प्रकार कोई उच्च पदस्थ व्यक्ति विलास के प्रति निम्न वर्ग के व्यक्तियो मे घृणा उत्पन्न करने के लिए अत्यन्त सीधा-सादा वस्त्र पहिनता है। यह सम्भव है कि यदि वे एक लाख व्यक्ति फ्रास मे रहे होते, तो उनमे से प्रत्येक ने पृथक् पृथक् रूप से सरकार के पास स्मरणपत्र भेजा होता कि समस्त राज्य में सार्वजनिक मद्यपान-गृहो की निगरानी रखी जाय।

मेरे मतानुसार, अमरीका के बौद्धिक और नैतिक संघो पर जितना ध्यान देने की आवश्यकता है, उतना अन्य किसी वस्तु पर नहीं। उस देश के राजनीतिक और औद्योगिक सघ हमें बरबस अपनी ओर आकृष्ट करते हैं, किन्तु अन्य सघों को हम देख नहीं पाते अथवा यदि हम उनका पता लगा लेते हैं, तो हम उन्हें पूर्ण रूप से नहीं समझ पाते, क्योंकि हमने मुश्किल से कभी इस प्रकार की वस्तु को देखा है। फिर भी, इस बात को स्वीकार करना होगा कि अमरीकी जनता के लिए वे राजनीतिक और औद्योगिक सघों के समान ही,

सम्भवतः उनसे भी अधिक, आवश्यक हैं। प्रजातान्त्रिक देशों मे सघ-विज्ञान विज्ञान का जनक होता है। इसी की प्रगति पर शेष समस्त विज्ञानो की प्रगति निर्भर करती है।

मानव-समाज को शासित करने वाले विधानों मे एक ऐसा विधान है, जो अन्य समस्त विधानों की अपेक्षा अधिक ठीक एवं स्पष्ट प्रतीत होता है। यदि मनुष्यों को सभ्य बने रहना अथवा सभ्य बनना है, तो यह आवश्यक है कि जिस अनुपात मे स्थितियों की समानता में वृद्धि हो, उसी अनुपात में एक साथ सघबद्ध होने की कला मे भी विकास एव सुधार हो।

३०. सार्वजनिक संघों एवं समाचारपत्रों के सम्बन्ध

जब मनुष्य दृढ़ और स्थायी सम्बन्धों द्वारा पारस्परिक एकता के सूत्र मे आबद्ध नहीं रह जाते, तब किसी बडी सख्या मे उनका सहयोग प्राप्त करना तब तक असम्भव ही रहता है, जब तक आप ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को, जिसकी सहायता की आपको आवश्यकता है, यह विश्वास न दिला दे कि उसका निजी हित अपने प्रयत्नों को अन्य सभी व्यक्तियों के प्रयत्नों के साथ सयुक्त कर देने मे ही निहित है। यह विश्वास केवल समाचारपत्र के साधन द्वारा ही सुविधा-जनक रीति से तथा स्वाभाविक रीति से उत्पन्न किया जा सकता है, समाचारपत्र के अतिरिक्त अन्य कोई भी वस्तु एक ही विचार को एक ही समय हजारों मस्तिष्को मे प्रविष्ट नहीं करा सकती। समाचारपत्र ऐसा परामर्शदाता है, जिसे खोजने की आवश्यकता नहीं पड़ती, किन्तु जो स्वय आ उपस्थित होता है और आपके निजी कार्यों से आपका ध्यान हटाये विना प्रतिदिन सक्षिप्त रूप से सामान्य हित के प्रश्नों के सम्बन्ध मे आपके साथ बातचीत करता है।

अत. जिस अनुपात से मनुष्यो की समानता मे वृद्धि होती है, उसी अनुपात मे समाचारपत्रों की आवश्यकता भी बढ जाती है और व्यक्तिवाद अधिक भयजनक बन जाता है। यह सोचना कि वे केवल स्वतन्त्रता की रक्षा करते हैं, उनके महत्त्व को कम करने के तुल्य होगा, वे सभ्यता को कायम रखते हैं। मैं इस बात से इनकार नहीं करूँगा कि प्रजातान्त्रिक देशों में समाचारपत्र बहुधा अत्यन्त अव्यवस्थित योजनाओ को नागरिकों को एक साथ मिल कर प्रारम्भ करने के लिए प्रेरित करते हैं, किन्तु यदि समाचारपत्र न होते, तो सम्मिलित

गतिविधि भी न होती। अतः उनसे जो बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं, वे उन बुराइयों से बहुत कम होती हैं, जिन्हे वे दूर करते हैं।

समाचारपत्र का कार्य केवल यह नहीं होता कि वह अनेक व्यक्तियो के समक्ष एक ही उद्देश्य को प्रस्तुत करे, प्रत्युत उसका कार्य व्यक्तियो द्वारा पृथक्-पृथक् रूप से सोची गयी योजनाओ को सयुक्त रूप से कार्यान्वित करने के लिए साधन प्रदान करना है। कुलीनतात्रिक देश मे निवास करने वाले प्रमुख नागरिक दूर से एक दूसरे को देखते हैं और यदि वे अपनी शक्तियो को संयुक्त करने की इच्छा करते है, तो वे अपने पीछे मनुष्यो का एक समूह लेकर एक दूसरे की ओर बढते हैं। इसके विपरीत प्रजातात्रिक देशों मे बहुधा ऐसा होता है कि सयुक्त होने की कामना अथवा इच्छा रखने वाले अनेक व्यक्ति सयुक्त नहीं हो सकते, क्योंकि अत्यन्त महत्वहीन और भीड़ मे खोये हुए होने के कारण वे एक दूसरे को देख नहीं सकते और न यही जान सकते है कि एक दूसरे को कहाँ पाया जा सकता है। तब समाचारपत्र उस धारणा अथवा भावना को ग्रहण करते हैं, जो उनमे से प्रत्येक के मन मे एक ही समय, किन्तु पृथक्-पृथक् रूप से उत्पन्न हुई थी। तब सभी तत्काल इस मार्गदर्शक प्रकाश की ओर उन्मुख हो जाते हैं और दीर्घ काल से एक दूसरे को अन्धकार में ढूँढने वाले ये भटकते हुए मस्तिष्क अन्त मे मिलकर सयुक्त हो जाते है। समाचारपत्र ने उनको एक स्थान पर एकत्र किया और समाचारपत्र अब भी उनको सयुक्त रखने के लिए आवश्यक है।

प्रजातात्रिक जनता के मध्य कोई सघ तभी शक्तिशाली हो सकता है, जब उसके सदस्यो की सख्या अधिक हो। अतः जिन व्यक्तियो से सघ का निर्माण होता है, वे एक व्यापक क्षेत्र मे बिखरे रहते हैं और उनमे से प्रत्येक व्यक्ति अपनी आमदनी की अल्पता के कारण अथवा उन अनवरत क्षुद्र प्रयासों के कारण, जिनके द्वारा वह अपनी आय का अर्जन करता है, अपने निवास-स्थान मे ही आबद्ध रहता है। अतः एक दूसरे को देखे बिना प्रतिदिन वार्तालाप करने तथा बिना मिले हुए सयुक्त रूप से कदम उठाने के साधनो को ढूँढना आवश्यक है। इस प्रकार किसी भी प्रजातात्रिक सघ का काम समाचारपत्रो के बिना मुश्किल से चल सकता है।

फलस्वरूप, सार्वजनिक सघों और समाचारपत्रो के मध्य एक आवश्यक सम्बन्ध है: समाचारपत्र सघों का निर्माण करते हैं और यदि यह कथन सत्य है कि मनुष्यों की स्थितियों की समानता मे वृद्धि के साथ संघो की सख्या में

भी वृद्धि होगी, तो यह बात भी कम निश्चित नहीं है कि जिस अनुपात में सघों की सख्या में वृद्धि होती है, उसी अनुपात में समाचारपत्रों की सख्या में भी वृद्धि होती है। इस प्रकार हम अमरीका में एक ही समय सघों और समाचारपत्रों की अधिकतम सख्या देखते हैं।

समाचारपत्रो और सघों की सख्या के मध्य इस सम्बन्ध के फलस्वरूप हमें पत्र-पत्रिकाओ की स्थिति और किसी देश के प्रशासन के स्वरूप के मध्य एक और सम्बन्ध का पता चलता है और यह विदित होता है कि प्रजातान्त्रिक जनता के मध्य प्रशासन जिस अनुपात मे अधिक अथवा कम केन्द्रित होगा, उसी अनुपात मे समाचारपत्रों की सख्या मे भी कमी अथवा वृद्धि अवश्य होगी, क्योंकि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे, कुलीनतत्रो की भॉति, स्थानीय अधिकारो का प्रयोग समाज के प्रमुख सदस्यों के हाथों मे नहीं सौपा जा सकता। उन अधिकारो को या तो अनिवार्यत. समाप्त कर दिया जायगा, या उन्हे बहुत अधिक व्यक्तियों के हाथो मे दे दिया जायगा। ये व्यक्ति वास्तव मे एक निश्चित क्षेत्र का प्रशासन कार्य करने के लिए कानून द्वारा स्थायी रूप से स्थापित एक सघ के सदस्य होते हैं और उनकी निजी छोटी-मोटी चिन्ताओं के मध्य उनके सार्वजनिक हित का समाचार उनके पास प्रतिदिन पहुँचाने के लिए एक पत्र की आवश्यकता होती है। स्थानीय अधिकारो की सख्या जितनी ही अधिक होती है, उतनी ही अधिक सख्या उन व्यक्तियो की होती है, जिनके हाथों मे वे अधिकार कानून द्वारा सौपे गये होते हे और चूँकि इस आवश्यकता का अनुभव प्रति क्षण किया जाता है, इसलिए समाचारपत्रो की सख्या बहुत अधिक होती है।

अमरीकी समाचारपत्रों की विशाल सख्या का कारण देश की महान राजनीतिक स्वतन्त्रता और प्रेस की पूर्ण स्वतन्त्रता उतना नहीं है, जितना कि प्रशासनिक सत्ता का असाधारण उपविभाजन। यदि सघ के समस्त निवासियों को मताधिकार प्राप्त होता—किन्तु ऐसा मताधिकार, जो कॉग्रेस में विधायकों के निर्वाचन तक ही सीमित हो—तो उन्हे थोड़े-से समाचारपत्रों की ही आवश्यकता होती, क्योंकि उन्हे केवल अत्यन्त महत्वपूर्ण, किन्तु अत्यन्त दुर्लभ अवसरों पर ही एक साथ मिल कर कार्य करना होता, किन्तु महान राष्ट्रीय सघ के अतर्गत स्थानीय प्रशासन के कार्यों के लिए प्रत्येक काउण्टी, प्रत्येक नगर और निश्चय ही प्रत्येक ग्राम में कानून द्वारा छोटे-छोटे सघो की स्थापना की गयी है। इस प्रकार देश के कानून प्रत्येक अमरीका को अपने जीवन के प्रत्येक दिन एक सामान्य उद्देश्य के लिए अपने कतिपय सह-नागरिको के साथ सहयोग

करने के लिए विवश करता है और समस्त अन्य व्यक्तियो के कार्यो की सूचना देने के लिए उनमे से प्रत्येक को एक समाचारपत्र की आवश्यकता होती है।

मेरा मत है कि राष्ट्रीय प्रतिनिधि सभाओ से रहित, किन्तु अनेक छोटे-छोटे स्थानीय अधिकारों से सम्पन्न प्रजातान्त्रिक राष्ट्र मे अन्त मे समाचारपत्रो की सख्या एक केन्द्रीकृत प्रशासन और एक निर्वाचित विधानमडल द्वारा शासित होने वाले राष्ट्र की अपेक्षा अधिक होगी। सयुक्त राज्य अमरीका मे दैनिक पत्रों की अत्यधिक बिक्री का सर्वोत्तम कारण मुझे यह प्रतीत होता है कि मुझे अमरीकियों में सब प्रकार की स्थानीय स्वतन्त्रता के साथ अधिकतम राष्ट्रीय स्वतन्त्रता दिखायी देती है।

फ्रास और इगलैण्ड मे एक प्रचलित मत है कि प्रेस पर लगाये गये करो को हटा देने से समाचारपत्रो की बिक्री मे असीमित वृद्धि हो जायगी। इस प्रकार के सुधार के प्रभावो का यह अत्यन्त अतिरजित अनुमान है। समाचार-पत्रो की सख्या मे उनके सस्तेपन के कारण नहीं, प्रत्युत उस आवश्यकता के कारण वृद्धि होती है, जिसका अनुभव मनुष्य बहुधा न्यूनाधिक मात्रा मे पारस्परिक विचारविनिमय और सगठन के लिए करते हैं।

इसी प्रकार मेरे मतानुसार दैनिक पत्रो के बढते हुए प्रभाव के कारण, इसके लिए सामान्यतः बताये जाने वाले कारणों की अपेक्षा अधिक सामान्य हैं। कोई समाचारपत्र तभी जीवित रह सकता है, जब वह मनुष्यो की एक विशाल सख्या की भावनाओं अथवा सिद्धातों को प्रकाशित करे। अतः एक समाचार-पत्र सदा अपने अभ्यस्त पाठको द्वारा निर्मित एक सघ का प्रतिनिधित्व करता है। यह सघ न्यूनाधिक रूप में स्पष्ट हो सकता है, न्यूनाधिक रूप में सीमित हो सकता है, न्यूनाधिक रूप मे अधिक सदस्य-सख्या वाला हो सकता है, किन्तु समाचारपत्र के जीवित रहने का तथ्य इस बात का प्रमाण है कि उसके पाठको के मस्तिष्को मे कम से कम इस प्रकार के सघ के अंकुर विद्यमान हैं।

इसके परिणामस्वरूप मै एक ऐसे अन्तिम निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ, जिसके साथ मै इस अध्याय को समाप्त करूँगा। मनुष्यो की स्थितियों मे जितनी अधिक समानता आती है और व्यक्तिगत रूप से मनुष्य जितने कम शक्तिशाली होते हैं, उतनी ही अधिक सरलता के साथ वे समूह के प्रवाह मे बह जाते हैं और समूह द्वारा परित्यक्त मत पर अटल बने रहना उनके लिए उतना ही अधिक कठिन हो जाता है। एक समाचारपत्र एक सघ का प्रतिनिधित्व करता है, यह कहा जा सकता है कि वह अपने प्रत्येक पाठक को अन्य समस्त पाठकों के नाम पर

सम्बोधित करता है और उनकी व्यक्तिगत निर्बलता के अनुपात मे उन पर अपना प्रभाव डालता है। अतः मनुष्यो की सामाजिक स्थितियों की समानता मे वृद्धि होने पर समाचारपत्र की शक्ति मे अवश्य वृद्धि होगी।

३१. नागरिक और राजनीतिक संघों का सम्बन्ध

इस पृथ्वी पर एक ही ऐसा देश है, जहॉ राजनीतिक कार्यो के लिए नागरिको को सघ-निर्माण की अबाध स्वतत्रता प्राप्त है। यही देश विश्व मे एक मात्र ऐसा देश है, जहॉ नागरिक-जीवन मे सघ के अधिकार का निरतर प्रयोग किया जाता है और जहॉ इसके माध्यम से वे सभी लाभ प्राप्त किये जाते हैं, जिन्हे सभ्यता प्रदान कर सकती है।

उन समस्त देशों मे, जहॉ राजनीतिक सघों पर प्रतिबन्ध लगा होता है, नागरिक-सघ दुर्लभ होते है। इस बात की सम्भावना बहुत कम है कि यह सयोग का परिणाम है, बल्कि इससे यह निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि इन दो प्रकार के सघों के मध्य एक स्वाभाविक और सम्भवतः आवश्यक सम्बन्ध है।

किसी विषय मे कतिपय व्यक्तियों की समान अभिरुचि होती है, या तो किसी व्यवसाय का प्रबन्ध करना होता है, या उत्पादन-विषयक किसी अनुमान की परीक्षा करनी होती है : वे मिलते हैं, वे सयुक्त होते हैं और इस प्रकार वे शनैः-शनैः सघ के सिद्धान्त से अवगत होते हैं। छोटे-छोटे कार्यो की सख्या जितनी ही अधिक होती है, मनुष्यों मे महान कार्यो को सयुक्त रूप से सम्पन्न करने की क्षमता, न जानते हुए भी, उतनी ही अधिक उत्पन्न होती है।

अतः नागरिक सघ राजनीतिक सघो के निर्माण को सरल बनाते हैं, किन्तु दूसरी ओर राजनीतिक सघ नागरिक कार्यों के लिए निर्मित सघो की शक्ति मे अत्यधिक वृद्धि करता है और उनमे अत्यधिक सुधार करता है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि नागरिक-जीवन मे प्रत्येक व्यक्ति यह कल्पना कर सकता है कि वह स्वय अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति कर सकता है, राजनीति मे वह ऐसी कोई कल्पना नहीं कर सकता। अतः सार्वजनिक जीवन का तनिक भी ज्ञान रखने वाली जाति मे प्रतिदिन समस्त समुदाय के मस्तिष्को मे सघ की धारणा और सयुक्त होने की कामना उपस्थित होती रहती है। मनुष्यो सामूहिक रूप से कार्य करने से रोकने वाले चाहे जो भी प्राकृतिक विकर्षण

हो, वे दल के निमित्त संयुक्त होने के लिए सदा तत्पर रहेगे। इस प्रकार राजनीतिक जीवन, सघ के प्रति प्रेम और सघ आचरण को अधिक सामान्य बना देता है, वह मिलन की इच्छा को जाग्रत करता है तथा मनुष्यो को, जो अन्यथा सदा पृथक्-पृथक् रहते हैं, सयुक्त होने के साधन सिखाता है।

राजनीति न केवल बहुसख्यक सघो को, प्रत्युत बहुत बडे-बडे सघो को जन्म देती है। नागरिक जीवन मे ऐसे अवसर बहुत कम आते हैं, जब बहुत अधिक व्यक्ति एक साथ मिलकर किसी एक हित के लिए कार्य करते हैं, इस प्रकार के हित को अस्तित्व मे लाने के लिए अत्यधिक कौशल की आवश्यकता होती है, किन्तु राजनीति मे सुअवसर स्वयमेव प्रतिदिन उपस्थित रहते हैं। अब, केवल बडे सघों में ही सघ के सिद्धान्त के सामान्य मूल्य का प्रदर्शन होता है। व्यक्तिगत रूप से शक्तिहीन नागरिक स्पष्ट रूप से उस शक्ति की पूर्व कल्पना नहीं कर सकते, जिसे वे एक साथ सयुक्त होकर प्राप्त कर सकते हैं। उन्हे यह शक्ति दिखानी पडेगी, तभी वे इसको समझ सकते हैं। अतः किसी सार्वजनिक कार्य के लिए थोड़े व्यक्तियो की अपेक्षा समूह को एकत्र करना बहुधा सरलतर होता है, एक हजार नागरिक इस बात को नही समझते कि एक साथ संयुक्त होने मे उनका क्या हित है, दस हजार नागरिक इससे पूर्णरूपेण अवगत होगे। राजनीति मे मनुष्य बड़े-बड़े कार्यो के लिए संयुक्त होते हैं और महत्वपूर्ण कार्यो मे वे संघ के सिद्धान्त का जो प्रयोग करते है, वह व्यवहारतः उन्हे इस बात की शिक्षा देता है कि कम महत्व के कामो मे एक दूसरे की सहायता करना उनके लिए हितकारी है। राजनीतिक संघ अनेक व्यक्तियो को एक ही समय उनके निजी क्षेत्र से बाहर खीच लाता है, आयु, बुद्धि और सम्पत्ति ने स्वाभाविक रूप से उन्हे चाहे जितना पृथक् रखा हो, राजनीतिक संघ उन्हे एक दूसरे के निकटतर लाता है और उनके मध्य सम्पर्क स्थापित करता है। एक बार मिल जाने पर उनमे सदा पुनर्मिलन हो सकता है।

बहुत कम ऐसी भागीदारियॉ हैं, जिनमे मनुष्य अपनी सम्पत्ति के एक भाग को खतरे मे डाले विना सम्मिलित हो सकते हैं, उत्पादन और व्यापार करने वाली समस्त कम्पनियो के साथ ऐसा ही होता है। जब मनुष्यों को संघ की कला का तनिक भी ज्ञान नहीं होता और वे उसके प्रमुख नियमो से अपरिचित रहते हैं, तब वे प्रथम बार इस प्रकार सयुक्त होने पर महॅगा अनुभव प्राप्त करने मे भयभीत रहते हैं। अतः वे सफलता के एक शक्तिशाली साधन के प्रयोग में निहित खतरे को उठाने की अपेक्षा उस साधन से अपने को वचित रखना

अधिक पसन्द करते हैं। फिर भी, वे उन राजनीतिक संघों में, जो उन्हें बिना खतरे के दिखायी देते हैं, सम्मिलित होने में अपेक्षकृत कम अनिच्छा प्रकट करते हैं, क्योंकि वे राजनीतिक सघों में कोई धन नहीं लगाते। किन्तु यह पता लगाये बिना ही कि मनुष्यों की एक भारी सख्या के मध्य किस प्रकार व्यवस्था कायम रखी जाती है और किस प्रकार एक ही लक्ष्य की ओर एकसाथ तथा विधिपूर्वक आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया जाता है, वे इन सघों में अधिक दिनों तक नहीं रह सकते। इस प्रकार वे अपनी निजी इच्छा को शेष समस्त व्यक्तियों की इच्छा के समक्ष समर्पित करना तथा अपने निजी प्रयासों को सामान्य प्रेरणा के अधीनस्थ करना सीखते हैं—ये ऐसी चीजें हैं, जिनका जानना नागरिक एव राजनीतिक सघों में कम आवश्यक नहीं है। अतः राजनीतिक सघों को बडा नि शुल्क स्कूल माना जा सकता है, जहाँ समुदाय के समस्त सदस्य सघ के सामान्य सिद्धान्त की शिक्षा ग्रहण करने के लिए जाते हैं।

किन्तु यदि राजनीतिक सघ नागरिक संघ की प्रगति में प्रत्यक्ष योगदान न भी करे तो भी राजनीतिक सघ को नष्ट करना नागरिक सघ को निर्बल बनाने के तुल्य होगा। जब नागरिक कतिपय कार्यों के लिए केवल सार्वजनिक रूप से मिल सकते हैं, तब वे इस प्रकार की सभाओं को एक ऐसी विचित्र कार्रवाई मानते हैं, जो कभी कभी ही होती हैं और वे इसके सम्बन्ध में बहुत कम सोचते हैं। जब उन्हें समस्त कार्यों के लिए स्वतंत्रतापूर्वक मिलने की अनुमति दी जाती है तब वे अततोगत्वा सार्वजनिक सघ को मनुष्यों के विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति का सार्वजनिक अथवा एक प्रकार से एकमात्र साधन समझने लगते हैं। प्रत्येक नयी आवश्यकता तत्क्षण इस विचार को पुनरुज्जीवित कर देती है। तब सघ-निर्माण की कला, जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, कार्य की जननी बन जाती है, जिसका अध्ययन और व्यवहार सभी करते हैं।

जब कुछ प्रकार के सघो पर प्रतिबन्ध लगा होता है और अन्य प्रकार के संघों की लिए अनुमति प्राप्त होती है, तब पूर्व रूप से प्रतिबन्धित और अप्रतिबन्धित सघों के मध्य भेद करना कठिन हो जाता है। सन्देह की इस स्थिति में मनुष्य उनसे एकदम अलग रहते हैं और एक प्रकार का ऐसा जनमत प्रचलित हो जाता है, जिसमें किसी भी सघ को साहसपूर्ण और लगभग अवैध प्रयास समझने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।

अत यह सोचना अवास्तविक है कि सघ की भावना किसी विषय में दबा दिये जाने के बावजूद अन्य समस्त मामलों में उसी प्रबलता के साथ प्रकट

होगी और यदि मनुष्यों को कतिपय कार्यों को मिलजुल कर सम्पन्न करने के लिए अनुमति दी जाय, तो उनमे जुट जाने के लिए उनके लिए यह पर्याप्त होगा। जब किसी समुदाय के सदस्यों को समस्त कार्यों के लिए सयुक्त होने की अनुमति रहती है और वे इसके अभ्यस्त रहते हैं तब वे छोटे कार्यों के लिए भी उतनी ही तत्परता के साथ सयुक्त होंगे, जितनी तत्परता से वे अधिक महत्वपूर्ण कार्यों के लिए सयुक्त होते हैं, किन्तु यदि उन्हें छोटे कार्यों के लिए सयुक्त होने की स्वतन्त्रता हो तो, न तो उनमे सयुक्त होने की प्रवृत्ति होगी और न वे सयुक्त हो सकेंगे। उन्हे सयुक्त रूप से अपना व्यवसाय चलाने के लिए पूर्णतया स्वतन्त्र छोड़ देना निरर्थक ही होगा। आपने उन्हे जो अधिकार प्रदान किये हैं, उनसे लाभान्वित होने की वे तनिक भी चिन्ता नहीं करेंगे और प्रतिबन्धित सघो का दमन करने के निरर्थक प्रयासों में अपनी शक्ति को समाप्त कर लेने के बाद आपको यह देखकर आश्चर्य होगा कि आप उन्हें उन संघों का निर्माण करने के लिए राजी नहीं कर सकते, जिन संघों को आप प्रोत्साहित करते हें। मै यह नहीं कहता कि जिस देश मे राजनीतिक सघ पर प्रतिबन्ध लगा होता है, वहाँ नागरिक सघ हो ही नहीं सकते, क्योकि कतिपय सामान्य कार्यों मे भाग लिए बिना मनुष्य समाज मे कभी नहीं रह सकते किन्तु मेरा मत है कि इस प्रकार के देश मे नागरिक सघो की सख्या सदा कम रहेगी, उनकी योजना त्रुटिपूर्ण होगी, उनका प्रबन्ध अकुशलतापूर्ण होगा, वे कभी विशाल योजनाओ का निर्माण नहीं करेंगे अथवा वे उनके कार्यान्वय मे विफल हो जायंगे।

इसके परिणामस्वरूप मै स्वभावतः यह सोचने के लिए प्रेरित हो जाता हूँ कि राजनीतिक मामलो मे सघ निर्माण की स्वतन्त्रता सार्वजनिक शान्ति के लिए उतनी खतरनाक नहीं है, जितनी कि उसे समझा जाता है तथा सम्भवतः कुछ समय तक समाज को आन्दोलित करने के पश्चात् अन्त मे वह राज्य को शक्तिशाली बना सकती है। यो कहा जा सकता है कि प्रजातान्त्रिक देशों मे राजनीतिक सघों मे सम्मिलित व्यक्ति राज्य पर शासन करने की महत्वाकाक्षा रखने वाले एकमात्र शक्तिशाली व्यक्ति होते हें। तदनुसार हमारे युग की सरकारे इस प्रकार के सघों को उसी दृष्टि से देखती हैं जिस प्रकार मध्य युगों मे राज-सिंहासन के बड़े-बड़े अधीनस्थ सरदारो को देखते थे, वे उनके प्रति एक प्रकार की आन्तरिक घृणा रखती हैं और सभी अवसरो पर उनका प्रतिकार करती हैं। इसके विपरीत उनमे नागरिक सघों के प्रति स्वाभाविक सद्भावना

अधिक पसन्द करते हैं। फिर भी, वे उन राजनीतिक संघों में, जो उन्हें बिना खतरे के दिखायी देते हैं, सम्मिलित होने मे अपेक्षकृत कम अनिच्छा प्रकट करते है, क्योंकि वे राजनीतिक सघों में कोई धन नहीं लगाते। किन्तु यह पता लगाये बिना ही कि मनुष्यों की एक भारी सख्या के मध्य किस प्रकार व्यवस्था कायम रखी जाती है और किस प्रकार एक ही लक्ष्य की ओर एकसाथ तथा विधिपूर्वक आगे बढने के लिए प्रेरित किया जाता है, वे इन सघों मे अधिक दिनों तक नहीं रह सकते। इस प्रकार वे अपनी निजी इच्छा को शेष समस्त व्यक्तियों की इच्छा के समक्ष समर्पित करना तथा अपने निजी प्रयासों को सामान्य प्रेरणा के अधीनस्थ करना सीखते हैं—ये ऐसी चीजें हैं, जिनका जानना नागरिक एव राजनातिक सघों मे कम आवश्यक नहीं है। अतः राजनीतिक सघो को बडा नि शुल्क स्कूल माना जा सकता है, जहाँ समुदाय के समस्त सदस्य सघ के सामान्य सिद्धान्त की शिक्षा ग्रहण करने के लिए जाते हैं।

किन्तु यदि राजनातिक सघ नागरिक सघ की प्रगति मे प्रत्यक्ष योगदान न भी करे तो भी राजनीतिक सघ को नष्ट करना नागरिक सघ को निर्बल बनाने के तुल्य होगा। जब नागरिक कतिपय कार्यों के लिए केवल सार्वजनिक रूप से मिल सकते हैं, तब वे इस प्रकार की सभाओं को एक ऐसी विचित्र कार्रवाई मानते है, जो कभी कभी ही होती हैं और वे इसके सम्बन्ध में बहुत कम सोचते है। जब उन्हें समस्त कार्यों के लिए स्वतन्त्रतापूर्वक मिलने की अनुमति दी जाती है तब वे अंततोगत्वा सार्वजनिक सघ को मनुष्यों के विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति का सार्वजनिक अथवा एक प्रकार से एकमात्र साधन समझने लगते हैं। प्रत्येक नयी आवश्यकता तत्क्षण इस विचार को पुनरुज्जीवित कर देती है। तब सघ-निर्माण की कला, जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, कार्य की जननी बन जाती है, जिसका अध्ययन और व्यवहार सभी करते हैं।

जब कुछ प्रकार के सघो पर प्रतिबन्ध लगा होता है और अन्य प्रकार के संघों की लिए अनुमति प्राप्त होती है, तब पूर्व रूप से प्रतिबन्धित और अप्रतिबन्धित सघो के मध्य भेद करना कठिन हो जाता है। सन्देह की इस स्थिति में मनुष्य उनसे एकदम अलग रहते हैं और एक प्रकार का ऐसा जनमत प्रचलित हो जाता है, जिसमे किसी भी सघ को साहसपूर्ण और लगभग अवैध प्रयास समझने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।

अत यह सोचना अवास्तविक है कि सघ की भावना किसी विषय मे दबा दिये जाने के बावजूद अन्य समस्त मामलों में उसी प्रबलता के साथ प्रकट

होगी और यदि मनुष्यों को कतिपय कार्यो को मिलजुल कर सम्पन्न करने के लिए अनुमति दी जाय, तो उनमे जुट जाने के लिए उनके लिए यह पर्याप्त होगा। जब किसी समुदाय के सदस्यों को समस्त कार्यो के लिए सयुक्त होने की अनुमति रहती है और वे इसके अभ्यस्त रहते हैं तब वे छोटे कार्यों के लिए भी उतनी ही तत्परता के साथ संयुक्त होंगे, जितनी तत्परता से वे अधिक महत्वपूर्ण कार्यो के लिए सयुक्त होते हैं, किन्तु यदि उन्हें छोटे कार्यों के लिए सयुक्त होने की स्वतन्त्रता हो तो, न तो उनमे सयुक्त होने की प्रवृत्ति होगी और न वे सयुक्त हो सकेंगे। उन्हे सयुक्त रूप से अपना व्यवसाय चलाने के लिए पूर्णतया स्वतन्त्र छोड देना निरर्थक ही होगा। आपने उन्हें जो अधिकार प्रदान किये हैं, उनसे लाभान्वित होने की वे तनिक भी चिन्ता नहीं करेंगे और प्रतिबन्धित सघो का दमन करने के निरर्थक प्रयासों में अपनी शक्ति को समाप्त कर लेने के बाद आपको यह देखकर आश्चर्य होगा कि आप उन्हें उन संघों का निर्माण करने के लिए राजी नहीं कर सकते, जिन संघों को आप प्रोत्साहित करते हैं। मै यह नहीं कहता कि जिस देश मे राजनीतिक सघ पर प्रतिबन्ध लगा होता है, वहॉ नागरिक सघ हो ही नहीं सकते, क्योंकि कतिपय सामान्य कार्यों मे भाग लिए बिना मनुष्य समाज मे कभी नहीं रह सकते किन्तु मेरा मत है कि इस प्रकार के देश में नागरिक सघों की सख्या सदा कम रहेगी, उनकी योजना त्रुटिपूर्ण होगी, उनका प्रबन्ध अकुशलतापूर्ण होगा, वे कभी विशाल योजनाओं का निर्माण नहीं करेंगे अथवा वे उनके कार्यान्वय में विफल हो जायंगे।

इसके परिणामस्वरूप मैं स्वभावतः यह सोचने के लिए प्रेरित हो जाता हूँ कि राजनीतिक मामलों मे सघ-निर्माण की स्वतन्त्रता सार्वजनिक शान्ति के लिए उतनी खतरनाक नहीं है, जितनी कि उसे समझा जाता है तथा सम्भवतः कुछ समय तक समाज को आन्दोलित करने के पश्चात् अन्त मे वह राज्य को शक्तिशाली बना सकती है। यों कहा जा सकता है कि प्रजातान्त्रिक देशों मे राजनीतिक सघों मे सम्मिलित व्यक्ति राज्य पर शासन करने की महत्वाकांक्षा रखने वाले एकमात्र शक्तिशाली व्यक्ति होते हैं। तदनुसार हमारे युग की सरकारें इस प्रकार के संघों को उसी दृष्टि से देखती हैं जिस प्रकार मध्य युगों में राज-सिंहासन के बड़े-बड़े अधीनस्थ सरदारों को देखते थे; वे उनके प्रति एक प्रकार की आन्तरिक घृणा रखती हैं और सभी अवसरों पर उनका प्रतिकार करती हैं। इसके विपरीत उनमें नागरिक सघों के प्रति स्वाभाविक सद्भावना

होती है, क्योंकि उन्हें तत्काल इस बात का पता चल जाता है कि ये सस्थाएँ समाज के मस्तिष्क को सार्वजनिक कार्यों की ओर ले जाने के स्थान पर उसे इस प्रकार के विचारों से विमुख करने का कार्य करती हैं तथा जिन उद्देश्यो की पूर्ति सार्वजनिक शान्ति के बिना नहीं हो सकती, उन उद्देश्यों में समाज के मस्तिष्क को अधिकाधिक व्यस्त रखकर ये उसे क्रान्तियाँ करने से रोकती हैं, किन्तु ये सरकारे इस तथ्य पर ध्यान नहीं देतीं कि राजनीतिक सघों मे नागरिक सघो की वृद्धि करने तथा उनके निर्माण को सुविधाजनक बनाने की आश्चर्य-जनक प्रवृत्ति होती है तथा एक खतरनाक बुराई से बचने में वे अपने को एक प्रभावशाली उपाय से वचित कर लेती हैं।

जब आप अमरीकियों को किसी राजनीतिक सिद्धान्त का प्रसार करने, एक व्यक्ति को कार्याध्यक्ष बनाने तथा दूसरे व्यक्ति को सत्ता छीनने के उद्देश्य से स्वतंत्रतापूर्वक और अनवरत रूप से सघों का निर्माग करते हुए देखते हैं, तब आपको यह समझने में कोई कठिनाई नहीं होती है कि किस प्रकार इतने स्वतंत्र व्यक्ति निरन्तर स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं करते। दूसरी ओर, यदि आप अमरीका मे कार्य करने वाली व्यापारिक कम्पनियों की असामित सख्या का सर्वेक्षग करे और देखे कि अमरीकी प्रत्येक दिशा मे महत्वपूर्ण और कठिन योजनाओं के कार्यान्वय मे अनवरत लगे हुए हैं, जो छोटी से छोटी क्रान्ति द्वारा भी गडबडा जायँगी, तो आपकी समझ में तत्काल यह बात आ जायगी कि इतनी अच्छी तरह से कार्यरत व्यक्ति क्यो राज्य मे अशान्ति उत्पन्न करने की तनिक भी इच्छा नहीं करते, न वे सार्वजनिक शान्ति को, जिससे वे सभी लाभान्वित होते हैं, नष्ट करने की इच्छा रखते हैं।

क्या इन वस्तुओं का पर्यवेक्षण पृथक्-पृथक् रूप से करना पर्याप्त है अथवा क्या हमें उन्हें जोड़ने वाली प्रच्छन्न कड़ी का पता नहीं लगाना चाहिए? अपने राजनीतिक सघों मे सभी स्थितियों, बुद्धियों और अवस्थाओ के सभी अमरीकी प्रतिदिन सघ के प्रति एक सामान्य अभिरुचि ग्रहण करते हैं और उसका प्रयोग करने के अभ्यस्त बनते हैं। वहाँ वे भारी सख्या मे एक दूसरे से मिलते हैं, वे एक दूसरे से वार्तालाप करते हैं, एक दूसरे की बातें सुनते हैं और वे पारस्परिक रूप से सब प्रकार के कार्य करने के लिए प्रेरित होते हैं। इस प्रकार वे जिन विचारों को प्राप्त करते हैं, उन्हें बाद मे वे नागरिक जीवन मे स्थानान्तरित करते हैं और उन्हे हजारों कार्यों में प्रयुक्त करते हैं। इस प्रकार एक खतरनाक स्वतंत्रता के आनन्दोपभोग द्वारा अमरीकी स्वतंत्रता के खतरों को अपेक्षाकृत

कम करने की कला सीखते हैं।

यदि किसी राष्ट्र के जीवन मे किसी निश्चित क्षण को चुन लिया जाय तो यह सिद्ध करना सरल है कि राजनीतिक सघ राज्य मे अशान्ति उत्पन्न करते हैं तथा उद्योग को पंगु बना देते हैं, किन्तु यदि एक जाति के सम्पूर्ण जीवन को लीजिए और तब सम्भवतः इस बात को सिद्ध करना सरल होगा कि राजनीतिक मामलो मे सघ-निर्माण की स्वतंत्रता समाज की समृद्धि और शान्ति के लिए भी अनुकूल है।

मैंने इस पुस्तक के पूर्व भाग मे कहा था—"राजनीतिक सघ की अबाध स्वतत्रता को प्रेस की स्वतंत्रता में पूर्ण रूप से समाविष्ट नहीं किया जा सकता। प्रथम दूसरी की अपेक्षा कम है और अधिक खतरनाक है। कोई राष्ट्र उस पर अपना आधिपत्य बनाये रखते हुए उसे कतिपय सीमाओ के अन्तर्गत आबद्ध कर सकता है और कभी-कभी अपनी सत्ता को कायम रखने के लिए वह ऐसा करने के लिए विवश हो सकता है" और मैंने पुन' कहा था—"इस बात को अस्वीकृत नहीं किया जा सकता कि राजनीतिक उद्देश्यो के लिए सघ-निर्माण की अबाध स्वतंत्रता की वह अन्तिम सीमा होती है, जिसकी योग्यता किसी राष्ट्र मे होती है। यदि यह उन्हे अराजकता का शिकार नहीं बनाती, तो यह उन्हे निरतर अराजकता के तट पर लाती रहती है।" इस प्रकार मैं यह नही सोचता कि कोई राष्ट्र अपने नागरिकों को राजनीतिक उद्देश्यो के लिए सघ-निर्माण की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान करने के लिए सदा स्वतत्र होता है और मुझे इस बात मे सदेह है कि किसी देश में अथवा किसी युग मे सघ-स्वतंत्रता के लिए कोई सीमा नहीं निर्धारित करना बुद्धिमत्तापूर्ण होगा।

कहा जाता है कि यदि सघ-निर्माण के अधिकार को सकीर्ण सीमाओं के अन्तर्गत आबद्ध न रखा जाय तो कोई राष्ट्र समाज मे शाति की रक्षा नहीं कर सकता, कानूनो का वह सम्मान नही करवा सकता अथवा एक स्थायी सरकार की स्थापना नहीं कर सकता। निस्सन्देह ये वरदान अमूल्य है। मै इस बात की कल्पना कर सकता हूँ कि उन्हे प्राप्त करने अथवा उन्हे सुरक्षित रखने के लिए राष्ट्र अपने ऊपर अस्थायी कठोर प्रतिबन्ध लगा सकता है, फिर भी राष्ट्र के लिए यह जानना उचित है कि इन वरदानों को किस मूल्य पर खरीदा जाता है। मै इस बात को समझ सकता हूँ कि किसी मनुष्य के जीवन की रक्षा करने के लिए उसकी भुजा को काट डालना वाछनीय हो सकता है, किन्तु यह कहना हास्यास्पद होगा कि वह उतना ही कुशल होगा, जितना कुशल वह भुजा काटे जाने के पहले था।

३२. अमेरिका में भौतिक कल्याण के प्रति रुचि

अमेरिका में भौतिक कल्याग के प्रति भावना की प्रबलता सदा विशेष नहीं होती, किंतु वह सामान्य होती है और यदि सभी उसका अनुभव समान रीति से नहीं करते तो भी उसका अनुभव सभी द्वारा किया जाता है। शरीर की छोटी से छोटी आवश्यक्ताओं की पूर्ति भी सावधानीपूर्वक करना तथा जीवन की तुच्छ सुविधाओं की व्यवस्था करना प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में सर्वोपरि होता है। यूरोप में कुछ-कुछ इसी प्रकार की चीज अधिकाधिक प्रत्यक्ष है। दोनों गोलार्द्धों में जो कारण इन परिणामों की सृष्टि करते हैं, उन कारणों में से अनेक का मेरे विषय से इतना सम्बध है कि उन पर ध्यान देने की आवश्यक्ता है।

जब सम्पत्ति परिवारों में वंशानुगत रूप से स्थिर रहती है, तब भारी सख्या में मनुष्य जीवन के आनन्दों का उपयोग, उन आनन्दों के प्रति विशेष रुचि का अनुभव किये बिना करते हैं। मनुष्य का हृदय किसी बहुमूल्य वस्तु पर अबाध अधिकार की भावना से उतना अधिक अभिभूत नहीं रहता, जितना उस पर अधिकार करने की इच्छा से, जिसकी अभी पूर्ण रूप से तृप्ति नहीं हुई है और उसे खो देने के भय से निरन्तर अभिभूत रहता है। कुलीनतान्त्रिक समुदायों में धनिक व्यक्तियों को चूँकि अपनी स्थिति से भिन्न स्थिति का कभी अनुभव नहीं होता, इसलिए उन्हे उसके परिवर्तन का कोई भय नही रहता। इस प्रकार की स्थितियों के अस्तित्व का अनुभव उन्हें मुश्किल से होता है। वे जीवित के सुखों को जीवन का लक्ष्य नहीं, प्रत्युत एक जीवन-पद्धति मात्र मानते हैं, वे उन्हें स्वय अस्तित्व मानते हैं—जिनका उपयोग किया जाता है, किन्तु जिनके विषय में बहुत कम सोचा जाता है। चूँकि इस प्रकार उस स्वाभाविक एवं आन्तरिक अभिरुचि की परितुष्टि बिना कष्ट और बिना भय के हो जाती है, जिस अभिरुचि का अनुभव मनुष्य सुखी होने के प्रति करते हैं, इसलिए उनकी प्रतिभा दूसरी ओर उन्मुख होती है और उसका उपयोग मनुष्यों के मस्तिष्क को प्रेरित एवं तल्लीन करने वाले कठोरतर एवं उच्चतर कार्यों के लिए किया जाता है।

अत: भौतिक सुखों के मध्य में ही कुलीन तत्र के सदस्य बहुधा इन सुखों के ही प्रति एक प्रबल घृणा का प्रदर्शन करते हैं, तथा उनसे वचित हो जाने पर अपूर्व सहनशक्ति का परिचय देते हैं। कुलीनतत्रों को हिला अथवा नष्ट कर

देने वाली समस्त क्रान्तियो ने सिद्ध कर दिया है कि अतिशय विलासप्रिय व्यक्ति कितनी सरलता के साथ जीवन की आवश्यक वस्तुओ के बिना भी काम चला सकते हैं, जबकि कठोर श्रम द्वारा क्षमता अर्जित करने वाले व्यक्ति उसके खो जाने पर मुश्किल से जीवित रह सकते हैं।

जब मै उच्चतर वर्गों से दृष्टि हटाकर निम्नतर वर्गों का पर्यवेक्षण करता हूँ, तब मुझे विरोधी कारणो से समान प्रभाव उत्पन्न होते दिखायी देते हैं। ऐसे राष्ट्रों मे जहाँ समाज पर कुलीनतन्त्र का आधिपत्य होता है और समाज स्थिर रहता है, अन्त मे लोग निर्धनता के उसी प्रकार अभ्यस्त बन जाते हैं जिस प्रकार धनी व्यक्ति अपनी समृद्धि के अभ्यस्त बन जाते हैं।

धनी व्यक्ति अपने भौतिक सुखो के लिए तनिक भी चिन्ता नहीं करते, क्योकि वे उनका उपभोग बिना किसी प्रयास के करते हैं, निर्धन व्यक्ति ऐसी वस्तुओ के बारे मे नहीं सोचते, जिन्हे प्राप्त करने की वे तनिक भी आशा नहीं रखते तथा जिनके विषय मे वे तनिक भी नहीं जानते, जिससे उनमे अपने लिए कोई इच्छा ही नहीं जाग्रत होती। इस प्रकार के समुदायो मे निर्धन व्यक्तियो की कल्पना एक दूसरे ही ससार की खोज मे उड़ान भरती है। वास्तविक जीवन की पीडाएँ उनकी कल्पना को चारो ओर से घेरे रहती हैं, किन्तु वह उनके नियंत्रण से बच निकलती है और दूर, बहुत दूर जाकर अपना आनन्द प्राप्त करने के लिए उड़ान भरती है।

इसके विपरीत जब श्रेणी भेद आपस मे मिले रहते हैं और विशेषाधिकार नष्ट कर दिये जाते हैं—जब वंशानुगत सम्पत्ति का उपविभाजन हो जाता है और शिक्षा तथा स्वतन्त्रता का व्यापक प्रसार हो जाता है, तब विश्व के सुखों को प्राप्त करने की इच्छा निर्धन व्यक्तियों की कल्पना को वशवर्त्ती कर लेती है और उन सुखों से वचित होने का भय धनिकों की कल्पना पर अधिकार कर लेता है। अनेक क्षुद्र सम्पत्तियाँ प्रकट होती हैं। जिनके पास ये होती हैं, उन्हे इतना पर्याप्त भौतिक सुख प्राप्त होता है कि वे इन सुखों के स्वाद की कल्पना कर सकते हैं, किन्तु इस स्वाद की परितुष्टि करने के लिए वह पर्याप्त नहीं होता। वे बिना प्रयास के उन्हे कभी प्राप्त नहीं करते और बिना भय के वे कभी उनका उपभोग भी नहीं करते। अतएव वे इन सुखद, अपूर्ण एवं अस्थिर सुखों की प्राप्ति अथवा उन्हें बनाये रखने के लिए सदा प्रयास करते रहते हैं।

यदि मुझे इस बात का पता लगाना हो कि जो व्यक्ति निम्न वर्ग में अपने जन्म अथवा मध्यम कोटि की अपनी सम्पत्ति द्वारा प्रगति करते हैं अथवा

अवरुद्ध-गति हो जाते हैं, उनमे कौन-सी भावना सर्वाधिक स्वाभाविक होती है, तो भौतिक समृद्धि के प्रति इस प्रेम की अपेक्षा उनकी स्थिति के लिए अधिक अनुकूल किसी भी भावना का पता मुझे नहीं मिल सकता। भौतिक सुखो के प्रति जो प्रबल प्रेम होता है, वह मुख्यतः मध्यम वर्गो की भावना होती है, उन वर्गों मे इसका विकास एव विस्तार होता है, उन्हीं मे इसका बाहुल्य होता है, उनसे यह समाज के उच्चतर भागो मे पहुँचती हैं और उन्हीं से यह जनसाधारण मे पहुँचती हैं।

मुझे अमरीका मे कोई इतना निर्धन नागरिक नहीं मिला, जो धनिकों के सुखो की ओर आशा और ईर्ष्या की दृष्टि से न देखता हो अथवा जो उन अच्छी चीजो की कल्पना न करता हो जिससे भाग्य ने उसे अभी तक वचित कर रखा है।

दूसरी ओर, अमरीका के अधिक समृद्ध निवासियो मे मुझे भौतिक सुखो के प्रति वह गर्वपूर्ण घृणा कभी नहीं दिखलायी दी, जो कभी-कभी अत्यन्त समृद्ध और शिथिल कुलीनतत्रो मे भी देखने को मिलती है। इन धनी व्यक्तियो मे से अधिकाश किसी समय निर्धन थे। उन्होंने अभाव की पीड़ा का अनुभव किया है, वे बहुत दिनो तक भाग्य की प्रतिकूलता के शिकार रहे हैं और अब विजय प्राप्त हो जाने पर वे भावनाएँ बनी हुई हैं, जो सघर्ष के समय विद्यमान थीं, उनके मस्तिष्क उन तुच्छ सुखों से मदोन्मत्त है, जिनका उपभोग उन्होंने चालीस वर्षो तक किया है।

ऐसी बात नहीं है कि अन्य स्थानो की भाति सयुक्त-राज्य अमरीका मे कतिपय ऐसे समृद्धिशाली व्यक्ति नहीं, जिन्होंने अपनी सम्पत्ति को उत्तराधिकार द्वारा प्राप्त किया है और जिन्होंने बिना प्रयास के समृद्धि प्राप्त की है, जिसका उन्होंने अर्जन नहीं किया है, किन्तु ये व्यक्ति भी भौतिक जीवन के सुखो के प्रति कम मोह नहीं रखते। सुख के प्रति प्रेम अब राष्ट्र की सर्व प्रमुख भावना बन गयी है, मानवीय भावना की महान धारा इसी मार्ग से प्रवाहित होती है और अपने मार्ग की सभी वस्तुओ को बहा ले जाती है। अभी जो कुछ कहा है, उससे यह कल्पना की जा सकती है कि भौतिक सुख के प्रति प्रेम की भावना अमरीकियो को निरन्तर नैतिक अनियमितताओ की ओर प्रेरित करती रहती होगी, परिवारों की शान्ति को भग करती होगी तथा समस्त समाज की सुरक्षा को खतरा पहुँचाती रहती होगी, किन्तु ऐसी बात नहीं है। भौतिक सुखो के प्रति प्रबल भावना प्रजातत्रो मे जो प्रभाव उत्पन्न करती है, वह उस प्रभाव से अत्यन्त भिन्न होता है, जो कुलीनतात्रिक राष्ट्रों मे उत्पन्न होता है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि सार्वजनिक कार्यों से क्लान्त तथा समृद्धि से पूर्ण सन्तुष्ट, धार्मिक विनाश तथा राज्य के ह्रास के मध्य कुलीनतंत्र का हृदय शनैः शनैः केवल ऐन्द्रिक सुख की खोज के लिए प्रेरित हो सकता है। अन्य समयो मे राजा की शक्ति अथवा जनता की दुर्बलता, उनकी साम्पत्तिक महत्ता को कम किये विना उन्हे कार्यों के प्रशासन से अलिप्त रहने के लिए बाध्य करती हैं और जब कि शक्तिशाली अध्यवसाय का मार्ग बन्द रहता है, उन्हे उनकी निजी इच्छाओ की अशान्ति पर छोड़ देती हैं, तब वे स्वयं अपने ऊपर ही अत्यधिक निर्भर करने लगते हैं तथा शारीरिक सुखों में भूतपूर्व महानता को भुलाने का प्रयत्न करते हैं।

इस प्रकार जब किसी कुलीनतान्त्रिक संस्था के सदस्य भौतिक सुखो की खोज मे विशेप रूप से दत्तचित्त होते हैं, तब वे सामान्यतः सत्ता के अपने दीर्घकालीन अनुभव से प्राप्त समस्त शक्ति को उस दिशा में लगा देते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति सुख से सन्तुष्ट नहीं होते; उन्हे विलासपूर्ण अनाचार और शानदार भ्रष्टाचार की आवश्यकता होती है। वे वैभव की अत्यधिक पूजा करते है, और स्वयं अपनी ही प्रकृति को अधोमुखी बनाने की कल्पना में वे एक दूसरे से होड़ करते हैं। जो कुलीनतंत्र जितना ही अधिक शक्तिशाली, प्रसिद्ध और स्वतत्र रहा है, उसका उतना ही अधिक पतन होगा और उसके सद्गुणो की आभा चाहे जितनी अधिक रही हो, मै यह भविष्यवाणी करने का साहस करता हूँ कि उसके दुर्गुणों की शान सदा अधिक रहेगी।

भौतिक सुखो का प्रेम प्रजातान्त्रिक जनता को इस प्रकार की किसी अति की ओर नहीं ले जाता। वहाँ सुख के प्रति प्रेम की भावना का प्रदर्शन स्थिर, विशेष और सार्वजनिक भावना के रूप मे किया जाता है, किन्तु उसका विस्तार सीमित होता है। विशाल प्रासादो के निर्माण, प्रकृति पर विजय अथवा उसके अनुकरण मनुष्य की भावनाओ को सन्तुष्ट करने के लिए विश्व को विध्वस्त करने का विचार नहीं किया जाता, अपितु आपके खेत मे कुछ भूमि-खण्ड को जोडने, फलोद्यान लगाने, मकान का विस्तार करने, जीवन को सदा सुखदायक और सुविधा-जनक बनाते रहने, कष्ट से बचने तथा विना प्रयास तथा बिना व्यय के छोटी आवश्यकताओ की पूर्ति करने का विचार किया जाता है। ये छोटी बाते हं, किन्तु आत्मा इनमें रमी रहती है; आत्मा इन बातो पर प्रति दिन सोचती रहती है, जब तक शेष ससार को विलग नहीं कर देतीं और कभी-कभी आत्मा और स्वर्ग के बीच व्यवधान नहीं उपस्थित कर देतीं।

यह कहा जा सकता है कि यह केवल समाज के निम्न वर्ग के सदस्यों के सम्बन्ध मे चरितार्थ हो सकता है, अधिक धनी व्यक्ति उसी प्रकार की रुचि का का प्रदर्शन करेंगे, जिस प्रकार की रुचि का प्रदर्शन कुलीनतात्रिक युगों में धनिक व्यक्ति करते थे। मैं इस कथन से सहमत नहीं हूँ: जहाँ तक भौतिक सुखो का सम्बन्ध है, प्रजातात्रिक समाज के समृद्धतम सदस्य जनता से बहुत भिन्न रुचि का प्रदर्शन नहीं करेंगे, चाहे इसका कारण यह हो कि जनता के मध्य से आने के कारण उनकी रुचि भी वास्तव मे जनता की ही रुचि होती है अथवा यह हो कि वे जनता की रुचि के समक्ष झुकना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। प्रजातात्रिक समाज मे जनता की सासारिकता ने एक मध्यम एव शान्तिपूर्ण मार्ग को ग्रहण किया है, जिस पर चलने के लिए सभी बाध्य हैं। दुर्गुणों द्वारा सामान्य नियम से विचलित होना उतना ही कठिन है, जितना कि सद्गुणों द्वारा। अतः प्रजातात्रिक राष्ट्रो मे रहने वाले धनी व्यक्ति असाधारण सुखों का उपयोग करने की अपेक्षा अपनी क्षुद्रतम आवश्यकताओं की पूर्ति करने पर विशेष ध्यान देते हैं। वे भावना को अत्यधिक अनियमित बनाये बिना अनेक तुच्छ भावनाओ को सन्तुष्ट करते हैं। इस प्रकार उनके अनैतिक होने की अपेक्षा निष्क्रिय होने की सम्भावना अधिक होती है।

प्रजातान्त्रिक युगो मे मनुष्यो में भौतिक सुखों के प्रति जो विशेष रुचि होती है, वह स्वभावतः सार्वजनिक व्यवस्था के सिद्धान्तो के विरुद्ध नहीं होती, उसे बहुधा व्यवस्था की आवश्यक्ता होती है, जिससे उसका परितोष हो सके। न यह रुचि नैतिकता की नियमितता के प्रतिकूल होती है, क्योकि सदाचार सार्वजनिक शान्ति मे योग प्रदान करते हैं और उद्योग के लिए अनुकूल होते हैं। उसे बहुधा एक प्रकार की धार्मिक नैतिकता के साथ भी सयुक्त किया जा सकता है, मनुष्य परलोक मे अपने सुअवसर को खोये बिना इस लोक मे अधिक से अधिक सुख के साथ रहने की कामना करते हैं। कतिपय भौतिक सुखों का उपभोग अपराध किये बिना नहीं किया जा सकता, इस प्रकार के भौतिक सुखों से मनुष्य बहुत बचते हे। अन्य सुखों के उपयोग के लिए धर्म और नैतिक्ता द्वारा अनुमति प्रदान की गयी है, इन सुखो की प्राप्ति के लिए हृदय, कल्पना और स्वय जीवन तक की सारी शक्ति को दे दिया जाता है, जब तक कि मनुष्य इन अल्पतर सुखों के लिए उन अधिक मूल्यवान वस्तुओं का विस्मरण नहीं कर देते, जो मानव जाति को गरिमा एव महानता प्रदान करती है।

मैं समानता के सिद्धान्त की निन्दा इसलिए नहीं करता कि वह मनुष्यों को

निषिद्ध सुखों की खोज के लिए प्रेरित करता है, प्रत्युत मैं उसकी निन्दा इसलिए करता हूँ कि वह उन्हें स्वीकृत सुखों की खोज मे पूर्णतया निमग्न कर देता है। इन साधनों से अन्ततोगत्वा विश्व मे एक प्रकार के पुण्यात्मक भौतिकवाद की स्थापना हो सकती है, जो आत्मा को भ्रष्टाचारी नहीं बनायेगा, किन्तु उसे निष्क्रिय बना देगा और बिना शोरगुल के कर्म स्रोतो को निष्क्रिय बना देगा।

३२. किन कारणों से लगभग समस्त अमरीकी औद्योगिक-वृत्तियाँ ग्रहण करते हैं?

समस्त उपयोगी कलाओं में सम्भवतः कृषि ही ऐसी कला है, जिसमें प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो मे मन्दतम गति से सुधार होता है। वास्तव मे वह बहुधा स्थिर एव गतिहीन प्रतीत होती है, क्योंकि अन्य कलाएँ पूर्णता की ओर तीव्र गति से अग्रसर होती रहती हैं। दूसरी ओर स्थिति की समानता से जितनी रुचियों एवं आदतो की उत्पत्ति होती है, वे लगभग समस्त रुचियाँ और आदतें मनुष्यों को स्वभावतः व्यावसायिक एवं औद्योगिक पेशों की ओर उन्मुख करती हैं।

एक ऐसे व्यक्ति की कल्पना कीजिये, जो सक्रिय, शिक्षित, स्वतंत्र एवं योग्य है, किन्तु इच्छाओ से भरा हुआ है। वह इतना निर्धन है कि आलस्यमय जीवन नहीं व्यतीत कर सकता, वह इतना धनी है कि वह अपने को अभाव के तात्कालिक भय से सुरक्षित अनुभव करता है और वह सोचता है कि मै अपनी स्थिति को अच्छी किस प्रकार बना सकता हूँ। इस व्यक्ति ने भौतिक सुखों के प्रति, जिनका उपभोग उसके चारों ओर हजारो व्यक्ति करते हैं, रुचि की एक कल्पना कर रखी है। उसने स्वय इन सुखों का आनंद लेना प्रारम्भ कर दिया है, और वह इन रुचियों को अत्यधिक पूर्णता के साथ सन्तुष्ट करने के अपने साधनों मे वृद्धि करने के लिए लालायित है, किन्तु जीवन व्यतीत होता जा रहा है, समय महत्त्वपूर्ण है—वह किस वस्तु की ओर उन्मुख हो? भूमि पर कृषि करने से उसके प्रयासो का फलीभूत होना निश्चित-सा है, किन्तु ये फल धीरे-धीरे प्राप्त होते हैं, धैर्य और श्रम के बिना मनुष्य कृषि द्वारा धनी नहीं बनते। अतः कृषि केवल उन्हीं व्यक्तियो के उपयुक्त है, जिनके पास पहले से ही अत्यधिक धन हो, अथवा जो अपनी निर्धनता के कारण जीविका मात्र उपार्जित करने की

कामना रखते हैं। हमने जिस प्रकार के व्यक्ति की कल्पना की है, वह शीघ्र निर्णय कर लेता है, वह अपनी भूमि को बेच देता है, अपने स्थान को छोड देता है और किसी कठिन, किन्तु अधिक धन प्रदान करने वाले पेशे को ग्रहण करता है।

प्रजातात्रिक समुदायो मे इस प्रकार के व्यक्तियो की अधिकता रहती है और इस अनुपात मे स्थितियों की समानता मे वृद्धि होती है, उसी अनुपात मे उनकी सख्या मे भी वृद्धि होती है। इस प्रकार प्रजातत्र मे न केवल श्रमिकों की सख्या मे वृद्धि होती है, प्रत्युत उसमे मनुष्य एक प्रकार के श्रम की अपेक्षा दूसरे प्रकार के श्रम को अधिक पसन्द करने लगते हैं और जबकि प्रजातत्र कृषि की ओर से ध्यान हटाता है, वह व्यवसाय और उद्योगों के प्रति मनुष्यो की रुचि को प्रोत्साहित करता है।

इस भावना को समाज के समृद्धतम व्यक्तियो मे भी देखा जा सकता है, प्रजातात्रिक देशो मे कोई व्यक्ति चाहे जितना समृद्ध समझा जाता हो, उसे अपनी सम्पत्ति के सम्बन्ध मे लगभग सदा ही असन्तोप बना रहता है, क्योकि वह देखता है कि वह अपने पिता की अपेक्षा कम धनी है और वह इस बात से भयभीत रहता है कि उसके पुत्र उससे भी कम धनी होंगे। अतः प्रजातत्रों मे अधिकाश धनी व्यक्ति निरन्तर धन प्राप्ति की इच्छा से अभिभूत रहते हैं और वे स्वभावतः व्यापार एव उद्योग की ओर उन्मुख होते हैं, जो सफलता के सुलभतम एवं सरलतम और सर्वोत्तम साधन प्रतीत होते हे। इस सम्बन्ध मे उनकी भावनाएँ वही होती हैं, जो निर्धनों की होती हैं, यद्यपि वे निर्धनों की भॉति आवश्यकताओ का अनुभव नहीं करते, अथवा यो कहा जा सकता है कि वे ससार मे डूब न जाने की सर्वाधिक कष्टदायक आवश्यकता का अनुभव करते हैं।

कुलीनतत्रों मे धनी व्यक्तियो के हाथ मे शासन-सत्ता भी होती है। महत्त्व-पूर्ण सार्वजनिक कार्यो पर वे जो निरन्तर ध्यान देते रहते हैं, यह उन्हे उन तुच्छ चिन्ताओ से मुक्त रखता है, जो चिन्ताएँ व्यापार और उत्पादन मे करनी पडती हे, किन्तु यदि कोई व्यक्ति अपना ध्यान व्यवसाय की ओर लगाता है, तो वह सस्था, जिसका वह सदस्य होता है, तत्काल उसे ऐसा करने से रोक देगी, क्योकि मनुष्य सस्था के शासन का चाहे जितना विरोध करे, वे उससे पूर्णरूपेण बच नहीं सकते और राष्ट्रीय बहुमत के अधिकारो को हठपूर्वक अमान्य करने वाले कुलीनतत्रों मे भी एक निजी बहुमत का निर्माण किया जाता है, जो शेष लोगों पर शासन करता है।

प्रजातात्रिक देशों मे जहॉ धनी व्यक्ति अपने धन के कारण राजनीतिक सत्ता नहीं प्राप्त किया करते, प्रत्युत बहुधा उससे दूर हो जाते हैं, धनिक व्यक्ति यह नहीं जानते कि अपने अवकाश को किस प्रकार व्यतीत किया जाय। वे अपनी इच्छाओ की अशान्ति और महानता द्वारा, अपने साधन-स्रोतों की विशालता द्वारा और असाधारणता के प्रति रुचि द्वारा जिसका अनुभव वे लोग लगभग सदा करते हैं, जो किसी भी साधन से भीड से ऊपर उठ जाते हैं, सक्रिय जीवन मे प्रवेश करते हैं। उनके लिए एक मात्र व्यापार का ही मार्ग खुला रहता है। प्रजातत्र मे व्यवसाय से बढ़कर महान अथवा प्रतिभा का कार्य कोई नहीं होता। वह जनता का ध्यान आकृष्ट करता है और जन-समूह की कल्पना पर छा जाता है; समस्त उत्साहपूर्ण भावनाओ को उसी ओर प्रवृत्त किया जाता है। व्यवसाय मे लगने से धनियों को न तो उनके पूर्वाग्रह और न किसी अन्य व्यक्ति के पूर्वाग्रह ही रोक सकते हैं। प्रजातत्रों के धनी सदस्य कभी ऐसी सस्था का निर्माण नहीं करते, जिसके निजी ढग और निजी नियम हों, उनके वर्ग के विशेष मत उन्हें रोकते नहीं और उनके देश के सामान्य मत उन्हे प्रेरित करते हैं। इसके अतिरिक्त चूँकि प्रजातात्रिक समाज में समस्त विशाल सम्पत्तियॉ, व्यवसाय द्वारा अर्जित की गयी होती हैं, इसलिए सम्पत्ति-स्वामियो द्वारा व्यवसाय की आदतो का पूर्ण परित्याग किये जाने में कई पुश्तों का गुजर जाना आवश्यक होता है।

राजनीति द्वारा निर्धारित सकीर्ण सीमाओं मे आबद्ध धनी व्यक्ति प्रजातत्रों में उत्सुकतापूर्वक व्यावसायिक अध्यवसाय की ओर प्रवृत्त होते हैं, वहॉ वे अपने प्राकृतिक गुणों का उपयोग एव विस्तार कर सकते हैं और निश्चय ही उनके साहस एव उनके औद्योगिक स्रोतों की विशालता से भी हम इस बात का पता लगा सकते हैं कि यदि उनका जन्म कुलीनतत्र में हुआ होता तो वे उत्पादन-शील उद्योग का कितना कम सम्मान करते।

सयुक्त-राज्य अमरीका केवल आधी शताब्दी पहले ब्रिटेन की औपनिवेशिक अधीनता से मुक्त हुआ था वहाँ बड़ी-बड़ी सम्पत्तियों की सख्या कम है और पूँजी अभी तक दुर्लभ है। फिर भी, अमरीकियों ने व्यापार और उत्पादन के क्षेत्र में जितनी तीव्र गति से प्रगति की है, उतनी तीव्र प्रगति ससार के किसी अन्य देश ने नहीं की है, सम्प्रति अमरीका ससार का दूसरा सबसे बड़ा समुद्री राष्ट्र है और यद्यपि उनके उत्पादनों को लगभग अजेय प्राकृतिक बाधाओं से सघर्ष करना पड़ा, तथापि वे प्रतिदिन महान प्रगति करते जा रहे हैं।

सयुक्त-राज्य अमरीका में महानतम कार्य और सट्टे बिना कठिनाई के सम्पन्न होते हैं, क्योंकि समस्त जनसख्या उत्पादक उद्योग में लगी हुई है और समाज के निर्धन से निर्धन तथा धनी से धनी सदस्य इन उद्देश्यों के हेतु सयुक्त रूप से प्रयास करने के लिए तत्पर रहते हैं। परिणाम यह होता है कि ऐसे राष्ट्र द्वारा जिसके सम्बन्ध मे यह कहा जा सकता है कि वहाँ धनी व्यक्ति नहीं हैं, कार्यान्वित किये जाने वाले विशाल सार्वजनिक कार्यों को देखकर नवागतुक व्यक्ति आश्चर्यचकित हो जाता है। अमरीकी जिस क्षेत्र मे निवास करते हैं, उस क्षेत्र मे उनका आगमन कल ही हुआ था और उन्होंने पहले ही अपने लाभ के लिए प्रकृति की समस्त व्यवस्था में परिवर्तन कर डाला है, उन्होंने हडसन को मिस्सीसीपी के साथ मिला दिया है और अतलान्तक महासागर और मेक्सिको की खाडी के मध्य, जिनमें पन्द्रह सौ मील का अन्तर है, यातायात प्रारम्भ कर दिया है। अभीतक जो रेल-मार्ग निर्मित किये गये हैं उनमें सर्वाधिक लम्बे रेल-मार्ग अमरीका में हैं।

किन्तु सयुक्त-राज्य अमरीका में छोटे-छोटे कार्यों की अगणित सख्या को देख कर मुझे जितना विस्मय होता है, उतना कतिपय कार्यों की चमत्कारिक शान को देखकर नहीं होता। अमरीका के लगभग समस्त किसान कृषि के साथ कोई न कोई व्यापार करते हैं, उनमें से अधिकाश कृषि को ही स्वयं व्यापार का रूप प्रदान कर देते हैं। ऐसा बहुत कम होता है कि अमरीकी किसान उसी भूमि पर बस जाता है, जिस पर वह कृषि करता है, विशेषत सुदूर पश्चिम के जिलों में वह भूमि पर कृषि करने के लिए नहीं, प्रत्युत उसे बेच डालने के लिए जोत के अन्तर्गत लाता है, वह इस अनुमान से एक खलियान का निर्णय करता है कि चूँकि जन-सख्या में वृद्धि के कारण शीघ्र ही देश की स्थिति में परिवर्तन हो जायगा, इसलिए उसका अच्छा मूल्य प्राप्त हो जायगा।

प्रतिवर्ष लोग भारी संख्या मे उत्तर से दक्षिणी राज्यो मे आते हैं और वहाँ बसते हैं, जहाँ कपास और गन्ने की खेती होती है। ये लोग इस उद्देश्य से भूमि पर कृषि करते हैं कि थोडे वर्षों मे ही उससे इतनी अधिक उपज हो जाय कि वे धनी हो जाय और वे पहले से ही उस समय की प्रतीक्षा करने लगते हैं, जब वे इस प्रकार क्षमता प्राप्त कर आनन्द उठाने के लिए घर वापस लौटेंगे। इस प्रकार अमरीकी अपनी व्यावसायिक प्रतिभा को कृषि में भी ले जाते हैं और उनके अन्य कार्यो की भाँति कृषि मे भी उनकी व्यापारिक भावनाओं का प्रदर्शन होता है।

अमरीकी उत्पादनशील उद्योग मे महान प्रगति करते हैं, क्योंकि वे सभी तत्काल इसमे तल्लीन हो जाते है और इसी कारण उन्हें अप्रत्याशित एव प्रचण्ड बाधाओं का सामना करना पडता है। चूँकि वे सभी वाणिज्य में लगे रहते हैं, इसलिए उनके व्यावसायिक कार्यो पर ऐसे विविध एव जटिल कारणों का प्रभाव पडता है कि कठिनाइयों की पूर्व कल्पना कर सकना असम्भव होता है। चूँकि वे सभी न्यूनाधिक मात्रा मे उत्पादक उद्योग में लगे रहते हैं, इसलिए व्यवसाय पर होने वाले मामूली आघात से भी समस्त निजी सम्पत्तियाँ एक साथ ही सकट मे पड जाती हैं और राज्य हिल उठता है। मेरा विश्वास है कि हमारे युग के प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे एक सक्रामक रोग की भाँति इन व्यावसायिक सकटों की पुनरावृत्ति होती ही रहती है। इसे कम खतरनाक बनाया जा सकता है, किन्तु इसको दूर नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह आकस्मिक परिस्थितियों से नहीं, प्रत्युत इन राष्ट्रों की प्रवृत्तियों से उत्पन्न होता है।

२१. उत्पादनों (उद्योग) द्वारा कुलीनतंत्र की सृष्टि किस प्रकार हो सकती है?

है, तब समस्त सामग्री का उत्पादन अधिक सरलता, शीघ्रता और मितव्ययिता के साथ होता है। इसी प्रकार यह बात भी मानी हुई है कि जिस संस्थान मे तैयार वस्तुओ का उत्पादन किया जाता है, उस संस्थान के आकार और नियोजित अथवा साख की पूँजी की राशि द्वारा तैयार वस्तुओं के उत्पादन-व्यय मे कमी होती है। इन सत्यो को दीर्घकाल से अपूर्ण रूप से देखा जाता रहा है, किन्तु हमारे युग मे वे सिद्ध हो गये हैं। उन्हें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उत्पादनों में पहले ही काम मे लाया जा चुका है और शनैः शनैः छोटा से छोटा उत्पादन भी उनसे शासित होगा। मुझे राजनीति मे किसी ऐसी वस्तु का ज्ञान नहीं है, जिस पर विधायक ध्यान देने की आवश्यकता हो जितना कि उत्पादन-विज्ञान के इन दो नये सिद्धान्तो पर।

जब कोई व्यक्ति एक वस्तु के निर्माण मे अनवरत एव विशेष रूप से लगा होता है तब वह अन्ततोगत्वा अपना कार्य चरम कौशल्य के साथ करने लगता है, किन्तु साथ ही साथ वह कार्य के निर्देशन मे अपने मस्तिष्क के उपयोग करने के गुण को खो देता है। वह प्रतिदिन अधिक कुशल और कम उद्योगशील बनता है, जिससे उसके सम्बन्ध मे यह कहा जा सकता है कि जिस अनुपात मे श्रमिक मे सुधार होता है, उसी अनुपात मे मनुष्य का पतन होता है। उस मनुष्य से क्या आशा की जा सकती है, जिसने अपने जीवन के बीस वर्ष पिनो के सिरे बनाने मे व्यतीत किये हैं और पिनों के सिरे बनाने का सर्वोत्तम तरीका ढूँढ निकालने के अतिरिक्त उसमे उस शक्तिशाली मानवीय प्रतिभा का उपयोग, जिसने बहुधा विश्व को झकझोर दिया है, और किस बात के लिए किया जा सकता है? जब कोई मनुष्य अपने जीवन का पर्याप्त भाग इस प्रकार व्यतीत कर चुका होता है, तब उसके विचार सदा के लिए उस वस्तु पर केन्द्रित हो जाते हैं, जिसके निर्माण के लिए वह प्रतिदिन श्रम करता है। उसके शरीर की कतिपय आदतें बन जाती हैं, जिनका परित्याग वह कभी नहीं कर सकता, एक वाक्य मे यह कहा जा सकता है कि वह अपने अधीन नहीं, प्रत्युत अपने पेशे के अधीन हो जाता है। इस प्रकार के व्यक्ति के चारों ओर की बाधाओ को समाप्त करने तथा प्रत्येक ओर उसके लिए सम्पत्ति के हजारो विभिन्न मार्ग प्रशस्त करने का कष्ट कानूनो और व्यवहारों ने व्यर्थ ही उठाया है। व्यवहारो और कानूनो से अधिक शक्तिशाली उत्पादन का एक सिद्धान्त उसे एक शिल्प के साथ और बहुधा एक स्थान के साथ आबद्ध रखता है, जिसे वह छोड नहीं सकता। वह उसे समाज मे एक निश्चित स्थान प्रदान करता है, जिसके आगे वह नहीं जा

सकता। सर्वव्यापी गतिशीलता के मध्य उसने उसे गतिहीन बना दिया है।

श्रम-विभाजन के सिद्धान्त का प्रयोग जितनी ही अधिक व्यापकता के साथ किया जाता है, श्रमिक उतना ही अधिक कमजोर, सकीर्ण विचारों वाला और पराधीन बन जाता है। कला आगे बढती है, कलाकार पीछे हटता है। दूसरी ओर, यह बात जितनी स्पष्ट होती है कि उतनी ही अधिक सख्या मे वस्तुओं का उत्पादन होता है और जितनी अधिक पूँजी लगायी जाती है, उतनी ही अधिक वे सस्ती और अच्छी होती हैं। उतने ही अधिक धनी और शिक्षित व्यक्ति उत्पादन में, जिसे अभी तक निर्धन और अशिक्षित शिल्पकारों के हाथों में छोड़ दिया गया था, लगते हैं। आवश्यक प्रयासो की विशालता तथा प्राप्त होनेवाले परिणामो का महत्त्व उन्हें आकृष्ट करते हैं। इस प्रकार जिस समय उत्पादन का विज्ञान श्रमिक वर्ग को पतनोन्मुख बनाता है, उसी समय वह स्वामियों के वर्ग का उत्थान करता है।

जब कि श्रमिक एक ही वस्तु के अध्ययन पर अपनी प्रतिभा को अधिकाधिक केन्द्रित करता है, स्वामी विस्तृत समग्रता का सर्वेक्षण करता है, और जिस अनुपात में स्वामी के मस्तिष्क का विस्तार होता है, उसी अनुपात मे श्रमिक का मस्तिष्क सकीर्ण बनता है। थोड़े ही समय उपरान्त एक को बिना प्रतिभा के शारीरिक शक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं रह जायगी, और दूसरे को सफलता प्राप्त करने के लिए विज्ञान की एवं प्रतिभा की आवश्यकता होगी। यह व्यक्ति एक विशाल साम्राज्य के प्रशासक के साथ बहुत अधिक मिलता-जुलता है—वह व्यक्ति नहीं, एक पशु होता है।

लिए भी सुलभ हो जाती है, सफलता का एक महान तत्त्व बन जाता है। अतः उत्पादनों मे अपनी सम्पत्ति और ज्ञान का उपयोग करने वाले अत्यधिक समृद्ध और शिक्षित व्यक्तियों की सख्या प्रतिदिन बढती जाती है। ये व्यक्ति बड़े-बड़े सस्थानों की स्थापना तथा श्रम का कठोर विभाजन कर सब ओर से की जाने वाली नयी मॉगों की पूर्ति का प्रयास करते हैं। इस प्रकार जिस अनुपात मे राष्ट्र की जनता प्रजातत्र की ओर उन्मुख होती है, उसी अनुपात मे उत्पादनों मे लगा हुआ विशेष वर्ग अधिक कुलीनतात्रिक बनता है। प्रजातत्र में मनुष्यों मे अधिक समानता आती है, कुलीनतत्र में उनमें अधिक अन्तर होता है, और समाज मे जिस अनुपात मे असमानता मे कमी होती है, उसी अनुपात मे वह अल्पसख्यक वर्ग मे बढती है। अत. तह तक पता लगाने पर प्रतीत होगा कि कुलीनतत्र स्वभावतः प्रजातत्र से उत्पन्न होगा, किन्तु इस प्रकार का कुलीनतत्र किसी भी भॉति पूर्वकालीन कुलीनतत्रो के समतुल्य नहीं है। इस बात को तत्काल देखा जा सकता है कि चूँकि यह विशेष रूप से उत्पादन तथा कतिपय उत्पादन-विषयक पेशों के सम्बन्ध मे लागू होती है, इसलिये यह समाज के सामान्य पहलू में एक भीषण अपवाद है। हमारे युग के व्यापक प्रजातत्र में कतिपय उत्पादकों द्वारा निर्मित छोटे कुलीनतात्रिक समाजों में भूतपूर्व युगों के महान कुलीनतत्रों की भॉति थोडे-से व्यक्ति अत्यत समृद्ध और अधिकाश व्यक्ति अत्यंत निर्धन होते हैं। निर्धनो के पास अपनी स्थिति से मुक्ति पाने को तथा धनी बनने के बहुत कम साधन होते हैं, किन्तु धनी निरन्तर निर्धन बनते जाते है अथवा सम्पत्ति अर्जित कर लेने पर वे व्यवसाय का परित्याग कर देते हैं। इस प्रकार निर्धन वर्ग का निर्माण करनेवाले तत्त्व निश्चित होते हैं, किन्तु धनी वर्ग का निर्माण करनेवाले तत्त्व ऐसे नहीं होते। सच बात तो यह है कि यद्यपि धनी व्यक्ति होते हैं, किन्तु धनी वर्ग का अस्तित्व नही होता, क्योकि इन धनी व्यक्तियों की सामान्य भावनाऍ अथवा उद्देश्य, पारस्परिक परम्पराऍ अथवा पारस्परिक आशाऍ नहीं होतीं अतः व्यक्ति तो होते हैं, किन्तु कोई निश्चित वर्ग नहीं होता।

न केवल धनी व्यक्ति आपस मे सुदृढ रूप से सगठित नहीं होते, प्रत्युत उनके और निधनों के मध्य कोई वास्तविक सम्बन्ध नहीं होता। उनकी सापेक्षिक स्थिति स्थायी नहीं होती, वे निरतर अपने हितो द्वारा एक दूसरे से मिलते अथवा अलग होते हैं। श्रमिक सामान्यत स्वामी के आश्रित होता है, किन्तु वह किसी विशेष स्वामी के आश्रित नहीं होता। ये दोनों व्यक्ति

फैक्टरी में मिलते हैं, किन्तु अन्यत्र एक दूसरे को नहीं जानते और जब कि एक विषय में वे एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं, अन्य समस्त विषयों में एक दूसरे से बहुत दूर रहते हैं। उत्पादक श्रमिक से उसके श्रम के अतिरिक्त कुछ नहीं मांगता, श्रमिक उससे अपनी मजदूरी के अतिरिक्त और किसी वस्तु की आशा नहीं रखता। एक पर रक्षा करने का कोई उत्तरदायित्व नहीं होता, न दूसरे पर प्रतिरक्षा का कोई उत्तरदायित्व होता है और वे या तो आदत द्वारा या कर्तव्य द्वारा स्थायी रूप से सम्बद्ध रहते हैं। व्यवसाय द्वारा निर्मित कुलीनतंत्र उत्पादन करने वाली जन संख्या के मध्य जिसका वह निर्देशन करता है, बहुत कम जमता है। उद्देश्य उस जनसंख्या पर शासन करने का नहीं, प्रत्युत उसका प्रयोग करने का होता है। इस प्रकार निर्मित कुलीनतंत्र का उन व्यक्तियों के ऊपर महान प्रभाव नहीं हो सकता, जिनसे वह काम कराता है और यदि वह एक समय उन्हें वश में करने में सफल भी हो जाय, तो दूसरे ही क्षण वे बच निकलते हैं। वह संकल्प करना नहीं जानता और वह कार्य नहीं कर सकता।

३५. प्रजातंत्र अमरीकियों के स्वभावगत सम्बन्ध को किस प्रकार साधारण एवं सरल बनाता है।

प्रजातंत्र मे मनुष्यो का एक दूसरे के साथ सुदृढ़ सम्बन्ध नहीं होता, किन्तु वह उनके स्वभावगत सम्बन्ध को सरलतर आधार पर ला देता है।

यदि दो अग्रेज सयोगवश ध्रुवों पर मिल जाय, जहॉ वे ऐसे विचित्र प्राणियों से घिरे हो, जिनकी भाषा और आचरणो से वे प्रायः अपरिचित हैं, तो वे सर्वप्रथम काफी उत्सुकता से और एक प्रकार की गुप्त बेचैनी से एक दूसरे को देखेंगे, तत्पश्चात् वे मुॅह मोड़ लेंगे, अथवा यदि एक दूसरे को बुलाया तो वे अत्यन्त महत्वहीन विषयों पर दबी हुई जबान मे तथा अन्यमनस्क भाव से बातचीत करेगे। फिर भी, इन व्यक्तियो में कोई शत्रुता नहीं होती, उन्होंने एक दूसरे को पहले कभी नहीं देखा है और प्रत्येक दूसरे को एक सम्मानित व्यक्ति समझता है। फिर वे, एक दूसरे से इतनी सजगता से विलग क्यो रहते हैं? इसका कारण जानने के लिए हमे इगलैण्ड मे जाना पडेगा।

जब समाज मे मनुष्यो का वर्गीकरण सम्पत्ति से स्वतत्र केवल जन्म के आधार पर होता है, तब प्रत्येक व्यक्ति ठीक ठीक जानता है कि सामाजिक स्तर पर उसकी निजी स्थिति क्या है, वह ऊपर उठने का प्रयास नहीं करता, वह नीचे गिरने से भयभीत नहीं होता। इस प्रकार सगठित समाज मे विभिन्न जातियों के व्यक्ति एक दूसरे से बहुत कम सम्बन्ध रखते हैं, किन्तु यदि वे सयोगवश मिल जाते है, तो वे अपनी निजी स्थिति को खोने की आशा अथवा आशका के बिना बातचीत करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं। उनका सम्बन्ध समानता के आधार पर नहीं होता, किन्तु वह सीमित नहीं होता है।

जब जन्मना कुलीनतत्र का स्थान उन पर आधारित कुलीनतत्र ग्रहण कर लेता है, तब स्थिति बदल जाती है। कुछ व्यक्तियों के विशेषाधिकार अब भी बहुत अधिक होते हैं, किन्तु उन विशेषाधिकारो को प्राप्त करने की सम्भावना सभी के लिए रहती है इससे यह निष्कर्ष निकलता है, जिनके पास ये विशेषाधिकार रहते है, वे उनके खो जाने अथवा दूसरे व्यक्तियो द्वारा भी उनके प्राप्त कर लिये जाने के भय से सदा सत्रस्त रहते हैं। जिन व्यक्तियों को ये विशेषाधिकार अभी तक उपलब्ध नहीं होते, वे उन्हें किसी भी मूल्य पर प्राप्त करने की कामना करते हैं, अथवा यदि वे विफल हो जाते हैं, तो कम से कम ऐसा

दिखाते हैं कि उनके पास वे विशेषाधिकार हैं, जो असम्भव नहीं हैं। चूँकि मनुष्यों का सामाजिक महत्व प्रत्यक्ष एवं स्थायी रूप से रक्त द्वारा निर्धारित नहीं होता और सम्पत्ति के अनुसार उनमे अत्यधिक भिन्नता रहती है, इसलिए श्रेणियाँ बनी ही रहती हैं, किन्तु इन श्रेणियों को एक ही दृष्टि मे साफ साफ पहचान लेना सरल नहीं होता। तब समाज मे गुप्त विरोध उत्पन्न हो जाते हैं, व्यक्तियो की एक श्रेणी असंख्य उपायों द्वारा अपने से ऊपर के व्यक्तियो की श्रेणी मे प्रवेश करने का प्रयत्न करती है अथवा प्रवेश करती हुई प्रतीत होने का प्रयत्न करती है। एक दूसरी श्रेणी अपने अधिकारो का अपहरण करने वाले इन व्यक्तियो के विरुद्ध निरन्तर सघर्परत रहती है। अथवा यह कहा जा सकता है कि एक ही व्यक्ति एक ही साथ ये दोनो कार्य करता है और जब कि वह उच्चतर वर्ग मे प्रविष्ट होने का प्रयास करता है, वह अपने निम्नतर व्यक्तियों के अपने वर्ग मे प्रवेश के विरुद्ध निरन्तर बचाव करता रहता है।

सम्प्रति इंगलैण्ड की स्थिति इसी प्रकार की है और मेरा मत है कि अभी जिस विशिष्ट बात का उल्लेख किया गया है, उसका मुख्य कारण यह स्थिति ही है। चूँकि अंग्रेजो मे अब भी कुलीनतात्रिक गर्व बहुत अधिक है और चूँकि कुलीनतत्र की सीमाओं की ठीक-ठीक परिभाषा नहीं हुई है, इसलिए प्रत्येक व्यक्ति निरन्तर भयभीत रहता है, जिससे उसके परिचय से लाभ न उठाया जाय। अंग्रेज जिन लोगो से मिलता है, उनकी सामाजिक स्थिति के सम्बन्ध मे तत्काल निर्णय करने मे असमर्थ होने के कारण वह बुद्धिमत्तापूर्वक उनसे किसी प्रकार का सम्पर्क स्थापित करने से बचता है। मनुष्य इस बात से भयभीत रहते हैं कि कहीं छोटी-सी सेवा के कारण उन्हे किसी अनुपयुक्त परिचय में न फँस जाना पडे, वे नागरिक शिष्टाचार से भयभीत रहते हैं और वे किसी नवागतुक की अवाछित कृतज्ञता से उसी प्रकार बचते हैं, जिस प्रकार उसकी घृणा से।

अनेक व्यक्ति अंग्रेजो की इस विशिष्ट समाज विरोधी प्रवृत्ति तथा सयमित और मौन स्वभाव का कारण विशुद्ध भौतिक बताते है। मै स्वीकार करता हूँ कि उनकी जाति मे कुछ अंशो में यह बात विद्यमान है, किन्तु अधिकाशतः इसका कारण उनकी सामाजिक स्थिति है, जो अमरीकियो के विरोधाभास से सिद्ध होती है।

एक दूसरे से अपरिचित व्यक्ति एक ही स्थान पर बहुधा जाने के लिए अत्यन्त तत्पर रहते हैं, और उन्हें स्वतन्त्रतापूर्वक विचारों का आदान-प्रदान करने में न तो कोई खतरा दिखायी देता है, और न कोई लाभ दिखायी देता है। यदि वे सयोगवश मिल जाते हैं, तो वे न तो सम्पर्क स्थापन का प्रयास करते हैं, और न उससे बचते हैं, अतः उनका व्यवहार स्वाभाविक, स्पष्ट और उन्मुक्त होता है। इस बात को देख सकना सरल है कि वे मुश्किल से एक दूसरे से कोई आशा रखते हैं, अथवा भय करते हैं, और वे विश्व मे अपनी स्थिति का प्रदर्शन करने अथवा उसे छिपाने की तनिक भी परवाह नहीं करते। यदि उनका व्यवहार बहुधा रूखा एव गम्भीर होता है, तो भी वह कभी उद्दण्डतापूर्ण अथवा सयमित नहीं होता, और यदि वे बातचीत नहीं करते तो इसका कारण यह नहीं होता कि वे मौन रहने मे अपना हित समझते हैं, प्रत्युत इसका कारण यह होता है कि वे बातचीत करने की मन.स्थिति में नहीं रहते।

किसी विदेशी देश मे दो अमरीकी केवल अमरीकी होने के कारण तत्काल मित्र बन जाते हैं। उनमे कोई पूर्वाग्रह नहीं होता, वे अपना देश एक ही होने के कारण एक दूसरे की ओर आकृष्ट होते हैं। दो अग्रेजो के लिए एक ही देश का होना पर्याप्त नहीं है, उन्हे एक ही वर्ग का भी होना चाहिए, तभी वे एक साथ मिल सकते हैं। फ्रासीसियो के समान ही अमरीकी भी अग्रेजो की इस असामाजिक मनोवृत्ति का उल्लेख करते हैं, और इससे उन्हें कम आश्चर्य नहीं होता। फिर भी अमरीकी अपने उद्भव, धर्म, भाषा और अंशत. आचरण द्वारा इग्लैण्ड के साथ सम्बन्धित हैं, केवल उनकी सामाजिक स्थिति मे अन्तर है। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अँग्रेजों के सयम का कारण उनके देश के निवासियों के गठन की अपेक्षा बहुत अधिक उनके देश का सविधान है।

२६. अमरीकी स्वयं अपने देश में इतने कम और यूरोप में इतने अधिक भावुक क्यों होते हैं ?

समस्त गम्भीर और विचारवान राष्ट्रों की भाँति अमरीकियों का स्वभाव भी प्रतिशोधात्मक होता है। वे मुश्किल से कभी किसी प्रहार को भूलते हैं, किन्तु उन पर प्रहार करना सरल नहीं है और उनकी क्रोधाग्नि को प्रज्वलित करना उतना ही कठिन है, जितना उसको शान्त करना।

कुलीनतात्रिक समाजों मे, जहाँ थोडे-से व्यक्तियो के हाथो मे समस्त वस्तुओं की व्यवस्था है, मनुष्यो का बाह्य सम्पर्क निश्चित परम्परागत नियमो के अधीनस्थ होता है। तब प्रत्येक व्यक्ति यह सोचता है कि वह जानता है कि उसे कितने सम्मान अथवा सौजन्य का प्रदर्शन करना चाहिए और किसी भी व्यक्ति को शिष्टाचार के विज्ञान से अपरिचित नहीं समझा जाता। समाज में प्रथम श्रेणी की प्रथाएँ बाद मे दूसरो के लिए उदाहरण का काम करती हैं। इसके अतिरिक्त दूसरे वर्गों का प्रत्येक वर्ग अपनी निजी आचार-सहिता का निर्माण करता है और इन वर्गो के समस्त सदस्य इस सहिता का पालन करने के लिए बाध्य होते है। इस प्रकार नम्रता के नियम विधि-निर्माण की एक जटिल प्रणाली का निर्माण करते हैं, जिसे पूर्ण रूप से हृदयगम कर लेना कठिन होता है; किन्तु जिससे विचलित होना किसी के लिये भी खतरनाक होता है, जिससे मनुष्य निरतर अनिच्छापूर्वक कठोर प्रहार करते रहते है अथवा ग्रहण करते रहते हैं।

किन्तु जब श्रेणीगत विभेद समाप्त हो जाते हैं, शिक्षा और जन्म की दृष्टि से भिन्न-भिन्न व्यक्ति एक ही स्थान पर मिलते हैं और सम्पर्क में आते हैं, तब कुलीनता के नियमो से सहमत होना लगभग असम्भव हो जाता है। चूँकि इसके कानून अनिश्चित रहते हैं, इसलिए जो लोग उनको जानते हैं, उनकी दृष्टि मे भी उनकी अवहेलना करना अपराध नहीं होता। मनुष्य स्वरूप की अपेक्षा इच्छाओं को अधिक महत्त्व देते हैं, और वे कम सभ्य हो जाते हैं, किन्तु साथ ही साथ उनमे झगडालूपन की प्रवृत्ति भी कम हो जाती है।

ऐसी कितनी ही छोटी-छोटी बाते हैं, जिनके सम्बन्ध मे अमरीकी तनिक भी परवाह नहीं करता। वह सोचता है कि उससे उन बातो की अपेक्षा नहीं की जा सकती अथवा वह मान लेता है कि उनके अपेक्षणीय होने का ज्ञान नहीं है। अतः या तो वह रूक्षता को देखता नहीं या उसे क्षमा कर देता है, उसके

व्यवहार कम शिष्टाचारपूर्ण हो जाते हैं और उसका चरित्र अधिक स्पष्ट एव पौरुषेय हो जाता है।

अमरीकी जिस पारस्परिक क्षमाशीलता का प्रदर्शन करते हैं, और वे जिस पौरुप-पूर्ण विश्वास के साथ एक दूसरे से व्यवहार करते हैं, उसका एक अन्य गहरा और अधिक सामान्य कारण भी है, जिसका उल्लेख मै पहले ही पूर्व अध्याय मे कर चुका हूँ। सयुक्त-राज्य अमरीका मे नागरिक समाज में श्रेणीगत भेद बहुत कम हैं, राजनीतिक समाज मे वे बिलकुल नहीं हैं, अत. अमरीकी अपने सह नागरिको के प्रति विशेप ध्यान देने के लिए बाध्य नहीं हैं, न उसे उनकी ओर से अपने प्रति ऐसे विशेप ध्यान की आवश्यकता होती हैं। चूँकि वह इस बात को नहीं देखता कि अपने देशवासियों का साथ प्राप्त करने के प्रयास में उसका हित निहित है, इसलिए वह इस बात को बहुत विलम्ब से समझता है कि उसके साथ की भी कामना नहीं की जाती। अपनी स्थिति के कारण किसी से घृणा न करते हुए वह इस बात की कल्पना नहीं करता कि उसी के कारण कोई भी उससे घृणा कर सकता है और जब तक वह किसी अपमानजनक बात को स्पष्ट रूप से नहीं देख लेता, तब तक वह इस बात की कल्पना नहीं करता कि जानबूझकर अपमान किया गया है। अमरीकी अपनी सामाजिक स्थिति के कारण स्वभावतः छोटी छोटी बातों मे अपमानित अनुभव न करने के अभ्यस्त बन जाते हैं, और दूसरी ओर उन्हे जो प्रजातात्रिक स्वतत्रता प्राप्त होती है, वह स्वभाव की इस नम्रता को राष्ट्रीय चरित्र का अंग बना देती है।

सयुक्त-राज्य अमरीका मे राजनीतिक सस्थाएँ सभी वर्गो के नागरिकों को निरन्तर सम्पर्क मे लाती रहती हैं और उन्हे सामूहिक रूप से महान कार्य करने के लिए बाध्य करती हैं। इस प्रकार के व्यक्तियो को शिष्टाचार की छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देने का समय मुश्किल से मिल पाता है और इसके अतिरिक्त एकतापूर्वक रहने मे उनकी रुचि इतनी अधिक रहती है कि वे इस प्रकार की बातों पर अडे नहीं रह सकते। अतः शीघ्र ही उनमे ऐसी आदत हो जाती है कि वे जिन लोगो से मिलते हैं, उनके व्यवहार की अपेक्षा उनकी भावनाओं और मतों पर अधिक ध्यान देने लगते हैं और वे छोटी-छोटी बातों से क्षुब्ध नहीं होते।

मैंने बहुधा कहा है कि सयुक्त-राज्य अमरीका मे किसी व्यक्ति को यह समझाना आसान काम नहीं है कि उसकी उपस्थिति की आवश्यकता नहीं है, उसे हटाने के लिए सकेत सदा पर्याप्त सिद्ध नहीं होते। किसी अमरीकी को यह

बताने के लिए कि मैं उसकी बातचीत से ऊब चुका हूॅ, मै उसके प्रत्येक शब्द का खण्डन करता हूॅ, वह तत्काल नयी जिद के साथ मुझे विश्वास दिलाने का प्रयत्न करने लगता है। मै एक दम से मौन धारण कर लेता हूॅ और वह सोचता है कि वह जिन सत्यो का वर्णन कर रहा है, उन पर मै गम्भीरतापूर्वक विचार कर रहा हूॅ, अन्त मे मै उस का साथ छोडकर जल्दी से उठ जाता हूॅ और वह समझेगा कि किसी महत्वपूर्ण कार्य से मुझे अन्यत्र कही जल्दी में जाना पड़ रहा है। यह व्यक्ति कभी इस बात को नहीं समझेगा की वह मुझे उबा कर मार डालता है, जब तक मै उसे ऐसा बता न दूॅ कि उससे मुक्ति पाने का एक मात्र उपाय है कि मै जीवन भर के लिए उसे अपना शत्रु बना लूॅ।

प्रथम दृष्टि मे यह बात आश्चर्यजनक प्रतीत होती है कि यही व्यक्ति जब यूरोप मे आता है, तब वह अकस्मात् इतना भावुक और छिद्रान्वेषी बन जाता है कि मुझे बहुधा उसका अपमान करने से बचना उतना ही कठिन लगता है, जितना कि अमरीका मे उसकी सगति से बचना। इन दो विरोधी बातो का एक ही कारण है। प्रजातान्त्रिक सस्थाऍ सामान्यतः मनुष्यो मे, उनके देश और स्वय उनके विषय मे उच्च धारणाऍ उत्पन्न करती हैं। अमरीकी गर्व से फूला हुआ हृदय लेकर अपने देश से बाहर निकलता है, यूरोप मे आने पर उसे तत्काल इस बात का पता चलता है कि अमरीका और उसमे निवास करने वाले महान लोगो मे हम उतनी रुचि नहीं रखते, जितनी उसने कल्पना की थी और इससे वह क्षुब्ध होने लगता है। उसे सूचित किया गया है कि विश्व के जिस भाग मे हम रहते हैं, वहाॅ सामाजिक स्थितियाॅ समान नहीं है और वह देखता है कि यूरोप के राष्ट्रो में श्रेणी के अवशेष समाप्त नही हुए हैं तथा अब भी सम्पत्ति और जन्म के आधार पर कतिपय विशेषाधिकार कायम हैं, जो बलात् उसकी दृष्टि के समक्ष उपस्थित हो जाते हैं, यद्यपि इनकी परिभाषा नहीं की जा सकती। अतः उसे इस बात का बिलकुल पता नहीं चलता कि वर्गों की इस अर्द्ध-नष्ट तुला मे उसका स्थान क्या होना चाहिए? ये वर्ग एक दूसरे से घृणा करने के लिए पर्याप्त रूप से स्पष्ट होते हैं, किन्तु अमरीकी के लिए वे इतने समान होते है कि वह सदा भ्रम मे बना रहता है। वह अपने को अत्युच्च श्रेणी मे रखने से डरता है और अत्यन्त निम्न श्रेणी मे रखे जाने से वह और अधिक डरता है। यह दोहरा खतरा निरन्तर उसके दिमाग को परेशान किये रहता है और वह जो कुछ कहता अथवा करता है, उसमे परेशानी की झलक होती है।

परम्परा से उसे इस बात का ज्ञान होता है कि यूरोप मे विभिन्न श्रेणियो के

अनुसार समारोहात्मक व्यवहारो मे अनन्त विभिन्नता थी। भूतपूर्व युगो की यह स्मृति उसकी परेशानी को पूर्ण बना देती है, और उसे जो सम्मान प्राप्त होना चाहिए, उसे न प्राप्त करने का भय उसे अधिक बना रहता है, क्योकि वह नहीं जानता कि यह सम्मान किन बातों मे निहित होता है। उसकी स्थिति ऐसे व्यक्ति के तुल्य होती है, जो चारो ओर से जाल मे घिरा हो, समाज उसके लिए मनोरजन का स्थान नहीं, प्रत्युत कठिन श्रम का स्थान होता है। वह आपके छोटे से छोटे कार्य को तौलता है, आप की निगाहों की ओर प्रश्न-सूचक दृष्टि से देखता है और आप जो कुछ कहते हैं, उसकी जॉच-पडताल करता है, जिससे कही गुप्त रूप से उसका अपमान न हो जाय। मुझे सन्देह है कि उसके समान शुद्ध नस्ल का कोई प्रान्तीय व्यक्ति भी कभी हुआ होगा। वह शिष्टाचार के छोटे से-छोटे नियमो पर ध्यान देने का प्रयत्न करता है और अपने सम्बन्ध मे उनमे से किसी भी नियम का उल्लघन नही होने देता। वह विवेक से भरा होता है, और साथ ही साथ आडम्बरो से भी भरा होता है, वह बहुत कुछ करने की इच्छा करता है, किन्तु बहुत अधिक करने से डरता है और चूँकि वह एक अथवा दूसरे की सीमाओ को भलीभॉति नहीं जानता, इसलिए वह सयम की उद्दण्डतापूर्ण एव सत्रस्त मुद्रा बनाये रखता है।

किन्तु यही सब कुछ नहीं है, यह मानवीय दृश्य का दूसरा प्रतिरूप है। अमरीकी अमरीका की सराहनीय समानता के विषय मे सदा बात किया करता है, प्रत्यक्ष रूप मे इसे वह अपने देश के लिए गर्व की बात बताता है, किन्तु गुप्त रूप से वह अपने लिए इस पर खेद प्रकट करता है और वह यह दिखाने का प्रयत्न करता है कि जहॉ तक उसका सम्बन्ध है, वह उस सामान्य स्थिति का जिसकी वह प्रशसा करता है, अपवाद है। ऐसा अमरीकी मुश्किल से ही मिलेगा, जो उपनिवेशो के प्रथम सस्थापकों के साथ किसी दूर के सम्बन्ध का दावा न करता हो और जहॉ तक इगलैण्ड के सरदार परिवारों के वशजो का सम्बन्ध है, मुझे अमरीका मे उनकी भरमार प्रतीत हुई। जब कोई समृद्ध अमरीकी यूरोप मे आता है, तब वह सर्वप्रथम सम्पत्ति के समस्त विलासों से अपने को घेर लेने की चिन्ता करता है। वह प्रजातत्र का एक साधारण नागरिक समझा जाने से इतना अधिक डरता है कि वह आपके समक्ष अपनी सम्पत्ति का कोई नया उदाहरण प्रतिदिन प्रस्तुत करने के लिए सैकड़ों विकृत उपाय करता है। उसका मकान नगर के सर्वाधिक फैशनेबुल भाग मे होगा, वह सदा नौकर-चाकरों से घिरा रहेगा। मैंने एक अमरीकी को यह शिकायत करते सुना है कि पेरिस के

सर्वोत्तम घरों में समाज एक प्रकार से मिला-जुला था, वहाँ जो रुचि प्रचलित है, वह उसके लिए पर्याप्त रूप से शुद्ध नहीं थी और उसने यह संकेत दिया कि उसके मतानुसार व्यवहार मे लालित्य का अभाव था, वह इस प्रकार के आडम्बर-हीन स्वरूपो के नीचे छिपी हुई प्रतिभा को देखने का अभ्यस्त नहीं बन सका।

इन विरोधाभासो से हमे आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए। यदि संयुक्त-राज्य अमरीका में भूतपूर्व कुलीनतांत्रिक श्रेणियों के अवशेष इतने पूर्ण रूप से नष्ट नहीं हो गये होते, तो अमरीकी अपने देश मे कम सीधे और कम सहिष्णु होते तथा हमारे देश मे उन्हें उधार लिये व्यवहारों की कम आवश्यकता होती, तथा उनके प्रति उनकी रुचि भी कम होती।

३७. मज़दूरी पर प्रजातंत्र का प्रभाव

जब सामाजिक श्रेणियाँ कम हो जाती हैं, जब बड़े लोगों का ह्रास एवं निम्न वर्गों का उत्थान होता है और निर्धनता तथा समृद्धि दोनों में से कोई वंशानुगत नहीं रह जाती, तब श्रमिक और स्वामी को पृथक् रखने वाली दूरी भी, वास्तविकता एवं विचार दोनों की दृष्टियों से, प्रतिदिन कम हो जाती है। श्रमिक अपने अधिकारों, अपने भविष्य और स्वयं अपने विषय में उच्चतर विचार रखने लगता है, वह नयी महत्त्वाकांक्षा और नयी इच्छाओं से ओत-प्रोत हो जाता है, वह नये अभावों और आवश्यकताओं से संत्रस्त रहता है। वह प्रत्येक क्षण अपने स्वामी के लाभ की ओर आकांक्षाभरी दृष्टि से देखता है और उन लाभों को प्राप्त करने के लिए वह अपने श्रम को उच्चतर मूल्य पर बेचने का प्रयास करता है और अन्ततोगत्वा वह सामान्यतः अपने प्रयत्न मे सफल हो जाता है।

होते हैं, जो उन्हें इस योग्य बनाते हे कि वे अपने श्रम का अपने मतानुसार उचित मूल्य न मिलने पर काम करने से इनकार कर देते हैं। मजदूरी के लिए इन दो वर्गों मे जो निरन्तर सघर्ष चलता रहता है, उसमे यह शक्ति विभक्त हो जाती है और सफलता कभी एक वर्ग को तथा कभी दूसरे वर्ग को मिलती है।

यह भी सम्भव है कि अन्ततोगत्वा श्रमिक वर्ग के हित का प्राधान्य हो जायगा, क्योकि उन्होने पहले ही जो ऊँची मजदूरी प्रात कर ली है, उससे वे प्रतिदिन अपने स्वामियों के कम आश्रित होते जाते हैं और वे जैसे-जैसे अधिक स्वाधीन होते जायेगे, वैसे-वैसे और अधिक मजदूरी प्रात करने की उनकी सुविधाएँ बढती जायगी।

उदाहरण के लिए, मै उत्पादक उद्योग की उस शाखा को लूँगा, जो अभी तक, वर्तमान युग मे, फ्रास और विश्व के प्रायः समस्त देशों मे सर्वाधिक सामान्य रूप से प्रचलित हैं—मेरा तात्पर्य भूमि की कृषि से है। फ्रास मे अधिकाश खेतिहर मजदूर स्वय कतिपय भूमि-खण्डों के स्वामी होते हैं, जिनसे वे दूसरो की मजदूरी किये बिना किसी न किसी प्रकार जीविकोपार्जन कर सकते हैं। जब ये मजदूर पडोसी जमींदार अथवा किसान के यहाँ मजदूरी करने के लिए जाते हैं, तब यदि वह एक निश्चित दर पर उन्हे मजदूरी देने से इनकार करता है, तो वे अपनी निजी छोटी सम्पत्ति पर लौट जाते हैं और दूसरे सुअवसर की प्रतीक्षा करने लगते है।

मैं सोचता हूँ कि कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि मजदूरी मे शनै शनैः एव क्रमिक वृद्धि प्रजातात्रिक समाजों का एक सामान्य विधान है। जिस अनुपात मे सामाजिक स्थितियाँ अधिक समान बनती हैं, उसी अनुपात मे मजदूरी मे वृद्धि होती है और जब मज़दूरी मे वृद्धि होती है, तब सामाजिक स्थितियाँ अधिक समान होती हैं।

किन्तु हमारे युग मे एक महान और निराशाजनक अपवाद उपस्थित होता है। मैं पूर्ववर्ती अध्याय मे बता चुका हूँ कि राजनीतिक समाज से निष्कासित होकर कुलीनतत्र ने उत्पादक उद्योग के कतिपय विभागों मे आश्रय ग्रहण कर लिया है और वहाँ एक दूसरे रूप मे अपना आधिपत्य जमा लिया है। यह बात मजदूरी की दर पर प्रबल प्रभाव डालती है।

मै जिन बडे-बडे उत्पादन-अध्यवसायों का उल्लेख कर रहा हूँ, उन्हें प्रारम्भ करने के लिए चूँकि भारी पूँजी की आवश्यकता होती है, इसलिए उनमे प्रवेश करनेवाले व्यक्तियो की सख्या अत्यधिक सीमित होती है, चूँकि उनकी सख्या

एक वर्ग को स्थिर रख सकना कठिन होता है और जब अधिकांश व्यक्ति सम्पत्ति के नये पथ प्रशस्त कर रहे हों, तब थोडे से व्यक्तियो से शान्तिपूर्वक अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति करने के लिए कहना कम कठिन कार्य नहीं होता।

३८. परिवार पर प्रजातंत्र का प्रभाव

प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे और विशेषतः अमरीकियों के मध्य समाज के अनेक सदस्यो के पारस्परिक सम्बन्धो में स्थितियों की समानता से जो परिवर्त्तन उत्पन्न होते हैं, उनकी जॉच पड़ताल मैने अभी-अभी की है। अब मैं और अधिक गहराई मे जाऊँगा तथा परिवार के घनिष्ठतर सम्बन्धों की जॉच करूगा। यहॉ मेरा उद्देश्य नये सत्यों की खोज करना नहीं, प्रत्युत यह दिखाना है कि किस प्रकार पूर्व विदित तथ्यो का मेरे विषय के साथ सम्बन्ध है।

यह बात सार्वजनिक रूप से कही गयी है कि हमारे युग मे परिवार के अनेक सदस्यों का एक दूसरे के साथ बिल्कुल ही नये प्रकार का सम्बन्ध होता है तथा पहले पिता और पुत्र के मध्य जो दूरी होती थी, वह कम हो गयी है और पैतृक सत्ता यदि नष्ट नही हो गयी है, तो वह अवरुद्ध हो गयी है।

अमरीका मे कुछ-कुछ इसी प्रकार की, वल्कि इससे भी अधिक स्पष्ट बात देखने को मिलती है। रोमन और कुलीनतान्त्रिक अर्थ मे अमरीका मे परिवार का अस्तित्व नही है। इसके थोड़े-से अवशेष बाल्यावस्था के प्रथम वर्षों मे दिखायी देते हैं, जब पिता बिना विरोध के उस सर्वोच्च घरेलू सत्ता का प्रयोग करता है जिसे उसके बालकों की दुर्बलता आवश्यक बना देती है और जो बालको के हित तथा स्वयं पिता की निर्विवाद श्रेष्ठता के लिए वाछनीय है। किन्तु ज्योही अमरीकी किशोर पुरुपत्व प्राप्त कर लेता है, त्योही बाल्यकालीन अनुशासन के बन्धन दिन-प्रति-दिन शिथिल होने लगते हैं, अपने विचारों का स्वामी बनकर वह शीघ्र ही अपने आचारण का भी स्वामी बन जाता है। ठीक-ठीक कहा जाय, तो अमरीका मे किशोरावस्था नहीं होती, बाल्यावस्था के अन्त मे पुरुष प्रकट हो जाता और स्वय अपना मार्ग निर्माण करने लगता है।

यह कल्पना करना भूल होगी कि इसके पूर्व घरेलू सघर्ष होता है, जिसमे पुत्र ने एक प्रकार की नैतिक हिंसा द्वारा उस स्वतत्रता को प्राप्त कर लिया है, जिसे

देने से उसके पिता ने अस्वीकार कर दिया था। जो आदते और जो सिद्धान्त पुत्र को अपनी स्वतंत्रता पर बल देने के लिए प्रेरित करते हैं, उन्हीं आदतों और सिद्धान्तो द्वारा पिता उस स्वतन्त्रता के प्रयोग को एक निर्विवाद अधिकार समझने लगता है। पुत्र उन कटुतापूर्ण अनियमित भावनाओं का प्रदर्शन नहीं करता, जो स्थापित सत्ता का परित्याग कर देने के बाद मनुष्यो को दीर्घ काल तक परेशान करती रहती हैं। पिता उस कटु एवं क्रोधपूर्ण खेद का अनुभव नहीं करता, जो सत्ता के चले जाने के बाद बना रहता है। पिता बहुत पहले ही अपनी सत्ता की सीमाओं को देख लेता है और जब समय आता है, तब वह बिना सघर्ष के इस सत्ता को समर्पित कर देता है। पुत्र उस अवधि की ओर देखता है, जब वह स्वयं अपना स्वामी होगा और वह अपनी स्वतंत्रता बिना प्रयास के प्राप्त कर लेता है, मानो वह उसकी निजी सम्पत्ति हो, जिसे उससे छीनने का कोई प्रयास नहीं करता।

सम्भवत. यह बताना लाभदायक हो सकता है कि किस प्रकार पारिवारिक सम्बन्धों मे होने वाले ये परिवर्तन स्वय हमारी आँखों के सामने अपनी पूर्णता पर पहुँचने वाली सामाजिक और राजनीतिक क्रान्ति के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं।

कतिपय ऐसे महान सामाजिक सिद्धान्त होते हैं, जिन्हे कोई जाति या तो सर्वत्र प्रचलित करती है, या जिन्हें वह कहीं भी सहन नहीं करती। श्रेणियों के समस्त क्रमवाले कुलीनतान्त्रिक देशों में सरकार कभी शासित व्यक्तियो से प्रत्यक्ष अपील नहीं करती। चूँकि मनुष्य एक साथ सयुक्त होते हैं, इसलिए अगुओं का नेतृत्व करना पर्याप्त होता है, शेप अनुगमन करेंगे। यह बात परिवार तथा समस्त कुलीनतन्त्रों के सम्बन्ध में लागू होती है, जिनका एक प्रमुख होता है। कुलीन-तान्त्रिक राष्ट्रों में सामाजिक सस्थाएँ वास्तव में परिवार मे पिता को छोडकर अन्य किसी को मान्य नहीं करतीं। समाज बालकों को उसके हाथ से स्वीकार करता है, समाज उस पर शासन करता है, वह बालकों पर शासन करता है। इसलिए उन पर शासन करने का पिता को न केवल प्राकृतिक अधिकार होता है, प्रत्युत वह एक राजनीतिक अधिकार भी प्राप्त कर लेता है। वह अपने परिवार का रचयिता और परिपालक होता है, किन्तु वह उसका सांविधानिक शासक भी

किसी मध्यस्थ व्यक्ति की आवश्यकता नहीं होती। वहाँ कानून की दृष्टि में पिता समाज का एक सदस्य मात्र होता है, जो अपने पुत्रों से अधिक आयु का और उनकी अपेक्षा अधिक धनी होता है।

जब जीवन की अधिकाश स्थितियाँ अत्यन्त विषमतापूर्ण होती हैं और इन स्थितियों की विषमता स्थायी होती है, तब मनुष्यों की कल्पना मे एक उच्चतर व्यक्ति की धारणा विकसित होने लगती है, यदि कानून उसे कोई विशेषाधिकार नहीं प्रदान करता, तो रीति-रिवाज और जनमत उसे ये विशेषाधिकार प्रदान कर देगा। इसके विपरीत जब मनुष्यों मे एक दूसरे से तनिक भी अन्तर नहीं रहता और जीवन की स्थितियाँ सदा असमान नहीं रहती, तब उच्चतर व्यक्ति की सामान्य धारणा अधिक निर्बल और कम स्पष्ट हो जाती है। आज्ञा पालन करने वाले को आज्ञा देने वाले के बहुत नीचे रखने का प्रयास करना विधायक के लिए निरर्थक है, युग के व्यवहार दोनो व्यक्तियों को एक दूसरे के निकट लाते हैं और प्रतिदिन उन्हे एक ही स्तर की ओर लाते रहते हैं।

यद्यपि किसी कुलीनतान्त्रिक देश के कानून मे परिवारो के प्रमुखो को विलक्षण विशेषाधिकार नहीं दिये जाने चाहिए, तथापि मुझे इस बात का विश्वास कम नहीं होगा कि प्रजातत्र की अपेक्षा कुलीनतत्र में उनके अधिकार का अधिक सम्मान किया जायगा, तथा वह अधिक व्यापक होगा, क्योकि मै जानता हूँ कि कानून चाहे कुछ भी हो, प्रजातन्त्रो मे श्रेष्ठतर व्यक्ति सदा उच्चतर प्रतीत होंगे तथा निम्नतर व्यक्ति निम्नतर प्रतीत होगे।

जब मनुष्य अपने वर्तमान की चिन्ता करने की अपेक्षा अपने भूतकाल का स्मरण अधिक करते हैं, और जब वे स्वय अपने सम्बन्ध मे सोचने की अपेक्षा अपने पूर्वजो के विचारो पर अधिक ध्यान देते है, तब पिता स्वभावतः और आवश्यक रूप से भूत और वर्तमान के बीच एक कडी होती है—एक ऐसी कडी, जो इन दोनो शृखलाओ के सिरों को जोड़ती है। इस प्रकार कुलीनतन्त्रों में पिता न केवल परिवार का प्रमुख नागरिक होता है, प्रत्युत वह उसकी परम्पराओं का अग, उसकी प्रथाओ का प्रतिपादक और उसके व्यवहारो का निर्णायक होता है। उसकी बातें श्रद्धापूर्वक सुनी जाती है, उसे सम्मान के साथ सम्बोधित किया जाता है और उसके प्रति जिस प्रेम का अनुभव किया जाता है, वह सदा भय-मिश्रित होता है।

जब समाज की दशा प्रजातान्त्रिक बन जाती है और मनुष्य इस बात को अपने सामान्य सिद्धान्त के रूप में स्वीकार कर लेते हैं कि पूर्व विश्वासों को धार्मिक

नियम न मानकर जानकारी का एक साधन मात्र मानते हुए सभी बातों पर स्वय विचार करना चाहिए, तो पुत्रो के मतो पर पिता के मतो का जो प्रभाव पड़ता है, उसमे तथा उसकी कानूनी सत्ता मे न्यूनता आ जाती है।

पिता और उसके पुत्रो के मध्य विद्यमान सबम्न्धो मे जो परिवर्तन आता है, उसमे प्रजातत्र मे होने वाला सपत्ति का उपविभाजन सम्भवतः अन्य किसी भी वस्तु की अपेक्षा अधिक योग प्रदान करता है। जब परिवार मे पिता की सम्पत्ति नगण्य होती है, तब उसका पुत्र तथा वह निरन्तर एक ही स्थान पर रहते है, उनका पेशा एक ही होता है, आदत और आवश्यकता उन्हे एक स्थान पर लाती है और उन्हे निरन्तर सम्पर्क रखने के लिए बाध्य करती है। इसका अनिवार्य परिणाम एक प्रकार की सुपरिचित घनिष्ठता होती है, जो सत्ता को कम पूर्ण बना देती है और जिसका मेल सम्मान के बाह्य स्वरूपो के साथ नहीं बैठ सकता।

अब प्रजातात्रिक देशो मे छोटी सम्पत्ति रखने वालो का वर्ग ही वह वर्ग होता है जो समाज की धारणाओ को शक्तिशाली बनाता है तथा उसके व्यवहारों को एक विशेष दिशा प्रदान करता है। वह वर्ग अपनी इच्छा के समान ही अपने मतों को व्यापक रूप से अतिशायी बनाता है और उसके आदेशो का प्रतिरोध करने की अधिकतम प्रवृत्ति रखने वाले भी अन्त मे उसके उदाहरण के प्रवाह में प्रवाहित हो जाते हैं। मै प्रजातत्र के ऐसे उत्सुक विरोधियो को जानता हूँ, जिन्होने अपने बालको को अपने को पूर्ण समानता के साथ सम्बोधित करने की अनुमति प्रदान की।

इस प्रकार, जिस समय कुलीनतत्र की शक्ति का ह्रास होता है, उसी समय पिता के अधिकार के कठोर, परम्परागत और कानूनी अंश की भी समाप्ति हो जाती है और घर मे एक प्रकार की समानता का राज्य हो जाता है। कुल मिलाकर मै यह नहीं जानता कि इस परिवर्तन से समाज की हानि होती है अथवा नहीं, किन्तु मै यह विश्वास करने के लिए प्रस्तुत हूँ कि व्यक्तिगत रूप से मनुष्य इससे लाभान्वित होता है। मेरा विचार है कि जिस अनुपात मे व्यवहार और कानून अधिक प्रजातात्रिक बनते हैं, उसी अनुपात मे पिता और पुत्र का सम्बन्ध घनिष्ठतर तथा अधिक स्नेहपूर्ण बनता है, नियमो और सत्ता की बात कम की जाती है, विश्वास और कोमलता में बहुधा वृद्धि हो जाती है और ऐसा प्रतीत होगा कि जिस अनुपात मे सामाजिक बन्धन शिथिल होता है, उसी अनुपात मे प्राकृतिक सम्बन्ध घनिष्ठतर हो जाता है।

प्रजातान्त्रिक परिवार मे पिता स्नेह एवं आयुगत अनुभव द्वारा प्राप्त अधिकार के अतिरिक्त अन्य किसी अधिकार का प्रयोग नहीं करता, उसके आदेशो की सम्भवतः अवहेलना कर दी जायगी, किंतु उसका परामर्श अधिकाशतः अधिकार-मूलक होता है। भले ही उसके प्रति समारोहात्मक सम्मान न व्यक्त किया जाता हो, किन्तु उसके पुत्र कम-से-कम उसे विश्वासपूर्वक पुकारते हैं, उसे सम्बोधित करने के लिए उनके पास कोई निश्चित सम्बोधन नहीं होता, किन्तु वे उससे निरन्तर बोलते रहते हैं तथा प्रतिदिन उससे परामर्श करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं। स्वामी और शासक का लोप हो जाता है, पिता बना रहता है।

इस सम्बन्ध मे समाज की दोनों स्थितियो के अन्तर जानने के लिए कुलीन-तात्रिक युगो के पारिवारिक पत्रव्यवहार को पढने से अधिक और किसी बात की आवश्यकता नही है। शैली सदा सही, समारोहात्मक, कठोर और इतनी शुष्क होती है कि भाषा मे हृदय की स्वाभाविक उष्णता का अनुभव मुश्किल से किया जा सकता है। प्रजातान्त्रिक देशो मे, इसके विपरीत, पुत्र पिता के पास जिस भाषा मे पत्र लिखता है, वह सदा मिश्रित स्वतत्रता, परिचय और स्नेह से ओतप्रोत रहती है, जिससे तत्काल यह प्रकट होता है कि परिवार के हृदय मे नये सम्बन्ध उत्पन्न हो गये हैं।

बालको के पारस्परिक सम्बन्धो मे भी इसी प्रकार की क्राति घटित होती है। कुलीनतात्रिक परिवारो मे तथा कुलीनतात्रिक समाज मे भी पहले से ही प्रत्येक स्थान निर्धारित होता है। न केवल पिता की एक पृथक् श्रेणी होती है, जिसमे उसे व्यापक विशेषाधिकार प्राप्त होते है, प्रत्युत बालक भी आपस मे समान नही होते। आयु और लिग भेद प्रत्येक की श्रेणी को अटल रूप से निर्धारित कर देते हैं और उसे कतिपय विशेषाधिकार प्रदान करते हैं। प्रजातत्र मे इनमे से अधिकाश भेद समाप्त अथवा कम हो जाते हैं।

कुलीनतात्रिक परिवारों मे ज्येष्ठतम पुत्र को सम्पत्ति का अधिकाश भाग तथा परिवार के प्रायः समस्त अधिकार प्राप्त होते हैं और वह अपने भाइयो का सरदार तथा कुछ हद तक उनका स्वामी बन जाता है। महानता और अधिकार उसके लिए होते हैं, सामान्यता तथा पराधीनता औरो के लिए होती हैं, किन्तु यह सोचना भूल होगी कि कुलीनतात्रिक राष्ट्रों मे ज्येष्ठतम पुत्र के विशेषाधिकार केवल उसी के लिए लाभदायक होते हैं अथवा उनसे उसके प्रति केवल ईर्ष्या और घृणा की भावना उत्पन्न होती है। ज्येष्ठतम पुत्र सामान्यत. अपने भाइयो के लिए सम्पत्ति एव शक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न करता है, क्योकि

घर का सामान्य वैभव उस व्यक्ति द्वारा प्रतिबिम्बित होता है, जो उसका प्रतिनिधित्व करता है, कनिष्ठतर पुत्र बड़े भाई के समस्त कार्यों का समर्थन करते हैं, क्योकि परिवार के प्रमुख की महानता और शक्ति उसे परिवार की समस्त शाखाओ के लिए व्यवस्था करने के लिए अधिक योग्य बनाती है। अतः कुलीनतात्रिक परिवारो के विभिन्न सदस्यो में अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध होता है; उनके हित सम्बद्ध होते हैं, उनके विचारों मे एकता होती है, किन्तु उनके हृदयों मे बहुत कम सौमनस्य होता है।

प्रजातत्र मे भी भाइयो मे पारस्परिक सम्बन्ध होता है, किन्तु यह सम्बन्ध अत्यन्त भिन्न साधनो से स्थापित होता है। प्रजातात्रिक कानूनों के अनुसार सभी बालक पूर्णतः समान और फलतः स्वतत्र होते है। कोई भी वस्तु उन्हें एक होने के लिए बाध्य नहीं करती, किन्तु कोई भी वस्तु उन्हें पृथक् नहीं रखती और चूँकि उनका मूल एक ही होता है, एक ही घर मे वे प्रशिक्षित होते हैं, उनके साथ एक ही प्रकार का व्यवहार किया जाता है और चूँकि उन्हे पृथक् अथवा विभक्त करने वाला कोई विलक्षण विशेपाधिकार नहीं होता, इसलिए प्रारम्भिक वर्षो की स्पष्ट घनिष्ठता सरलतापूर्वक उनके मध्य प्रकट हो जाती है। इस प्रकार जीवन के प्रारम्भ मे जो सम्बन्ध स्थापित हो जाता है, उसे भंग करने का कोई कारण बहुत कम उपस्थित होता है, क्योकि भ्रातृत्व उन्हें बिना परेशान किये हुए प्रतिदिन सम्पर्क मे लाता रहता है। अतः प्रजातत्र में भाई स्वार्थ अथवा हितो द्वारा नहीं, प्रत्युत सामान्य सम्बन्धों, मत और रुचि के प्रति स्वतत्र सहानुभूति द्वारा एक दूसरे के साथ सयुक्त होते हैं। यह उनके उत्तराधिकार को विभाजित करता है, किन्तु उनके हृदयो और विचारों को एक बना देता है।

इन प्रजातात्रिक व्यवहारों का आकर्षण ऐसा है कि कुलीनतंत्र के समर्थक भी उससे आकृष्ट होते हैं, और कुछ समय तक इसका अनुभव करने के बाद वे किसी भी प्रकार कुलीनतात्रिक परिवारो के सम्मानपूर्ण और शुष्क व्यवहारो को पुनः अपनाने के लिए लालायित नहीं होते। यदि वे प्रजातत्र की सामाजिक शर्तों और उसके कानूनों की उपेक्षा कर सकते, तो वे प्रसन्नतापूर्वक उसकी घरेलू आदतो को कायम रखते, किन्तु इन तत्त्वों मे इतनी एकता है कि उन्हे विलग नहीं किया जा सकता और प्रजातंत्र की सामाजिक शर्तों एव कानूनों को सहन किये बिना उसकी घरेलू आदतों का आनन्द लेना असम्भव है।

पुत्र के प्रेम तथा भाई के स्नेह के सम्बन्ध में मैने जो बाते कहीं हैं, वे सब

मानव-प्रवृत्ति से स्वतः उत्पन्न होने वाली समस्त भावनाओं के सम्बन्ध मे भी लागू होती हैं।

यदि कोई विचार-पद्धति अथवा भावना जीवन की किसी विशेष स्थिति के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है, तो उस स्थिति के परिवर्तित हो जाने पर उस विचार अथवा भावना का कोई अवशेष नहीं बच रहता। इस प्रकार कोई कानून समाज के दो सदस्यों के मध्य अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर सकता है, किन्तु उस कानून के समाप्त हो जाने पर वे पृथक् पृथक् हो जाते हैं। सामन्तवादी प्रणाली मे दास और स्वामी को सयुक्त करने वाले बन्धन से अधिक कठोर बन्धन कोई नहीं बचा। वर्तमान युग मे दोनों व्यक्ति एक दूसरे को नहीं जानते, पहले उन्हे सम्बन्धित करनेवाले भय, कृतज्ञता और स्नेह की समाप्ति हो चुकी है और उनका अवशेष तक नहीं बचा है।

फिर भी, मानव-जाति की स्वाभाविक भावनाओ के सम्बन्ध में यह बात नहीं लागू होती। जब कभी कोई कानून इन भावनाओं को एक विशेष ढर्रे पर लाने का प्रयत्न करता है, तो वह उन्हे क्षीण बनाये बिना नहीं रहता, इन भावनाओं की प्रबलता मे वृद्धि करने का प्रयत्न कर वह उन्हें तत्त्वों से वंचित कर देता है, क्योंकि ये भावनाएँ स्वतत्र रहने पर जितनी प्रबल रहती हैं, उतनी प्रबल वे कभी नहीं रहतीं।

समाज के प्रायः समस्त पुराने परम्परागत नियमो को नष्ट अथवा विलुप्त कर देने वाला तथा नये नियमो को तत्परतापूर्वक स्वीकार करने से मनुष्यों को रोकने वाला प्रजातत्र इन परम्परागत नियमो से उत्पन्न भावनाओं मे से अधिकाश को पूर्णतया मिटा देता है, किन्तु वह अन्य भावनाओं मे परिवर्तन मात्र करता है और बहुधा उन्हें एक ऐसी शक्ति और मधुरिमा प्रदान करता है, जो पहले अज्ञात थी।

सम्भवतः इस अध्याय के और इसके पूर्व के अनेक अध्यायो के सार को एक ही वाक्य मे कहना असम्भव नहीं है। प्रजातत्र सामाजिक बन्धनों को शिथिल बना देता है, किन्तु प्राकृतिक सम्बन्धो को सुदृढ बनाता है, वह प्रियजनों को निकटतर लाता है, जबकि नागरिको को एक दूसरे से अधिक दूर कर देता है।

३९. प्रजातंत्र में नवयुवतियाँ

नैतिकता के बिना कभी किसी स्वतत्र समाज का अस्तित्व नहीं रहा और जैसा कि मै इस पुस्तक के पूर्व भाग मे कह चुका हूँ, नैतिकता महिलाओ का

कार्य है। फलस्वरूप, जो कोई भी बात महिलाओं की स्थिति, उनकी आदतों और उनके विचारों को प्रभावित करती है, उसका मेरी दृष्टि मे बड़ा राजनीतिक महत्त्व होता है।

प्रायः सभी प्रोटेस्टेण्ट राष्ट्रों मे नवयुवतियॉ कैथोलिक राष्ट्रो की अपेक्षा बहुत अधिक अपने निजी कार्यो की स्वामिनी होती है। इग्लैंड जैसे प्रोटेस्टेण्ट देशो मे, जिन्होंने स्वशासन के अधिकार को कायम रखा है अथवा उसे प्राप्त किया है, यह स्वतत्रता और भी अधिक है, तब घरेलू क्षेत्र मे राजनीतिक आदतों और धार्मिक विचारो द्वारा स्वतत्रता को प्रविष्ट कराया जाता है। सयुक्त-राज्य अमरीका मे प्रोटेस्टेन्टिज्म के सिद्धान्त अत्यधिक राजनीतिक स्वतत्रता और समाज की अत्यधिक प्रजातात्रिक स्थिति के साथ सयुक्त हैं, और किसी भी स्थान पर नवयुवतियो की इतने शीघ्र अथवा इतने पूर्ण रूप से स्वय अपना पथ-प्रदर्शन करने के लिए छोड नही दिया जाता।

विवाह-योग्य आयु प्राप्त करने से बहुत पहले माता के नियत्रण से अमरीकी बालिका की मुक्ति प्रारम्भ हो जाती है, बाल्यावस्था को पार करने से पहले ही वह स्वतत्र रूप से सोचने लगती है, स्वतत्रतापूर्वक बात करने लगती है और अपनी निजी प्रेरणाओ के अनुसार कार्य करने लगती है। विश्व का महान दृश्य उसकी दृष्टि के समक्ष निरन्तर उपस्थित रहता है। इसे उससे छिपाने की बात तो दूर रही, उसे अधिक पूर्णता से प्रतिदिन इसकी जानकारी करायी जाती है और उसे दृढता एव शान्ति के साथ निर्निमेष दृष्टि से इसका सर्वेक्षण करने की शिक्षा दी जाती है। इस प्रकार समाज की बुराइयॉ और खतरे उसे शीघ्र ही विदित हो जाते है, चूँकि वह उन्हे स्पष्ट रूप से देखती है, इसलिए उसे उनके सम्बन्ध मे कोई भ्रान्ति नहीं होती और बिना भय के उनका सामना करती है, क्योकि वह अपनी निजी शक्ति मे विश्वास से ओत-प्रोत होती है और उसके आसपास के समस्त व्यक्ति उसके विश्वास मे सम्मिलित प्रतीत होते हैं। बाल्यावस्था से युवावस्था मे सक्रमण करने की अवधि मे सामान्यतः यूरोपीय महिला मे युवावस्था की आकाक्षाओ के मध्य जिस कौमार्यगत अथवा निर्दोष और स्वाभाविक कमनीयता के दर्शन मिलते हैं, उसका प्रदर्शन अमरीकी बालिका बहुत कम करती है। अमरीकी महिला, किसी भी आयु मे, बाल-सुलभ कायरता अथवा अज्ञान का प्रदर्शन शायद ही करती है। यूरोप की नवयुवतियो की भॉति वह प्रसन्न करने का प्रयत्न करती है, किन्तु वह जानती है कि प्रसन्न करने का मूल्य क्या होता है! यदि वह बुराई के समक्ष आत्म-

समर्पण नहीं करती, तो भी वह कम से कम जानती है कि बुराई विद्यमान है और उसमें जितनी व्यवहार-शुद्धता होती है, उतनी मानसिक शुद्धता नहीं होती।

अमरीका मे नवयुवतियाँ स्वतंत्र वार्तालाप की समस्त कठिनाइयों के मध्य जिस कुशलता और सुखद साहस के साथ अपने विचारों को, अपनी भाषा को प्रकट करती हैं, उसे देखकर मुझे बहुधा आश्चर्य और प्रायः भय हुआ है, वे बिना प्रयास और बिना दुर्घटना के जिस संकीर्ण पथ पर चलती हैं, उस पथ पर कोई दार्शनिक भी पग-पग पर लडखड़ा जाता। निश्चय ही प्रारम्भिक यौवनावस्था की स्वतन्त्रता के मध्य भी यह देखना सरल है कि अमरीकी महिला सदा अपनी स्वामिनी होती है: वह समस्त मान्य आनन्दों का उपभोग करती है, किन्तु उनमे से किसी के समक्ष भी आत्म समर्पण नहीं करती और उसकी बुद्धि आत्म-पथ-प्रदर्शन की लगाम को कभी छूटने नहीं देती। भले ही लगाम ढीली प्रतीत होती हो।

फ्रास में, जहाँ प्रत्येक युग की परम्पराएँ अब भी जनता के विचारों और रुचियों के साथ विचित्र रूप से मिली हुई हैं, महिलाओं को सामान्यत. संयमित, अवकाशपूर्ण और प्रायः परम्परागत शिक्षा मिलती है, जैसी शिक्षा उन्हें कुलीन-तान्त्रिक युगों में मिलती थी और तत्पश्चात् उन्हे अकस्मात् बिना पथ प्रदर्शन और सहायता के उन समस्त अनियमितताओं के मध्य छोड़ दिया जाता है, जिन्हें प्रजातान्त्रिक समाज मे पृथक् नहीं किया जा सकता।

अमरीकी अधिक तर्क-संगत होते हैं। उन्होंने जान लिया है कि प्रजातन्त्र में अत्यधिक व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, असामयिक युवावस्था, अनियन्त्रित रुचियाँ, परिवर्तनशील प्रथाएँ, बहुधा अनिश्चित और शक्तिहीन जनमत, निर्बल पैतृक सत्ता, और विवादास्पद वैवाहिक अधिकार अनिवार्य हैं। यह विश्वास रखते हुए कि वे महिलाओं मे मानव-हृदय की प्रबलतम भावनाओ का दमन नहीं कर सकते, इन परिस्थितियों के अन्तर्गत उन्होंने यह निर्णय किया कि सर्वोत्तम मार्ग यह है कि स्वयं महिलाओं को ही इन भावनाओं का प्रतिकार करने की शिक्षा दी जाय। चूँकि वे नारी की इज्जत को बहुधा खतरे मे पडने से रोक नहीं सकते थे, इसलिए उन्होंने निर्णय किया कि उसे जानना चाहिए कि इस इज्जत की रक्षा सर्वोत्तम रूप से किस प्रकार की जा सकती है, और शिथिल तथा समाप्त हो गये संरक्षणों की अपेक्षा उसकी इच्छा की स्वतन्त्र शक्ति पर अधिक भरोसा किया गया। अत. अमरीकी महिलाओ को अपने में अविश्वास करने

की शिक्षा देने के स्थान पर निरन्तर इस बात का प्रयत्न करते हैं कि स्वयं अपने चरित्र की शक्ति मे महिलाओ के विश्वास मे वृद्धि हो। चूँकि किसी नवयुवती को पूर्ण और शाश्वत अज्ञान मे रखना न तो सम्भव है और न वाछनीय है, इसलिए वे उसे समस्त विषयो का समय से पूर्व ही ज्ञान प्रदान करने मे शीघ्रता करते हैं। विश्व के भ्रष्टाचारो को उससे छिपाना तो दूर रहा, वे इस बात को अधिक पसन्द करते हैं कि वह उन्हे तत्काल देख ले, और उन भ्रष्टाचारों से दूर रहने की शिक्षा स्वयं प्राप्त कर ले। वे उसके विचारों की निर्दोषिता पर अत्यधिक ध्यान देने की अपेक्षा उसके आचरण की रक्षा करने को अधिक महत्त्व प्रदान करते हैं।

यद्यपि अमरीकी अत्यन्त धार्मिक होते हैं, तथापि वे नारी की प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिए केवल धर्म पर ही निर्भर नहीं करते, वे उसकी बुद्धि एवं तर्क-शक्ति को सुदृढ बनाने का भी प्रयत्न करते हैं। इस सम्बन्ध में उन्होने उसी प्रणाली से काम लिया है, जिस का अनुगमन उन्होने अन्य अनेक बातो में किया है। वे सर्वप्रथम इस बात का प्रबल प्रयास करते हैं कि व्यक्तिगत स्वतत्रता अपने ऊपर स्वय सयम रखे, और वे धर्म की सहायता तब तक नही लेते, जब तक कि वे मानवीय शक्ति की चरम सीमा पर नहीं पहुॅच जाते।

मै इस बात से अवगत हूॅ कि इस प्रकार की शिक्षा खतरे से खाली नही होती, मैं जानता हूॅ कि यह कल्पना के मूल्य पर विवेक को शक्ति प्रदान करती है और नारियों को मनुष्य के लिए स्नेहमयी पत्नी और सुखद सहचरी बनाने के बदले शुष्क एव पुण्यमयी महिलाएॅ बनाती है। इससे समाज अधिक शात एव अधिक अच्छी तरह से नियमित हो सकता है, किन्तु घरेलू जीवन के आकर्षण बहुधा कम हो जाते हैं। फिर भी, ये बुराइयॉ गौण हैं, जिन्हे उच्चतर हितों के लिए सहन किया जा सकता है। अब हम जिस स्थिति में पहुॅच गये है, उसमे चुनाव करने का कार्य हमारे जिम्मे नहीं रह गया है, प्रजातान्त्रिक सस्थाओ और व्यवहारों द्वारा नारियॉ जिस खतरों से घिरी रहती हैं, उनसे उनकी रक्षा करने के लिए प्रजातान्त्रिक शिक्षा अनिवार्य हो गयी है।

अमरीका मे नारी की स्वतत्रता विवाह के बन्धनो मे ऐसी खो जाती है कि उसका पता नहीं लगता। यदि वहॉ अविवाहित नारी अन्य स्थानों की अपेक्षा कम सयमित होती है, तो पत्नी को कठोरतर उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना पडता है। अविवाहित नारी पितृ गृह को स्वतन्त्रता और आनन्द का स्थान बनाती है। पत्नी, पति के घर मे ऐसे रहती है, मानो वह एक आश्रम में हो; फिर भी

जीवन की ये भिन्न स्थितियाँ सम्भवत इतनी विपरीत नहीं हैं, जितनी कल्पना की जा सकती है और दूसरी स्थिति में पहुँचने के लिए पहली स्थिति को पार करना अमरीकी महिलाओं के लिए स्वाभाविक है।

विवाह के सम्बन्ध में धार्मिक सम्प्रदायों और व्यापारी राष्ट्रों की धारणाएँ विशेष रूप से गम्भीर होती हैं। धार्मिक सम्प्रदाय नारी-जीवन की नियमितता को उसकी नैतिकता की शुद्धता का सर्वोत्तम रक्षक तथा निश्चिततम लक्षण मानते हैं। व्यापारी राष्ट्र इसे घर की व्यवस्था और समृद्धि के लिए बडा सरक्षण मानते हैं। अमरीकी एक ही साथ शुद्धतावादी और व्यापारी राष्ट्र दोनों हैं उनके धार्मिक विचार और व्यापारी आदते परिणामत. एक ऐसे पथ पर ले जाती हैं, जहाँ महिलाओं से अत्यधिक त्याग एवं कर्तव्य के लिए उसके सुखों के निरन्तर त्याग की आवश्यकता होती है। यूरोप मे नारियों से इस त्याग की अपेक्षा कम की जाती है। इस प्रकार अमरीका मे जनता का अटल मत सावधानीपूर्वक नारी को घरेलू हितो और कर्तव्यो की सकीर्ण सीमा में आबद्ध कर देता है और उसे इस सीमा का अतिक्रमण करने से रोकता है।

अमरीकी नवयुवती विश्व में प्रवेश करने पर इन धारणाओं को सुदृढ रूप से प्रतिष्ठित पाती है, वह उनसे निस्सृत नियमों को देखती है, उसे यह देखने में विलम्ब नहीं लगता कि अपनी मानसिक शान्ति, अपने सम्मान, यहाँ तक कि अपने सामाजिक अस्तित्व तक को भी सकट मे डाले बिना वह अपने समकालीनों की स्थापित प्रथाओ से एक क्षण के लिए भी विचलित नहीं हो सकती, और आत्म-समर्पण के इस प्रकार के काय के लिए जिस शक्ति की आवश्यकता होती है, उसे वह अपनी बुद्धि की दृढता तथा अपनी शिक्षा से प्राप्त पौरुषपूर्ण आदतों मे पाती है। यह कहा जा सकता है कि उसने अपनी स्वतन्त्रता के प्रयोग द्वारा त्याग करने का समय उपस्थित होने पर बिना सघर्ष और बिना प्रतिवाद के स्वतंत्रता का समर्पण करना सीखा है।

किन्तु कोई भी अमरीकी नारी विवाह के बन्धन में इस प्रकार नहीं फँसती, मानो वह अपनी सरलता और अज्ञान के लिए फैलाये गये जाल मे फँस रही हो। उससे जो आशा की जाती है उसकी शिक्षा उसे पहले ही मिल चुकी होती है और वह स्वेच्छापूर्वक एव स्वतन्त्रतापूर्वक विवाह को स्वीकार करती है। वह साहसपूर्वक अपनी नयी स्थिति का समर्थन करती है, क्योंकि उसने उसे चुना था। चूँकि अमरीका में पैतृक अनुशासन बहुत शिथिल और वैवाहिक बधन बहुत कठोर होता है, इसलिए नवयुवती वैवाहिक बधन को पर्याप्त सतर्कता

और भय के बिना नहीं स्वीकार करती। समय से पूर्व विवाह कम होते हैं। अमरीकी महिलाओ की बुद्धि जब तक प्रौढ एवं परिपक्व नहीं हो जाती तब तक वे विवाह नहीं करती। जब कि अन्य देशो मे अधिकाश महिलाएँ सामान्यतः विवाह के बाद ही अपनी बुद्धि का उपयोग करना एवं उसे परिपक्व बनाना प्रारम्भ करती हैं।

फिर भी, मै किसी तरह यह खयाल नहीं करता कि अमरीका मे विवाह के शीघ्र ही बाद नारियो की आदतो मे जो महान परिवर्तन होता है, उसका एक-मात्र कारण जनमत का नियंत्रण ही होना चाहिए, बहुधा वे स्वय अपनी इच्छा से इस परिवर्तन को अपने ऊपर लाद लेती हैं। जब पति का चुनाव करने का समय आता है, तब विश्व के उन्मुख पर्यवेक्षण द्वारा प्राप्त एवं प्रबल बनी हुई शुष्क एवं कठोर तर्क शक्ति अमरीकी नारी को यह सिखाती है कि विवाह-बधन मे गर्व एवं स्वतत्रता की भावना निरतर परेशानी का ही कारण बनती है, आनंद का स्रोत नहीं, और विवाहित महिला के आनन्द का स्रोत उसके पति के घर में होता है। चूँकि वह घरेलू सुख के मार्ग को पहले से ही स्पष्ट रूप से देखती है, इसलिए वह तत्काल इस मार्ग पर अग्रसर होती है और पीछे मुडने का प्रयास न करके अन्त तक उस पर चलती जाती है।

अमरीका की युवती पत्नियाँ अपनी नयी स्थिति के त्यागमय कर्तव्यों को तत्काल एवं बिना पश्चात्ताप के स्वीकार करने मे जिस उद्देश्यशक्ति का परिचय देती है, वह उनके जीवन की समस्त महान परीक्षाओ में तनिक भी कम मात्रा में नहीं दिखायी देता। सयुक्त-राज्य अमरीका में निजी सम्पत्ति जितनी अनिश्चित होती है, उतनी विश्व के किसी अन्य देश मे नही होती। एक ही व्यक्ति को अपने जीवन मे उन सभी क्रमो से, जो समृद्धि से निर्धनता की ओर ले जाते है, उत्थान करना एवं पुनः नीचे गिरना, कोई असामान्य बात नहीं है। अमरीकी महिलाएँ इन परिवर्तनो को शान्त एवं अदम्य शक्ति के साथ सहन करती हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि उनकी सम्पत्ति के साथ उनकी आकाक्षाएँ सरलतापूर्वक सकुचित एवं विस्तृत होती रहती हैं।

जैसा कि मै इस पुस्तक के पूर्ववर्ती भाग मे कह चुका हूँ, पश्चिमी जंगलों को आबाद करने के लिए प्रतिवर्ष जो व्यक्ति देशान्तर वास करते हैं, उनमे से अधिकाश उत्तरी राज्यों की आग्ल-अमरीकी जाति के होते हैं। सम्पत्ति की खोज में साहसपूर्वक आगे बढने वाले इन व्यक्तियों में से अधिकाश पहले से

ही देश के अपने भाग मे सम्पत्तिशाली थे। वे अपनी पत्नियो को अपने साथ ले जाते हैं तथा वे इन अभियानों के साथ सदा सम्बद्ध अनेक खतरों और कष्टों को सहन करती हैं। बहुधा जगलों के किनारे भी मुझे ऐसी युवतियाँ मिली हैं, जिनका पालन-पोषण न्यू इग्लैण्ड के बडे नगरों के समस्त सुखो के मध्य हुआ था, किन्तु जो बिना किसी माध्यमिक अवस्था के अपने मातापिता के सम्पत्ति से भरे घरों से जगल मे स्थित झोपडों मे निवास करने चली गयीं। ज्वर, एकान्त तथा जीवन की कठोरता उनके साहस को भग नहीं कर सकी। उनके चेहरे मुरझाये हुए थे, किन्तु उनकी दृष्टि मे दृढता थी, वे एक साथ ही दुखी एव कृतसकल्प प्रतीत होती थीं। मुझे इस बात मे सदेह नहीं है कि इन अमरीकी नवयुवतियों ने अपने प्रारम्भिक वर्षो की शिक्षा मे वह आन्तरिक शक्ति प्राप्त कर ली थी, जिसका प्रदर्शन उन्होने इन परिस्थितियों मे किया। अतः अमरीका मे अब भी विवाह के पहलू के अन्तर्गत बालिका की प्रारम्भिक सस्कृति को ढूँढा जा सकता है। उसका कार्य बदल जाता है, उसकी आदते भिन्न हो जाती हैं, किन्तु उसका चरित्र वही रहता हैं।

४०. अमरीका में सदाचार की रक्षा में स्थिति की समानता का योग-दान

कतिपय दार्शनिको और इतिहासकारो ने कहा है अथवा सकेत किया है कि विषुवत् रेखा से किसी देश की दूरी के अनुसार ही नारी-नैतिकता की दृढता में वृद्धि अथवा कमी होती है। यह समस्या का एक सरल समाधान था, और मानव-जाति की स्थिति की एक जटिलतम समस्या का एक क्षण मे समाधान करने के लिए एक 'ग्लोब' और एक जोड़ा कम्पास के अतिरिक्त और किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं थी, किन्तु मुझे इस बात का निश्चिय नहीं है कि भौतिकवादियो का सिद्धान्त तथ्यों द्वारा समर्थित है। एक ही राष्ट्र अपने इतिहास की विभिन्न अवधियो मे नैतिक और अनैतिक, दोनो रहा है, अत जातियों की नैतिकता की दृढता अथवा शिथिलता उनके देश के अपरिवर्तनीय प्राकृतिक गुणो पर ही नहीं, प्रत्युत कतिपय परिवर्तनीय कारणो पर निर्भर करती है। मै इस बात को अस्वीकार नहीं करता कि कतिपय प्रकार के जलवायु मे स्त्री-पुरुष

के पारस्परिक आकर्षण से उत्पन्न होने वाली भावनाएँ विशेष रूप से प्रबल होती है, किन्तु मेरा विश्वास है कि समाज की स्थिति और राजनीतिक सस्थाओ द्वारा इस प्राकृतिक प्रबलता को सदा उत्तेजित अथवा सयमित किया जा सकता है।

यद्यपि उत्तरी अमरीका की यात्रा करने वाले यात्रियो मे अनेक बातो मे मतभेद है, तथापि वे सभी एक स्वर से कहते हैं कि वहाँ अन्य स्थानो की अपेक्षा नैतिकता अधिक कठोर है। यह स्पष्ट है कि अमरीकी इस मामले मे अपने अंग्रेज पूर्वजों की अपेक्षा बहुत श्रेष्ठ हैं। दोनों राष्ट्रो पर लेश मात्र भी दृष्टिपात करने से यह तथ्य प्रमाणित हो जायगा।

यूरोप के अन्य समस्त देशो की भाँति इग्लैण्ड में जन-दुर्भावना नारियो की दुर्बलता पर निरन्तर प्रहार करती रहती है। दार्शनिक और नेता इस बात पर खेद प्रकट करते हुए सुने जाते हैं कि नैतिकता मे पर्याप्त दृढता नहीं है तथा देश की साहित्यिक कृतियों से निरन्तर यह निष्कर्ष निकलता है। अमरीका मे समस्त पुस्तको मे, जिसके अपवाद उपन्यास भी नहीं हैं, नारियो को सदाचारिणी समझा जाता है और कोई भी व्यक्ति शूरता के कार्यो का वर्णन करने की बात नहीं सोचता।

इनमे सन्देह नहीं कि अमरीकी नैतिकता की इस महान नियमितता का आशिक कारण देश के गुण, जाति और धर्म हैं, किन्तु ये समस्त कारण, जो अन्य स्थानो पर विद्यमान हैं, इस पर प्रकाश डालने के लिए पर्याप्त नही हैं। कोई विशेष कारण ढूँढना आवश्यक है। मुझे यह कारण समानता का सिद्धान्त तथा उससे उत्पन्न सस्थाएँ प्रतीत होती हैं। स्थिति की समानता स्वयमेव नैतिकता की नियमितता को उत्पन्न नहीं करती, किन्तु वह निस्सन्देह उसे सुविधाजनक बनाती है तथा उसमे वृद्धि करती है।

कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रो मे बहुधा जन्म और सम्पत्ति नर और नारी को दो भिन्न प्राणी बना देते है, जिससे वे एक दूसरे के साथ कभी सयुक्त नहीं हो सकते। उनकी भावनाएँ उन्हे निकट लाती हैं, किन्तु समाज की स्थिति और उससे उत्पन्न धारणाएँ उन्हे स्थायी एव प्रत्यक्ष बन्धन मे बँधने से रोकती हैं। इसका आवश्यक परिणाम यह होता है कि अनेक क्षणिक एव गुप्त सम्बन्ध उत्पन्न होते हैं। मनुष्य के कानूनों द्वारा प्रकृति पर जो नियंत्रण लगाया जाता है, उसका प्रतिशोध प्रकृति गुप्त रीति से लेती है।

जब स्थिति की समानता पुरुष को नारी से पृथक् रखने वाली समस्त काल्पनिक

अथवा वास्तविक बन्धनों को तोड डालती है, तब ऐसी बात नहीं होती। तब कोई भी बालिका यह विश्वास नहीं करती कि वह उससे प्रेम करने वाले व्यक्ति की पत्नी नहीं बन सकती और यह विवाह से पूर्व नैतिकता की अवहेलना किये जाने को अत्यन्त असामान्य बात बना देता है, क्योंकि भावनाओं पर चाहे जितना विश्वास किया जाता हो, जब किसी नारी का प्रेमी उससे विवाह करने के लिए पूर्ण रूप से स्वतत्र होते हुए भी उसे विवाह नहीं करता, तब वह अपने को मुश्किल से ही इस बात का विश्वास दिला सकती है कि वह प्रेमिका है।

विवाहित जीवन मे भी यही कारण, यद्यपि अधिक अप्रत्यक्ष रूप से, कार्य करता है। विवशता अथवा सयोगवश जो विवाह होते हैं, उनसे अधिक अन्य कोई भी वस्तु अवैध प्रेम-भावना को उचित नही सिद्ध करती, चाहे वह भावना रखने वाले व्यक्ति हो, अथवा उसे देखने वाला ससार हो।

जिस देश मे नारी निर्णय करने के लिए सदा स्वतत्र रहती है और जहॉ शिक्षा ने उसे सही निर्णय करने के लिए तैयार कर दिया है, उस देश मे जनमत उसके दोषों के सम्बन्ध मे निर्भय रहता है। अमरीकियो की कठिनाई अशत. इसी कारण से उत्पन्न होती है। वे विवाह को एक ऐसा समझौता मानते हैं, जो बहुधा कष्टदायक होता है, किन्तु जिसकी शर्तों का पूर्ण रूप से पालन करने के लिए प्रत्येक पक्ष बाध्य है, क्योकि वे उन सब शर्तों को पहले से ही जानते थे और उनको स्वीकार न करने के लिए पूर्णरूप से स्वतत्र थे। जो परिस्थितियॉ वैवाहिक सदाचार को अधिक बाध्यतामूलक बनाती हैं, वे ही उसे अधिक सरल भी बनाती हैं।

कुलीनतान्त्रिक देशो मे विवाह का उद्देश्य व्यक्तियों को सयुक्त करना न होकर सम्पत्ति को सयुक्त करना होता है, अतः कभी-कभी मॅगनी होने पर पति पाठशाला मे और पत्नी धाय-गृह मे होती है। यदि दम्पति की सम्पत्ति को सयुक्त करने वाला वैवाहिक बन्धन उनके हृदयो मे दरार डाल दे, तो इस बात पर आश्चर्य नही किया जा सकता, यह समझौते के स्वरूप का परिणाम होता है। इसके विपरीत जब कोई व्यक्ति सदा स्वय पत्नी का चुनाव करता है और उस पर कोई बाहरी दबाव नहीं पड़ता, तथा पथ-प्रदर्शन भी नहीं किया जाता, तब सामान्यतः रुचियो और विचारो की एकता ही पुरुष और नारी को निकट लाती है और यही एकता उनकी घनिष्ठता को सुरक्षित एव स्थिर रखती है।

हमारे पूर्वजों ने विवाह के विषय में एक विचित्र मत की कल्पना की थी, चूँकि उन्होंने इस बात को लक्ष्य किया था कि उनके समय में जो थोड़े से प्रेम-विवाह होते थे, वे प्रायः सदा बुरे सिद्ध होते थे, इसलिए उन्होंने यह निष्कर्ष निकाल लिया कि इस सम्बन्ध में हृदय की बातों को सुनना खतरनाक है। उन्हें चुनाव की अपेक्षा संयोग अधिक मार्ग-दर्शक प्रतीत हुआ।

फिर भी, इस बात को लक्ष्य करना कठिन नहीं था कि उन्होंने जो उदाहरण देखे, उनसे वास्तव में कुछ भी नहीं सिद्ध होता, क्योंकि सर्वप्रथम यदि प्रजातांत्रिक राष्ट्र किसी नारी को अपने पति का चुनाव करने की स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं, तो वे इतना महत्वपूर्ण चुनाव करने के लिए नारी के मस्तिष्क को पर्याप्त ज्ञान और उसकी इच्छा को पर्याप्त शक्ति प्रदान करते हैं, जबकि कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में अपने माता-पिता की सत्ता से चोरी-चोरी पलायन कर उन पुरुषों की भुजाओं में, जिन्हें जानने का न तो उनके पास समय रहता है, न योग्यता, स्वेच्छापूर्वक अपने को डाल देने वाली नवयुवतियाँ पूर्ण रूप से अरक्षित रहती हैं। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है कि जब उन्हें पहले-पहल कार्य करने की स्वतन्त्रता उपलब्ध होती है, तब वे उसका दुरुपयोग करती हैं, न यही बात आश्चर्य की है कि प्रजातांत्रिक शिक्षा न मिली होने पर जब वे प्रजातांत्रिक प्रथाओं के अनुसार विवाह करने का निर्णय करती हैं, तब वे इस प्रकार की भीषण गलतियाँ करती हैं, किन्तु यही सब कुछ नहीं है। जब कोई पुरुष और नारी कुलीनतांत्रिक समाज के विरोधों के बावजूद विवाह करने पर तुल जाते हैं, तब उन्हें विकट कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। सन्तान के लिए निर्धारित अनुशासन के बन्धनों को तोड़ने अथवा शिथिल कर देने पर उन्हें अंतिम प्रयास द्वारा अपने को प्रथा और विचार के अत्याचार से मुक्त करना पड़ता है। अन्त में जब वे इस कठिन कार्य में सफल हो जाते हैं, तब वे अपने स्वाभाविक मित्रों और आत्मीयजनों से पृथक हो जाते हैं; उन्होंने जिस पूर्वाग्रह को पार किया है, वह उन्हें सभी से विलग कर देता है और एक ऐसी स्थिति में डाल देता है जो शीघ्र ही उनके साहस को भंग कर देती है और उनके हृदयों में कटुता उत्पन्न कर देती है।

समाज मे रहने पर होता है, जिसमे इस प्रकार की चुनाव-स्वतन्त्रता को स्वीकार नहीं किया जाता।

इसके अतिरिक्त इस बात का विस्मरण नहीं किया जाना चाहिए कि कोई व्यक्ति जिस प्रयास द्वारा किसी प्रचलित बुराई को उग्र रूप से झकझोर डालता है, वही प्रयास सामान्यतः उसे तर्क की सीमाओ का अतिक्रमण करने के लिए भी प्रेरित करता है। युग और देश के विचार के विरुद्ध युद्ध की घोषणा का साहस करने के लिए, चाहे पक्ष कितना भी न्यायसगत हो, उग्र एव साहसपूर्ण भावना की आवश्यकता होती है, तथा इस प्रकार के चरित्र वाले व्यक्तियों को, चाहे वे किसी मार्ग का अनुगमन करे, सुख अथवा पुण्य बहुत कम मिलता है। (और, इसी सिलसिले मे कहा जा सकता है कि यही कारण है कि अत्यन्त आवश्यक और न्यायसगत क्रान्तियों में पुण्यशाली और उदार क्रान्तिकारी चरित्र बहुत कम मिलते हैं) अतः यदि कोई व्यक्ति कुलीनतात्रिक युग मे पत्नी का चुनाव करने मे अपने निजी विचार और निजी रुचि के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु पर ध्यान नहीं देता, तो वह शीघ्र ही अपने घर में अनैतिकता और घरेलू दीनता का आक्रमण होते हुए देखता है। इस पर आश्चर्य प्रकट करना उचित नहीं हैं। किन्तु जब यही कार्यपद्धति स्वाभाविक और साधारण स्थिति मे अपनायी जाती है, जब वह पैतृक सत्ता द्वारा स्वीकृत और साधारण जनमत द्वारा समर्थित होती है, तब इस बात में सन्देह नहीं किया जा सकता कि इससे परिवारो की आन्तरिक शान्ति मे वृद्धि होगी तथा वैवाहिक जीवन में नैतिकता का कठोरता से पालन किया जायेगा।

प्रजातत्रो मे प्रायः सभी व्यक्ति सार्वजनिक अथवा पेशेवर जीवन मे लगे होते है और दूसरी ओर सीमित आय पत्नी को घर मे सीमित रहने के लिए बाध्य कर देती है, जिससे वह घरेलू अर्थ-व्यवस्था को व्यक्तिगत रूप से और अत्यन्त सतर्कतापूर्वक देख सके। ये समस्त स्पष्ट और अनिवार्य व्यवसाय अनेक प्राकृतिक सीमाएँ हैं, जो स्त्री-पुरुष दोनों को पृथक्-पृथक् रखकर एक के अनुरोधों को न्यून एव निर्बल तथा दूसरे के प्रतिरोध को सरल बना देती हैं।

यह सच है कि स्थितियों की समानता पुरुषों को सदाचारी बनाने मे कभी सफल नहीं हो सकती, किन्तु यह उनके द्वारा की जाने वाली नैतिकता की अवहेलना को कम खतरनाक बना सकती है। चूँकि तब किसी को भी आत्मरक्षा के लिए शास्त्रसज्ज पुण्य पर प्रहार करने का पर्याप्त समय अथवा सुअवसर नहीं प्राप्त होगा, इसलिए एक ही समय अनैतिक नारियाँ तथा पुण्यमयी नारियाँ दोनों

भारी संख्या में मिलेंगी। यह स्थिति दुःखद व्यक्तिगत कठिनाइयों के जन्म देती है, किन्तु वह समाज को सतर्क एव शक्तिशाली बनने से नही रोकती। वह पारिवारिक बन्धनो को नष्ट नहीं करती अथवा राष्ट्र की नैतिकता को क्षीण नही बनाती। समाज के लिए थोडे-से व्यक्तियो के अनाचार से नहीं, प्रत्युत सभी की नैतिकता के क्षीण हो जाने से खतरा उत्पन्न होता है। विधायक की दृष्टि मे दुराचार की अपेक्षा वेश्यावृत्ति कम खतरनाक होती है।

समानता मे जो मनुष्य अशात एव निरन्तर परेशानी का जीवन व्यतीत करते हैं, वह जीवन न केवल उन्हें प्रेम की भावना से विपथ करता है, क्योंकि उनके पास इसके लिए समय नहीं रहता, प्रत्युत वह उन्हें एक अधिक गुप्त, किन्तु अधिक निश्चित मार्ग द्वारा उससे विपथ करता है। प्रजातान्त्रिक युगो मे रहने वाले समस्त व्यक्ति न्यूनाधिक मात्रा में उत्पादक और व्यापारी वर्गों की विचारधारा को ग्रहण कर लेत हैं, उनके मस्तिष्क एक गम्भीर, सुविचारित और निश्चित मोड लेते हैं, वे किसी स्पष्ट एवं निकटतम उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, जो उनकी आकाक्षाओं का स्वाभाविक एवं आवश्यक लक्ष्य प्रतीत होता है, आदर्श का परित्याग कर देने की प्रवृत्ति रखते हैं। इस प्रकार समानता का सिद्धात कल्पना को नष्ट नहीं करता, किन्तु उसकी उडान को नीची करके पृथ्वी के स्तर पर ला देता है।

प्रजातत्र के नागरिक लक्ष्यहीन विचार के जितने कम अभ्यस्त होते हैं, उतने और लोग नहीं होते और उनमें से बहुत कम उन निष्प्रयोजन एवं एकान्त साधनाओं के वशीभूत होते हैं, जो सामान्यतः हृदय की महान भावनाओं की सृष्टि करती हैं तथा उनसे पूर्व की जाती हैं। यह सच है कि वे अपने लिए उस गहन, नियमित एव शान्त स्नेह की प्राप्ति को अत्यधिक महत्त्व प्रदान करते हैं, जो जीवन का आकर्षण एव सरक्षण होता है, किन्तु उनमे उत्तेजना के उन उग्र एव परिवर्तनशील स्रोतों के पीछे भागने की प्रवृत्ति नहीं होती, जो जीवन मे अशान्ति उत्पन्न करते हैं तथा उसकी अवधि को कम बना देते हैं।

सकती है, कतिपय वर्ग अधिक कठोर हैं, जनता की सामान्य नैतिकता अधिक शिथिल प्रतीत होती है। मुझे यह कहने मे तनिक भी सकोच नहीं है, क्योंकि जिस प्रकार मै अपने समकालीनों की निन्दा करने मे रुचि नहीं रखता, उसी प्रकार मै उनकी चापलूसी करने मे भी रुचि नहीं रखता।

यह तथ्य दुःखदायक अवश्य है, किन्तु इसमे हमे आश्चर्य नहीं होना चाहिए। प्रजातात्रिक समाज-व्यवस्था व्यवस्थित आदतों पर जो शुभ प्रभाव डालती है, वह उन प्रवृत्तियो में से एक है, जिसका पता समय बीतने पर ही लगाया जा सकता है। यदि स्थिति की समानता नैतिकता की शुद्धता के लिए अनुकूल है, तो स्थितियों को समान बनाने वाली सामाजिक क्रान्ति उसके लिए प्रतिकूल है। विगत पचास वर्षों मे जब फ्रान्स इस रूपान्तर के मध्य होकर गुजरता रहा है, उसे स्वतत्रता बहुत ही कम मिली और अशान्ति वहाँ सदा बनी रही। धारणाओं की इस सार्वभौमिक गडबडी और विचारो के इस सामान्य आन्दोलन के मध्य—उचित और अनुचित, सत्य और असत्य, न्याय और शक्ति के इस असम्बद्ध मिश्रण के मध्य—सार्वजनिक नैतिकता सदिग्ध बन गयी है और निजी नैतिकता लडखडाने लगी है, किन्तु समस्त क्रान्तियो के प्रथम परिणाम इसी प्रकार के हुए हे, चाहे उनके अथवा उनके अभिकर्ताओ के उद्देश्य कुछ भी रहे हों। अन्त मे जिन क्रान्तियों के परिणाम-स्वरूप नैतिकता के बधन दृढतर हुए, उन्होंने भी प्रारम्भ मे उन बन्धनों को ढीला ही बनाया। फ्रासीसी बहुधा नैतिकता की जो अवहेलनाएँ देखते हैं, वे मुझे स्थायी नहीं प्रतीत होती और समय के कतिपय विचित्र लक्षणों से यह पहले से ही दृष्टि-गोचर होता है।

जो कुलीनतत्र अपनी शक्ति को खो चुकने के बाद भी अपनी सम्पत्ति को बनाये रखता है और मात्र अश्लील मनोरजनों के रूप मे परिणत हो जाने के बाद भी जिसके पास अत्यधिक अवकाश रहता है, उससे अधिक भ्रष्ट वस्तु कोई नहीं होती। अब तक उसे प्रेरित करने वाली शक्तिशाली भावनाएँ और महान कल्पनाएँ तब उसका साथ छोड देती हे और अनेक छोटी-छोटी बुराइयो के अतिरिक्त उसके पास कुछ भी नहीं बच रहता। ये बुराइयाँ उससे उसी प्रकार लिपटी रहती हैं, जिस प्रकार कीडे किसी शव से लिपटे रहते हैं।

इस बात से कोई इनकार नहीं करता कि विगत शताब्दी का फ्रासीसी कुलीन-तत्र अत्यन्त भ्रष्ट था, फिर भी स्थापित आदते तथा प्राचीन विश्वास समाज

के अन्य वर्गों के मध्य नैतिकता के प्रति कुछ सम्मान बनाये हुए थे। न इस बात से ही इनकार किया जा सकता है कि वर्तमान युग मे उसी कुलीनतंत्र के अवशेष एक प्रकार की कठोर नैतिकता का प्रदर्शन करते हैं, जबकि मध्य और निम्नतर वर्गों मे अनैतिकता फैल गयी प्रतीत होती है। इस प्रकार पचास वर्ष पूर्व जो परिवार अत्यन्त भ्रष्टाचारी थे, वे ही आज अत्यन्त अनुकरणीय एवं आदर्श हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि प्रजातत्र ने कुलीनतान्त्रिक नैतिकता को शक्तिशाली ही बनाया है। फ्रासीसी क्रान्तियों ने उच्च परिवारों की सम्पत्ति को विभाजित कर, उन्हे अपने कार्यो पर, अपने परिवारो पर ध्यान देने के लिए वाध्य कर, उनके लिए एक ही घर में अपनी सतानो के साथ रहने की स्थिति उत्पन्न कर और सक्षेप में उनके मस्तिष्को को अधिक बुद्धिसगत और गम्भीर दिशा प्रदान कर प्रायः उनके जाने बिना ही उनमे धार्मिक विश्वास के प्रति श्रद्धा, व्यवस्था, शाति, आनन्द, घरेलू स्नेह और सुख के प्रति प्रेम उत्पन्न कर दिया है, जबकि शेष राष्ट्र, जिसकी रुचियॉ भी स्वभावतः यही थी, देश के कानूनो और राजनीतिक आदतो का उन्मूलन करने के लिए आवश्यक प्रयास द्वारा अतिशयताओ मे प्रवाहित हो गया।

प्राचीन फ्रासीसी कुलीनतत्र को क्रान्ति के परिणामो को भुगतना पडा है, किन्तु उसने न तो क्रान्तिकारी भावनाओ का अनुभव किया, न क्रान्ति की सृष्टि करने वाली अराजक उत्तेजना का अनुभव किया। इस बात की कल्पना सरलतापूर्वक की जा सकती हैं कि यह कुलीनतंत्र क्राति करने वालों से पूर्व अपने आचरणो पर क्रान्ति के स्वस्थ प्रभाव का अनुभव करता है। अतः यद्यपि प्रथम दृष्टि मे यह विरोधाभास-सा प्रतीत होता है तथापि कहा जा सकता है कि वर्तमान युग मे राष्ट्र के अत्यन्त प्रजातत्र-विरोधी वर्ग मुख्यतः उस प्रकार की नैतिकता का प्रदर्शन करते हैं, जिसकी आशा उचित रूप से प्रजातंत्र से की जा सकती है। मैं यह सोचे बिना नहीं रह सकता कि जब हम इस प्रजातान्त्रिक क्रान्ति से उत्पन्न अशान्ति से मुक्त हो जाने के बाद इसके समस्त प्रभावो को प्राप्त कर लेंगे, तब वे कथन शनैः शनैः समस्त समुदाय के लिए सत्य सिद्ध होंगे, जो सम्प्रति केवल थोड़े-से व्यक्तियो के सम्बन्ध में लागू होते हैं।

४१. अमरीकी पुरुष-नारी की समानता को किस प्रकार समझते हैं

मै बता चुका हूँ कि प्रजातत्र किस प्रकार समाज में उत्पन्न होनेवाली विभिन्न विषमताओं को नष्ट कर देता है अथवा उनमे परिवर्तन करता है, किन्तु क्या यही सब कुछ है ? अथवा क्या वह अन्ततोगत्वा पुरुष और नारी की उस महान विषमता को प्रभावित नहीं करता, जो आज तक शाश्वत रूप से मानव प्रवृत्ति पर आधारित हुई है ? मेरा विश्वास है कि एक ही स्तर पर पिता और पुत्र, स्वामी और सेवक तथा सामान्यतः बडों और छोटों को निकटतर लाने वाले सामाजिक परिवर्तन नारी का उत्थान करेंगे तथा उसे पुरुष के अधिकाधिक समान बनायेंगे, किन्तु यहाँ मैं, सदा से अधिक, अपनी बात को साफ-साफ समझा देना आवश्यक समझता हूँ, क्योंकि कोई ऐसा विषय नहीं है, जहाँ हमारे युग की अपरिष्कृत और अराजक कल्पनाओं ने इससे अधिक स्वतन्त्रता से काम लिया हो।

यूरोप में ऐसे व्यक्ति हैं, जो 'सेक्सों' की विभिन्न विशिष्टताओं को भ्रातिजनक रूप मे एक साथ मिलाकर न केवल पुरुष और नारी को समान, बल्कि एकरूप भी बना देना चाहेगे। वे दोनों को एक ही प्रकार का काम देना चाहेंगे, दोनों का उत्तरदायित्व एक ही प्रकार का रखना चाहेगे तथा दोनों को एक ही प्रकार के अधिकार प्रदान करना चाहेंगे, वे उनके पेशों, आनन्दों और व्यवसायो, सभी बातों मे उन्हे मिला देंगे। इस बात को तत्काल देखा जा सकता है कि इस प्रकार एक 'सेक्स' को दूसरे 'सेक्स' के समान बनाने का प्रयत्न करने से दोनों का ह्रास होता है और प्रकृति के कार्यों को इस प्रकार अनुचित रूप से मिलाने से इसके अतिरिक्त दूसरा कोई परिणाम नहीं निकल सकता कि पुरुष निर्बल और नारियाँ अव्यवस्थित हो जायेंगी।

'सेक्सों' के मध्य स्थापित की जाने वाली प्रजातान्त्रिक समानता को अमरीकी इस दृष्टि से नहीं देखते हैं। वे स्वीकार करते हैं कि चूँकि प्रकृति ने पुरुष और नारी की शारीरिक एवं नैतिक बनावट में इतने व्यापक अन्तर रखे हैं, इसलिए प्रकृति का स्पष्ट उद्देश्य यह था कि उनके विभिन्न गुणों का स्पष्ट रूप से नियोजन किया जाय और उनकी मान्यता है कि सुधार इस बात में नहीं निहित

है कि इतनी विषमता रखने वालों से लगभग एक ही प्रकार का कार्य कराया जाय, अपितु वह इस बात मे निहित है कि वे अपने-अपने कार्यों को सर्वोत्तम रीति से सम्पन्न करे। अमरीकियों ने पुरुष के कर्तव्यो को नारी के कर्तव्यों से सावधानीपूर्वक पृथक् रख कर—जिससे समाज के महान कार्य का सचालन अधिक अच्छी तरह से किया जा सके—'सेक्सो के सम्बन्ध मे राजनीतिक अर्थ-व्यवस्था के उस महान सिद्धान्त को लागू किया है, जो हमारे युग के उत्पादनों के सम्बन्ध में लागू होता है।

दोनो 'सेक्सो' के लिए कार्य की दो स्पष्ट रूप से पृथक्-पृथक रेखाएँ खींचने तथा सदा भिन्न रहने वाले दो मार्गो पर उन्हे एक दूसरे के साथ कदम से कदम मिलाकर चलाने के लिए अमरीका मे निरन्तर जितनी सावधानी से काम लिया गया है, उतनी सावधानी से अन्य किसी देश मे काम नहीं लिया गया है। अमरीकी महिलाएँ परिवार के बाहरी कार्यो का प्रबन्ध कभी नहीं करती, न वे व्यवस्था का सचालन करती हैं और न राजनीतिक जीवन मे भाग लेती हैं। वे दूसरी ओर खेतो मे न कडी मेहनत करती हैं, न मेहनत के उन कामों मे से कोई काम करती हैं, जिनके लिए शारीरिक शक्ति की आवश्यकता होती है। कोई भी परिवार इतना निर्धन नहीं होता कि इस नियम का अपवाद हो सके। यदि एक ओर कोई अमरीकी नारी घरेलू कार्यो के शान्त वृत्त से बच कर नहीं निकल सकती, तो दूसरी ओर उसे उसका अतिक्रमण करने के लिए कभी बाध्य नहीं किया जाता। अतः अमरीकी नारियाँ, जो बहुधा पौरुपेय बुद्धि और पौरुपेय शक्ति का प्रदर्शन करती हैं, सामान्यतः व्यक्तिगत आकृति की महान कोमलता बनाये रखती हैं और नारी सुलभ व्यवहारों को सदा कायम रखती हैं, यद्यपि कभी-कभी वे यह प्रकट करती हैं कि उनमे पुरुषों का हृदय और पुरुषों की बुद्धि है। न कभी अमरीकियो ने यह सोचा है कि प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तो का एक परिणाम यह होता है कि वैवाहिक अधिकार का नाश हो जाता है अथवा परिवारों मे प्राकृतिक अधिकारो के विषय मे गड़बडी हो जाती है। उनकी मान्यता है कि प्रत्येक सघ का एक प्रमुख होना चाहिए, तभी उसके लक्ष्य की पूर्ति हो सकती है और वैवाहिक सघ का स्वाभाविक प्रमुख पुरुष होता है। अतः वे पुरुष को अपने साथी का निर्देशन करने के अधिकार से वञ्चित नहीं करते और वे मानते हैं कि पति और पत्नी के अल्पतर सघ मे तथा महान सामाजिक समुदाय मे भी प्रजातत्र का लक्ष्य आवश्यक अधिकारो को नियमित एव कानून-सम्मत बनाना है, न कि समस्त अधिकार को नष्ट कर देना।

ऐसा नहीं है कि यह मत एक ही 'सेक्स' का है और दूसरा इसका प्रतिवाद करता है। मैंने ऐसा कभी नहीं देखा कि अमरीका की नारियाँ वैवाहिक सत्ता को अपने अधिकारो का सौभाग्यपूर्ण अपहरण मानती हैं, न वे इस सत्ता के समक्ष समर्पण करने में अपमान ही समझती हैं। इसके विपरीत मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि वे अपनी निजी इच्छा का स्वेच्छापूर्वक परित्याग कर देने को एक प्रकार के गर्व की बात समझती हैं तथा जुए को उतार फेकने को नहीं, प्रत्युत उसमे जुतने को गर्व की बात समझती हैं। कम-से-कम अत्यत पुण्य-शालिनी महिलाएँ इसी प्रकार की भावना व्यक्त करती हैं, दूसरी महिलाएँ मौन रहती हैं और सयुक्त-राज्य अमरीका मे अपराधिनी पत्नी नारी-अधिकारों की माग नहीं करती, जबकि वह स्वय अपने पवित्रतम कर्तव्यों को पैरो तले कुचलती रहती है।

बहुधा कहा गया है कि यूरोप मे पुरुष महिलाओ की चापलूसी मे जो बातें कहते हैं, उसमे भी कुछ अंश मे घृणा विद्यमान रहती है। यद्यपि यूरोप-निवासी बहुधा अपने को नारी का गुलाम प्रकट करता है तथापि यह देखा जा सकता है कि वह कभी ईमानदारी के साथ नारी को अपने समकक्ष नहीं समझता। अमरीका मे पुरुप नारियो की प्रशसा बहुत कम करते हैं, किन्तु वे प्रतिदिन यह दिखाते हैं कि वे उनका कितना सम्मान करते हैं। वे निरन्तर पत्नी की बुद्धि मे पूर्ण विश्वास तथा उसकी स्वतन्त्रता के प्रति अत्यधिक सम्मान प्रकट करते हैं। उन्होने निर्णय कर लिया है कि उसके मस्तिष्क मे पुरुष के मस्तिष्क के समान ही प्रत्यक्ष सत्य का पता लगाने की क्षमता है तथा उसका हृदय पुरुष के हृदय के समान ही उसे ग्रहण करने की दृढता रखता है और उन्होने अपने गुण से अधिक उसके गुण को पूर्वाग्रह, अज्ञान और भय के आश्रय के अतर्गत रखने का कभी प्रयास नहीं किया है।

ऐसा प्रतीत होगा कि यूरोप मे, जहाँ पुरुष नारी के निरकुश आधिपत्य के समक्ष इतनी सरलतापूर्वक आत्म-समर्पण कर देता है, नारियाँ फिर भी मानव जाति के कतिपय महानतम गुणों से वचित होती हैं और उन्हे भ्रष्टकारक, किन्तु अपूर्ण प्राणी माना जाता है और आश्चर्य की बात तो यह है कि नारियाँ अन्ततोगत्वा स्वय को इसी दृष्टि से देखने लगती हैं और प्रायः इस बात को एक विशेषाधिकार समझने लगती है कि उन्हे अपने को निरर्थक, दुर्बल और कायर प्रकट करने का अधिकार है। अमरीका की नारियाँ इस प्रकार के किसी विशेपाधिकार का दावा नहीं करतीं।

पुनः यह कहा जा सकता है कि हमने अपनी नैतिकता मे पुरुषों के लिए विभिन्न स्वतंत्रताऍ रख छोडी हैं, जिससे उसके प्रयोग के लिए एक आचार और उसके साथी के पथ-प्रदर्शन के लिए दूसरा आचार होता है, तथा जनता के मत के अनुसार एक ही कार्य के लिए अपराध के रूप मे अथवा केवल एक दोष के रूप मे एकान्तर रूप से दण्ड दिया जा सकता है । अमरीकी कर्त्तव्यो और अधिकारो के इस विषमतापूर्ण विभाजन को नहीं जानते, उनके मध्य भ्रष्टाचार के पथ पर ले जाने को उसी असम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, जिस दृष्टि से भ्रष्टाचार करनेवाले को ।

यह सच है कि यूरोप मे सामान्यतः नारियो की ओर जितना अधिक ध्यान दिया जाता है, उतना अमरीकी इन पर नहीं देते , किन्तु वे नारियो के प्रति जो व्यवहार करते हैं, उससे सदा यह अर्थ निकलता है कि वे उन्हे पुण्यशालिनी एव परिष्कृत समझते है और नारी की नैतिक स्वतत्रता का इतना अधिक सम्मान किया जाता हैं कि नारी की उपस्थिति मे अत्यंत सयमित भाषा का प्रयोग किया जाता है, जिससे कोई बात उसके कानों को अप्रिय न लगे । अमरीका मे कोई अविवाहित युवती अकेले और बिना भय के लम्बी यात्रा कर सकती है ।

सयुक्त-राज्य अमरीका के विधि-निर्माता, जिन्होने अपराध विषयक कानून के प्रायः समस्त दण्डो मे कमी कर दी है, अब भी बलात्कार को एक भीषण अपराध मानते हैं और जनमत इस अपराध के लिए जितना निर्मम दण्ड देता है, उससे अधिक निर्मम कठोरता वह किसी अपराध के लिए नहीं दिखाता। इसका कारण जानना सरल है । चूँकि अमरीकी नारी की प्रतिष्ठा से अधिक मूल्यवान किसी वस्तु को नहीं समझते और किसी वस्तु को उसकी स्वतत्रता से अधिक सम्माननीय नही मानते, इसलिए वे मानते हैं कि जो व्यक्ति नारी को उसकी इच्छा के विरुद्ध उसकी स्वतत्रता एव प्रतिष्ठा से वंचित करता है, उसके लिए कोई भी दण्ड अत्यन्त कठोर नहीं कहा जा सकता। फ्रास मे, जहा इसी अपराध के लिए बहुत नरम दण्ड दिया जाता है, बहुधा कैदी के विरुद्ध न्याय सभ्यों से निर्णय प्राप्त करना कठिन होता है। क्या यह शालीनता के प्रति घृणा का परिणाम है अथवा नारियों के प्रति घृणा का परिणाम है ? मैं यह विश्वास किये बिना नहीं रह सकता कि यह दोनो के प्रति घृणा का परिणाम है ।

इस प्रकार अमरीकी यह नही सोचते कि पुरुष और नारी का कर्तव्य अथवा अधिकार एक ही कार्य करने का है, किन्तु वे दोनो के कार्यो को समान सम्मान की दृष्टि से देखते हैं और यद्यपि उनके भाग्य-भिन्न भिन्न होते हैं तथापि वे

पुरुष और नारी को समान मूल्य के प्राणी समझते हैं। वे नारी के साहस को वही स्वरूप अथवा दिशा नहीं प्रदान करते, जो पुरुष के साहस को, किन्तु वे उसके साहस में कभी संदेह नहीं करते और यदि वे यह नहीं मानते कि पुरुष और उसकी सहचरी को एक ही रीति से अपनी प्रतिभा और बुद्धि का प्रयोग करना चाहिए, तो कम-से कम वे यह विश्वास करते हैं कि नारी की बुद्धि भी उतनी ही ठोस होती है, जितनी पुरुष की और उसकी प्रतिभा भी उतनी ही स्पष्ट होती है। अतः इस प्रकार जबकि उन्होंने नारी की सामाजिक लघुता को कायम रहने दिया है, उन्होंने उसे नैतिक और बौद्धिक दृष्टि से पुरुष के स्तर पर लाने के लिए अपनी शक्ति भर सब कुछ किया है और मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस सम्बन्ध में उन्होंने प्रजातान्त्रिक सुधार के वास्तविक सिद्धान्त को सर्वोत्तम रूप से समझा है।

जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मुझे यह कहने मे तनिक भी संकोच नहीं है कि यद्यपि अमरीकी महिलाएँ घरेलू जीवन के संकीर्ण वृत्त में सीमित हैं तथा कतिपय बातों में उनकी स्थिति चरम पराधीनता की स्थिति है, तथापि इससे उच्चतर स्थिति की नारी मैंने अन्यत्र कहीं नहीं देखी है और अब जब कि मैं इस पुस्तक के अन्त के निकट पहुँच रहा हूँ, जिसमे मैंने अमरीकियों द्वारा किये गये अनेक महत्वपूर्ण कार्यो का उल्लेख किया है, तब यदि मुझसे पूछा जाय कि अमरीकियों की महान समृद्धि और बढ़ती हुई शक्ति का कारण क्या है, तो मेरा उत्तर होगा—अमरीकी नारियों की श्रेष्ठता।

४२. किस प्रकार समानता का सिद्धान्त स्वभावतः अमरीकियों को छोटे-छोटे निजी क्षेत्रों में विभक्त करता है

यह कल्पना की जा सकती है कि प्रजातान्त्रिक संस्थाओं का अन्तिम और आवश्यक परिणाम यह होगा कि निजी तथा सार्वजनिक जीवन में भी समुदाय के सदस्य इस प्रकार एक में घुलमिल जायेंगे कि उन्हें पहचाना नहीं जा सकता तथा वे सभी एक ही प्रकार का जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य होंगे, किन्तु यह प्रजातन्त्र में उत्पन्न होने वाली समानता को अत्यन्त अपरिष्कृत एवं दमनात्मक रूप प्रदान करने के तुल्य होगा। कोई भी सामाजिक स्थिति और कानून

मनुष्यो को इतने समान नही बना सकते, किन्तु शिक्षा, सम्पत्ति और अभिरुचियॉ उनके मध्य कुछ अन्तर ला देगी और यद्यपि विभिन्न मनुष्य कभी-कभी एक ही कार्य के लिए सयुक्त होना अपने लिए हितकारी समझ सकते है, तथापि वे इसे कभी अपने आनन्द का विषय नहीं बनायेगे। अतएव वे सदा कानून के प्रावधानो से, चाहे वे कुछ भी हो, बचने का प्रयत्न करेगे और विधायक उन्हे जिस सीमा मे आबद्ध करने का प्रयास करते हैं, उससे किसी-न-किसी मामले मे बचकर वे महान राजनीतिक समुदाय के समीप ऐसे छोटे छोटे निजी समाजो की स्थापना करेगे, जो स्थितियो, आदतो और व्यवहारो की एक-रूपता द्वारा सयुक्त होंगे।

अमरीका मे नागरिक एक दूसरे से किसी प्रकार श्रेष्ठ नहीं होते, एक दूसरे की आज्ञा का पालन करने अथवा एक दूसरे के प्रति सम्मान करने के लिए वे वाध्य नहीं होते, वे सभी न्याय प्रशासन, राज्य के शासन और सामान्यतः उनके सामान्य कल्याण से सम्बन्धित प्रश्नो पर विचार करने के लिए मिलते हैं, किन्तु मैने ऐसा कभी नहीं सुना कि उन सब को एक ही प्रकार का मनोरजन करने के लिए प्रेरित करने तथा अविवेकपूर्ण ढग से एक ही प्रकार के मनोरजन-स्थलों पर एकत्र करने के प्रयास किये गये हे।

अपनी राजनीतिक सभाओ और न्यायालयो मे इतनी तत्परता से मिलनेवाले अमरीकियो मे सावधानीपूर्वक छोटे-छोटे स्पष्ट वर्गो मे विभक्त हो जाने की प्रवृत्ति होती है, जिससे वे निजी जीवन के आनन्दो का अकेले उपभोग कर सके। उनमे से प्रत्येक अपने समस्त सह-नागरिको को स्वेच्छापूर्वक अपने समान स्वीकार करता है, किन्तु वह उनमे से बहुत कम को मित्र अथवा अतिथि के रूप में स्वीकार करेगा। मुझे यह बात अत्यन्त स्वाभाविक प्रतीत होती है। इस बात की पूर्व कल्पना की जा सकती है कि जिस अनुपात मे सार्वजनिक समाज के क्षेत्र का विस्तार किया जायगा, उसी अनुपात मे निजी सम्पर्क का क्षेत्र सकुचित हो जायगा। यह सोचना तो बहुत दूर रहा कि अन्ततोगत्वा आधुनिक समाज के सदस्य एक ही भॉति का जीवन व्यतीत करेगे, मुझे इस बात की आशंका है कि अन्त मे वे छोटे-छोटे समूहों का निर्माण करेगे।

कुलीनतांत्रिक राष्ट्रो मे विभिन्न वर्ग विशाल घरो के तुल्य होते हैं, जिनसे बाहर निकल सकना तथा जिनमें प्रवेश करना असम्भव है। इन वर्गों का एक दूसरे से कोई सम्पर्क नहीं होता, किन्तु उनके अन्तर्गत मनुष्यों का सम्पर्क प्रति दिन आवश्यक रूप से होता रहता है। यदि वे स्वाभाविक रूप से उपयुक्त

न हो, तो भी एक ही प्रकार की स्थिति की सामान्य एकरूपता उन्हें एक दूसरे के निकट लाती है।

किन्तु जब न तो कानून और न प्रथा कतिपय व्यक्तियों के मध्य अक्सर और स्वभावगत सम्बन्धो की स्थापना करते हैं, तब उनका सम्पर्क विचारो और रुचियो की आकस्मिक एकरूपता से उत्पन्न होता है, अतः निजी समाज में अत्यधिक अन्तर होता है। प्रजातन्त्रो मे, जहाँ समाज के सदस्यो में कभी अधिक अन्तर नही होता और वे स्वभावतः इतने निकट होते हैं कि किसी भी समय उन सभी को एक सामान्य समूह मे मिश्रित किया जा सकता है, अनेक कृत्रिम और मनमाने विभेद उत्पन्न हो जाते हैं, जिनके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति अपने को पृथक् रखने की आशा रखता है, जिससे वह अपनी इच्छा के विरुद्ध भीड मे न बह जाय।

ऐसी स्थिति सदा बनी रहेगी, क्योकि मानवीय सस्थाओं मे परिवर्तन किया जा सकता है, किन्तु मनुष्य मे नहीं। समुदाय अपने सदस्यो को समान एव एक-रूप बनाने के लिए चाहे जो भी सामान्य प्रयास करे, व्यक्तियो का व्यक्तिगत अभिमान सदा पक्ति से ऊपर उठने तथा उन्हें निजी लाभ के लिए कहीं एक असमता का निर्माण करने का प्रयत्न करेगा।

कुलीनतत्रो मे उच्च अटल दीवारे मनुष्यो को एक दूसरे से पृथक् रखती हैं, प्रजातंत्रो मे अनेक छोटे छोटे और प्रायः अदृश्य सूत्र, जो निरन्तर टूटते रहते हैं, उन्हे विभक्त करते हैं। इस प्रकार समानता की चाहे जो भी प्रगति हो, प्रजातात्रिक राष्ट्रो मे राजनीतिक समाज की सामान्य सीमा के अन्तर्गत छोटे-छोटे निजी सघो का भारी सख्या मे निर्माण सदा होता रहेगा, किन्तु उनमे से कोई भी कुलीन-तंत्रो के उच्चतर वर्गो के व्यवहारों से तनिक भी मिलता-जुलता नही रहेगा।

४३. अमरीकी व्यवहारों के विषय में कतिपय विचार

प्रथम दृष्टि मे मानवीय कार्यो के वाह्य स्वरूप से कम महत्वपूर्ण वस्तु कुछ भी नहीं दिखायी देती, फिर भी कोई वस्तु ऐसी नही है, जिसे मनुष्य इससे अधिक महत्व प्रदान करते हो। एक ऐसे समाज मे, जिसके व्यवहार उनके निजी यवहारों के समान न हो, रहने के अतिरिक्त वे प्रत्येक वस्तु के अभ्यस्त बन

जाते हैं। अतः व्यवहारों पर किसी देश की सामाजिक एव राजनीतिक स्थिति के प्रभाव पर गम्भीर विचार करने की आवश्यकता है।

व्यवहार सामान्यतः चरित्र के मूल आधार से उत्पन्न होते है, किन्तु कभी-कभी वे कतिपय व्यक्तियों के मध्य मनमाने ढग से स्थापित परम्परा के भी परिणाम होते हैं, इस प्रकार वे एक साथ ही स्वाभाविक एव प्राप्त दोनों होते हैं।

जब कतिपय व्यक्ति यह देखते हैं कि वे बिना सघर्ष और बिना प्रयास के समाज मे सर्वप्रधान बन गये है, जब वे छोटी-छोटी बातो को दूसरों के लिए छोड कर निरन्तर महान कार्यों में लगे रहते हैं और जब वे ऐसी सम्पत्ति का आनन्दोपभोग करते हैं, जिसे उन्होने एकत्र नहीं किया था और जिसके खो जाने का भय नहीं रहता, तब यह कल्पना की जा सकती है कि वे जीवन के क्षुद्र स्वार्थों और व्यावहारिक चिन्ताओ के प्रति एक प्रकार की गर्वपूर्ण घृणा का अनुभव करते हैं और उनके विचारों मे एक स्वाभाविक महानता आ जाती है, जो उनकी भाषा और व्यवहारों से प्रकट होती है। प्रजातान्त्रिक देशो के व्यवहारों मे सामान्यतः गरिमा नहीं होती, क्योंकि वहाँ निजी जीवन का स्वरूप चरम क्षुद्रतापूर्ण होता है और वे बहुधा निम्न कोटि के होते हैं, क्योकि मस्तिष्क को घरेलू हितो की चिन्ताओ से ऊपर उठने के सुअवसर बहुत कम उपलब्ध होते है।

व्यवहारो की वास्तविक गरिमा सदा इस बात मे निहित होती है कि अपनी सही-सही स्थिति को न तो अत्यधिक ऊँची और न अत्यन्त निम्न कोटि की समझा जाय और यह कार्य किसान भी उसी भाँति कर सकता है, जिस भाँति कोई राजकुमार। प्रजातन्त्रों मे सभी वर्ग सन्देहशील प्रतीत होते हैं, अतः प्रजातन्त्रों मे व्यवहार यद्यपि बहुधा उद्दण्डतापूर्ण होते हैं, तथापि उन्हे गरिमा का अभाव होता है और इसके अतिरिक्त वे कभी सुप्रशिक्षित अथवा पूर्ण नही होते।

प्रजातन्त्रों मे रहनेवाले व्यक्ति इतने अधिक अस्थिर होते हैं कि वे वशानुगत उच्चता की सहिता निर्धारित करने तथा लोगो को उसका अनुगमन करने के लिए बाध्य करने मे कभी सफल नहीं हो सकते। अतः प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने ढग के अनुसार व्यवहार करता है और इस प्रकार के युगो के व्यवहारों मे सदा एक प्रकार की असम्बद्धता रहती है, क्योंकि ये व्यवहार सामान्य अनुकरण के लिए प्रस्तावित आदर्श नमूने पर आधारित न होकर प्रत्येक व्यक्ति की धारणाओ और भावनाओं पर आधारित होते हैं। फिर भी, कुलीनतंत्र के

नष्ट किये जाने के दीर्घ काल बाद की अपेक्षा उसका उन्मूलन किये जाने के तत्काल बाद यह बात बहुत अधिक दृष्टिगोचर होती है। तब नयी राजनीतिक सस्थाएँ और नये सामाजिक तत्व उन व्यक्तियों को, जिनकी शिक्षा और आदतो मे अभी तक आश्चर्यजनक विपमता पायी जाती है, एक ही स्थान पर लाते हैं और बहुधा उन्हें एक साथ रहने के लिए वाध्य करते हें और यह बात समाज की विविधतामूलक रचना को विशेप रूप से दृश्य बना देती है। वाशिक उच्चता की भूतपूर्व कठोर सहिता को अब भी स्मरण किया जाता है, किन्तु इस बात को पहले ही विस्तृत कर दिया जाता है कि इस सहिता मे क्या था अथवा वह कहॉ मिल सकती है। मनुष्य व्यवहारों के सामान्य विधान को भूल गये हैं और उन्होंने अभी तक उसके बिना काम चलाने का निर्णय नहीं किया है, किन्तु प्रत्येक व्यक्ति भूतपूर्व प्रथाओ के अवशेप से अपने लिए एक प्रकार का मनमाना एव परिवर्तनीय नियम बनाने का प्रयत्न करता है जिससे व्यवहारों मे न तो वह नियमितता और गरिमा रह गयी है, जो बहुधा कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों मे दिखायी देती है और न वह सरलता और स्वतत्रता रह गयी है, जिसे वे कभी-कभी प्रजातत्रो मे ग्रहण कर लेते हें, वे एक साथ ही सयमित और सयमहीन दोनो हैं।

फिर भी, यह सामान्य स्थिति नहीं है। जब स्थितियों की समानता को स्थापित हुए काफी समय वीत जाता है और वह पूर्णता पर पहुँच जाती है, तब चूँकि सभी मनुष्यो की धारणाएँ लगभग एक ही होती हैं और वे सभी प्रायः एक ही प्रकार के कार्य करते हें, इसलिए एक ही भॉति बोलने अथवा कार्य करने के लिए उन्हे एक दूसरे से सहमत होने अथवा एक दूसरे का अनुकरण करने की आवश्यकता नहीं होती, उनके व्यवहारो मे सदा अनेक छोटी मोटी विविधताएँ पायी जाती हैं, किन्तु कोई महान अन्तर नहीं पाया जाता। वे पूर्ण रूप से समान कभी नहीं होते, क्योकि वे एक ही पद्धति का अनुकरण नहीं करते, उनमे अत्यधिक असमानता कभी नहीं पायी जाती, क्योकि उनकी सामाजिक स्थिति एक ही होती है। प्रथम दृष्टि मे कोई यात्री यही कहेगा कि समस्त अमरीकियों के व्यवहार एक ही प्रकार के हैं, निकट से परीक्षा करने पर ही उनमे अन्तर लाने वाली विलक्षणताओ का पता लगाया जा सकता है।

अग्रेज अमरीकियों के व्यवहारो का मजाक उडाते हैं, किन्तु यह बात महत्व-पूर्ण है कि जिन लेखको ने ये उपहासपूर्ण वर्णन किये हैं, उसमे से अधिकाश इग्लैड के मध्यम वर्गों के थे, जिनके सम्बन्ध मे ये ही वर्णन अत्यधिक लागू हो

सकते हैं, जिससे ये निर्मम निन्दक अधिकाश उसी बात का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, जिस बात की निन्दा वे अमरीका मे करते हैं; वे इस बात को नहीं देखते कि वे स्वयं अपना ही उपहास कर रहे हैं, जिस पर स्वय उनके देश के कुलीनतंत्र को हॅसी आती है।

प्रजातत्र के लिए उसके व्यवहार के वाह्य स्वरूपों से बढ़कर हानिकारक वस्तु कोई नहीं है। अनेक व्यक्ति उसकी बुराइयो को स्वेच्छापूर्वक सहन कर लेगे, किन्तु वे उसके व्यवहारो का समर्थन कर नहीं सकते। फिर भी मै इस बात को स्वीकार नहीं कर सकता कि प्रजातात्रिक व्यक्तियो के व्यवहारो मे कोई प्रशसनीय बात होती ही नहीं।

कुलीनतात्रिक राष्ट्रो मे समाज की सर्वोच्च श्रेणी की पहुॅच के अन्तर्गत रहनेवाले समस्त व्यक्ति सामान्य रूप से उसके समान बनने का प्रयत्न करते हैं, जो उपहासास्पद और नीरस सीमाओं की सृष्टि करता है। चूॅकि प्रजातात्रिक व्यक्तियो के पास वाशिक उच्चता का कोई आदर्श नहीं होता, इसलिए वे कम-से-कम अपनी दयनीय अनुकृतियो को देखने की दैनिक आवश्यकता से बच जाते है। प्रजातत्रों मे कभी कुलीनतात्रिक राष्ट्रों की भॉति परिष्कृत व्यवहार नहीं होते, किन्तु दूसरी ओर वे इतने अपरिष्कृत भी कभी नहीं होते। वहॉ न तो जनता की वाणियॉ और न अभिजातो को ललित एव चुनी हुई अभिव्यक्तियॉ सुनने को मिलती हैं। इस प्रकार के लोगो के व्यवहार बहुधा अश्लील हाते हैं, किन्तु वे न तो पाशविक होते हैं और न नीचतापूर्ण।

मै पहले ही कह चुका हूॅ कि प्रजातत्रों मे वाशिक उच्चता की नियमित सहिता जैसी कोई चीज नहीं निश्चित की जा सकती। इसमे कुछ असुविधाऍ भी होती हैं और कुछ लाभ भी होते हैं। कुलीनतत्रो मे औचित्य के नियम प्रत्येक व्यक्ति को एक ही प्रकार का व्यवहार करने के लिए वाध्य करते हैं, वे एक ही वर्ग के समस्त सदस्यो को उनकी निजी प्रवृत्तियों के बावजूद एक ही समान दिखायी देने के लिए वाध्य करते हैं, वे प्राकृतिक मनुष्य को सजाते और छिपाते हैं। प्रजातात्रिक व्यक्तियों के मध्य व्यवहार न तो इतने निश्चित होते हैं और न इतने एकरूप होते हैं, किन्तु वे बहुधा अधिक हार्दिक होते हैं। यह कहा जा सकता है कि वे एक हल्के और ढीले पर्दे के समान होते हैं, जिनके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति की वास्तविक भावनाओ और निजी विचारों को सरलतापूर्वक देखा जा सकता है। अतः वहॉ मानवीय कार्यो के स्वरूप और सार मे घनिष्ठतर सम्बन्ध होता है और यदि मानव जीवन का महान चित्र कम

सुसज्जित होता है, तो उसमें सत्य भी अधिक होता है। इस प्रकार एक अर्थ में यह कहा जा सकता है कि प्रजातत्र मनुष्यो को किसी विशेष प्रकार के व्यवहार नहीं प्रदान करता, प्रत्युत उन्हे किसी भी प्रकार का व्यवहार रखने से रोकता है।

कभी-कभी प्रजातत्र मे कुलीनतत्र की भावनाएँ, आवेश, अच्छाइयाँ और बुराइयाँ पुनः प्रकट हो सकती हैं, किन्तु उसके व्यवहार पुनः प्रकट नहीं हो सकते। ज्यो ही प्रजातात्रिक क्रान्ति पूर्ण हो जाती है त्यो ही वे सदा के लिए विलुप्त एव समाप्त हो जाते हैं। ऐसा प्रतीत होगा कि कुलीनतात्रिक वर्ग के व्यवहारों से अधिक स्थायी वस्तु कोई नहीं होती, क्योंकि वह वर्ग अपनी सम्पत्ति और अधिकार के खो जाने पर भी कुछ समय तक उनकी रक्षा करता है—न कोई वस्तु इतनी क्षणिक ही होती है, क्योंक ज्यों ही उनका लोप होता है, त्यों ही उनका नामोनिशान मिट जाता है और उनका अस्तित्व समाप्त होते ही यह कहना असम्भव हो जाता है कि वे क्या थीं। सामाजिक स्थिति मे परिवर्तन यह चमत्कारपूर्ण कार्य करता है कि और कुछ ही पीढियाँ इसे पूर्णता तक पहुँचाने के लिए पर्याप्त होती हैं। कुलीनतत्र के नष्ट हो जाने के बाद उसकी प्रमुख विशेषताओ का ज्ञान इतिहास द्वारा भावी पीढियो को प्रदान किया जाता है, किन्तु उसके व्यवहारो के कोमल एव सुखद स्पर्श उसके पतन के प्रायः तत्काल बाद मनुष्यों की स्मृति से विलुप्त हो जाते हैं। जब मनुष्य इन व्यवहारो को नही देखते, तब वे इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकते कि ये व्यवहार क्या थे, वे चले गये हैं और उनके प्रस्थान को न किसी ने देखा, न अनुभव किया, क्योंकि उत्कृष्ट एव विशिष्ट व्यवहारो से उत्पन्न होनेवाले परिष्कृत आनन्द का अनुभव करने के लिए आदत और शिक्षा द्वारा हृदय का तैयार किया जाना आवश्यक होता है और उन व्यवहारो का अभ्यास जितनी सरलता से समाप्त हो जाता है, उतनी ही सरलता से उनके प्रति अभिरुचि भी समाप्त हो जाती है। इस प्रकार न केवल प्रजातात्रिक व्यक्तियो का व्यवहार कुलीनतात्रिक मे नही हो सकता, प्रत्युत वे उन्हें न तो समझते हैं और न उनकी आकाक्षा करते हैं और चूँकि उन्होने उसके विषय मे कभी विचार नहीं किया है, इसलिए वे सोचते हैं कि इस प्रकार की वस्तुओ का कभी अस्तित्व ही नहीं रहा। इस क्षति को बहुत अधिक महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए, किन्तु इस पर दुःख किया जा सकता है।

मैं इस बात से अवगत हूँ कि बहुधा ऐसा हुआ है कि जिन व्यक्तियो ने अत्यन्त उच्च कोटि के व्यवहार का प्रदर्शन किया है, उन्हीं व्यक्तियो ने अत्यन्त

निम्न कोटि की भावनाओं का भी प्रदर्शन किया है। न्यायालयों के बाह्य स्वरूप ने पर्याप्त रूप से सिद्ध कर दिया है कि बाहरी भव्य आकृतियों के नीचे नीचतम हृदय छिपे रहते हैं, किन्तु यद्यपि कुलीनतत्र के व्यवहार पुण्य के परिचायक नहीं होते, तथापि वे कभी कभी स्वय पुण्य को भी सुन्दर बना देते हैं। ऐसे मनुष्यों के इतनी अधिक सख्या मे एक शक्तिशाली वर्ग को देखना कोई साधारण दृश्य नहीं था, जिनका प्रत्येक बाहरी कार्य विचार और भावना की स्वाभाविक उच्चता से, रुचि की कोमलता और नियमितता से तथा व्यवहारो की परिष्कृति से निरन्तर प्रेरित प्रतीत होता था। वे व्यवहार मानव-प्रकृति को एक सुखद भ्रान्तिमूलक आकर्षण प्रदान करते थे और यद्यापि चित्र बहुधा मिथ्या होता था, तथापि उसे देखकर एक पावन सतोष होता था।

४४. अमरीकियों का राष्ट्रीय अहंकार अंग्रेजों की अपेक्षा अधिक अशान्त एवं भावनाप्रधान क्यों है?

समस्त स्वतंत्र राष्ट्र अहंकारी होते हैं, किन्तु वे सभी अपने राष्ट्रीय अहंकार का प्रदर्शन एक ही प्रकार से नहीं करते। अपरिचितों के साथ बातचीत करते समय अमरीकी छोटी-से-छोटी आलोचना के प्रति भी असहिष्णु प्रतीत होते हैं, उनमे प्रशसा की अदम्य तृष्णा दिखायी देती है। छोटी-से-छोटी प्रशसा भी उन्हे स्वीकार्य होती है, बडी से-बडी प्रशस्ति भी उन्हे कम ही सन्तुष्ट कर पाती है। वे प्रशसा प्राप्त करने के लिए आपको निरन्तर परेशान करते रहते हैं और यदि आप उनके अनुरोधों का प्रतिवाद करते हैं, तो वे अपनी प्रशसा स्वय करने लगते हैं। ऐसा प्रतीत होगा, मानो उन्हे अपने गुण में स्वय सन्देह है और वे चाहते हैं कि उनकी आँखो के सामने उसका निरन्तर प्रदर्शन होता रहे। उनका अहंकार न केवल लोभी, प्रत्युत अशान्त और ईर्ष्यालु भी होता है; वह देगा कुछ भी नहीं, बल्कि वह माँग सब कुछ की करता है; किन्तु वह एक ही समय माँगने और झगड़ा करने, दोनों के लिए तैयार रहता है।

"स्वतन्त्रता एक सुन्दर वस्तु है, किन्तु उसका उपभोग करने की योग्यता कम राष्ट्रों मे ही है।" यदि मैं अमरीका को विशिष्टता प्रदान करने वाली नैतिक शुद्धता का उल्लेख करता हूँ, तो वह कहता है—"मैं इस बात की कल्पना कर सकता हूँ कि एक नवागन्तुक, जो अन्य राष्ट्रों मे व्याप्त भ्रष्टाचार को देख चुका है, इस अन्तर पर आश्चर्य प्रकट किये बिना नहीं रहेगा।" अन्त मे मैं उसे स्वय अपने विपय में कल्पनाएँ करने के लिए छोड़ देता हूँ, किन्तु वह शीघ्र ही वापस आ जाता है और तब तक नहीं रुकता, जब तक मै उन्हीं बातों को दुहराने नहीं लगता, जिन्हे मैं अब तक कहता रहा हूँ। इससे अधिक कष्टदायक और बातुल देशभक्ति की कल्पना करना असभव है। यह उन लोगो को भी परिक्लान्त कर देती है, जो इसका सम्मान करते हैं।

अग्रेजों के सम्बन्ध मे यह बात नहीं है। एक अग्रेज शान्तिपूर्वक उन वास्तविक अथवा काल्पनिक लाभों का आनन्द लेता है, जो उसके मतानुसार उसके देश को उपलब्ध है। यदि वह अन्य राष्ट्रो को कुछ नहीं प्रदान करता, तो वह अपने देश के लिए कुछ मागता भी नहीं। विदेशियो की निन्दा उसे प्रभावित नहीं करती और उनकी प्रशसा उसे मुश्किल से प्रसन्न कर पाती है। शेष विश्व के सम्बन्ध में उसका दृष्टिकोण घृणापूर्ण एव अज्ञानपूर्ण सयम का होता है : उसके अहंकार को किसी सहारे की आवश्यकता नहीं होती, वह अपना पोपण स्वय करता है। यह महत्वपूर्ण बात है कि इतने हाल मे एक ही मूल से उत्पन्न हुए दो राष्ट्रों की भावनाएँ और वार्तालाप की पद्धति एक दूसरे से इतनी विपरीत है।

कुलीनतात्रिक देशों मे बड़े लोगो को व्यापक विशेपाधिकार प्राप्त होते हैं। उनका अहकार इन्हीं विशेपाधिकारों पर आश्रित होता है और उन्हें जो क्षुद्रतर सुविधाएँ प्राप्त होती हैं, उनका सहारा लेने का प्रयास वे नहीं करते। चूँकि ये विशेपाधिकार उन्हे उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त होते है, इसलिए वे इन्हें एक प्रकार से अपना ही भाग अथवा कम-से-कम स्वय मे अन्तर्निहित एक प्राकृतिक अधिकार मानते हैं। अत. वे अपनी निजी श्रेष्ठता के सम्बन्ध मे एक शान्त भावना रखते हैं, वे विशेषाधिकारों का प्रदर्शन करने की कल्पना नहीं करते, जिन्हे प्रत्येक व्यक्ति देखता है और जिनके सम्बन्ध मे कोई भी व्यक्ति विवाद नहीं करता और इन वस्तुओ मे इतनी पर्याप्त नवीनता नहीं होती कि इन्हें वार्तालाप का विपय बनाया जा सके। वे अपनी विशिष्ट महत्ता मे अटल रहते हैं और इस बात से अच्छी तरह आश्वस्त रहते हैं कि सारा ससार उन्हे बिना

प्रयास के देखता है, जिससे उन्हे अपना प्रदर्शन करने की आवश्यकता नहीं होती तथा कोई भी व्यक्ति उन्हे उस स्थिति से हटाने का प्रयत्न नहीं करेगा। जब कोई कुलीनतत्र सार्वजनिक कार्यो का संचालन करता है, तब उसका राष्ट्रीय अहंकार स्वभावतः यह सयमित, उदासीनतापूर्ण एव उदण्डतापूर्ण स्वरूप ग्रहण कर लेता है, जिसका अनुकरण राष्ट्र के अन्य समस्त वर्ग करते हैं।

इसके विपरीत जब सामाजिक स्थितियों मे तनिक भी अन्तर नहीं होता, तब तुच्छतम विशेषाधिकारो का भी कुछ महत्त्व होता है, चूँकि प्रत्येक व्यक्ति अपने चारो ओर लाखो व्यक्तियों को अपने समान ही सुविधाओ का उपयोग करते हुए देखता है, इसलिए उसका दर्प लोभी और ईर्ष्यालु बन जाता है, वह तुच्छ वस्तुओ से लिपट जाता है और दृढ़तापूर्वक उनका बचाव करता है। चूँकि प्रजातत्रों मे जीवन की स्थितियाँ अत्यन्त अनिश्चित होती हैं, इसलिए मनुष्यो को जो सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं, वे लगभग सदा ही कुछ ही समय पूर्व प्राप्त की गयी होती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि इन सुविधाओ का प्रदर्शन करने मे, दूसरो को यह दिखाने तथा स्वय अपने को यह विश्वास दिलाने में कि वे वास्तव मे इन सुविधाओ का आनन्द ले रहे हैं, मनुष्य असीम सुख का अनुभव करते हैं। चूँकि ये सुविधाएँ किसी भी क्षण समाप्त हो सकती हैं, इसलिए उनके स्वामी निरन्तर सतर्क रहते है और यह दिखाने का विशेष रूप से ध्यान रखते है कि ये सुविधाए अब भी उनके पास विद्यमान हैं। प्रजातत्रो मे रहने वाले व्यक्ति अपने देश से उतना ही प्रेम करते हैं, जितना स्वयं अपने से और वे अपने निजी अहकार की आदतो को अपने राष्ट्रीय अहंकार के रूप मे परिणत कर देते हैं।

प्रजातान्त्रिक जनता का अशान्त एवं अदम्य अहंकार इतने पूर्ण रूप से उनकी सामाजिक स्थिति की समानता और अस्थिरता से उत्पन्न होता है कि अत्यन्त अहकारी उच्च वंशों के सदस्य अपने जीवन के उन तुच्छतर भागो मे, जिनमे कोई भी वस्तु अस्थिर अथवा विवादास्पद होती है, एक ही प्रकार की भावना का प्रदर्शन करते हैं। कुलीनतान्त्रिक अपने विशेषाधिकारो की व्यापकता और स्थायित्व के कारण राष्ट्र के अन्य वर्गों से बहुत अधिक भिन्न होता है, किन्तु ऐसा बहुधा होता है कि कुलीनतान्त्रिक वर्ग के सदस्यों के मध्य जो अन्तर होते हैं, वे ऐसी तुच्छ एव क्षणिक सुविधाओ के सम्बन्ध में होते हैं, जो किसी भी दिन समाप्त हो सकती हैं अथवा प्राप्त की जा सकती हैं। राजधानी अथवा दरबार मे

एकत्र शक्तिशाली कुलीनतत्र के सदस्यों ने उन तुच्छ विशेषाधिकारों के सम्बन्ध में उग्र विवाद किया है, जो फैशन की इच्छा अथवा उनके स्वामी की इच्छा पर निर्भर करते हैं। तब ये व्यक्ति एक दूसरे के प्रति उन्हीं मूर्खतापूर्ण ईर्ष्याओं का प्रदर्शन करते हैं, जो प्रजातान्त्रिक मनुष्यों को प्रेरित करती हैं, तब वे उन तुच्छतम सुविधाओ को, जिनके लिए उनके समकक्ष व्यक्ति विवाद करते हैं, छीननेकी उसी उत्सुकता का और जो सुविधाएँ उनके अधिकार में रहती हैं, उन्हें आडम्बर के साथ दिखाने की उसी इच्छा का प्रदर्शन करते हैं। मुझे इस बात से सन्देह नहीं है कि यदि कभी राष्ट्रीय अहकार दरबारियों के मस्तिष्क मे प्रवेश कर गया, तो वे प्रजातान्त्रिक समाज के सदस्यों की भाँति ही उसका प्रदर्शन करेगे।

४५. अमरीका में समाज का पहलू एक साथ ही गतिशील और अपरिवर्तनशील कैसे है?

ऐसा प्रतीत होगा कि उत्सुकता को जाग्रत एव तृप्त करने के लिए सयुक्त-राज्य अमरीका के पहलू से अधिक उपयुक्त वस्तु दूसरी नहीं हो सकती। वहाँ सम्पत्तियो, विचारों और कानूनों मे निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। मनुष्य के हाथों से प्रकृति मे इस प्रकार के परिवर्तन किये जाते हैं कि प्रतीत होता है, मानों अपरिवर्तनीय प्रकृति स्वय परिवर्तनशील हो। फिर भी अन्त में इस गतिशील समुदाय का दृश्य अपरिवर्तनशील बन जाता है और कुछ समय तक इस गतिशील दृश्य को देखने के पश्चात् दर्शक उससे ऊब जाता है।

कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों मे प्रत्येक व्यक्ति अपने निजी क्षेत्र मे लगभग स्थिर होता है, किन्तु मनुष्य आश्चर्यजनक रूप से एक दूसरे से भिन्न होते हैं—उनकी भावनाएँ, उनकी धारणाएँ, उनकी आदतें ओर उनकी रुचियाँ आवश्यक रूप से भिन्न-भिन्न होती हैं, किसी भी वस्तु मे परिवर्तन नहीं होता, किन्तु प्रत्येक वस्तु भिन्न होती है। इसके विपरीत प्रजातत्र मे सभी व्यक्ति समान होते हैं, और लगभग समान ही कार्य करते हैं। यह सच है कि उनमें महान और बहुधा परिवर्तन होते रहते हैं। किन्तु चूँकि अनुकूल अथवा प्रतिकूल भाग्य की एक ही प्रकार की घटना की निरन्तर पुनरावृत्ति होती रहती है, इसलिए अभिनेताओं के नाम मात्र बदल जाते हैं, नाटक सदा एक ही रहता है। अमरीकी समाज का पहलू

अनुप्राणित है क्योंकि मनुष्यों और वस्तुओं में सदा परिवर्तन होता रहता है, किन्तु वह अपरिवर्तनशील है, क्योंकि ये सभी परिवर्तन समान प्रकार के होते हैं।

प्रजातान्त्रिक युगों मे रहने वाले व्यक्तियों की अनेक भावनाएँ होती हैं, किन्तु उनकी अधिकाश भावनाओं का अन्त या तो सम्पत्ति-प्रेम के रूप में होता है अथवा वे सम्पत्ति-प्रेम से उत्पन्न होती हैं। इसका कारण यह नहीं-है कि उनकी आत्माएँ सकीर्णतर होती हैं, अपितु इसका कारण यह है कि ऐसे समयो में धन का महत्त्व वास्तव मे अधिक होता है। जब समुदाय के समस्त सदस्य एक दूसरे से स्वतत्र अथवा एक दूसरे के प्रति उदासीन होते हैं, तब मूल्य चुकाने पर भी उनमें से प्रत्येक का सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। इससे इन उद्देश्यों की सख्या अत्यधिक बढ जाती हैं, जिनके लिए सम्पत्ति का उपयोग किया जा सकता है और सम्पत्ति का मूल्य बढ जाता है। जब प्राचीनता के प्रति श्रद्धा का लोप हो जाता है, तब वश, स्थिति और पेशे के आधार पर मनुष्यो के मध्य भेद नहीं किया जाता अथवा बहुत कम भेद किया जाता है। तब मनुष्यो के मध्य स्पष्ट अन्तरो की सृष्टि करने के लिए और उनमें से कुछ को सामान्य स्तर से ऊपर उठाने के लिए मुश्किल से धन के अतिरिक्त अन्य काई वस्तु बच रहती है। अन्य समस्त विभेदो के लुप्त हो जाने अथवा न्यून हो जाने के कारण सम्पत्ति से उत्पन्न होने वाला विभेद बढ जाता है। कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रो मे धन मनुष्य की आकाक्षाओं के विशाल क्षेत्र के कुछ भागों तक ही पहुँच पाता है। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो मे वह सर्वत्र पहुँचता हुआ प्रतीत होता है।

अतः अमरीकियो द्वारा किये जाने वाले समस्त कार्यों के मूल मे मुख्य अथवा सहायक उद्देश्य के रूप मे सम्पत्ति-प्रेम को देखा जा सकता है। यह उनकी समस्त भावनाओ को एक प्रकार की पारिवारिक एकरूपता प्रदान करता है और शीघ्र ही उनके सर्वेक्षण को अत्यन्त थका देने वाला कार्य बना देता है। एक ही भावना की यह शाश्वत पुनरावृत्ति नीरस होती है, जिन विलक्षण तरीको से यह भावना अपनी परितुष्टि करने का प्रयत्न करती है, वे तरीके भी कम नीरस नहीं होते।

सयुक्त-राज्य अमरीका जैसे व्यवस्थित और शातिप्रिय प्रजातन्त्र मे, जहा मनुष्य युद्ध, सार्वजनिक पद अथवा राजनीतिक सम्पत्ति-हरण द्वारा धनी नही बन सकते, सम्पत्ति-प्रेम उन्हें मुख्यतः व्यवसाय और उद्योग की ओर आकृष्ट करता है। यद्यपि इन उद्योगों के परिणामस्वरूप बहुधा महान अशान्तियाँ उत्पन्न होती हैं, तथापि वे अत्यन्त नियमित आदतों और छोटे-छोटे एक-रूप कार्यों के एक दीर्घ क्रम के बिना समृद्ध नहीं बन सकते। भावना जितनी ही अधिक प्रधान होती है, ये

आदते उतनी ही अधिक नियमित होती हैं और ये कार्य उतने ही अधिक एक-रूप होते हैं। यह कहा जा सकता है कि अमरीकियों की इच्छाओं की उग्रता ही उन्हे इतना अधिक नियमित बनाती हैं, यह उनके मस्तिष्क मे अशान्ति उत्पन्न करती है, किन्तु उनके जीवन को अनुशासित बनाती है।

यहाँ मै अमरीका के लिए जो बात कर रहा हूँ, वह निश्चय ही प्रायः हमारे समस्त समकालीनो के सम्बन्धों मे कही जा सकती है। मानव-जाति से विविधता का लोप हो रहा है, समस्त विश्व मे एक ही प्रकार की कार्यप्रणाली, विचारप्रणाली और भावना के दर्शन होते हैं। इसका कारण केवल यह नहीं है कि राष्ट्र अधिकाधिक एक-दूसरे के समान कार्य करते हैं और अधिक निष्ठा के साथ एक-दूसरे का अनुकरण करते हैं, अपितु इसका कारण यह है कि जब प्रत्येक देश के मनुष्य जाति, पेशे और परिवार के विलक्षण विचारों और भावनाओ का अधिकाधिक परित्याग करने लगते हैं, तब वे एक साथ ही एक ऐसी स्थिति मे पहुँच जाते हैं, जो मनुष्य की रचना के, जो सर्वत्र एक ही प्रकार की होनी है, निकटतर होती है। इस प्रकार वे एक दूसरे का अनुकरण किये बिना भी अधिक सदृश हो जाते हैं। एक विस्तृत वन मे, जिसमे एक ही स्थान की ओर जाने वाले अनेक मार्ग हों, फैले हुए यात्रियो की भाँति यदि वे सभी अपनी दृष्टियों को उस स्थान पर लगाये रहे और उसकी ओर अग्रसर हों, तो वे अनजाने ही एक दूसरे के निकटतर आते हैं, यद्यपि वे एक दूसरे को खोजते नहीं, देखते नहीं और जानते नहीं, और अन्त मे वे अपने को एक ही स्थान पर देखकर आश्चर्य-चकित हो जायगे। वे समस्त राष्ट्र जो किसी व्यक्ति विशेष को नहीं, अपितु स्वय मनुष्य को अपने अनुसधानों और अनुकरणो का उद्देश्य बनाते हैं, वन के मध्यवर्ती भाग की ओर अग्रसर होने वाले इन यात्रियों की भाँति, अन्त मे एक ही प्रकार की समाज-व्यवस्था की ओर उन्मुख हो रहे हैं।

४६. अमरीका में इतने अधिक महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति तथा इतनी कम उच्च महत्त्वाकांक्षाएँ क्यों मिलती हैं ?

अमरीका मे किसी यात्री को सर्वप्रथम जो वस्तु आकृष्ट करती है, वह अपनी मूल स्थिति से ऊपर उठने का प्रयत्न करने वाले व्यक्तियों की अगणित संख्या

होती है। और उसे आकृष्ट करने वाली दूसरी वस्तु समाज की सर्वव्यापिनी महत्वाक्षापूण गतिशीलता के मध्य परिलक्षित होने वाली उच्च महत्त्वाकाक्षा की दुर्लभता होती है। किसी भी अमरीकी मे उत्थान की इच्छा का अभाव नहीं होता, किन्तु महान आशाएँ रखने वाला अथवा अत्यन्त उच्च उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील अमरीकी मुश्किल से दिखायी देता है। सम्पत्ति, सत्ता और प्रतिष्ठा की प्राप्ति के लिए सभी निरन्तर प्रयत्नशील रहते हं, किन्तु थोडे से व्यक्ति ही बड़े पैमाने पर इन वस्तुओ की कल्पना करते हैं, और यह बात बहुत अधिक आश्चर्यजनक है, क्योकि अमरीका के व्यवहारो और कानूनो में आकाक्षा को सीमित करने वाली अथवा प्रत्येक दिशा में अपना विस्तार करने से उसे रोकने वाली कोई चीज नही दिखायी देती। इस विशिष्ट स्थिति का कारण सामाजिक स्थिति की समानता मे ढूँढना कठिन प्रतीत होता है, क्योकि फ्रास मे ज्योही उस समानता की स्थापना हुई, त्योंही महत्त्वकाक्षा की उड़ान भी अबाध और असीम हो गयी। फिर भी, मेरा विचार है कि हम इस तथ्य का मुख्य कारण अमरीकियो की सामाजिक स्थिति और प्रजातान्त्रिक व्यवहारों मे पा सकते हैं।

सभी क्रान्तिया मनुष्यों की महत्त्वाकाक्षाओं का विस्तार करती हैं, कुलीनतत्र का नाश करने वाली क्रान्तियों के सम्बन्ध मे यह बात विशेष रूप से सच है। जनसमूह को प्रसिद्धि और सत्ता से दूर रखने वाली भूतपूर्व दीवारें जब अकस्मात् ढह जाती हैं, तब उस श्रेष्ठता की दिशा मे, जिसकी कामना इतने अधिक समय तक की जाती थी और अन्त मे जिसे प्राप्त करना है, एक उग्र और सर्वव्यापी अभियान प्रारम्भ होता है। विजय के इस प्रथम उल्लास में किसी के लिए कोई भी वस्तु असम्भव नहीं प्रतीत होती, न केवल आकाक्षाएँ असीम होती हैं, अपितु उन आकाक्षाओ की तृप्ति करने की शक्ति भी प्रायः असीम प्रतीत होती है। कानूनों और प्रथाओं के सामान्य एव आकस्मिक परिवर्तन के मध्य, समस्त व्यक्तियों और समस्त अध्यादेशों की इस भारी गडबडी मे, समाज के विभिन्न सदस्य अत्यधिक तीव्र गति से ऊपर उठते हैं और पुनः नीचे गिर जाते हे और सत्ता इतनी शीघ्रता से एक हाथ से दूसरे हाथ मे जाती है कि किसी को उसे पुनः प्राप्त कर लेने से निराश होने की आवश्यकता नही होती।

इसके अतिरिक्त, इस बात को याद रखना आवश्यक है कि जो व्यक्ति कुलीनतत्र को नष्ट करते हैं, वे उसके कानूनो क अन्तर्गत रह चुके हैं, उन्होने उसके वैभव को देखा है और अचेतन रूप से उसकी भावनाओं और धारणाओ को ग्रहण किया है। इस प्रकार, जिस क्षण कुलीनतत्र का विघटन होता है, उस

क्षण भी उसकी आत्मा जन-समुदाय में परिव्याप्त रहती है और उसकी पराजय के बाद बहुत दिनों तक उसकी मनोवृत्तियाँ कायम रहती हैं। अतः जब तक प्रजातान्त्रिक क्रान्ति जारी रहती है, तब तक महत्त्वाकाक्षा सदा ही अत्यन्त ऊँची रहती है और क्रान्ति के पूर्ण हो जाने के बाद कुछ समय तक वह ऐसी ही बनी रहेगी।

मनुष्य जिन असाधारण घटनाओं को देखते हैं, उनकी स्मृति एक दिन में ही नहीं समाप्त हो जाती। क्रान्ति जिन भावनाओं को जन्म देती है, वे उसकी समाप्ति के साथ ही विलुप्त नहीं हो जातीं। पुनः स्थापित व्यवस्था के मध्य अस्थायित्व की भावना बनी रहती है। निष्प्रयास सफलता की भावना उसे जन्म देने वाले विचित्र परिवर्तनों के बाद भी कायम रहती हैं, इच्छाओं की पूर्ति के साधनों मे दिन-प्रति-दिन कमी होती रहने के बाद भी वे अत्यन्त व्यापक बनी रहती हैं। यद्यपि बडी सम्पत्तिया दुर्लभ होती हैं, तथापि उनके प्रति रुचि कायम रहती है, और हम सभी ओर अनियन्त्रित एव असफल महत्त्वाकाक्षा की, जो हृदयों को गुप्त और निरर्थक रूप से जलाती रहती है, विनाश-लीला को देखते हैं।

फिर भी, अन्त में सघर्ष के अन्तिम अवशेष मिट जाते हैं, कुलीनतंत्र के अवशेष विलुप्त हो जाते हैं, उसके पतन के साथ सम्बद्ध महान घटनाओं के विस्मरण कर दिया जाता है, युद्ध के बाद शाति आती है, और नये शासन में व्यवस्था का आधिपत्य पुन स्थापित होता है, इच्छाओं को पुन उन साधनों के उपयुक्त बनाया जाता है, जिनके द्वारा उनकी पूर्ति की जा सकती है; मनुष्यों की आवश्यकताओं, विचारों और भावनाओं में एक बार पुन. सम्बद्धता आ जाती है, समुदाय का स्तर स्थायी रूप से निर्धारित हो जाता है, और प्रजा तान्त्रिक समाज की स्थापना हो जाती है।

इस स्थायी और नियमित स्थिति में पहुँचा हुआ प्रजातान्त्रिक राष्ट्र उस राष्ट्र से अत्यत भिन्न होगा, जिसका हमने अभी वर्णन किया है, और हम निस्सकोच यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि जब समाज की स्थितियाँ समान हो रही हैं, तब यदि महत्त्वाकाक्षा महान बन जाती है, तो सामाजिक स्थितियों के समान हो जाने पर महत्त्वाकाक्षा अपनी महानता के गुण को खो देती है।

जब सम्पत्ति उपविभाजित हो जाती है और ज्ञान का प्रसार हो जाता है, तब कोई भी व्यक्ति शिक्षा अथवा सम्पत्ति से पूर्णतया वञ्चित नहीं रहता, जातिगत विशेषाधिकारों और अनर्हताओं के नष्ट हो जाने पर तथा उन बन्धनों

के, जो एक समय मनुष्यो को आबद्ध रखते थे, छिन्न भिन्न हो जाने पर प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में प्रगति की कल्पना उत्पन्न होती है, प्रत्येक व्यक्ति के हृदय मे ऊपर उठने की आकाक्षा बढ़ जाती है और समस्त व्यक्ति अपनी स्थिति से ऊपर उठने की कामना करते हैं; महत्त्वाकाक्षा सार्वजनिक भावना बन जाती है।

किन्तु यदि स्थितियों की समानता समाज के समस्त सदस्यो को कतिपय साधन-स्रोत प्रदान करती है, तो वह उनमे से प्रत्येक को महान साधन स्रोत रखने से रोकती भी है, जिससे उनकी इच्छाएँ कुछ कुछ सकीर्ण सीमाओ के अन्तर्गत आवश्यक रूप से आबद्ध हो जाती हैं। इस प्रकार प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो मे महत्त्वाकाक्षा प्रबल एव गतिमान रहती है, किन्तु उसका लक्ष्य स्वभावतः उच्च नहीं होता, और जीवन सामान्यतः उन छोटे पदार्थो के लिए उत्सुकतापूर्वक कामना करने मे व्यतीत होता है, जो पहुँच के अन्तर्गत होते हैं।

प्रजातन्त्रो के व्यक्ति मुख्यतः अपनी सम्पत्तियो की न्यूनता के कारण नहीं, प्रत्युत उनमे सुधार करने के लिए प्रतिदिन किये जाने वाले प्रयासों की प्रबलता के कारण उच्च महत्त्वाकाक्षा से विमुख हो जाते हैं। वे तुच्छ परिणाम प्राप्त करने के लिए अपनी शक्तियो का अधिकतम उपयोग करते हं और इसके फलस्वरूप उनका दृष्टिकोण और उनकी शक्ति तीव्र गति से सीमित हुए बिना नहीं रह सकती। वे बहुत अधिक निर्धन होते हुए भी महान हो सकते हैं।

किसी प्रजातन्त्र मे अल्पसख्या मे जो समृद्ध नागरिक दिखायी देते हैं, वे इस नियम के अपवाद नहीं होते। शनैः शनैः सम्पत्ति और सत्ता प्राप्त करने वाले व्यक्ति की, उसके दीर्घकालीन श्रम की अवधि मे, बुद्धिमत्ता और सयम की ऐसी आदते बन जाती हैं, जिनका परित्याग वह बाद मे नहीं कर सकता। काई व्यक्ति जिस प्रकार अपने मकान का विस्तार करता है, उसी प्रकार क्रमिक रूप से वह अपने मस्तिष्क का विस्तार नहीं कर सकता।

यही बात इस प्रकार के व्यक्ति के पुत्रो के सम्बन्ध में भी लागू होती है। यह सच है कि उनका जन्म उच्च स्थिति मे हुआ है, किन्तु उनके माता-पिता निम्न वर्ग के थे, वे ऐसी भावनाओं और धारणाओ के मध्य बड़े हुए हैं, जिनसे वे बाद मे सफलतापूर्वक मुक्ति नहीं पा सकते, और यह कल्पना की जा सकती है कि उन्हें उत्तराधिकार के रूप में उनके पिता की सम्पत्ति के साथ-साथ उसकी मनोवृत्तियाँ भी प्राप्त होगी।

इसके विपरीत, शक्तिशाली कुलीनतन्त्र का निर्धनतम उत्तराधिकारी विशाल

महत्त्वाकांक्षा का प्रदर्शन कर सकता है क्योंकि उसकी जाति के परम्परागत विचार तथा उसके वर्ग की सामान्य भावना अब भी उसे कुछ समय के लिए उनकी दशा से ऊपर उठा ले जाती है।

प्रजातान्त्रिक युगों के मनुष्यों को उच्च उद्देश्यों की खोज में सरलतापूर्वक लगने से एक दूसरी चीज भी रोकती है। यह चीज वह समय है, जिसके सम्बन्ध में वे सोचते हैं कि उन उच्च उद्देश्यों के निमित्त संघर्ष करने के लिए उनके तैयार होने से पूर्व इतना समय अवश्य व्यतीत हो जायगा। पास्कल ने कहा है—"गुण सम्पन्न होना बड़ी लाभदायक बात है, क्योंकि इससे कोई व्यक्ति अठारह अथवा बीस वर्ष की आयु में ही उतना आगे बढ़ जायगा, जितना कोई दूसरा व्यक्ति पचास वर्ष की आयु में बढ़ेगा और यह तीस वर्षों का स्पष्ट लाभ है।" प्रजातन्त्रों के महत्त्वाकांक्षी व्यक्तियों में इन तीस वर्षों का सामान्यतः अभाव होता है। समानता का सिद्धान्त जो प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक वस्तु को प्राप्त करने की अनुमति देता है, समस्त व्यक्तियों को तीव्र प्रगति करने से रोकता है।

प्रजातान्त्रिक समाज में तथा अन्यत्र भी एक निश्चित संख्या में ही महान सम्पत्तियाँ अर्जित की जा सकती हैं और चूँकि उन सम्पत्तियों तक ले जाने वाले मार्ग बिना भेदभाव के सभी के लिए उन्मुक्त रहते हैं, इसलिए सभी की प्रगति आवश्यक रूप से शिथिल हो जायगी। चूँकि उम्मीदवार लगभग सदृश प्रतीत होते हैं और चूँकि समानता के सिद्धान्त का, जो प्रजातान्त्रिक समाजों का सर्वोच्च कानून होता है, उल्लंघन किये बिना कोई चुनाव करना कठिन होता है, इसलिए सर्वप्रथम यही विचार उत्पन्न होता है कि सभी एक ही गति से प्रगति करें तथा एक ही प्रकार के कष्ट सहन करें। इस प्रकार जिस अनुपात में मनुष्यों में सादृश्य बढ़ता है और समानता का सिद्धान्त देश की संस्थाओं और व्यवहारों में अधिक शान्ति और गहराई के साथ प्रवेश करता है, उसी अनुपात में प्रगति के नियम अधिक अपरिवर्तनीय हो जाते हैं, स्वयं प्रगति अधिक मन्द हो जाती है तथा एक निश्चित ऊँचाई पर शीघ्र पहुँचने की कठिनाई बहुत अधिक बढ़ जाती है। विशेषाधिकार के प्रति घृणा और चुनाव करने की परेशानी से सभी व्यक्ति, चाहे वे किसी भी स्तर के हों, एक ही अग्नि परीक्षा से होकर गुजरने के लिए बाध्य हो जाते हैं, सभी को अविवेकपूर्ण ढंग से अनेक छोटे-छोटे प्रारम्भिक अभ्यासों से होकर गुजरने के लिए बाध्य किया जाता है, जिनमें उनका यौवन बर्बाद हो जाता है और उनकी कल्पना बुझ जाती है, जिससे

उन्हे जिस वस्तु की आशा दिलायी जाती है, उसे पूर्ण रूप से प्राप्त करने से वे निराश हो जाते हैं, और अन्त मे जब वे कोई असाधारण कार्य करने की स्थिति मे होते हैं, तब इस प्रकार के कार्यों के प्रति उनकी रुचि समाप्त हो चुकी होती है।

चीन मे जहाँ स्थितियों की समानता अत्यन्त अधिक और अत्यन्त प्राचीन है, कोई भी व्यक्ति प्रतियोगिता-परीक्षा के बिना एक सार्वजनिक पद से दूसरे सार्वजनिक पद पर नहीं पहुँचता। यह परीक्षा उसके जीवन की प्रत्येक अवस्था मे नये सिरे से उपस्थित होती है और अब यह धारणा जनता के व्यवहारों मे इतनी अधिक बद्धमूल हो चुकी है कि मुझे याद आ रहा है कि मैंने एक चीनी उपन्यास पढ़ा था, जिसमे नायक अनेक परीक्षाओं के बाद सम्मान प्राप्त कर अन्त मे अपनी प्रेमिका का हृदय स्पर्श करने मे सफल हो जाता है। इस प्रकार के वातावरण मे उच्च महत्त्वाकाक्षा कठिनाई से ही साँस ले पाती है।

मै राजनीति के विषय मे जो बात कह रहा हूँ, वह प्रत्येक वस्तु के सम्बन्ध मे लागू होती है। समानता का प्रभाव प्रत्येक स्थान पर एक समान होता है। जहाँ किसी देश के कानून निश्चयात्मक विधि-निर्माण द्वारा मनुष्यो की प्रगति को नियमित और अवरुद्ध नहीं करते, वहाँ प्रतियोगिता यही कार्य करती है।

अतः भली भाँति स्थापित प्रजातान्त्रिक समुदाय मे महान और तीव्र उत्थान दुर्लभ होता है, यह सामान्य नियम का एक अपवाद होता है, और इस प्रकार की घटनाओ की विचित्रता के कारण मनुष्य इस बात को भूल जाते हैं कि वे कितनी कम घटित होती हैं।

प्रजातन्त्रो मे रहने वाले व्यक्तियो को अन्ततोगत्वा इन बातो का पता चल जाता है, आखिर मे उन्हे पता लगता है कि उनके देश के कानून उनके समक्ष एक असीमित कार्य-क्षेत्र प्रस्तुत करते हैं, किन्तु कोई भी व्यक्ति उसे शीघ्रता-पूर्वक पार कर जाने की आशा नहीं कर सकता। वे अपने तथा अपनी आकाक्षाओं के अन्तिम लक्ष्य के बीच अनेक छोटी-छोटी बाधाएँ देखते हैं, जिन्हे धीरे-धीरे अवश्य पार किया जाना चाहिए। यह सम्भावना उनकी महत्त्वाकाक्षा को तत्काल क्लान्त और निरुत्साहित बना देती है। अतः वे इतनी सन्दिग्ध और सुदूर आशाओं का परित्याग कर देते हैं और अपने अधिक निकट कम ऊँचे और अधिक सरलतापूर्वक उपलब्ध हो सकने वाले सुखों की तलाश करने लगते हैं। उनका क्षितिज कानूनो द्वारा सीमित नहीं होता, प्रत्युत स्वयं उन्हीं के द्वारा सकीर्ण बन जाता है।

मैने कहा है कि कुलीनतान्त्रिक युगो की अपेक्षा प्रजातान्त्रिक युगो मे उच्च महत्त्वाकाक्षाएँ दुर्लभतर होती हैं, इसमे मै इतना जोड सकता हूॅ, कि इन प्राकृतिक बाधाओ के बावजूद जब वे अस्तित्व मे आ जाती हैं, तब उनका स्वरूप भिन्न होता है। कुलीनतत्रो मे महत्त्वाकाक्षा का जीवन बहुधा विस्तृत होता है, किन्तु उसकी सीमाएँ निर्धारित होती हैं। प्रजातत्रो मे महत्त्वाकाक्षा का क्षेत्र सामान्यत. सकीर्ण होता है, किन्तु जब वह एक बार उसे पार कर जाती है, तब मुश्किल से उसकी कोई सीमा निश्चित की जा सकती है। चूॅकि मनुष्य व्यक्तिगत रूप से निर्बल होते हैं, चूॅकि वे पृथक् पृथक् और निरन्तर गतिशील रहते हैं, चूॅकि पूर्व उदाहरणो को तनिक भी प्रामाणिक नहीं माना जाता और कानून अल्पकालीन हाते हैं, इसलिए नवीनता का प्रतिरोध क्षीण होता है और समाज का ढॉचा कभी पूर्णरूप से सुदृढ अथवा ठोस नहीं प्रतीत होता। अतः जब सत्ता किसी महत्त्वाकाक्षी व्यक्ति की पकड मे आ जाती है, तब ऐसी कोई वस्तु नहीं होती, जिसके लिए वह साहस नही कर सकता, और जब वह सत्ता उसके पास से चली जाती है, तब वह उसे पुनः प्राप्त करने के लिए राज्य को उलट डालने का विचार करता है। इससे महान राजनीतिक महत्त्वाकाक्षा को क्रान्तिकारी हिमा का स्वरूप प्राप्त होता है, जिसका प्रदर्शन समान अश मे वह कुलीनतान्त्रिक समुदायो मे बहुत कम करती है। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो का सामान्य पहलू भारी सख्या मे महत्त्वाकाक्षा के छोटे-छाटे और अत्यन्त बुद्धि-सगत लक्ष्यों को प्रस्तुत करेगा, जिनके मध्य से समय-समय पर थड़ी-सी बड़ी-बडी अनियन्त्रित इच्छाएँ उत्पन्न होगी, किन्तु वहॉ बडे पैमाने पर कल्पित और नियमित महत्त्वाकाक्षा जैसी कोई वस्तु नहीं मिलेगी।

मै अन्यत्र बता चुका हूॅ कि किस गुप्त-प्रभाव द्वारा समानता का सिद्धान्त मानव-हृदय मे भौतिक सुख के प्रति प्रबल भावना तथा वर्तमान के प्रति विशेष प्रेम को सर्वोपरि बनाता है। ये विभिन्न प्रवृत्तियॉ महत्त्वाकाक्षा की भावना के साथ मिलती हैं और उसे अपने रग मे रग देती हैं।

मेरा विश्वास है कि प्रजातत्रो मे महत्वाकाक्षी व्यक्ति अन्य व्यक्तियो की अपेक्षा भावी पीढी के हितो और भाग्य मे कम रुचि रखते हैं, केवल वर्तमान क्षण ही उन्हें व्यस्त और तल्लीन रखता है। वे अपनी सफलताओ के स्थायी स्मारक बनाने की अपेक्षा अनेक कार्यों को तीव्र गति से पूर्ण करने मे अधिक रुचि रखते हैं, और वे ख्याति की अपेक्षा सफलता के लिए बहुत अधिक चिन्ता करते हैं। वे मनुष्यों से सर्वाधिक आज्ञा-पालन की मॉग करते हैं तथा

साम्राज्य की सर्वाधिक कामना करते है। उनके व्यवहार प्रायः समस्त मामलों में उनकी स्थिति से निम्न कोटि के बने रहे हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि वे बहुधा अपनी असाधारण समृद्धि मे अत्यन्त निम्न कोटि की रुचि का प्रदर्शन करते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने अपने अपरिष्कृत अथवा तुच्छ आनन्दो की प्राप्ति के लिए ही सर्वोच्च सत्ता प्राप्त की है।

मै सोचता हूँ कि हमारे युग मे महत्त्वाकाक्षा की भावना को शुद्ध, नियमित और आनुपातिक बनाना अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु उसमे कमी करने अथवा उसका दमन करने का प्रयत्न करना अत्यन्त खतरनाक होगा। हमे कतिपय चरम-सीमाएँ निर्धारित करने का प्रयत्न करना चाहिए और महत्वाकाक्षा की भावना को उनसे बाहर जाने की अनुमति कभी नहीं देनी चाहिए; किन्तु उन निर्धारित सीमाओं के अन्तर्गत उसके विस्तार को बहुत अधिक अवरुद्ध नही किया जाना चाहिए।

मैं स्वीकार करता हूँ कि मुझे प्रजातात्रिक समाज के लिए निम्न कोटि की इच्छाओं से जितनी आशका है, उससे बहुत कम आशका साहसिकता से है। मुझे जो बात सबसे अधिक खतरनाक प्रतीत होती है, वह यह है कि निजी जीवन के छोटे-छाटे, अनवरत कार्यो के मध्य महत्वाकाक्षा की प्रबलता और उसकी महत्ता कहीं समाप्त न हो जाय तथा मनुष्य की भावनाएँ कहीं शान्त और साथ ही साथ निम्नगामी न हो जाय, जिससे समाज की गति कहीं प्रतिदिन अधिक शान्त और कम महत्त्वाकाक्षापूर्ण न हो जाय।

अतः मेरा विचार है कि आधुनिक समाज के नेता अत्यधिक सहस्य और अत्यधिक शातिमय प्रसन्नता की स्थिति द्वारा समाज को निष्क्रिय बनाने का प्रयत्न कर गलती करेंगे; और समय-समय पर उसे कठिनाई और खतरे मे डालना अच्छा होगा, जिससे महत्वाकाक्षा का उत्थान हो सके और उसे एक कार्य क्षेत्र मिल सके।

नैतिकतावादी निरन्तर यह शिकायत करते रहते हैं कि वर्तमान युग की सबसे बडी बुराई अहकार है। एक अर्थ मे यह बात सच है, क्योकि निश्चय ही प्रत्येक व्यक्ति सोचता है कि वह अपने पडोसी से अधिक अच्छा है अथवा वह अपने से बड़े व्यक्ति की आज्ञा मानने से इनकार करता है; किन्तु एक दूसरे अर्थ मे यह बात अत्यन्त गलत है, क्योंकि वही व्यक्ति, जो अधीनता अथवा समानता को सहन नहीं कर सकता, अपने सम्बन्ध मे इतना घृणित विचार रखता है कि वह सोचता है कि उसका जन्म केवल अश्लील आनन्दों

का उपभोग करने के लिए ही हुआ है। वह उच्च प्रयासों को, जिनकी कल्पना वह स्वप्न मे भी बहुत कम करता है, प्रारम्भ करने का साहस न करके स्वेच्छा-पूर्वक निम्न कोटि की इच्छाओ का वरण करता है।

इस प्रकार, यह सोचना तो बहुत दूर रहा कि हमारे युग के व्यक्तियों को नम्रता का उपदेश दिया जाना चाहिए, मैं इस बात को पसन्द करूँगा कि उन्हें अपने तथा अपनी जाति के सम्बन्ध मे व्यापकतर भावना प्रदान करने के प्रयास किये जाने चाहिए। उनके लिए विनम्रता अस्वास्थ्यकर है, उन्हे जिस बात की सर्वाधिक आवश्यकता है, वह है अहकार। हमारी अनेक छोटी-छोटी अच्छाइयों के साथ मैं इस एक बुराई को स्वेच्छापूर्वक बदल लूँगा।

४७. कतिपय प्रजातांत्रिक देशों में स्थान की खोज का व्यापार

संयुक्त-राज्य अमरीका मे ज्योही कोई व्यक्ति थोडी-सी शिक्षा और सम्पत्ति अर्जित कर लेता है, त्योंही वह या तो वाणिज्य एव उद्योग द्वारा धनी बनने का प्रयास करता है या जगल मे जमीन खरीदकर अगुवा बन जाता है। वह राज्य से केवल इतना चाहता है कि उसके श्रम मे बाधा न डाली जाय तथा उसकी कमाई सुरक्षित रहे। अधिकाश यूरोपीय राष्ट्रों मे जब कोई व्यक्ति अपनी शक्ति का अनुभव एव अपनी इच्छाओं का विस्तार करना प्रारम्भ करता है, तब उसके मस्तिष्क मे सवप्रथम काई सार्वजनिक पद प्राप्त करने की भावना उत्पन्न होती है। एक ही कारण से उत्पन्न इन विरोधी प्रभावों पर हमे सरासरी दृष्टि डालने की आवश्यकता है।

जब सार्वजनिक नौकरियों की सख्या कम होती है, उनके लिए कम वेतन मिलता है तथा वे अनिश्चित रहती हैं, जब कि विभिन्न प्रकार के व्यवसायों की सख्या अनेक होती है तथा उनसे पर्याप्त धन की उपलब्धि होती है, तब समानता के सिद्धान्त से उत्पन्न नयी और तीव्र आकाक्षाएँ सभी ओर से सरकारी कार्यों की ओर नहीं, प्रत्युत व्यवसाय की ओर ही मुडती हैं, किन्तु जबकि समाज की श्रेणियाँ अधिकाधिक समान बन रही हों, तब यदि जनता की शिक्षा अपूर्ण रहती है अथवा उनकी भावना मे साहस नहीं रहता—यदि वाणिज्य एव

उद्योग का विकास रुक जाने के कारण उनसे शनैः शनैः और कष्टपूर्वक ही सम्पत्ति अर्जित की जा सके—तब समाज के विभिन्न सदस्य अपनी निजी स्थिति मे सुधार करने से निराश हो कर राज्य के प्रमुख के पास जाते हैं और उसकी सहायता मागते हैं। सार्वजनिक धन द्वारा अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति करना उन्हें एक ऐसी स्थिति से, जिससे अब उन्हें सन्तोष नहीं होता, ऊपर उठने का एक मात्र नहीं तो सुगमतम और सर्वाधिक उन्मुक्त मार्ग प्रतीत होता है; स्थान (नौकरी) की खोज का व्यापार सर्वाधिक सामान्य व्यापार बन जाता है।

उन महान केन्द्रीकृत राजतन्त्रो मे, जहॉ सवैतनिक पदो की सख्या अत्यधिक होता है और उनकी अवधि पर्याप्त रूप से सुरक्षित होती है, जिससे कोई भी व्यक्ति कोई स्थान प्राप्त करने और पैतृक सम्पत्ति की भॉति ही निर्विघ्न रूप से उसका उपभोग करने से निराश नहीं होता, अवश्य ही विशेष रूप से यह स्थिति पायी जाती होगी।

मै यह नहीं कहूँगा कि स्थान के लिए यह सार्वजनीन एवं आत्यन्तिक इच्छा एक महान सामाजिक बुराई है, यह नागरिक मे स्वतन्त्रता की भावना को नष्ट कर देती है और समाज के समस्त ढॉचे मे एक भ्रष्ट एव दासतापूर्ण भावना भर देती है, यह पुरुषत्व के गुणो को दबा देती है। न मै यही प्रमाणित करने का प्रयत्न करूँगा कि इस प्रकार का कार्य केवल अनुत्पादक गतिविधि को ही जन्म देता है, जो देश के साधन-स्रोतों मे वृद्धि किये बिना उसे आन्दोलित करती है। ये सभी बातें प्रत्यक्ष हैं, किन्तु मै यह मत व्यक्त करूँगा कि जो सरकार इस मनोवृत्ति को प्रोत्साहित करती है, वह अपनी ही शांति को खतरे मे डालती है और अपने अस्तित्व के लिए महान सकट उत्पन्न कर देती है।

की सख्या असीमित होती है, जिस अनुपात मे सामाजिक स्थितियॉ समान बनती जाती हैं, उसी अनुपात में इसमें धीरे-धीरे तथा अदम्य गति से निरतर वृद्धि होती जाती है और जनसख्या की सीमाओं द्वारा ही उसका अवरोध होता है।

इस प्रकार, जब सरकारी नौकरियॉ महत्त्वाकाक्षा की पूर्ति का एकमात्र साधन होती हैं, सरकार को आवश्यक रूप से एक स्थायी विरोध का सामना करना पडता है, क्योकि उसे सीमित साधनो द्वारा असीमित आकाक्षाओ की पूर्ति का कार्य करना होता है। यह अत्यन्त निश्चित बात है कि विश्व मे नौकरी की तलाश करने वाले व्यक्तियो को सयमित और नियत्रित रखना कठिनतम कार्य होता है। शासको द्वारा चाहे जो भी प्रयास किये जाय, इस प्रकार के व्यक्ति कभी सन्तुष्ट नहीं हो सकते, और इस बात की आशका सदा बनी रहती है कि वे केवल नौकरिया प्राप्त करने के लिए अन्ततोगत्वा देश के सविधान को उलट देगे तथा राज्य के पहलू को बदल देगे।

यदि मै भूल नहीं करता, तो वर्तमान युग के सम्राट, जो समानता द्वारा उत्पन्न उन समस्त नयी इच्छाओ को अकेले अपने ऊपर ही ले लेने और उनकी पूर्ति करने का प्रयत्न करते है, इस बात के लिए पश्चाताप करेगे कि उन्होने यह नीति अपनायी। उन्हें एक दिन इस बात का पता चलेगा कि इसे इतना आवश्यक बनाकर उन्होने स्वय अपनी सत्ता को खतरे मे डाल दिया तथा अधिक सुरक्षित और ईमानदारी का मार्ग यह होता है कि वे अपने प्रजाजनों को अपने लिए स्वय व्यवस्था करने की कला सिखाते।

४८. क्यों महान क्रांतियाँ भविष्य में कम हुआ करेंगी?

जो जाति शताब्दियों तक जातियो और वर्गों की प्रणाली के अन्तर्गत रह चुकी हो, वह उग्र प्रयासो द्वारा पूर्ण हुए न्यूनाधिक रूप से सकटपूर्ण रूपान्तरो की एक लम्बी अवधि से गुजरने के बाद तथा अनेक परिवर्तनो के बाद ही प्रजातान्त्रिक सामाजिक स्थिति मे पहुँच सकती है, इस अवधि मे सम्पत्ति, विचार और अधिकार तीव्र गति से एक हाथ से दूसरे हाथ मे जाते रहते हैं। इस महान क्राति के पूर्ण हो जाने के बाद भी इससे उत्पन्न क्रातिकारी आदतें दीर्घकाल तक देखी जा सकती हैं और उसके बाद गम्भीर अशाति उत्पन्न

होगी। चूंकि यह सब उसी समय होता है, जब सामाजिक स्थितियाँ अधिक समान बनती हैं, इसलिए यह निष्कर्ष निकलता है कि स्वय समानता के सिद्धान्त और क्राति के मध्य कोई प्रच्छन्न एव गुप्त सम्बन्ध विद्यमान रहता है, क्योकि क्राति को जन्म दिये बिना समानता के सिद्धान्त का अस्तित्व नही हो सकता।

इस विषय मे तर्क और अनुभव का एक ही परिणाम निकलता हुआ प्रतीत हो सकता है। जिस जाति मे श्रेणियाँ लगभग समान होती हैं, उसमे मनुष्यो मे कोई प्रत्यक्ष पारस्परिक सम्बन्ध नहीं होता अथवा उनकी स्थिति को स्थिर रखनेवाली कोई प्रत्यक्ष कडी नहीं होती। उनमे से किसी के पास कोई स्थायी अधिकार अथवा शक्ति नहीं होती, किसी भी व्यक्ति की स्थिति उसे आज्ञा-पालन के लिए बाध्य नहीं करती, किन्तु थोडी सी शिक्षा और थोडी-सी सम्पत्ति से सम्पन्न प्रत्येक व्यक्ति अपना निजी मार्ग चुन सकता है और अपने समस्त सह-प्राणियो से अलग मार्ग पर जा सकता है। जो कारण समाज के सदस्यो को एक दूसरे से स्वाधीन बनाते हैं, वे ही कारण निरन्तर उनमे नयी और अशात इच्छाएँ उत्पन्न करते रहते हैं तथा उन्हे आगे बढने के लिए अनवरत रूप से प्रेरित करते रहते हैं। अतः यह स्वाभाविक प्रतीत होता है कि प्रजातात्रिक समुदाय में मनुष्यों, वस्तुओं और विचारों के स्वरूप और स्थान में सदा परिवर्तन होते रहना चाहिए तथा प्रजातान्त्रिक युगों को तीव्र अनवरत रूपान्तर का समय होना चाहिए।

किन्तु क्या वास्तव में यही स्थिति है? क्या सामाजिक स्थितियों की समानता सदा और स्वाभाविक रूप से मनुष्यो को क्राति की ओर ले जाती है? क्या समाज की उस स्थिति मे कोई ऐसा अशातिजनक सिद्धान्त निहित होता है, जो समाज को शाति से रहने से रोकता है और नागरिकों में अपने कानूनों, अपने सिद्धान्तों और अपने व्यवहारों में निरन्तर परिवर्तन करते रहने की मनोवृत्ति उत्पन्न करता है? मै इस बात मे विश्वास नहीं करता, और चूंकि यह विषय महत्वपूर्ण है, इसलिए मै पाठकों से इस पर विशेष ध्यान देने का आग्रह करता हूँ।

अत. यदि कभी ऐसी समाज-व्यवस्था की स्थापना की जा सके, जिसमे प्रत्येक व्यक्ति के पास रखने के लिए कुछ रहेगा तथा दूसरो से छीनने के लिए कुछ भी नहीं रहेगा, तो विश्व की शाति के लिए यह बहुत बडा काम होगा।

मुझे इस बात का ज्ञान है कि किसी महान प्रजातान्त्रिक देश मे समाज के कतिपय सदस्य सदा अत्यन्त निर्धन और अन्य सदस्य अत्यन्त समृद्धिशाली बने रहेगे, किन्तु निर्धन व्यक्ति राष्ट्र का विशाल बहुमत बनने के स्थान पर, जैसा कि कुलीनतान्त्रिक समाजो मे सदा होता है, सख्या मे अपेक्षाकृत कम होते हैं और कानून उन्हे असाध्य और वशानुगत निर्धनता के बन्धनों से आबद्ध नहीं करते।

जहाँ तक धनी व्यक्तियो का सम्बन्ध है, वे थोडे और शक्तिहीन होते हैं, उनके पास ऐसे विशेषाधिकार नहीं होते जो जनता का ध्यान आकृष्ट कर सके, उनकी सम्पत्ति भी, चूँकि वह भूमि के साथ सयुक्त और सम्बद्ध नहीं रह जाती, सूक्ष्म एव अदृश्य होती है। चूँकि निर्धन व्यक्तियो की कोई जाति नहीं रह जाती, इसलिए धनी व्यक्तियों की कोई जाति भी नहीं रह जाती, धनी व्यक्ति प्रति दिन समूह मे से उत्पन्न होते हैं और पुनः उसी मे विलीन हो जाते हैं। अतः उनका कोई पृथक् वर्ग नहीं होता, जिसका सरलतापूर्वक पता लगाया जा सके और लूटा जा सके और इसके अतिरिक्त चूँकि वे हजारो गुप्त बधनो द्वारा अपने सहनागरिको के समूह के साथ सम्बद्ध होते हैं, इसलिए जनता स्वय अपने को क्षति पहुँचाये बिना उन पर प्रहार नहीं कर सकती।

प्रजातान्त्रिक समुदायो की इन दो चरम-सीमाओं के मध्य असख्य सादृश्य रखने वाले व्यक्ति होते हैं, जो न तो ठीक ठीक धनी होते हैं, न ठीक-ठीक निर्धन होते हैं, किन्तु जिनके पास इतनी पर्याप्त सम्पत्ति होती है कि वे व्यवस्था के कायम रहने की कामना करते हैं। फिर भी, उनके पास इतनी अधिक सम्पत्ति नहीं होती कि उससे ईर्ष्या उत्पन्न हो सके। इस प्रकार के व्यक्ति हिसक क्रान्तियों के स्वाभाविक शत्रु होते हैं, उनकी निष्क्रियता उनके ऊपर और नीचे की समस्त वस्तुओं को शात रखती है और समाज के ढाचे को सन्तुलित बनाती है।

निश्चय ही ऐसी बात नहीं है कि ये व्यक्ति भी अपनी स्थिति से सन्तुष्ट रहते हैं अथवा ऐसी क्रान्ति के प्रति उनकी स्वाभाविक घृणा होती है, जिसमे वे विपत्ति के भागी बने बिना ही उससे मिलने वाले लाभ के भागी बन सकते हैं। इसके विपरीत उनमे धनी बनने की अतुलनीय प्रबल कामना होती है, किन्तु कठिनाई यह जानने की होती है कि धन किससे छीना जा सकता है।

जो समाज व्यवस्था इच्छाओ को अनवरत रूप से प्रोत्साहित करती है, वही उन्हें आवश्यक सीमाओं के अन्तर्गत नियन्त्रित भी रखती है, यह मनुष्यों को परिवर्तन करने की अधिक स्वतत्रता और परिवर्तन मे कम रुचि प्रदान करती है।

प्रजातत्रों मे रहनेवाले व्यक्ति न केवल स्वभावतः क्रातियो की कामना नहीं करते, प्रत्युत वे क्रातियो से भयभीत-से रहते हैं। न्यूनाधिक मात्रा मे समस्त क्रान्तियॉ सम्पत्ति के स्वामित्व को खतरे में डालती है, किन्तु प्रजातान्त्रिक देशो मे रहने वाले अधिकाश व्यक्तियों के पास सम्पत्ति होती है। उनके पास न केवल सम्पत्ति होती है, प्रत्युत वे ऐसी स्थिति मे रहते है, जिसमें मनुष्य अपनी सम्पत्ति को सर्वाधिक महत्व प्रदान करते हैं।

यदि हम समाज की रचना करने वाले वर्गो मे से प्रत्येक वर्ग पर ध्यानपूर्वक विचार करे, तो यह बात सरलतापूर्वक देखी जा सकती है कि सम्पत्ति मे उत्पन्न होने वाली भावनाएँ मध्यम वर्गो मे तीव्रतम एवं दृढतम होती हैं। निर्धन अपनी सम्पत्ति के विपय मे बहुधा तनिक भी चिन्ता नहीं करते, क्योकि उनके पास जो थोड़ी सी सम्पत्ति होती है, उससे उन्हें जो सुख प्राप्त होता है, उससे बहुत अधिक कष्ट उन्हे उसके अभाव से प्राप्त होता है। समृद्धि की भावना के अतिरिक्त धनिको को अन्य अनेक भावनाओ को भी सन्तुष्ट करना पड़ता है और इसके अतिरिक्त कभी-कभी महान सम्पत्ति का दीर्घकालीन और दुस्साध्य आनन्दोपभोग अन्त मे उन्हे सम्पत्ति के आकर्षणो के प्रति उदासीन बना देता है, किन्तु जिन व्यक्तियों के पास क्षमता होती है और जो समृद्धि एव निर्धनता, दोनों से समान दूरी पर होते है, वे अपनी सम्पत्ति का मूल्य अत्यधिक समझते हैं। चूँकि वे अब भी प्रायः निर्धनता की सीमा के अन्तगत होते हैं, इसलिए वे उसके अभावों को निकट से देखते हैं और उससे भयभीत रहते है, निर्धनता और उनके मध्य केवल एक तुच्छ सम्पत्ति होती है, जिस पर वे अपनी आशकाओं और आशाओं को तत्काल केन्द्रित कर देते हैं। इसके लिए जो निरन्तर चिन्ता करनी पडती है, उससे इसमे उनकी रुचि प्रतिदिन बढ़ती जाती है और वे धन-राशि मे वृद्धि करने के लिए निरन्तर जो प्रयास करते हैं, उसके कारण इसके प्रति उनका लगाव बढ़ जाता है। इसके अल्पतम भाग को समर्पण करने की भावना भी उनके लिए असमर्थनीय होती है और इसकी पूर्ण क्षति को वे निकृष्ट दुर्भाग्य मानते है।

अब, तुच्छ सम्पत्ति रखने वाले ये उत्सुक और भयाक्रात व्यक्ति उस वर्ग का निर्माण करते हैं, जिसमे स्थितियों की समानता से अनवरत वृद्धि होती रहती

है। अतः प्रजातान्त्रिक समुदायो मे जनता का बहुमत स्पष्ट रूप से नहीं देख पाता कि क्रान्ति से उसे क्या लाभ होगा, किन्तु वह सदा और हजार तरीकों से यह अनुभव करता है कि क्रांति उसके लिए हानिकारक सिद्ध हो सकती है।

इस पुस्तक के दूसरे भाग मे मैंने दिखाया है कि स्थितियों की समानता मनुष्यो को स्वभावत. वाणिज्य एव उद्योग की ओर प्रेरित करती है तथा उसमें वास्तविक सम्पत्ति की अभिवृद्धि एव उसका वितरण करने की प्रवृत्ति होती है। मैने यह भी बताया है कि वह किन साधनों से प्रत्येक व्यक्ति में अपनी सम्पत्ति को बढाने की प्रबल एव अनवरत इच्छा जाग्रत करती है। इन वस्तुओं से बढकर कोई भी वस्तु क्रान्तिकारी भावनाओं की विरोधिनी नहीं है। किसी क्रान्ति का अन्तिम परिणाम वाणिज्य एव उद्योग के लिए अनुकूल हो सकता है, किन्तु उसका प्रथम परिणाम सदा ही उद्योगों एव वाणिज्यकर्ताओ को नष्ट कर देने वाला होता है, क्योंकि क्राति सदा ही उपभोग के सामान्य सिद्धान्तो मे तत्काल परिवर्तन कर देती है तथा पूर्ति और माग के मध्य वर्तमान अनुपात को अस्थायी रूप से अस्तव्यस्त कर देती है।

मुझे ऐसी किसी वस्तु का ज्ञान नहीं है, जो व्यावसायिक व्यवहारों की अपेक्षा क्रान्तिकारी व्यवहारों के अधिक विरुद्ध हो। वाणिज्य स्वभावतः समस्त हिंस्र भावनाओं के विरुद्ध होता है, वह समयानुकूल कार्य करने के प्रति प्रेम रखता है, समझौते से उसे प्रसन्नता प्राप्त होती है और अशान्ति से वह प्रयत्नपूर्वक बचता है। वह धैर्यवान, मृदुभाषी तथा नमनीय होता है और जब तक अत्यन्त अनिवार्य आवश्यकता से बाध्य नहीं हो जाता, तब तक उग्र उपायो का अवलम्बन कभी नहीं करता। वाणिज्य मनुष्यो को एक दूसरे से स्वाधीन बनाता है, उनमें अपने व्यक्तिगत महत्व के सम्बन्ध मे एक उच्च धारणा उत्पन्न करता है, उन्हे अपने कार्यो का स्वय सचालन करने का प्रयास करने के लिए प्रेरित करता है तथा उन्हें भलीभाँति सचालित करने की शिक्षा प्रदान करता है, अतः वह मनुष्यों को स्वतत्रता के लिए तैयार करता है, किन्तु उन्हे क्रान्ति से विमुख रखता है।

क्रान्ति मे व्यक्तिगत सम्पत्ति के स्वामियों को अन्य समस्त व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक भय रहता हैं, क्योंकि एक ओर उनकी सम्पत्ति को छीनना बहुधा सरल कार्य होता है और दूसरी ओर वह किसी भी क्षण पूर्ण रूप से विलुप्त हो सकती है—यह एक ऐसी बात है जिसका खतरा वास्तविक सम्पत्ति के स्वामियो को कम रहता है, क्योकि यद्यपि उनकी जायदाद से होने

वाली आमदनी समाप्त हो सकती है, तथापि वे बडे-बडे परिवर्तनो में भी भूमि की रक्षा करने की आशा कर सकने हैं। अतः निजी सम्पत्ति के स्वामी वास्तविक सम्पत्ति के स्वामियों की अपेक्षा क्रान्तिकारी अशाति के लक्षणो से अधिक भयभीत रहते हैं। अतः जिस अनुपात से व्यक्तिगत सम्पत्ति मे वृद्धि और जनता के मध्य उसका वितरण होता है तथा व्यक्तिगत सम्पत्ति के स्वामियों की सख्या बढ जाती है, उसी अनुपात से क्रान्ति करने की राष्ट्रों की प्रवृत्ति मे कमी हो जाती है।

उसके अतिरिक्त मनुष्यो का पेशा और उनकी सम्पत्ति का स्वरूप चाहे कुछ भी हो, एक बात उनमे सामान्य रूप से पायी जाती है। कोई भी व्यक्ति अपनी वर्तमान सम्पत्ति से पूर्णरूपेण सन्तुष्ट नहीं होता, सभी हजारो उपायों से उसमे सुधार करने का निरन्तर प्रयास करते रहते है। उनमे किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन के किसी भी समय देखिये और आप पायेगे कि उसके पास जो कुछ है, उसमें वृद्धि करने के उद्देश्य से वह किसी नयी योजना मे लगा हुआ है। उससे मानव जाति के हितों और अधिकारों की बात मत कीजिये, उसके सारे विचार इस छोटी-सी घरेलू चिन्ता मे केन्द्रीभूत रहते हैं और वह राजनीतिक आदोलनों को किसी अन्य समय के लिए स्थगित कर देता है। यह बात न केवल मनुष्यों को क्रान्तियॉ करने से, प्रत्युत उनकी इच्छा करने से भी रोकती है। जिन लोगों ने अपने समस्त गुणो को अपने कल्याण की खोज मे लगा दिया है, उनके ऊपर उग्र राजनीतिक भावनाओ का तनिक भी प्रभाव नहीं पडता। वे छोटे छोटे कार्यो मे जिस उत्साह का प्रदर्शन करते हैं, वह महत्त्वपूर्ण कार्यो के लिए उनके उत्साह को शात बना देता है।

निश्चय ही समय-समय पर प्रजातान्त्रिक समुदायों में अध्यवसायी और महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति उत्पन्न होंगे जिनकी असीमित महत्त्वाकांक्षाएँ पुराने मार्ग पर चल कर ही सन्तुष्ट नहीं हो सकतीं। इस प्रकार के व्यक्ति क्रान्तियो को पसन्द करते हैं और उनके आगमन का स्वागत करते हैं; किन्तु जब तक असाधारण घटनाएँ उनकी सहायता नहीं करती, तब तक क्रान्तियॉ करने में उन्हे महान कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कोई भी व्यक्ति अपने युग और देश की भावना के विरुद्ध सघर्ष कर लाभान्वित नहीं हो सकता; और किसी भी व्यक्ति के लिए, वह चाहे जितना भी शक्तिशाली समझा जाता हो, अपने समकालीनो से उन भावनाओं और विचारों को मनवाना कठिन होगा, जो उनकी समस्त भावनाओं और इच्छाओं के विरुद्ध होगे।

यह विश्वास करना भूल है कि जब एक बार स्थिति की समानता समाज की पुरानी और निर्विवाद व्यवस्था का रूप धारण कर लेती है और उसकी विशेषताएँ राष्ट्र के व्यवहारों मे समाविष्ट हो जाती हैं, तब मनुष्य किसी निर्बुद्धि नेता अथवा किसी साहसी परिवर्तनवादी के कहने से अपने को खतरों मे झोंक देंगे। निश्चय ही यह बात नहीं है कि वे सुनिर्धारित योजनाओं द्वारा अथवा प्रतिरोध की एक पूर्वनिश्चित योजना द्वारा भी उसका खुले रूप से प्रतिरोध करेंगे। वे उत्साहपूर्वक उसके विरुद्ध संघर्ष नहीं करेंगे, कभी-कभी वे उसकी प्रशंसा भी करेंगे, किन्तु वे उसका अनुगमन नहीं करते। वे उसकी सक्रियता का अपनी निष्क्रियता द्वारा, उसकी क्रांतिकारी प्रवृत्तियों का अपने अनुदार स्वार्थों द्वारा, उसकी साहसपूर्ण भावनाओं का अपनी पारिवारिक रुचियों द्वारा, उसकी प्रतिभा की उड़ानों का अपनी सामान्य बुद्धि द्वारा और उसकी कविता का अपनी गद्यात्मकता द्वारा गुप्त रीति से विरोध करते हैं। अत्यधिक प्रयास करके वह एक क्षण के लिए उन्हे ऊपर उठाता है, किन्तु वे शीघ्र ही उससे बच निकलते हैं और अपने ही भार से पुनः दब जाते हैं। वह उदासीन और असम्बद्ध समूह को सक्रिय बनाने के लिए प्रयत्न करता है और अन्त मे उसे इस बात का पता चलता है कि वह निर्वीर्य हो गया है। इसका कारण यह नहीं होता कि वह पराजित हो जाता है, प्रत्युत यह होता है कि वह अकेला पड़ जाता है।

मै यह नहीं कहता कि प्रजातान्त्रिक समुदायो मे रहने वाले व्यक्ति स्वभावतः निष्क्रिय होते हैं, इसके विपरीत मेरा मत है कि इन समाजों के वक्षःस्थल मे एक शाश्वत उथल पुथल विद्यमान रहती है तथा वहाँ शांति अज्ञात रहती है, किन्तु मेरा विचार है कि मनुष्य कतिपय सीमाओं के अन्तर्गत ही आन्दोलित होते हैं, जिनके परे वे मुश्किल से कभी जाते हैं। वे गौण वस्तुओ मे निरन्तर परिवर्तन करते रहते हैं और उन्हे पुनः अपने स्थान पर लाते रहते हैं, किन्तु वे मूलभूत वस्तुओ का स्पर्श करने से सतर्कतापूर्वक बचते रहते हैं। वे परिवर्तन से प्रेम करते हैं, किन्तु क्रान्तियो से भयभीत रहते हैं।

यद्यपि अमरीकी अपने कतिपय कानूनों को निरन्तर परिवर्तित अथवा रद्द करते रहते हैं, तथापि वे किसी भी स्थिति मे क्रान्तिकारी भावनाओं का प्रदर्शन नहीं करते। जब सार्वजनिक उत्तेजना चिन्ताजनक रूप धारण करने लगती है और जिस क्षण भावनाएँ अत्यन्त अशांत प्रतीत होती हैं तब वे जिस तत्परता एवं शीघ्रता से अपने को संयमित एवं शांत बना लेते हैं, उससे यह बात सरलतापूर्वक देखी जा सकती है कि वे क्रांति को महानतम दुर्भाग्य मान कर उससे

डरते हैं और उनमें से प्रत्येक इस प्रकार की विपत्ति को दूर रखने के लिए महान बलिदान करने के लिए मन ही मन कृत-संकल्प रहता है। संयुक्त-राज्य अमरीका में सम्पत्ति-प्रेम जितना प्रबल है और वहाँ सम्पत्ति के लिए जितनी अधिक चिन्ता की जाती है, उतनी चिन्ता विश्व के अन्य किसी देश में नहीं की जाती। उन सिद्धान्तों के प्रति, जिनमें सम्पत्ति के कानूनों में किसी भी प्रकार का परिवर्तन होने का खतरा हो, बहुमत का लगाव जितना कम अमरीका में दिखायी देता है, उतना कम अन्यत्र कहीं भी नहीं दिखाई देता।

मैं अनेक बार कह चुका हूँ कि चूँकि क्रान्तिकारी सिद्धान्तों को समाज और मनुष्यों की स्थिति में पूर्ण और कभी-कभी आकस्मिक परिवर्तन किये बिना कार्यरूप में परिणत नहीं किया जा सकता, इसलिए उन्हें यूरोप के महान राजतान्त्रिक देशों की अपेक्षा अमरीका में बहुत कम अनुकूल दृष्टि से देखा जाता है। यदि कुछ व्यक्ति उन सिद्धान्तों को स्वीकार करते हैं, तो अधिकांश जनता आन्तरिक घृणा से उन्हें अस्वीकृत कर देती है। मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि फ्रांस में जिन सिद्धान्तों को प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त कहा जाता है, उनमें से अधिकांश अमरीका के प्रजातन्त्र द्वारा निषिद्ध कर दिये जायगे। इस बात को सरलता पूर्वक समझा जा सकता है अमरीका में मनुष्यों के विचार और भावनाएँ प्रजातान्त्रिक हैं, यूरोप में हमारी भावनाएँ और विचार अभी तक क्रान्तिकारी हैं।

यदि अमरीका को कभी महान क्रान्तियों से होकर गुजरना पड़ा, तो ये क्रान्तियाँ अमरीका की भूमि पर काली जाति की उपस्थिति से उत्पन्न होंगी। कहने का तात्पर्य यह है कि उनका कारण स्थिति की समानता नहीं, प्रत्युत विषमता होगी।

होकर गुजरने के लिए बाध्य कर देगी। प्रजातान्त्रिक देशों मे एक अल्पसंख्यक समुदाय को छोड कर और लोग क्रान्तियो की कामना बहुत कम करते हैं, किन्तु कभी-कभी एक अल्पसख्यक समुदाय उन्हे उत्पन्न कर सकता है।

मै यह नहीं कहता कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्र क्रान्तियों से सुरक्षित रहते हैं; मेरा कहना केवल यह है कि उन राष्ट्रों की समाज-व्यवस्था क्रान्तियों को जन्म नहीं देती, प्रत्युत उन्हे रोकती ही है। यदि किसी प्रजातान्त्रिक जनता को स्वय उसके ऊपर छोड़ दिया जाय, तो वह सरलतापूर्वक बड़े-बडे खतरे नहीं उठाती, वह अनजान मे ही क्रान्तियाँ करती है, वह कभी कभी क्रान्तियों से होकर गुजर सकती है, किन्तु वह क्रान्तियों की सृष्टि नही करती और मैं इतना और कहूँगा कि जब इस प्रकार की जनता पर्याप्त ज्ञान और अनुभव अर्जित कर लेगी, तब वह इस बात को सहन नहीं करेगी कि क्रान्तियाँ हों।

मै इस बात से भली भाँति अवगत हूँ कि इस सम्बन्ध में सार्वजनिक सस्थाएँ स्वय बहुत कुछ कर सकती है। वे समाज-व्यवस्था मे उत्पन्न होने वाली प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित अथवा उनका दमन कर सकती हैं। अतः मै पुनः कहता हूँ कि मेरा मत यह नहीं है कि केवल सामाजिक स्थितियों के समान होने से ही जनता क्रान्तियों से सुरक्षित रहती है, किन्तु मेरा विचार है कि इस प्रकार की जनता की सस्थाएँ चाहे जो भी हों, महान क्रान्तियाँ सदा ही कल्पना से बहुत कम हिंसापूर्ण होगी और उनके अवसर कम उपस्थित होगे। मै सरलतापूर्वक एक ऐसी शासन-व्यवस्था की कल्पना कर सकता हूँ जिसमे, जब वह समानता के सिद्धान्त के साथ सयुक्त हो जायगी, समाज इतना अधिक स्थिर हो जायगा, जितना स्थिर वह विश्व के हमारे पश्चिम भाग मे कभी नहीं रहा।

मैंने यहाँ घटनाओ के सम्बन्ध मे जो मत व्यक्त किये हैं, उन्हें आंशिक रूप से विचारो के सम्बन्ध मे भी लागू किया जा सकता है। अमरीका मे दो बाते —मानवीय कार्यों के अधिकाश भाग की परिवर्तनशीलता और कतिपय सिद्धान्तो की विलक्षण स्थिरता—आश्चर्यजनक हैं। मनुष्य निरन्तर गतिशील रहते हैं, किन्तु मनुष्यो के मस्तिष्क लगभग अविचल प्रतीत होते हैं। जब एक बार कोई विचार देश में फैल जाता है और वहाँ बद्धमूल हो जाता है, तब ऐसा प्रतीत होता है कि ससार की कोई भी शक्ति उसका मूलोच्छेद करने की सामर्थ्य नहीं रखती। सयुक्त-राज्य अमरीका मे धर्म, दर्शन, नैतिकता और यहाँ तक कि राजनीति के भी सामान्य सिद्धान्त परिवर्तित नहीं होते अथवा कम-से-

कम उनमे केवल एक छिपी हुई और बहुधा अदृश्य प्रक्रिया द्वारा ही परिवर्तन होता है। निकृष्टतम पूर्वाग्रहों को भी, मनुष्यों और वस्तुओं के अनवरत संघर्ष के मध्य, अविश्वसनीय मन्द गति से नष्ट किया जाता है।

मैं यह कहते सुनता हूँ कि अपने विचारों और भावनाओं में निरन्तर परिवर्तन करते रहना प्रजातन्त्रों का स्वभाव और उनकी आदत होती है। यह बात प्राचीन विश्व के राष्ट्रों के समान छोटे छोटे प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के सम्बन्ध मे सत्य हो सकती है, जिनमे समस्त समुदाय को एक सार्वजनिक स्थल पर एकत्र और किसी वक्ता द्वारा उत्तेजित किया जा सकता था; किन्तु अटलाण्टिक महासागर के दूसरे किनारे पर निवास करने वाली महान प्रजातान्त्रिक जाति मे मुझे ऐसी कोई बात नहीं दिखायी दी। मै अमरीका में इस बात से प्रभावित हुआ कि वहाँ बहुमत द्वारा एक बार निश्चित किसी विचार का अथवा एक बार स्वीकृत कर लिये गये किसी नेता का परित्याग करना कठिन होता है। यह कार्य न तो भाषण द्वारा और न लेखनी द्वारा सम्पन्न हो सकता है, अनुभव के अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु सफल नहीं हो सकती और अनुभव की पुनरावृत्ति भी आवश्यक होती है।

प्रथम दृष्टि में यह बात आश्चर्यजनक प्रतीत होती है, किन्तु अधिक ध्यान-पूर्वक निरीक्षण करने से इस तथ्य का स्पष्टीकरण हो जाता है। मैं नहीं सोचता कि किसी प्रजातान्त्रिक जाति के पूर्वाग्रहों का मूलोच्छेद करना, इसके विश्वास मे परिवर्तन करना, धर्म, राजनीति और नैतिकता के क्षेत्र मे एक बार स्थापित हो चुके सिद्धान्तों के स्थान पर नये सिद्धान्तों की प्रतिष्ठा करना—एक शब्द मे मनुष्यों के मस्तिष्कों में महान और बहुधा परिवर्तन करना—उतना सरल कार्य है जितना कि समझा जाता है। ऐसी बात नहीं है कि वहाँ मानव मस्तिष्क गतिहीन

आवश्यकताएँ, आदतें और रुचियाँ भी आवश्यक रूप से प्रायः समान ही होती हैं। चूँकि वे एक ही प्रकार की वस्तुओं को देखते हैं, इसलिए उनके मस्तिष्क स्वभावतः एक ही प्रकार के निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, और यद्यपि उनमे से प्रत्येक व्यक्ति अपने समकालीनों से विलग जा सकता है और अपने निजी विचारो का निर्माण कर सकता है तथापि वे कतिपय स्वीकृत विचारो से अनिच्छापूर्वक एवं अनजाने ही सहमत होते हैं। मै मस्तिष्क पर समानता के प्रभावों के बारे मे जितना ही ध्यानपूवक विचार करता हूँ, उतना ही मेरा विश्वास होता जाता है कि हम अपने चारो ओर जो बौद्धिक अराजकता देखते हैं, वह प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों की स्वाभाविक स्थिति नहीं है, जैसा कि अनेक व्यक्ति सोचते हैं। मै सोचता हूँ कि इसे उनकी युवावस्था का एक विलक्षण सयोग समझा जाना चाहिए तथा इसका प्रादुर्भाव उस सक्रमण-काल मे ही होता है, जब मनुष्य पहले ही अपने को एक साथ आबद्ध रखने वाले पूर्व बन्धनों को तोड चुके होते हैं, किन्तु फिर भी उनके मूल, उनकी शिक्षा और उनके व्यवहारों मे आश्चर्यजनक भिन्नता होती है, जिससे अत्याधक भिन्नता रखने वाले मतो, प्रवृत्तियो और रुचियो को बनाये रखने के कारण उन्हें खुले रूप से व्यक्त करने से मनुष्यों को रोकने वाली कोई वस्तु नहीं रह जाती। मनुष्यो की स्थितियों मे समानता आती है, उसी अनुपात मे उनके प्रमुख विचारों मे भी समानता आती है। यही मुझे सामान्य एव स्थायी विधान प्रतीत होता है, शेष आकस्मिक और क्षणिक होता है।

मेरा विश्वास है कि किसी प्रजातान्त्रिक समुदाय में किसी व्यक्ति के मस्तिष्क मे अकस्मात् विचारो की एक ऐसी पद्धति का निर्माण करने की बात बहुत कम उत्पन्न होगी, जो उसके समकालीनों द्वारा स्वीकृत पद्धति से बहुत भिन्न हो, और यदि कोई ऐसा परिवर्तनवादी उत्पन्न हुआ, तो मुझे आशका है कि उसे श्रोता बहुत कठिनाई से मिल पायेगे और उसकी बातों मे विश्वास करने वाले व्यक्ति तो और भी अधिक कठिनाई से मिलेंगे। जब मनुष्यों की स्थितियाँ प्रायः समान होती हैं, तब वे सरलतापूर्वक एक दूसरे की बातों को स्वीकार नहीं करते। चूँकि वे सभी घनिष्ठ सम्पर्क मे रहते हैं, एक ही प्रकार की बातों को एक साथ सीखते हैं और एक ही प्रकार का जीवन व्यतीत करते हैं, अत. उनमे स्वभावतः अपने मे से किसी एक व्यक्ति को पथप्रदर्शक मानने और उसका अनुगमन करने की प्रवृत्ति नहीं होती। मनुष्य अपने समकक्ष अथवा अपने ही समान किसी व्यक्ति के मतों को बहुत कम ग्रहण करते हैं।

जैसा कि मैं अन्यत्र कह चुका हूँ, प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो मे न केवल कतिपय

व्यक्तियों की उच्चतर प्रतिभा में विश्वास क्षीण हो जाता है, प्रत्युत समाज के शेष व्यक्तियो की तुलना में किसी व्यक्ति द्वारा प्राप्त की जाने वाली बौद्धिक श्रेष्ठता की सामान्य धारणा शीघ्र ही विलुप्त हो जाती है। जब मनुष्य एक दूसरे के अधिकाधिक समान हो जाते हैं, तब बौद्धिक समानता का सिद्धान्त धीरे-धीरे उनके विचारो में समाविष्ट हो जाता है, और जनता के मस्तिष्क पर विशेष प्रभाव डाल सकना किसी भी परिवर्तनवादी के लिए अधिक कठिन हो जाता है। अतः इस प्रकार के समुदायों में आकस्मिक बौद्धिक क्रान्तियो का अवसर बहुत कम उपस्थित होगा, क्योंकि यदि हम विश्व के इतिहास का सही-सही अध्ययन करें, तो हमें विदित होगा कि मानवीय विचारों में महान और द्रुत परिवर्तन जितने अधिक किसी व्यक्ति के नाम के प्रभाव से हुए हैं, उसकी अपेक्षा बहुत कम परिवर्तन तर्क शक्ति द्वारा हुए हैं।

इस बात पर भी ध्यान दीजिए कि चूंकि प्रजातान्त्रिक समाजों में रहने वाले व्यक्ति किसी प्रकार के बन्धन द्वारा एक-दूसरे से सम्बद्ध नहीं होते, इसलिए उनमें से प्रत्येक को व्यक्तिगत रूप मे पृथक्-पृथक् विश्वास दिलाना आवश्यक होता है; जबकि कुलीनतान्त्रिक समाज में थोड़े-से व्यक्तियों को विश्वास दिलाना पर्याप्त होता है, शेष व्यक्ति उनका अनुगमन करते हैं। यदि लूथर समानता के युग में उत्पन्न हुआ होता और उसके श्रोता राजकुमार तथा सत्ताधीश न होते, तो सम्भवतः उसे यूरोप के स्वरूप में परिवर्तन करने में अधिक कठिनाई

निष्क्रिय व्यक्तियो की सख्या थोड़ी होती है, जीवन शोर-गुल और उत्तेजना के मध्य व्यतीत होता है और मनुष्य कार्य करने मे इतने अधिक तल्लीन रहते हैं कि सोचने के लिए बहुत कम समय बचता है। मैं विशेष रूप से यह कहूँगा कि वे न केवल काम मे लगे होते हैं, बल्कि वे अपने कार्यो के प्रति प्रबल निष्ठा रखते हैं। वे सदा क्रियाशील रहते हैं और उनके प्रत्येक कार्य मे उनकी सारी शक्ति लग जाती है, वे व्यवसाय मे जिस उत्साह का प्रदर्शन करते हैं, वह उस उत्साह को दबा देता है, जिसे अन्यथा वे विचारों मे लगाते।

मेरा विचार है कि प्रजातान्त्रिक जनता के उत्साह को किसी भी ऐसे सिद्धान्त के प्रति जाग्रत करना अत्यन्त कठिन होता है, जिसका जीवन के दैनिक कार्यो से स्पर्शनीय, प्रत्यक्ष एव तात्कालिक सम्बध न हो। अतः वे अपने प्राचीन विचारों का सरलतापूर्वक परित्याग नहीं करेगे, क्योकि उत्साह ही मनुष्यो के मस्तिष्को को पुराने मार्ग से दूर ले जाता है और महान बौद्धिक एव राजनीतिक क्रान्तियों को जन्म देता है।

इस प्रकार प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के पास नवीन विचारों की खोज करने का न तो समय होता है, न रुचि। जब उनके विचार सदिग्ध बन जाते हैं, तब भी वे उन्हें बनाये रखते हैं, क्योंकि उनमे परिवर्तन करने के लिए बहुत अधिक समय और छान-बीन की आवश्यकता होगी, वे उन विचारो को निश्चित मान कर नहीं, प्रत्युत स्थापित मान कर बनाये रखते हैं।

प्रजातान्त्रिक जनता के सिद्धान्तो में सरलतापूर्वक महान परिवर्तन न होने के अन्य कारण भी हैं, जो अधिक प्रबल हैं। मै उनका उल्लेख उन्नीसवें अध्याय मे पहले ही कर चुका हूँ।

यदि इस प्रकार की जनता मे व्यक्तियो का प्रभाव क्षीण और मुश्किल से दिखायी देने वाला होता है, तो प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क पर पड़ने वाला समूह का प्रभाव अत्यन्त अधिक होता है। इसके कारण मैं पहले ही बता चुका हूँ। अब मै यह दिखाऊँगा कि यह सोचना गलत है कि यह केवल शासन-प्रणाली पर निर्भर करता है तथा यदि बहुमत की राजनीतिक सत्ता समाप्त हो जाय, तो उसकी बौद्धिक श्रेष्ठता भी समाप्त हो जायगी।

कुलीनतत्रों मे बहुधा मनुष्यो की निजी महत्ता और शक्ति होती है। जब वे देखते हैं कि उनके अधिकाश देशवासियो के साथ उनका मत-भेद हो गया है, तब वे अपने निजी क्षेत्र मे चले जाते हैं, जहाँ वे अपना समर्थन स्वय करते हैं और स्वय अपने को आश्वस्त करते हैं। प्रजातान्त्रिक देश मे ऐसी बात नहीं

होती, वहाँ जनता का समर्थन उतना ही आवश्यक प्रतीत होता है, जितना साँस लेने के लिए हवा और समूह से विलग हो कर जीना न जीने के ही सदृश होता है। जिन लोगों के विचार समूह के विचारों से मेल नहीं खाते, उनका दमन करने के लिए उसे किसी कानून की आवश्यकता नहीं होती; जनता की असहमति पर्याप्त होती है। अपने अकेलेपन और निर्बलता की भावना उन्हें अभिभूत कर लेती है और निराश बना देती है।

जब कभी सामाजिक स्थितियाँ समान होती हैं, तब जनमत प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क पर भारी दबाव डालता है, वह उसे घेरे रहता है, उसका निर्देशन और दमन करता है और यह स्थिति समाज के राजनीतिक कानूनों की अपेक्षा बहुत अधिक उसकी रचना से ही उत्पन्न होती है। जब मनुष्यों मे समानता बढ़ती है, तब प्रत्येक व्यक्ति शेष व्यक्तियों की तुलना में अपने मे निर्बलता का अनुभव करता है। चूँकि वह ऐसी कोई वस्तु नहीं देखता, जो उसे शेष व्यक्तियों से बहुत ऊपर उठाती है अथवा उनसे विशिष्ट बनाती है, इसलिए ज्योंही वे उस पर प्रहार करते हैं, वह अपने-आप पर अविश्वास करने लगता है। न केवल वह अपनी शक्ति मे अविश्वास करने लगता है, प्रत्युत अपने अधिकार मे भी सन्देह करने लगता है और जब उसके अधिकाश देशवासी यह कहते हैं कि वह गलती पर है, तब वह प्रायः इस बात को स्वीकार कर लेता है। बहुमत को उसे बाध्य करने की आवश्यकता नहीं होती, वह उसे विश्वास दिला देता है। अतः प्रजातान्त्रिक समुदाय की शक्तियों का सगठन और सन्तुलन चाहे जिस प्रकार किया जाय, अधिकाश जनता द्वारा अस्वीकृत बात में विश्वास करना अथवा उसके द्वारा निन्दित बात की खुली घोषणा करना सदा अत्यन्त कठिन कार्य होगा।

विचारों की स्थिरता के लिए यह परिस्थिति असाधारण रूप से अनुकूल है। जब कोई विचार किसी प्रजातान्त्रिक जनता मे बद्धमूल बन जाता है और समाज के अधिकाश व्यक्तियों के मस्तिष्कों मे सस्थापित हो जाता है, तब बाद में वह विचार स्वयं अपने ऊपर जीवित रहता है और उसे कायम रखने के लिए किसी प्रयास की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि कोई भी व्यक्ति उस पर प्रहार नहीं करता। जो लोग पहले उसे मिथ्या कह कर अस्वीकृत कर देते हैं, वे ही अन्ततोगत्वा उसे सामान्य भावना के रूप मे स्वीकार कर लेते हैं, और जो लोग अब भी अपने हृदयों मे उसे स्वीकार नहीं करते, वे अपनी असहमति को छिपा कर रखते हैं, वे एक खतरनाक और निरर्थक संघर्ष में न पड़ने की सावधानी बरतते हैं।

यह सच है कि जब प्रजातान्त्रिक जनता का बहुमत अपने विचारों मे परिवर्तन करता है, तब वह मनुष्यों के मस्तिष्कों मे आकस्मिक और मनमाने ढंग से विचित्र क्रान्तियाँ उत्पन्न कर सकता है, किन्तु उसके विचार बिना विशेष कठिनाई के नहीं बदलते और यह सिद्ध करना लगभग उतना ही कठिन होता है कि विचारो मे परिवर्तन हो गया है।

कभी-कभी समय, घटनाएँ अथवा मस्तिष्क का अकेला पृथक् कार्य किसी विचार को परिवर्तित अथवा नष्ट कर देगा, किन्तु परिवर्तन का कोई बाह्य लक्षण दृष्टिगोचर नहीं होगा। उस विचार पर खुला प्रहार नहीं किया गया है, उसके विरुद्ध युद्ध करने के लिए कोई षडयन्त्र नहीं किया गया है किन्तु उसके अनुयायी एक-एक करके चुपचाप पृथक् होते जाते हैं, उनमे से कुछ प्रतिदिन उसका परित्याग करते जाते हैं, और अन्त मे उसे मानने वाले अल्पसख्या मे ही रह जाते हैं। इस स्थिति मे भी उसका प्राधान्य बना रहेगा। चूँकि उसके विरोधी मौन रहते हैं अथवा अपने विचारों का आदान-प्रदान चोरी चोरी ही करते हैं, इसलिए वे स्वय अधिक समय तक इस बात से अनवगत रहते हैं कि वास्तव मे क्रान्ति हो गयी है। अनिश्चितता की इस स्थिति मे वे कोई पग नहीं उठाते, वे एक दूसरे को देखते हैं और मौन रहते हैं। बहुमत पहले जिस बात मे विश्वास करता था, उसमें उसका विश्वास नहीं रह जाता, किन्तु वह अब भी विश्वास का दिखावा करता है, और जनमत की यह खोखली कल्पना परिवर्तनवादियो के उत्साह को ठडा कर देने तथा उन्हे मौन रखने और सम्मानजनक दूरी पर रखने के लिए पर्याप्त रूप से शक्तिशालिनी होती है।

हम एक ऐसे युग में रहते हैं, जिसमे मनुष्यों के मस्तिष्कों मे अत्यन्त तीव्र गति से वैचारिक परिवर्तन हुए हैं, इसके बावजूद यह हो सकता है कि निकट भविष्य मे ही समाज के प्रमुख विचार इतने अधिक स्थिर हो जायं, जितने हमारे इतिहास मे अनेक शताब्दियो तक नहीं रहे। वह समय अभी तक नहीं आया है, किन्तु सम्भवत वह आ रहा है। जब मै प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों की स्वाभाविक आवश्यकताओ और मनोवृत्तियो का अधिक निकट से निरीक्षण करता हूँ, तब मुझे इस बात का विश्वास हो जाता है कि यदि कभी विश्व में सामान्य और स्थायी रूप से सामाजिक समानता की स्थापना हो गयी, तो जितना सोचा जाता है, उसकी अपेक्षा महान बौद्धिक और राजनीतिक क्रान्तियाँ कम हो जायगी और उन्हें करना अधिक कठिन हो जायगा। चूँकि प्रजातान्त्रिक मनुष्य सदा उत्तेजित, अनिश्चित, उत्सुक तथा अपनी इच्छाओ और स्थितियों

मे परिवर्तनीय प्रतीत होते हैं, इसलिए यह कल्पना कर ली जाती है कि वे अपने कानूनों को अकस्मात् रद्द कर नये विचारो और नये व्यवहारों को ग्रहण कर लेगे, किन्तु यदि समानता का सिद्धान्त मनुष्यो मे परिवर्तन की प्रवृत्ति को जन्म देता है, तो वह उनमे कतिपय हितो और रुचियो को भी उत्पन्न करता है, जिन्हे स्थिर व्यवस्था के बिना सतुष्ट नहीं किया जा सकता। समानता उन्हे आगे बढने के लिए प्रेरित करती है, किन्तु साथ ही साथ वह उन्हे पीछे भी खीचती है; वह उन्हे उकसाती हे, किन्तु उन्हे धरती के साथ आबद्ध कर देती है; यह उनकी इच्छाओं को प्रज्वलित करती हैं किन्तु उनकी शक्तियो को सीमित कर देती है।

फिर भी, यह बात प्रथम दृष्टि मे नही दिखाई देती। जो भावनाएँ प्रजातंत्र के नागरिकों को पृथक् करती हैं, वे पर्याप्त रूप से प्रत्यक्ष होती हैं, किन्तु उन्हें नियन्त्रित और एकताबद्ध करने वाली गुप्त शक्ति सरसरी दृष्टि से नहीं दिखाई देती।

मै अपने चारो ओर जो विध्वंस देखता हूॅ, उनके मध्य क्या मैं यह कहने का साहस करूँगा कि मै क्रान्तियो को भावी पीढियो के लिए सर्वाधिक खतरनाक नहीं मानता ? यदि मनुष्यों ने स्वयं को घरेलू हितो की सकीर्ण सीमा मे रखना और उस प्रकार की उत्तेजना पर जीवित रहना जारी रखा, तो इस बात की आशका है कि वे अन्ततोगत्वा इन महान और शक्तिशाली जन-भावनाओ की पहुॅच से बाहर हो जायंगे, जो राष्ट्रो मे विक्षोभ उत्पन्न करती हैं, किन्तु जो उनका विकास करती हें और उनमे नयी शक्ति का संचार करती हें। जब सम्पत्ति इतनी अस्थिर और सम्पत्ति प्रेम इतना प्रशात और प्रबल हो जाता है, तब मैं यह आशका किये विना नहीं रह सकता कि मनुष्य एक ऐसी स्थिति में पहुॅच सकते हैं, जब वे प्रत्येक नये सिद्धान्त को एक विपत्ति, प्रत्येक परिवर्तन को एक कष्टदायक श्रम तथा प्रत्येक सामाजिक सुधार को क्रान्ति का जन्मदाता समझने लगेगे और इस प्रकार बहुत आगे बढ जाने के डर से एक दम हिलने-डुलने से ही इनकार करने लगेंगे। मुझे डर है और मैं इसे स्वीकार करता हूॅ कि कहीं वे वर्तमान सुख के प्रति कायरतापूर्ण प्रेम में इतने अधिक तल्लीन न हो जाय कि अपने भावी कल्याण तथा अपने वंशजों के कल्याण को भूल जाये और आवश्यक होने पर उच्चतर उद्देश्य के लिए प्रबल और आकस्मिक प्रयास करने के बदले जीवन के सरल प्रवाह मे प्रवाहित होना अधिक पसन्द करने लग जायं।

कुछ लोगों का विश्वास है कि आधुनिक समाज अपने स्वरूप मे निरन्तर परिवर्तन करता रहेगा; जहॉ तक मेरा सम्बन्ध है, मुझे आशंका है कि वह—

अन्ततोगत्वा एक ही प्रकार की सस्थाओं, एक ही प्रकार के पूर्वाग्रहों और एक ही प्रकार के व्यवहारों से इतने अधिक अपरिवर्तनीय रूप से आबद्ध सीमित हो जायगा कि मानव-जाति अवरुद्ध और सीमित हो जायगी। मस्तिष्क नवीन भावनाओं की सृष्टि न करके सदा आगे-पीछे घूमता रहेगा। मनुष्य लाभहीन तुच्छ बातों मे अपनी शक्ति का अपव्यय करता रहेगा और मानवता यद्यपि निरन्तर गतिशील रहेगी तथापि उसकी प्रगति रुक जायगी।

४९. क्यों प्रजातांत्रिक राष्ट्र स्वभावतः शांति की और प्रजातांत्रिक सेनाएँ युद्ध की कामना करती हैं ?

जो हित, जो आशंकाएँ और जो भावनाएँ प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों को क्रान्तियों से विमुख करती हैं, वे ही उन्हें युद्ध से भी विमुख करती हैं, सैनिक विजय की भावना और क्रान्ति की भावना मे एक ही समय और एक ही प्रकार के कारणों से क्षीणता आ जाती है। शाति से प्रेम करने वाले सम्पत्तिशाली व्यक्तियों की सख्या मे निरन्तर वृद्धि, निजी सम्पत्ति का, जिसे युद्ध तीव्र गति से समाप्त कर डालता है, विकास, व्यवहारों की मधुरता, हृदय की कोमलता, वे प्रवृत्तियाँ जो स्थितियों की समानता से उत्पन्न होती हैं, वह शात सौमनस्य, जो मनुष्यों को शस्त्रग्रहण करने की हिंसक एव काव्यमयी उत्तेजना से अपेक्षाकृत विमुख बना देता है—ये समस्त कारण एक साथ मिल कर सैनिक भावना को शात कर देते हैं। मै सोचता हूँ कि इसे एक सामान्य एव शाश्वत नियम के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है कि जिस अनुपात में सामाजिक स्थितियो की समानता मे वृद्धि होगी, उसी अनुपात मे सभ्य राष्ट्रों मे युद्ध की भावनाएँ अधिक विरल हो जायगी तथा उनकी प्रबलता में भी कमी हो जायगी।

फिर भी, युद्ध एक ऐसी घटना है, जो समस्त राष्ट्रों में, प्रजातान्त्रिक तथा अन्य राष्ट्रों में भी, घटित होती है। शाति के प्रति उनका प्रेम चाहे जितना हो, आक्रमण का प्रतिकार करने के लिए उन्हें तैयार रहना ही पड़ता है अथवा दूसरे शब्दों में उन्हें सेना रखनी ही पडती है। भाग्य ने, जिसने सयुक्त-राज्य अमरीका के निवासियों को अनेक लाभ प्रदान किये हैं, उन्हे सब से पृथक् कर दिया है, जहाँ यह कहा जा सकता है, उनका कोई पड़ोसी नहीं है, उनकी

आवश्यकताओं के लिए कुछ हजार सैनिक पर्याप्त हैं, किन्तु यह अमरीका की विशेष स्थिति है, प्रजातन्त्र की नहीं।

स्थितियों की समानता और उससे उत्पन्न होनेवाले व्यवहारों और संस्थाओं द्वारा कोई प्रजातान्त्रिक राष्ट्र सेनाएँ रखने की आवश्यकता से मुक्त नहीं हो जाता है और प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों की सेनाएँ सदा उनके भाग्य पर प्रबल प्रभाव डालती हैं। अतः इस बात का पता लगाना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि जिन व्यक्तियों से इन सेनाओं का निर्माण किया जाता है, उनकी स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ क्या होती हैं।

कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में, विशेषतः उन राष्ट्रों में, जहाँ श्रेणी केवल जन्म पर आधारित होती है, सेना में भी वही विषमता विद्यमान रहती है, जो राष्ट्र में विद्यमान रहती है; अफसर सरदार होता है और सैनिक दास होता है, आज्ञा देना एक का स्वाभाविक अधिकार होता है और आज्ञापालन करना दूसरे का कर्त्तव्य होता है। अतः कुलीनतान्त्रिक सेनाओं में निजी सैनिक की महत्वाकांक्षा अत्यन्त संकीर्ण सीमाओं में आबद्ध होती है। अफसर की महत्वाकांक्षा का विस्तार भी असीमित नहीं होता। एक कुलीनतान्त्रिक संस्था न केवल राष्ट्र की श्रेणियों के क्रम का अंग होती है, प्रत्युत स्वयं उसमें ही श्रेणियों के क्रम का एक भाग निहित होता है: जिन सदस्यों द्वारा उसकी रचना होती है, वे एक विशिष्ट और अपरिवर्तनीय ढंग से एक के ऊपर दूसरे रखे होते हैं। इस प्रकार रेजिमेंट और कम्पनी के सेनापतित्व का निश्चय जन्म के ही आधार पर होता है और वे जब एक बार अपनी आशाओं के चरम लक्ष्य तक पहुँच जाते हैं, तब वे स्वेच्छापूर्वक रुक जाते हैं और अपने भाग्य से सन्तुष्ट रहते हैं।

उसके निजी अधिकार से उसके पास रहती हैं और वह घर छोडे विना ही उसका सुखोपभोग करता है।

प्रजातान्त्रिक सेनाओं मे समस्त सैनिक अफसर बन सकते है, जिससे पदोन्नति की आकाक्षा सामान्य बन जाती है और सैनिक महत्त्वाकाक्षा की सीमाएँ अपरिमेय रूप से बढ जाती हैं। जहाँ तक अफसर का सम्बन्ध होता है, एक पद से ऊपर दूसरे पद से उसे स्वाभाविक और आवश्यक रूप से रोकने वाली कोई वस्तु नहीं दिखायी देती और प्रत्येक उच्चतर पद उसकी दृष्टि मे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि उसका सामाजिक पद प्राय. सदा ही उसके सैनिक पद पर निर्भर करता है। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे बहुधा ऐसा होता है कि अफसर के पास उसके वेतन के अतिरिक्त और कोई सम्पत्ति नहीं होती, सैनिक सम्मान के अतिरिक्त और कोई प्रतिष्ठा नहीं होती, फलस्वरूप जैसे-जैसे उसके कर्त्तव्यो मे परिवर्तन होता है, वैसे-वैसे उसकी सम्पत्ति मे भी परिवर्तन होता है और यह कहा जा सकता है कि वह एक नया व्यक्ति बन जाता है। इस प्रकार कुलीनतान्त्रिक सेनाओ मे जो वस्तु उसकी स्थिति से सम्बद्ध मात्र थी, वह इस प्रकार मुख्य बात अर्थात् उसकी समस्त स्थिति का ही आधार बन गयी है।

पुराने फ्रासीसी राजतत्र मे अफसरो को सदा उनकी अभिजातवशीय उपाधियो से सम्बोधित किया जाता था, अब उन्हे सदा उनके सैनिक पद की उपाधि से सम्बोधित किया जाता है। भाषा के स्वरूप मे यह तुच्छ परिवर्तन यह प्रमाणित करने के लिये पर्याप्त है कि समाज और सेना की रचना मे एक महान क्राति हो गयी है।

प्रजातान्त्रिक सेनाओं मे पदोन्नति की इच्छा प्राय. सर्वव्यापिनी होती है, वह प्रबल, दृढ और शाश्वत होती है, उसे अन्य समस्त इच्छाओ से शक्ति प्राप्त होती है और वह स्वय जीवन के साथ ही समाप्त होती है, किन्तु इस बात को देखना सरल है कि विश्व की समस्त सेनाओ मे से प्रजातान्त्रिक देशो की सेनाओं मे शाति-काल में पदोन्नति की गति मन्दतम होती है। चूँकि कमिशनों की सख्या स्वभावतः सीमित होती है, जबकि प्रतिद्वन्द्वियों की सख्या प्राय. असीमित होती है और चूँकि समानता का कठोर कानून सब पर समान रूप से लागू होता है, इसलिए कोई व्यक्ति तीव्र प्रगति नहीं कर सकता—अनेक व्यक्ति तो तनिक भी प्रगति नहीं कर सकते। इस प्रकार उन्नति की आकाक्षा अधिक और उन्नति के सुअवसर अन्य स्थानों की अपेक्षा कम होते हैं। फलस्वरूप प्रजातान्त्रिक सेना की समस्त महत्त्वाकाक्षापूर्ण भावनाएँ युद्ध के लिए प्रबल कामना करती हैं,

क्योंकि युद्ध से स्थान रिक्त होते हैं और उसमे वरिष्ठता के उस कानून का उल्लघन करना पड़ता है, जो प्रजातंत्र का एकमात्र स्वाभाविक विशेषाधिकार होता है।

इस प्रकार हम इस महत्त्वपूर्ण परिणाम पर पहुँचते है कि प्रजातान्त्रिक सेनाएँ समस्त सेनाओ से अधिक युद्ध की प्रबल कामना करती हैं और प्रजातान्त्रिक राष्ट्र समस्त राष्ट्रों से अधिक शातिप्रिय होते हैं; और जो बात इन तथ्यो को और अधिक असाधारण बना देती है, वह यह है कि ये विपरीत प्रभाव एक ही समय समानता के सिद्धान्त द्वारा उत्पन्न होते हैं।

समुदाय के समस्त सदस्यो के एक समान होने के कारण वे अपनी स्थिति में परिवर्तन करने और अपनी दशा मे सुधार करने की निरन्तर कामना करते रहते हैं और उन्हे इसकी सम्भावना भी दिखाई देती है। यह बात उन्हे शातिप्रिय बनाती है, जो उद्योग के लिए अनुकूल होती है और इससे प्रत्येक व्यक्ति अपने निजी छोटे-छोटे कार्य को पूर्ण करने का अवसर प्राप्त करता है। दूसरी ओर, इसी समानता से सैनिक रणक्षेत्रो का स्वप्न देखने लगते हैं, क्योंकि यह समानता सैनिको की दृष्टि मे सैनिक सम्मानों का मूल्य बढा देती है और उन सम्मानो को सभी की पहुँच के अन्तर्गत ला देती है। इन दोनो स्थितियो मे हृदय की अशाति एक ही रहती है, सुखोपभोग की इच्छा उतनी ही महान रहती है—केवल उसे तृप्त करने के साधन भिन्न-भिन्न होते हैं।

राष्ट्र और सेना की ये विरोधी प्रवृत्तियाँ प्रजातान्त्रिक समुदायो के लिए अत्यन्त खतरनाक होती हैं। जब जनता सैनिक भावना का परित्याग कर देती है, तब तत्काल ही सैनिक वृत्ति का सम्मान करना बन्द कर दिया जाता है और सैनिको को सरकारी कर्मचारियो की निम्नतम श्रेणी में गिना जाने लगता है। उनका तनिक भी सम्मान नहीं किया जाता और उनकी बातों को समझा नहीं जाता। तब कुलीनतान्त्रिक युगो मे जो कुछ होता है, उसकी उल्टी बात होती है; सेना मे प्रवेश करने वाले व्यक्ति उच्चतम श्रेणी के नहीं, प्रत्युत निम्नतम श्रेणी के होते हैं। सैनिक महत्त्वाकाक्षा को तभी स्वीकार किया जाता है, जब अन्य कोई महत्त्वाकाक्षा सम्भव नहीं रहती। अतः कारण और परिणाम का एक ऐसा चक्र उत्पन्न होता है जिससे बच निकलना कठिन होता है। राष्ट्र का सर्वोत्तम भाग सैनिक वृत्ति को पसन्द नहीं करता, क्योकि उस वृत्ति का सम्मान नहीं किया जाता और सैनिक वृत्ति का सम्मान इसलिए नहीं किया जाता कि राष्ट्र के सर्वोत्तम भाग ने उसका परित्याग कर दिया है।

अतः यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि प्रजातान्त्रिक सेनाएँ बहुधा अशात, बुरे स्वभाव वाली और अपनी स्थिति से असन्तुष्ट होती हैं, यद्यपि इनकी भौतिक स्थिति अन्य देशों की अपेक्षा बहुत अच्छा है और उनका अनुशासन कम कठोर होता है। सैनिक अनुभव करता है कि उसकी स्थिति निम्नतर कोटि की है, और उसका घायल अहकार या तो युद्ध के प्रति उसकी रुचि में वृद्धि करता है जिससे उसकी सेवाएँ आवश्यक हो जायगी या उसमें क्राति की इच्छा उत्पन्न करता है, जिसमे वह शस्त्र-बल द्वारा राजनीतिक प्रभाव और व्यक्तिगत महत्त्व प्राप्त करने की आशा कर सकता है, जिनसे सम्प्रति उसे वचित कर दिया गया है।

प्रजातान्त्रिक सेनाओं का गठन इस अन्तिम खतरे को बहुत अधिक भयकर बना देता है। प्रजातान्त्रिक समुदायो मे प्रायः प्रत्येक व्यक्ति के पास कुछ सम्पत्ति होती है, जिसकी वह रक्षा करना चाहता है, किंतु प्रजातान्त्रिक सेनाओं का नेतृत्व करने वाले व्यक्ति सामान्यतः सम्पत्तिहीन होते हैं, जिनमे से अधिकाश भाग स्वभावतः कुलीनतान्त्रिक युगों की अपेक्षा क्रातियो से बहुत अधिक भयभीत रहता है, किन्तु सेना के नेता उनसे अपेक्षाकृत बहुत कम भयभीत रहते हैं।

इसके अतिरिक्त (जैसा कि मैं अभी कह चुका हूँ), चूँकि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे समृद्धतम, सर्वाधिक शिक्षित, और योग्यतम व्यक्ति सैनिक वृत्ति को बहुत कम ग्रहण करते हैं, इसलिए सेना, सामूहिक रूप से, अन्ततोगत्वा स्वय एक राष्ट्र बन जाती है, जहाँ सम्पूर्ण राष्ट्र की अपेक्षा मस्तिष्क का विस्तार कम होता है, आदते अधिक अपरिष्कृत होती हैं। अब, इस छोटे असभ्य राष्ट्र के अधिकार मे शस्त्रास्त्र होते हैं और उनका प्रयोग करने का ढग केवल उसे ही ज्ञात होता है, इसलिए निश्चय ही समाज के शातिप्रिय स्वभाव के कारण सेना की सैनिक और अशात भावना से प्रजातान्त्रिक जनता के लिए खतरा बढ जाता है। युद्ध-विमुख राष्ट्र मे सेना से बढ कर खतरनाक वस्तु दूसरी कोई नहीं होती, शाति के लिए समस्त समाज के अत्यधिक प्रेम के कारण सविधान सदा सैनिको की मर्जी पर कायम रहता है।

अतः सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि यदि प्रजातान्त्रिक राष्ट्र अपने हितों और अपनी प्रवृत्तियो के कारण स्वभावतः शाति की कामना करने वाले होते हैं, तो उनकी सेनाएँ उन्हे निरन्तर युद्ध और क्राति के निकट लाती रहती हैं। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में सैनिक क्रातियों का, जिनकी आशका कुलीनतन्त्रों मे बहुत कम रहती है, भय सदा बना रहता है। उनके भावी भाग्य को सकटापन्न

बनाने वाले खतरों में इन खतरों को भयंकरतम समझा जाना चाहिए और इस खतरे को दूर करने का उपाय ढूँढने पर राजनेताओं को निरन्तर ध्यान देना चाहिए।

जब कोई राष्ट्र यह देखता है कि वह भीतर से अपनी सेना की व्यग्र महत्त्वाकाक्षा से प्रभावित हो गया है, तब सर्वप्रथम विचार यह उत्पन्न होता है कि युद्ध प्रारम्भ कर इस असुविधाजनक महत्त्वाकाक्षा को कोई एक लक्ष्य प्रदान किया जाय। मैं युद्ध के सम्बन्ध मे कोई बुरी बात नहीं कहना चाहता : युद्ध लगभग सदा ही जनता के मस्तिष्क का विस्तार करता है तथा उसके चरित्र को ऊपर उठाता है। कुछ मामलों मे स्थितियो की समानता से स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होने वाली कतिपय प्रवृत्तियों की आत्यन्तिक बाढ को रोकने का वह एकमात्र साधन होता है और प्रजातान्त्रिक समुदायों मे जो कतिपय बद्धमूल बुराइयॉ होती है, उन्हें दूर करने का उसे एक आवश्यक उपाय समझा जाना चाहिये।

युद्ध से बड़े-बड़े लाभ होते है, किन्तु हमे यह न समझ लेना चाहिए कि इससे वह खतरा कम हो सकता है, जिसका मैंने अभी उल्लेख किया है। इससे वह खतरा स्थगित मात्र हो जाता है और युद्ध के समाप्त हो जाने पर पुनः अधिक भयंकर रूप मे उपस्थित हो जाता है, क्योकि सैनिक विजयों का रसास्वादन कर लेने के पश्चात् सेनाए शाति के प्रति बहुत अधिक अधीर हो जाती हैं। युद्ध केवल उसी जाति के लिए उपचार का काम दे सकता है, जो सदा सैनिक विजय के लिए प्यासी होती है।

मै इस बात की पूर्व कल्पना करता हूँ कि महान प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो में प्रकट होने वाले समस्त सैनिक शासकों के लिए विजयोपरान्त अपनी सेनाओ को शातिप्रिय बनाने की अपेक्षा अपनी सेनाओ द्वारा विजय प्राप्त करना सरल कार्य होगा। दो बाते ऐसी हैं, जो प्रजातान्त्रिक जनता के लिए सदा ही अन्यन्त कठिन सिद्ध होंगी। वे दोनो बाते निम्नलिखित हैं—युद्ध प्रारम्भ करना और उसे समाप्त करना

पुनः, यदि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो को युद्ध से कुछ विशेष लाभ प्राप्त होते हैं, तो दूसरी ओर वह उनके लिए कुछ खतरे भी पैदा करता है, जिससे समान मात्रा मे डरने के लिए कुलीनतत्रो को कोई कारण नहीं होता। मै इनमे से केवल दो खतरो का उल्लेख करूँगा।

यद्यपि युद्ध सेना को सन्तुष्ट करता है, तथापि वह उन असख्य व्यक्तियों को कठिनाई मे और बहुधा कष्ट मे डाल देता है, जिनकी छोटी-छोटी भावनाओं

की परितुष्टि के लिए प्रतिदिन शांति की आवश्यकता होती है। इस प्रकार इस बात का कुछ-कुछ खतरा रहता है कि जिस अशांति को रोकने के लिए युद्ध प्रारम्भ किया जाता है, वही अशांति एक दूसरे रूप मे उत्पन्न हो जायगी।

कोई भी दीर्घकालीन युद्ध प्रजातान्त्रिक देश की स्वतन्त्रता को खतरे मे डाल देता है। निश्चय ही ऐसी बात नहीं है कि प्रत्येक विजय के पश्चात् इस बात की आशंका रहती है कि विजयी सेनापति बल प्रयोग द्वारा उसी प्रकार सर्वोच्च सत्ता पर अधिकार कर लेगे, जिस प्रकार साइला और सीजर ने किया था। खतरा एक दूसरे ही प्रकार का होता है। युद्ध के परिणामस्वरूप सदा ही प्रजातान्त्रिक समुदायो मे सैनिक शासन की स्थापना नहीं हुआ करती, किन्तु वह सदा ही नागरिक सरकार के अधिकारो मे अपरिमित वृद्धि कर देता है और प्रायः अनिवार्य रूप से समस्त व्यक्तियों का ध्यान और समस्त वस्तुओं का प्रबन्ध प्रशासन के हाथो मे केंद्रित हो जाता है। यदि वह आकस्मिक हिंसा द्वारा निरंकुशता को जन्म नही देता, तो वह मनुष्यों को उनकी आदतों द्वारा अधिक प्रच्छन्न रूप से इसके लिए तैयार करता है। किसी प्रजातान्त्रिक राष्ट्र की स्वतन्त्रता को नष्ट करने का प्रयत्न करनेवाले समस्त व्यक्तियो को जानना चाहिये कि इसका सर्वोत्तम और न्यूनतम समय लेनेवाला साधन युद्ध है। विज्ञान की यह प्रथम स्वयं-सिद्धि है।

जब सैनिको और अफसरो की महत्त्वाकाक्षा चिन्ताजनक बन जाती है, तब एक प्रत्यक्ष उपाय यह प्रतीत होता है कि सेना का विस्तार कर वितरित किये जाने वाले कमिशनो की संख्या बढा दी जाय। इससे अस्थायी राहत मिल जाती है, किन्तु यह भविष्य मे किसी समय देश को और बडी कठिनाइयों मे डाल देता है। कुलीनतान्त्रिक समुदाय मे सेना-वृद्धि का स्थायी प्रभाव हो सकता है, क्योकि वहाँ सैनिक महत्त्वाकाक्षा एक वर्ग के व्यक्तियों तक ही सीमित होती है और प्रत्येक व्यक्ति की महत्त्वाकाक्षा एक सीमा पर पहुँच कर रुक जाती है, जिससे उसके प्रभाव का अनुभव करने वाले समस्त व्यक्तियों को सन्तुष्ट करना सम्भव हो सकता है, किन्तु प्रजातान्त्रिक समाज मे सेना मे वृद्धि करने से कोई लाभ नहीं होता, क्योकि जिस अनुपात मे सेना मे वृद्धि होती है, ठीक उसी अनुपात मे महत्त्वाकाक्षी व्यक्तियो की संख्या मे भी सदा वृद्धि होती है। नये कमिशनों का निर्माण कर जिन व्यक्तियों के दावो को पूरा कर दिया जाता है, उनका स्थान तत्काल ही ऐसे अगणित व्यक्ति ग्रहण कर लेते हैं, जिन्हे सन्तुष्ट किया ही नहीं जा सकता और जिन्हे सन्तुष्ट कर दिया जाता है, वे भी

शीघ्र ही और अधिक उन्नति की कामना करने लगते हैं, क्योंकि सेना की श्रेणियों में वही उत्तेजना व्याप्त रहती है और मनुष्य एक निश्चित श्रेणी व्याप्त करने की नहीं, प्रत्युत निरन्तर उन्नति करते रहने की इच्छा रखते हैं। यद्यपि ये आकांक्षाएँ बहुत बड़ी नहीं हो सकती हैं, तथापि उनकी पुनरावृत्ति निरन्तर होती रहती है। इस प्रकार प्रजातांत्रिक राष्ट्र अपनी सेना में वृद्धि कर केवल कुछ समय के लिए ही सैनिकों की महत्त्वाकांक्षा को दूर करता है। यह महत्त्वाकांक्षा शीघ्र ही प्रबलतर बन जाती है, क्योंकि उसका अनुभव करनेवाले व्यक्तियों की संख्या बढ़ जाती है।

मेरा मत है कि अशांत और उग्र भावना एक ऐसी बुराई है, जो प्रजातांत्रिक सेनाओं के गठन में ही अन्तर्निहित है और जिसके दूर होने की कोई भी आशा नहीं है। प्रजातंत्रों के विधायकों को किसी ऐसे सैनिक संगठन का निर्माण करने की आशा नहीं करनी चाहिए, जो अपने प्रभाव द्वारा सैनिक पेशे को शांत एवं नियंत्रित करने की क्षमता रखता हो। उद्देश्य की पूर्ति के पहले ही उनके प्रयासों की शक्ति समाप्त हो जायगी।

बडी सेना सदा ही बहुत बड़े खतरे का कारण बनी रहेगी। उस खतरे को दूर करने का सबसे प्रभावशाली साधन यह होगा कि सेना को घटा दिया जाय, किंतु यह एक ऐसा उपाय है, जिसे काम मे लाने की क्षमता सभी राष्ट्रों मे नहीं होती।

५०. किन कारणों से प्रजातांत्रिक सेनाएँ युद्ध के आरम्भ में अन्य सेनाओं की अपेक्षा अधिक कमजोर और दीर्घकालीन युद्ध के बाद अधिक अजेय होती हैं।

दीर्घकालीन शाति के बाद, किसी युद्ध के प्रारम्भ मे, किसी भी सेना के लिए पराजित हो जाने का खतरा बना रहता है, दीर्घकाल से युद्ध मे रत किसी भी सेना की विजय की प्रबल सम्भावनाएँ रहती हैं। यह सत्य प्रजातात्रिक सेनाओं के सम्बन्ध मे विशेष रूप से चरितार्थ होता है। कुलीनतात्रिक देशों मे सैनिक जीवन चूँकि विशेषाधिकारपूर्ण जीवन होता है, इसलिए शातिकाल मे भी उसे सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। महान प्रतिभा, महान गुणो और महान महत्त्वाकाक्षा वाले व्यक्ति उसे ग्रहण करते हैं, सेना सभी मामलों मे राष्ट्र के समान स्तर पर और बहुधा उससे ऊपर होती है।

इसके विपरीत हमने देखा है कि प्रजातात्रिक राष्ट्रों मे राष्ट्र के श्रेष्ठतर मस्तिष्क धीरे-धीरे सैनिक वृत्ति से दूर होते जाते हैं और अन्य मार्गों द्वारा प्रतिष्ठा, शक्ति और विशेषतः सम्पत्ति अर्जित करने का प्रयास करते हैं। दीर्घकालीन शाति के बाद—और प्रजातात्रिक युगो मे शाति की अवधि लम्बी होती है—सेना सदा स्वय देश से निम्नतर स्तर की होती है। उस स्थिति मे उसे सक्रिय सेवा के लिए बुलाया जाता है, और यदि युद्ध द्वारा इस स्थिति मे परिवर्तन न हो जाय, तो देश के लिए तथा सेना के लिए भी खतरा रहता है।

मैने दिखाया है कि प्रजातात्रिक सेनाओं मे और शाति के समय मे, वरिष्ठता का नियम पदोन्नति का सर्वोच्च और अपरिवर्तनीय कानून होता है। जैसा कि मै पहले मत व्यक्त कर चुका हूँ, यह न केवल इन सेनाओं की गठन-पद्धति का, प्रत्युत जनता के गठन का परिणाम होता है और उसकी पुनरावृत्ति सदा होती रहेगी।

पुनः, चूँकि इन राष्ट्रो मे अफसर की स्थिति पूर्णतः उसकी सैनिक स्थिति

पर निर्भर करती है और चूँकि उसे जो प्रतिष्ठा एवं योग्यता प्राप्त होती है, वह उसी स्रोत से प्राप्त होती है, इसलिए वह अपने पेशे से अवकाश नहीं ग्रहण करता अथवा जब तक वह जीवन के अन्त के अत्यन्त निकट नहीं पहुँच जाता, तब तक आयु के कारण उससे निवृत्त नहीं होता। इन दो कारणों का परिणाम यह होता है कि जब कोई प्रजातान्त्रिक राष्ट्र दीर्घकालीन शान्ति के बाद युद्धलिप्त होता है, तब सेना के समस्त प्रमुख अफसर वृद्ध व्यक्ति होते हैं. मैं केवल जनरलों की नहीं, प्रत्युत गैरकमिशन अफसरों की बात भी कह रहा हूँ, जिनमें से अधिकांश या तो स्थिर रहे हैं या धीरे-धीरे ही आगे बढ़े हैं। इस बात को आश्चर्य के साथ देखा जा सकता है कि प्रजातान्त्रिक सेना में, दीर्घकालीन शान्ति के बाद, समस्त सैनिक 'छोकरे' मात्र होते हैं और सभी बड़े-बड़े अफसर वृद्ध होते हैं, जिससे सैनिकों में अनुभव की और अफसरों में उत्साह की कमी होती है। यह पराजय का एक प्रमुख कारण होता है, क्योंकि सफल सेनापतित्व की प्रथम शर्त युवावस्था होती है; यदि आधुनिक युग के महानतम कमान ने यह मत व्यक्त न किया होता, तो मैं ऐसा करने का साहस नहीं करता।

से कम वह ऐसी जीवन-पद्धति ग्रहण कर लेता है जो उसे विजय के लिए अनुपयुक्त बना देती है।

कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में सेना के व्यवहारों पर नागरिक जीवन के सुखों का कम प्रभाव पडता है, क्योंकि उन राष्ट्रों में कुलीन वर्ग सेना का नेतृत्व करता है और कुलीनतंत्र विलासमय आनन्दों में चाहे जितना भी अधिक क्यों न डूबा हुआ हो, वह सदा अपने कल्याण की भावनाओं के अतिरिक्त दूसरी भावनाएँ भी रखता है और इन भावनाओं को पूर्णरूप से सन्तुष्ट करने के लिए उसके निजी कल्याण की भावना का तत्परतापूर्वक बलिदान कर दिया जायगा।

मैंने बताया है कि शातिकाल में प्रजातान्त्रिक सेनाओं में पदोन्नति की गति अत्यन्त मन्द होती है। पहले अफसर इस स्थिति का समर्थन अधीरता के साथ करते हैं, वे उत्तेजित होते हैं, अशात होते हैं, कष्ट का अनुभव करते हैं, किंतु अंत में उनमें से अधिकाश इसे स्वीकार कर लेते हैं। जिनकी महत्त्वाकाक्षा और साधन-स्रोत सबसे अधिक होते हैं, वे सेना का परित्याग कर देते हैं, अन्य सैनिक अपनी रुचियों और इच्छाओं को अपनी नगण्य सम्पत्ति के उपयुक्त बनाते हुए, अन्ततोगत्वा सैनिक पेशे को नागरिक दृष्टिकोण से देखने लगते हैं। वे इसमें जिस गुण को सर्वाधिक मूल्यवान समझते हैं, वह इसके साथ सम्बद्ध योग्यता और सुरक्षा होती है। भविष्य के सम्बन्ध में उनकी सारी धारणा इस तुच्छ प्रावधान की निश्चितता पर आधारित होती है और उन्हें केवल शातिपूर्वक इसका आनन्द लेने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार दीर्घकालीन शाति न केवल सेना में बूढ़े व्यक्तियों की भरमार कर देती है, प्रत्युत बहुधा उन व्यक्तियों में भी वृद्धों के विचार भर देती है, जो अभी तक जीवन की यौवनावस्था में होते हैं।

मैंने यह भी बताया है कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में शाति-काल में सैनिक पेशे को तनिक भी सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता तथा उसे अत्यल्प उत्साह के साथ ग्रहण किया जाता है। जनता के समर्थन का यह अभाव सेना को अत्यधिक निरुत्साह कर देता है, यह सैनिकों के मस्तिष्कों को दबा देता है और जब आखिर में यह प्रारम्भ हो ही जाता है, तब वे अपनी प्रेरणा और उत्साह को तत्काल पुन नहीं प्राप्त कर सकते। कुलीनतान्त्रिक सेनाओं में नैतिक दुर्बलता का इस प्रकार का कोई कारण नहीं होता, वहाँ अफसरों को स्वय उनकी दृष्टि में या उनके देशवासियों की दृष्टि में कभी निम्न नहीं समझा जाता, क्योंकि सैनिक महानता से स्वतंत्र वे व्यक्तिगत रूप से भी महान होते हैं,

किन्तु यदि इन दोनो प्रकार की सेनाओं पर शांति का एक ही प्रकार का प्रभाव पड़े, तो भी परिणाम भिन्न-भिन्न होंगे।

जब कुलीनतांत्रिक सेनाओ के अफसरों की युद्ध-भावना तथा युद्ध द्वारा अपने को ऊपर उठाने की इच्छा समाप्त हो जाती है, तब भी उनमे अपने वर्ग के सम्मान के प्रति आदर की एक भावना तथा उदाहरण प्रस्तुत करने मे सब से आगे होने की एक पुरानी आदत बनी रहती है, किन्तु जब किसी प्रजातांत्रिक सेना के अफसरों मे युद्ध के प्रति प्रेम और शस्त्रास्त्रो की महत्त्वाकांक्षा नहीं रह जाती, तब उनके पास कुछ भी नही बच रहता।

अतः, मेरा मत है कि जब कोई प्रजातांत्रिक राष्ट्र दीर्घकालीन शांति के बाद किसी युद्ध मे रत होता है, तो अन्य किसी भी राष्ट्र की अपेक्षा उसकी पराजय का खतरा बहुत अधिक रहता है, किन्तु उसे अपनी पराजयो से हतोत्साह नहीं होना चाहिए, क्योंकि युद्ध के दीर्घ काल तक चलने-से इस प्रकार की सेना की सफलता की सम्भावनाएँ बढ जाती हैं। जब युद्ध के जारी रहने से अन्त में समस्त समाज की भावनाएँ उत्तेजित हो उठती हैं और वह अपने शांतिपूर्ण क्रियाकलापो का परित्याग कर देता है तथा उसके छोटे-छोटे व्यवसाय नष्ट हो जाते हे, तब वे ही भावनाएँ युद्ध की ओर उन्मुख हो जाती हैं, जिनके कारण प्रजातांत्रिक समाज शांति की रक्षा को इतना अधिक महत्त्व प्रदान करता है। जब युद्ध व्यवसाय की समस्त पद्धतियो को नष्ट कर डालता है, तब स्वय सबसे बडा और एकमात्र व्यवसाय बन जाता है, जिसकी ओर समानता-जनित समस्त प्रबल और महत्त्वाकांक्षपूर्ण इच्छाएँ उन्मुख हो जाती हैं। इस प्रकार वे ही प्रजातांत्रिक राष्ट्र, जो युद्ध-रत होने के लिए इतने अधिक अनिच्छुक रहते हैं, एकबार जब रणक्षेत्र मे प्रविष्ट हो जाते हैं, तब कभी-कभी महान सफलताएँ प्राप्त करते हैं।

जब युद्ध जनता के ध्यान को अधिकाधिक आकृष्ट करता है और जब वह अल्प अवधि में ही उच्च प्रतिष्ठा और महान सम्पत्ति प्रदान करनेवाला समझा जाने लगता है, तब राष्ट्र के सर्वोत्कृष्ट व्यक्ति सैनिक-पेशे मे प्रवेश करते हैं; तब न केवल कुलीनतन्त्र के, प्रत्युत समस्त देश के अव्यवसायी, अभिमानी और सैनिक मस्तिष्क इस दिशा मे मुड जाते हैं। चूँकि सैनिक सम्मानों के लिए प्रतिद्वन्द्वियो की संख्या अत्यधिक होती है और युद्ध प्रत्येक व्यक्ति को उसके समुचित स्तर पर ले जाता है, इसलिए महान सेनापतियों का प्रकट होना सदा ही सुनिश्चित रहता है। दीर्घकालीन युद्ध का प्रजातांत्रिक सेना पर वही प्रभाव

पडता है, जो प्रभाव जनता पर क्रांति का पडता है, वह नियमों को छिन्नभिन्न कर देता है और असाधारण व्यक्तियो को सामान्य स्तर से ऊपर उठने का सुअवसर प्रदान करता है। जिन अफसरो के शरीर और मस्तिष्क युद्धकाल में वृद्ध हो चुके होते हैं, उन्हे हटा दिया जाता है अथवा उन्हे वृद्धता के कारण सेवा-निवृत्त कर दिया जाता है, या वे मर जाते हैं। उनके स्थान पर युवको का एक समूह आगे आता है, जिनके शरीर पहले से ही पुष्ट तथा जिनकी इच्छाए सक्रिय युद्ध से विस्तृत एव प्रज्वलित हो गयी रहती हैं। वे हर प्रकार के विघ्न को पार कर उन्नति करने के लिए, शाश्वत उन्नति करने के लिए कृतसकल्प रहते हे, उनके बाद इसी प्रकार की भावनाएँ और इच्छाएँ रखने वाले अन्य व्यक्ति होते हैं और इनके बाद भी अन्य व्यक्ति होते हे, जिनकी सख्या सेना के आकार के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु से सीमित नहीं होती। समानता का सिद्धान्त सभी के लिए महत्त्वाकाक्षा का द्वार खोल देता है और मृत्यु सभी के लिए महत्त्वाकाक्षा का अवसर प्रदान करती है। मृत्यु सैनिकों की सख्या को निरतर कम करती रहती है, जिससे स्थान रिक्त होते रहते हैं और सैनिक जीवन के द्वार बन्द होते और खुलते रहते हैं। इसके अतिरिक्त, सैनिक स्वरूप और प्रजातत्रों के स्वरूप मे एक गुप्त सम्बंध होता है, जिसे युद्ध प्रकाश मे लाता है। प्रजातात्रिक व्यक्ति स्वभावत. अभीप्सित वस्तु को प्राप्त करने तथा सरल शर्तों पर उसका सुखोपभोग करने की प्रबल आकाक्षा रखते हैं। वे अधिकाशत सयोग की पूजा करते हैं और कठिनाइयों की अपेक्षा मृत्यु से बहुत कम भयभीत रहते है। वाणिज्य एव उद्योग मे वे इसी भावना से काम लेते हैं और यही भावना जब उनके साथ रणक्षेत्र मे पहुँचती है, तब यह एक क्षण मे ही सफलता के पुरस्कार प्राप्त करने के लिए उन्हे स्वेच्छापूर्वक प्राणोत्सर्ग कर देने के लिए प्रेरित करती है। प्रजातात्रिक जनता की कल्पना को सैनिक महानता, जो स्पष्ट एव आकस्मिक आभा वाली महानता होती है, जो बिना श्रम के प्राप्त होती है और जिसके लिए जीवन को छोड कर अन्य किसी वस्तु को खतरे मे नहीं डालना पड़ता, जितनी सुखकर प्रतीत होती है, उतनी सुखकर अन्य कोई भी महानता नहीं प्रतीत होती।

इस प्रकार, जबकि प्रजातात्रिक समाज के सदस्यों के हित और उनकी रुचियॉ उन्हें युद्ध से विमुख बनाती हैं, उनके मस्तिष्क की आदते उन्हे युद्ध का सचालन भलीभॉति करने की योग्यता प्रदान करती हे, जब वे अपने व्यवसाय और अपने सुखों से जाग उठते हैं, तब वे शीघ्र ही अच्छे सैनिक बन जाते हैं।

यदि शाति प्रजातान्त्रिक सेनाओ के लिए विशेषरूप से हानिकारक होती है, तो युद्ध उन्हें ऐसे लाभ प्रदान करता है, जो अन्य सेनाओ को कभी प्राप्त नहीं होते और प्रारम्भ मे इन लाभो का अनुभव चाहे जितना कम किया जाय, अन्त मे वे प्रजातान्त्रिक सेनाओ को विजयी बना कर ही रहते है। जो कुलीनतान्त्रिक राष्ट्र किसी प्रजातान्त्रिक राष्ट्र के साथ युद्ध मे प्रारम्भ मे ही उसे नष्ट कर देने मे सफल नहीं होता, उसे प्रजातान्त्रिक राष्ट्र द्वारा परास्त हो जाने का महान खतरा सदा बना रहता है।

५१. प्रजातांत्रिक समुदायों में युद्ध पर कतिपय विचार

जब समानता का सिद्धान्त न केवल एक राष्ट्र मे, प्रत्युत अनेक पडोसी राष्ट्रो में एक ही समय फैल रहा हो, जैसा कि सम्प्रति यूरोप मे हो रहा है, तब भी इन विभिन्न देशो के निवासी भाषा, रीतिरिवाजों और कानूनो की विषमता के बावजूद, युद्ध से समान रूप से डरते रहते हैं और शाति से सामान्य रूप से प्रेम रखते हैं। इस मामले मे वे एक दूसरे के समान रहते हे, राजा महत्त्वाकाक्षा अथवा क्रोध के वशीभूत होकर व्यर्थ ही शस्त्र ग्रहण करते हैं, वे अपनी इच्छा के बावजूद एक प्रकार की सामान्य उदासीनता और सद्भावना से सतुष्ट हो जाते हैं, जिसके कारण तलवार उनकी पकड़ से गिर पडती है और युद्धों के अवसर दुर्लभ हो जाते हैं।

जब एक ही समय अनेक देशों मे होने वाला समानता का प्रसार उनके विभिन्न निवासियों को एकसाथ ही उद्योग एव वाणिज्य मे लगने के लिए प्रेरित करता है, तब न केवल रुचियों मे समानता आ जाती है, बल्कि उनके हित इस प्रकार एक दूसरे के साथ मिल जाते है कि कोई भी राष्ट्र स्वय सकट मे पड़े बिना दूसरे राष्ट्रो को सकट मे नही डाल सकता, और अन्ततोगत्वा समस्त राष्ट्र युद्ध को एक ऐसी विभीषिका मानने लगते हैं, जो विजेता के लिए भी उतनी ही कष्टदायक होती है, जितनी विजित के लिए।

इस प्रकार, एक ओर प्रजातान्त्रिक युगो मे राष्ट्रों को युद्ध मे फॅसाना अत्यन्त कठिन होता है, किन्तु, दूसरी ओर यह प्रायः असम्भव होता है कि किसी भी दो राष्ट्रों के युद्धरत होने पर शेष राष्ट्र उसमे न सम्मिलित हों। उनके हित एक दूसरे के साथ इतने अधिक मिले होते हैं, उनके मतों और उनकी

आवश्यकताओं में इतना अधिक सादृश्य होता है कि एक के उत्तेजित होने पर अन्य राष्ट्र शांत नहीं रह सकते। अतः युद्धों के अवसर कम हो जाते हैं, किन्तु जब वे प्रारम्भ होते हैं, तो उनका विस्तार व्यापकतर क्षेत्र में हो जाता है।

पड़ोसी प्रजातान्त्रिक राष्ट्र न केवल कुछ मामलों में एक समान बन जाते हैं, प्रत्युत अन्ततोगत्वा प्रायः सभी मामलों में उनमें सादृश्य आ जाता है। युद्धों के सम्बन्ध में राष्ट्रों के इस सादृश्य का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण परिणाम होता है।

जब मैं इस कारण का पता लगाता हूँ कि पन्द्रहवीं शताब्दी में हेल्वेटिक महासंघ से यूरोप के महानतम और अत्यन्त शक्तिशाली राष्ट्र भी क्यों कॉपते रहते थे, जबकि आजकल उस देश की शक्ति ठीक उसकी जनसंख्या के अनुपात में ही है, तब मैं देखता हूँ कि स्विस अपने चारों ओर के समस्त समुदायों के सदृश और चारों ओर के समुदाय स्विसों के सदृश बन गये हैं, जिससे अब चूँकि उनके मध्य एकमात्र अन्तर संख्या-बल का रह गया है, इसलिए विशालतम सेना की आवश्यक रूप से विजय होती है। इस प्रकार यूरोप में हो रही प्रजातान्त्रिक क्रान्ति का एक परिणाम यह हुआ कि समस्त रणक्षेत्रों में संख्या-बल का प्राधान्य हो गया है और छोटे राष्ट्र बड़े राष्ट्रों के साथ मिलने अथवा कम-से-कम उनकी नीति को ग्रहण करने के लिए बाध्य हो गये हैं।

चूँकि संख्या-बल विजय का निर्णायक कारण बन गया है, इसलिए प्रत्येक राष्ट्र को निश्चय ही अपने समस्त साधनों द्वारा यथासम्भव अधिक से अधिक सैनिकों को रणक्षेत्र में लाने का प्रयास करना चाहिए। जिस समय स्विस पदाति सेना अथवा फ्रांसीसी घुड़सवार सेना की भाँति अन्य समस्त सेनाओं से श्रेष्ठ सेना की भर्ती कर सकना सम्भव था, उस समय बहुत बड़ी-बड़ी सेनाओं का निर्माण करना आवश्यक नहीं समझा जाता था, किन्तु जब एक सैनिक दूसरे सैनिक के समान ही कार्यक्षम होता है, तब स्थिति बदल जाती है।

जो कारण इस नयी आवश्यकता को जन्म देता है, वही इसकी पूर्ति के साधन भी प्रस्तुत करता है, क्योंकि जैसा कि मैं पहले ही बता चुका हूँ, जब सभी व्यक्ति एक समान होते हैं, तब सभी निर्बल हो जाते हैं और राज्य की सर्वोच्च शक्ति स्वभावतः अन्य स्थानों की अपेक्षा प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में अधिक प्रबल होती है। अतः जब इन राष्ट्रों में समस्त पुरुष-जनसंख्या को सेना में भर्ती करने की इच्छा होती है, तब उनमें इस लक्ष्य को पूरा करने की शक्ति भी होती है, परिणाम यह होता है कि प्रजातान्त्रिक युगों में जिस अनुपात में युद्ध-प्रेम में कमी आती है, उसी अनुपात में सेनाओं का विस्तार होता प्रतीत होता है।

उन्ही युगों मे उन्हीं कारणो से युद्ध-सचालन की पद्धति मे भी परिवर्तन हो जाता है। मैकियावेली ने 'दि प्रिंस' नामक पुस्तक मे यह मत व्यक्त किया है कि "जिस जाति के नेता कोई राजा और उसके सरदार होते है, उसे पराजित करना उस जाति की अपेक्षा बहुत अधिक कठिन होता है, जिसका नेतृत्व कोई राजा और उसके गुलाम करते हैं।" भावनाओं को ठेस न पहुँचाने के लिए हमे 'गुलामो' के स्थान पर 'सार्वजनिक कर्मचारी' पढ़ना चाहिए और यह महत्त्वपूर्ण सत्य हमारे युग के सम्बन्ध में पूर्ण रूप से लागू होगा।

कोई महान कुलीनतान्त्रिक राष्ट्र अत्यधिक कठिनाई के बिना न तो अपने पडोसियो पर विजय प्राप्त कर सकता है और न उनसे पराजित हो सकता है। वह उन पर इसलिए विजय नहीं प्राप्त कर सकता कि उसकी समस्त सेनाओ को दीर्घकालीन अवधि के लिए एकत्र और एकसाथ नहीं रखा जा सकता, वह पराजित इसलिए नहीं हो सकता कि शत्रु को पग पग पर प्रतिरोध के छोटे-छोटे केन्द्रों का सामना करना पडता है, जिनके द्वारा आक्रमण अवरुद्ध हो जाता है। किसी कुलीनतान्त्रिक राष्ट्र के विरुद्ध युद्ध की तुलना एक पर्वतीय देश मे होने वाले युद्ध से की जा सकती है, जहाँ पराजित दल को अपनी सेनाओं को एकत्र कर नयी स्थिति ग्रहण करने के सुअवसर निरन्तर मिलते रहते हैं।

प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे ठीक इसके विपरीत बात होती है। वे सरलतापूर्वक अपनी समस्त सेना को युद्धक्षेत्र मे ला कर खडी कर देते है और यदि राष्ट्र समृद्ध एव अधिक जनसख्या वाला हुआ, तो वह शीघ्र ही विजयी हो जाता है, किन्तु यदि वह कभी पराजित हो जाता है और उसके क्षेत्र पर आक्रमण हो जाता है तो उसके हाथ मे बहुत कम साधन स्रोत रह जाते हैं और यदि शत्रु राजधानी पर अधिकार कर लेता है, तो राष्ट्र समाप्त हो जाता है। इस बात का स्पष्टीकरण भलीभाँति किया जा सकता है। जब समाज का प्रत्येक सदस्य व्यक्तिगत रूप से विलग एव अत्यन्त शक्तिहीन होता है, तब सम्पूर्ण समाज मे से कोई भी व्यक्ति न तो अपनी रक्षा कर सकता है और न दूसरो को एकत्र कर सकता है। प्रजातान्त्रिक देश मे सरकार के अतिरिक्त कोई भी वस्तु शक्तिशाली नहीं होती, जब सरकार की सैनिक शक्ति सेना के विनाश द्वारा नष्ट हो जाती है, और उसकी नागरिक शक्ति राजधानी पर अधिकार हो जाने से नष्ट हो जाती है, तब केवल शक्तिविहीन अथवा सरकारविहीन जनसमूह मात्र बच रहता है, जो आक्रमणकारी सगठित शक्ति का प्रतिरोध करने की क्षमता नहीं रखता। मै जानता हूँ कि स्थानीय स्वतन्त्रताओ और परिणामतः स्थानीय अधिकारों के

निर्माण द्वारा इस खतरे मे कमी की जा सकती है, किन्तु यह उपाय सदा अपर्याप्त बना रहेगा, क्योंकि इस प्रकार की विपत्ति के बाद न केवल जनता मे युद्ध को जारी रखने की योग्यता नहीं रह जाती, प्रत्युत इस बात की आशंका की जा सकती है कि उसमे इसके लिए प्रयत्न करने की प्रवृत्ति भी नहीं रह जायगी।

सभ्य देशों मे स्वीकृत किये गये राष्ट्रो के कानून के अनुसार युद्ध का उद्देश्य निजी व्यक्तियों की सम्पत्ति पर अधिकार करना नहीं, प्रत्युत राजनीतिक सत्ता पर अधिकार करना मात्र होता है। निजी सम्पत्ति का विनाश केवल कभी-कभी राजनीतिक सत्ता पर अधिकार करने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है।

जब किसी कुलीनतान्त्रिक देश पर उसकी सेना की पराजय के बाद आक्रमण किया जाता है, तब सरदारगण, यद्यपि वे समाज के समृद्धतम सदस्य होते हैं, आत्मसमर्पण करने की अपेक्षा व्यक्तिगत रूप से अपनी रक्षा करना जारी रखेंगे, क्योंकि यदि विजेता देश का अधिपति बना रहा, तो वह उन्हे उनकी राजनीतिक सत्ता से, जिसे वे अपनी सम्पत्ति से भी अधिक चाहते हैं, वंचित कर देगा। अतः वे आत्मसमर्पण करने की अपेक्षा, जो उनके मतानुसार महानतम दुर्भाग्य होता है, लड़ना अधिक पसन्द करते हैं, और वे जनता को सरलतापूर्वक अपने साथ कर लेते हैं, क्योंकि जनता को उनका अनुगमन करने एवं उनकी आज्ञाओं का पालन करने का दीर्घकालीन अभ्यास रहता है और इसके अतिरिक्त उसे युद्ध से कोई खतरा नहीं रहता।

इसके विपरीत जिस राष्ट्र मे स्थितियों की समानता व्याप्त रहती है, उसमे प्रत्येक नागरिक को थोडा सा ही और बहुधा तनिक भी नहीं, राजनीतिक अधिकार प्राप्त होता है: दूसरी ओर समस्त नागरिक स्वतन्त्र होते हैं और सभी के पास कुछ न कुछ खोने के लिए रहता है, वे कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों की जनता की अपेक्षा पराजय से बहुत कम और युद्ध से बहुत अधिक भयभीत रहते हैं। किसी प्रजातान्त्रिक देश के क्षेत्र मे युद्ध के पहुँच जाने पर उसकी जनता को शस्त्र-ग्रहण करने के लिए प्रेरित करना सदा ही अत्यन्त कठिन कार्य रहेगा। अतः इस प्रकार की जनता को अधिकार और राजनीतिक चरित्र प्रदान करना आवश्यक है, जिससे प्रत्येक नागरिक मे उन रुचियों मे से कतिपय रुचियाँ उत्पन्न होगी, जिसके कारण कुलीनतान्त्रिक देशो मे सरदारगण जनकल्याण के लिए कार्यरत होते हैं।

राजाओं और प्रजातांत्रिक राष्ट्रों के अन्य नेताओं को इस बात का विस्मरण कदापि नहीं करना चाहिए कि स्वतंत्रता-प्रेम और स्वतंत्रता की आदत के अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु द्वारा भौतिक कल्याण के प्रति प्रेम और उसकी आदत का सामना लाभपूर्वक नहीं किया जा सकता, स्वतंत्र संस्थाओं से विहीन प्रजातांत्रिक जनता पराजय की स्थिति में पराधीनता के लिए जितनी प्रस्तुत होती है, उससे अधिक प्रस्तुत अन्य किसी वस्तु की मैं कल्पना नहीं कर सकता।

पहले छोटी-छोटी सेनाओं द्वारा युद्ध करने, छोटे छोटे युद्ध लड़ने और दीर्घकालीन नियमित घेराबन्दियाँ करने की प्रथा थी। आधुनिक पद्धति निर्णायक युद्ध करने और ज्योंही सेना के लिए अभियान का मार्ग खुल जाय, त्योंही एक ही प्रहार में युद्ध को समाप्त कर देने के लिए राजधानी की ओर तीव्र गति से बढ़ने की है। कहा जाता है कि नेपोलियन इस नयी पद्धति का आविष्कर्त्ता था; किन्तु इस प्रकार की पद्धति का आविष्कार किसी एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं करता था, चाहे वह व्यक्ति कोई भी हो। नेपोलियन जिस पद्धति से युद्ध-सञ्चालन करता था, उसका ज्ञान उसे उसके युग की सामाजिक स्थिति से प्राप्त हुआ था, वह पद्धति इसलिए सफल हुई कि वह पूर्णरूपेण सामाजिक स्थिति के उपयुक्त थी और उसने सर्वप्रथम इससे काम लिया। सेना के आगे-आगे एक राजधानी से दूसरी राजधानी तक प्रयाण करने वाला नेपोलियन प्रथम सेनापति था, किन्तु सामन्तशाही समाज के विनाश ने उसके लिये मार्ग प्रशस्त कर दिया था। यह विश्वास समुचित रूप से किया जा सकता है कि यदि वह असाधारण व्यक्ति तीन सौ वर्ष पूर्व उत्पन्न हुआ होता, तो उसकी युद्ध-सञ्चालन-पद्धति के वही परिणाम नहीं निकलते अथवा यों कहना चाहिए कि उसने किसी भिन्न पद्धति से काम लिया होता।

स्वीकार करते हैं, जनसख्या का अधिकाश भाग गतिहीन बना रहता है।

किन्तु यदि जनसख्या मे कार्य करने की प्रवृत्ति भी हो, तो उनके मार्ग मे बहुत अधिक बाधाएँ उपस्थित होगी, क्योकि वे ऐसे किसी पुराने और सुस्थापित प्रभाव का आश्रय नहीं ले सकते, जिसकी आज्ञा का पालन करने के लिए वे तैयार हो—असन्तुष्ट तथा अनुशासित व्यक्तियों को भी एकत्र करने एव उनका नेतृत्व करने के लिए कोई सुप्रसिद्ध नेता नहीं होते—राष्ट्र की सर्वोच्च सत्ता के अधीन ऐसे राजनीतिक अधिकार नहीं होते, जो सरकार के विरुद्ध निर्देशित प्रतिरोध को प्रभावशाली समर्थन प्रदान करते हैं।

प्रजातान्त्रिक देशो मे बहुमत की नैतिक शक्ति अपार होती है और उसके अधिकार मे जो भौतिक साधन-स्रोत होते हैं, वे उन भौतिक साधन-स्रोतो से बहुत अधिक होते ह, जिन्हे उसके विरुद्ध उपयोग में लाया जा सकता है। अत. जो दल बहुमत के स्थान पर अधिकार रखता है, उसके नाम पर बोलता है तथा उसकी शक्ति पर अधिकार रखता है, वह समस्त निजी प्रतिरोध पर तत्काल और अप्रतिरोध्य विजय प्राप्त कर लेता है। वह इस प्रकार के विरोध का अस्तित्व भी नहीं रहने देता, वह उसे प्रारम्भ मे ही समाप्त कर देता है।

इस प्रकार के राष्ट्रो मे जो लोग शस्त्र-बल द्वारा क्राति लाने का प्रयत्न नहीं करते, उनके लिए इसके अतिरिक्त दूसरा कोई मार्ग नहीं होता कि वे समस्त सरकारी यत्र पर अकस्मात् ज्यों-का-त्यो अधिकार कर ले और यह कार्य युद्ध की अपेक्षा मात्र एक प्रहार द्वारा अधिक अच्छी तरह से सम्पन्न किया जा सकता है, क्योकि ज्योही नियमित युद्ध प्रारम्भ हो जाता है त्योंही राज्य का प्रतिनिधित्व करने वाले दल की विजय सुनिश्चित हो जाती है।

गृहयुद्ध केवल एक स्थिति मे उत्पन्न हो सकता है। वह स्थिति सेना के दो गुटों मे विभक्त हो जाने की है, जिनमें एक गुट विद्रोह का झण्डा उठा ले और दूसरा गुट वफादार बना रहे। सेना एक छोटे समाज के तुल्य होती है, जिसमे अत्यन्त घनिष्ठ एकता होती है, जिसमे महान जीवन-शक्ति होती है और जिसमे कुछ समय के लिए अपनी निजी आवश्यकताओ की पूर्ति करने की क्षमता होती है। इस प्रकार का युद्ध रक्तरजित हो सकता है, किंतु वह दीर्घकालीन नहीं हो सकता, क्योकि या तो विद्रोही सेना अपने साधन-स्रोतों के प्रदर्शन मात्र से अथवा अपनी प्रथम विजय द्वारा सरकार पर विजय प्राप्त कर लेगी और तत्पश्चात् युद्ध समाप्त हो जायगा या सघर्ष होगा और सेना का वह भाग, जिसे राज्य की सगठित शक्तियो का समर्थन नहीं प्राप्त होगा, या तो

शीघ्र ही अपना विघटन कर लेगा या नष्ट हो जायगा। अतः इस बात को एक सामान्य सत्य के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है कि समानता के युगो मे गृह-युद्ध बहुत कम हो जायेंगे और उनकी अवधि भी कम हो जायगी।

५२. समानता स्वाभाविक रूप से मनुष्यों में स्वतंत्र संस्थाओं के लिए अभिरुचि पैदा करती है।

समानता का सिद्धान्त मनुष्यो को एक दूसरे से स्वाधीन बनाता है और उनमे यह प्रवृत्ति और अभिरुचि उत्पन्न करता है कि वे अपने निजी कार्यो मे, अपनी स्वय की इच्छाशक्ति को छोड़ कर अन्य किसी का मार्गदर्शन स्वीकार नहीं करे। यह सम्पूर्ण स्वाधीनता, जिसका वे अपने समकक्ष लोगो के साथ और निजी जीवन के आचरण मे निरन्तर उपभोग करते हैं, उनमे समस्त सत्ता को ईर्ष्या की दृष्टि से देखने की प्रवृत्ति उत्पन्न करती है, और उनमे शीघ्र ही राजनीतिक स्वतन्त्रता की धारणा और उसके प्रति प्रेम जगाती है। ऐसे युग मे रहनेवाले लोगों मे स्वतत्र सस्थाओ के प्रति स्वाभाविक झुकाव पाया जाता है। इनमे से किसी भी व्यक्ति को ले लीजिए और आपसे हो सके तो अन्तर की गहनतम प्रवृत्तियों की खोज कीजिए, आपको ज्ञात होगा कि वह तुरन्त ही सब तरह की सरकारों मे से उसी सरकार को ध्यान मे लायेगा और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण समझेगा जिसका सर्वोच्च अधिकारी स्वय उसने चुना है और जिसके प्रशासन पर वह नियत्रण कर सकता है।

परिस्थितियों की समानता द्वारा उत्पन्न समस्त राजनीतिक प्रभावों मे सर्वप्रथम यह स्वाधीनता का प्रेम मननशील व्यक्तियों का ध्यान आकर्षित करता है और दुर्बल व्यक्तियो को भयभीत करता है। परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि उन लोगो का यह भय पूर्णतः अकारण है, क्योंकि अराजकता का रूप अन्य देशो की अपेक्षा प्रजातात्रिक देशो मे अधिक भयानक होता है। चूँकि नागरिको का एक-दूसरे पर प्रत्यक्ष कोई प्रभाव नहीं होता, इसलिए प्रतीत होता है कि ज्योही राष्ट्र की सर्वोच्च सत्ता, जिसने अब तक उन्हें अपनी-अपनी जगह पर कायम रखा था, असफल हुई कि अव्यवस्था अपनी चरम सीमा पर पहुँच जायेगी और सब लोग अपनी जगहो से च्युत होकर अलग-अलग दिशाओ की ओर उन्मुख होंगे,

जिससे समाज का ढाचा अवश्य ही तुरन्त ढह जायगा ।

परन्तु मेरा मत है कि प्रजातान्त्रिक युग के लिए अराजकता भय का प्रमुख नहीं, अपितु क्षीणतम विषय है, क्योकि समानता का सिद्धान्त दो प्रवृत्तियॉ उत्पन्न करता है . एक प्रवृत्ति मनुष्य को सीधे स्वतत्रता की ओर अग्रसर करती है और एकाएक उसमे अराजकता उत्पन्न कर सकती है, दूसरी प्रवृत्ति दीर्घ और परोक्ष, परन्तु अधिक निश्चित मार्ग द्वारा उन्हें दासता की ओर ले जाती है। राष्ट्र प्रथम प्रवृत्ति को शीघ्र ही पहिचान लेते हैं और उसका प्रतिरोध करने के लिए तैयार रहते हैं, परन्तु दूसरी प्रवृत्ति उन्हे पथभ्रष्ट कर देती है और वे उसकी गति एव दशा तक नहीं जान पाते । अतः इस प्रवृत्ति पर प्रकाश डालना विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है ।

जहॉ तक मेरा प्रश्न है, मैं समानता के सिद्धान्त पर इस प्रकार का निन्दात्मक दोषारोपण करने को उत्सुक नही हूँ कि वह मनुष्यों को दुराग्रही बनाता है । उल्टे इसी विशेषता की मैं मुख्य रूप से सराहना करता हूँ । यह सिद्धान्त मनुष्य के मस्तिष्क और हृदय मे जिस तरह राजनीतिक स्वाधीनता की अस्पष्ट धारणा और स्वाभाविक प्रेम का आरोपण करता है, मै उसकी प्रशसा करता हूँ, क्योकि वह जो बुराई करता है उसका उपचार भी इस प्रकार प्रस्तुत कर देता है । मैं इसी कारण उसका समर्थन करता हूँ ।

५२. प्रजातांत्रिक राष्ट्रों की सरकार सम्बन्धी धारणाएँ स्वाभाविक रूप से शक्ति के केन्द्रीकरण के अनुकूल हैं

शासक और उसकी प्रजा के मध्य रहने वाली गौण शक्तियों की धारणा स्वभावतः कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रो की कल्पना से उत्पन्न हुई, क्योकि उन समुदायो मे व्यक्ति और परिवारो का स्तर सामान्य से ऊँचा था और स्पष्टतः वे अपनी जन्मजात कुलीनता, शिक्षा और समृद्धि के कारण शासन करने के अधिकारी थे । प्रजातान्त्रिक युग मे प्रतिकूल कारणो से मनुष्य के मस्तिष्क मे स्वभावतः यही धारणा नहीं पायी जाती । उसका प्रवेश केवल कृत्रिम रूप से ही कराया जा सकता है और बड़ी कठिनाई से उसे कायम रखा जा सकता है । इसके विपरीत, मानो इस विषय मे बिना सोचे-विचारे ही जो धारणा उनके मस्तिष्क

मे जन्म लेती है, वह है ऐसी एकमात्र और केन्द्रीय सत्ता की, जो अपने प्रत्यक्ष प्रभाव से सारे समाज पर शासन करती है।

इसके अतिरिक्त राजनीतिक दर्शन और धर्म के विषय मे भी प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों की बुद्धि सरल और सामान्य धारणाओं को अपनाने को प्रस्तुत रहती है। जटिल पद्धतियॉ उसे नहीं सुहातीं। उसकी प्रिय कल्पना होती है एक ऐसे महान राष्ट्र की, जिसके सब नागरिक एक सॉचे मे ढले हुए हो और उन सब पर किसी एक शक्ति का शासन हो।

समानता के युग मे मनुष्यों के मस्तिष्क मे एकमात्र और केन्द्रीय शक्ति की धारणा के बाद पैदा होता है, विधान की समरूपता का विचार। जब प्रत्येक व्यक्ति यह देखता है कि उसमें और उसके चारो ओर के लोगो में बहुत ही कम भिन्नता है तो उसे इस बात का कोई कारण नहीं दीखता कि वह नियम जो एक मनुष्य के लिए लागू है, बाकी के सब लोगो के लिए भी वैसे ही लागू न हो। अतः न्यूनतम विशेषाधिकार की बात उसके तर्क के प्रतिकूल होती है, एक ही राष्ट्र के लोगों की राजनीतिक सस्थाओ की मामूली से मामूली असमानताऍ उसे क्षुब्ध करती हैं और उसे प्रतीत होता है कि अच्छी सरकार के लिए सबसे पहली शर्त है विधान की समरूपता।

इसके विपरीत मैं देखता हूॅ कि कुलीनतान्त्रिक युग मे मानव का मस्तिष्क समाज के सभी सदस्यो पर समान रूप से लागू होने वाले समरूप नियम की इस धारणा से प्रायः अपरिचित था, या तो इस धारणा को उठाया ही नहीं गया या अस्वीकृत कर दिया गया।

विचारों की ये प्रतिकूल प्रवृत्तियॉ अन्ततोगत्वा दोनो ओर अन्ध वृत्तियों और अनियन्त्रित स्वभावों की ओर झुक जाती हैं और आज भी विशेष अपवादों के बावजूद मनुष्यो के कार्यों का निर्देशन करती हैं। मध्ययुग में, परिस्थितियों की अत्यन्त विविधताओ के बावजूद कुछ ऐसे लोगो की भी सख्या थी, जिनकी परिस्थितियॉ बिल्कुल समान थीं, परन्तु इस परिस्थिति ने उस समय के कानूनों को, प्रत्येक व्यक्ति को विशिष्ट कर्तव्य और विभिन्न अधिकार सौंपने से नहीं रोका। इसके विपरीत वर्तमान समय मे सरकार की समस्त शक्तियाँ जनता पर, जिसमे समानता की बाते बहुत ही कम देखने को मिलती हैं, समान प्रथाएँ और समान कानून थोपने में सतर्क हैं।

जब किसी राष्ट्र में मनुष्यो की परिस्थितियॉ समान हो जाती हैं, तब व्यक्ति को कम और समाज को अधिक महत्त्व प्राप्त होता है, या यों कहिये

नागरिक समस्त नागरिकों की भीड़ मे घुलमिल कर खो जाता है और स्वतंत्र समाज की महान और प्रभावशाली प्रतिच्छाया के अतिरिक्त कुछ भी स्पष्ट दिखाई नही पडता। यह स्थिति स्वाभाविक रूप से प्रजातात्रिक युग के मनुष्यों मे समाज के विशेषाधिकारो के प्रति उच्च विचार और व्यक्तियों के अधिकारों के बारे मे अत्यन्त हीन धारणा पैदा करती है। वे यह स्वीकार करने के लिए तैयार रहते हैं कि समाज के हित ही सब कुछ हैं और व्यक्तियों के हित कुछ भी नहीं। वे इस तथ्य को सहर्ष स्वीकार करते हे कि समुदाय का प्रतिनिधित्व करने वाली सत्ता के पास समुदाय के किसी भी सदस्य की अपेक्षा अधिक ज्ञान और बुद्धि रहती है और प्रत्येक नागरिक का मार्गदर्शन करना और उस पर नियत्रण करना उस सत्ता का कर्तव्य और अधिकार होता है।

यदि हम अपने समकालीन लोगों का निकट से विश्लेषण करे और उनकी राजनीतिक विचारधाराओ की तह तक जाय तो हमें कतिपय ऐसी धारणाएँ मिलेंगी जिनका मैंने अभी उल्लेख किया है और सम्भवतः हमे यह जानकर आश्चर्य होगा कि मनुष्यों मे, जो बहुधा इतनी विभिन्न परिस्थितियों मे रहते हैं, इतनी अधिक समानता विद्यमान है।

अमरीकियों का मत है कि प्रत्येक राज्य मे, सर्वोच्च शक्ति का निर्माण लोगों द्वारा होना चाहिए, परन्तु जब एक वार उस शक्ति का निर्माण हो जाता है तो वे उसे किन्हीं सीमाओं मे बॉधने का विचार नहीं करते और वे यह स्वीकार करने को तैयार रहते हें कि इस शक्ति को स्वेच्छा से कोई भी कार्य करने का अधिकार है। उनमे उन विशिष्ट विशेषाधिकारो की, जो नगरो, परिवारों या व्यक्तियों को प्रदान किये जाते हें, किंचित् भी धारणा नहीं होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि उनके मस्तिष्क मे इस प्रकार की कल्पना कभी पैदा नहीं हुई कि एक ही कानूनों को राज्य के प्रत्येक भाग मे और उसके सभी नागरिकों पर पूर्ण समरूपता के साथ लागू न करना भी सम्भव हो सकता है।

यूरोप में इसी प्रकार के मत अधिकाधिक रूप से फैले हुए हैं। यहॉ तक कि वे उन राष्ट्रों में भी फैले हुए है जो जनता की सार्वभौमता के सिद्धान्त को बडी दृढता से अस्वीकार करते है। ऐसे राष्ट्रों की सर्वोच्च सत्ता का मूल भिन्न रहता है, परन्तु वे इस शक्ति को वही विशिष्टताएँ प्रदान करते है। इन सबके बीच माध्यमिक शक्तियो का विचार दुर्बल और अत्यन्त क्षीण होता है। अधिकार की धारणा, जो कतिपय व्यक्तियों मे अन्तर्निहित है, शीघ्रता से मनुष्यों के मस्तिष्क से लोप होती जा रही है। उसके स्थान पर, स्वतत्र समाज की सर्व-

शक्तिमान और एकमात्र सत्ता का विचार उत्पन्न होता है। जैसे-जैसे सामाजिक परिस्थितियॉ और मनुष्य अधिकाधिक समान बनते जाते है, वैसे वैसे ये विचार जड पकडते और फैलते जाते हैं। ये विचार समानता द्वारा उत्पन्न होते हैं और उसके बदले वे समानता की प्रगति मे तत्परता से योगदान देते हैं।

फ्रास के, जहॉ क्रान्ति ने, जिसके विषय मे मै लिख रहा हूँ, यूरोप के किसी भी देश की अपेक्षा अधिक व्यापक रूप धारण कर लिया है, इन विचारो ने जनता के मस्तिष्क को पूर्णतः काबू मे कर लिया है। यदि हम फ्रास के विभिन्न दलों के विचारों को ध्यानपूर्वक सुने तो हमे यह पता चलेगा कि वहॉ एक भी दल ऐसा नहीं है जिसने उन विचारों को अंगीकृत न कर लिया हो। इनमे अधिकाश दल शासन-सचालन की निंदा करते है, परन्तु वे सब इस विचार से सहमत हैं कि सरकार को निरन्तर कार्य करना चाहिए और प्रत्येक किये गये कार्य मे निरन्तर हस्तक्षेप करना चाहिए। यहॉ तक कि अत्यन्त विरोधी मतों के दल भी इस विषय मे पूर्ण रूप से सहमत हे। सर्वोच्च सत्ता की एकता, सर्वव्यापकता, सर्वशक्तिमत्ता और उसके नियमो की समरूपती, उन समस्त राजनीतिक पद्धतियो के मुख्य लक्षण हे जो हमारे युग मे प्रस्तुत की गयी हैं। राजनीतिक सुधार की भयावह कल्पनाओ मे भी वे पुनः जन्म लेते हैं और मानव-मस्तिष्क अपने स्वप्नों मे उनके पीछे लगा रहता है।

यदि ये धारणाएँ व्यक्तिगत लोगों मे अपने-आप पैदा हो जाती हैं तो वे राजाओ के मस्तिष्क को और भी अधिक प्रभावित करती हैं। जबकि यूरोपीय समाज का प्राचीन ढाचा परिवर्तित और भग होता है, सार्वभौम शासकों को उनके अवसरो और कर्त्तव्यों के नये रूप प्राप्त होते है, उन्हे प्रथम बार इस बात का ज्ञान होता है कि केन्द्रीय शक्ति, जिसका वे प्रतिनिधित्व करते है, सारे समुदाय के समस्त विषयो का, अपने स्वय के अभिकरण द्वारा और एक समान योजना के आधार पर सचालन कर सकती है और उसे करना चाहिए। हमारे युग के पूर्व यूरोप के राजतत्रो द्वारा कभी भी इस विचार की कल्पना नहीं की गयी थी, यह मै बडे साहस के साथ अभिव्यक्त करूँगा। अब इस प्रकार की धारणा राजाओं के मस्तिष्क मे गहराई से जमी हुई है और वहॉ अधिक अस्थिर विचारों के द्वन्द्व के बीच पडी हुई है।

इसलिए हमारे समकालीन इस विषय में, जैसा कि सामान्य रूप से समझा जाता है, उससे कम विभाजित हैं। वे निरतर इस विषय पर विवाद करते है कि सर्वोच्च सत्ता किसके हाथो मे रहनी चाहिये, परन्तु वे शीघ्र ही सर्वोच्च सत्ता

के अधिकारो और कर्तव्यों के सम्बन्ध मे सहमत हो जाते हैं। उनकी धारणाओं के अनुसार सरकार एकमात्र सरल, दैविक और रचनात्मक शक्ति है।

राजनीति मे अन्य समस्त गौण विचार अनिश्चित हैं, यही एक मात्र निश्चित, अभिन्न और स्थिर है। यही राजनीतिज्ञों और राजनीतिक दार्शनिकों द्वारा अपनाया जाता है और बडे उत्साह से जनसमूह द्वारा ग्रहण किया जाता है। शासक और शासित दोनो ही समान उत्साह से उसका अनुसरण करना स्वीकार करते हैं, यह उनके मस्तिष्क की प्रारम्भिक भावना है जो स्वाभाविक प्रतीत होती है। इसलिए यह मानव-बुद्धि की कोई आकस्मिक क्रिया नहीं है, प्रत्युत मानव-जाति की वर्तमान स्थिति की आवश्यक शर्त है।

५४. प्रजातांत्रिक राष्ट्रों के भाव अपने विचारों के अनुकूल राजनीतिक शक्ति को केन्द्रित करने के लिए प्रेरित करते हैं।

समानता के युग मे मनुष्य महान केन्द्रीय शक्ति की धारणा शीघ्रता से ग्रहण कर लेते है, यदि यह बात सही है तो इसमे भी सन्देह नहीं कि दूसरी ओर उनकी प्रवृत्तिया और भावनाएँ इस प्रकार की शक्ति को मान्यता देने और उसे अपना समर्थन देने के लिए पहले से ही उद्यत रहती हैं। इस तथ्य का निरूपण कुछ शब्दो मे किया जा सकता हैं, क्योकि तर्कों के अधिकाश भाग के विषय मे, जिन पर तथ्य की कसौटी कसी जा सकती है, पहले ही वर्णन किया जा चुका है।

चूँकि प्रजातान्त्रिक देशों मे रहने वालों मे उच्च या निम्न नहीं होते और न उनके उपक्रमों में कोई स्वाभाविक या आवश्यक भागीदार ही रहते हैं, इसलिए वे स्वय शीघ्रता से अपने पर ही विचार करने को बाध्य हो जाते हैं और स्वय को अलग-अलग समझने लगते हैं। व्यक्तिवाद पर विचार करते समय इस तथ्य का विस्तारपूर्वक निरूपण करने का मुझे अवसर मिला था। अतः ऐसे मनुष्य कभी भी बिना प्रयत्न के सार्वजनिक कार्यों मे व्यस्त होने के लिए अपने निजी कार्यों का त्याग नहीं कर सकते। यह स्वाभाविक प्रवृत्ति उन्हे सार्वजनिक कार्यों

को जनता के हितों की एकमात्र प्रत्यक्ष प्रतिनिधि अ[illegible] के भरोसे छोड़ने को तत्पर करती है। सार्वजनिक कार्यों के लिए रुचि का उनमे न केवल स्वाभाविक अभाव ही रहता है, परन्तु बहुधा उन्हे समय नहीं मिलता। प्रजातान्त्रिक युग मे निजी जीवन इतना व्यस्त, इतना उत्तेजित, इतना आकाक्षाओ और कार्यों से परिपूर्ण रहता है, कि प्रत्येक व्यक्ति को सार्वजनिक जीवन के लिए कठिनाई से किसी प्रकार की स्फूर्ति या अवकाश रहता है। ये प्रवृत्तियाँ अजेय हैं, इस बात से मैं कतई सहमत नहीं हूँ, क्योकि इस पुस्तक के लिखने का मेरा मुख्य ध्येय ऐसी प्रवृत्तियों का ही विरोध करना है। मेरा कवल यही कहना है कि वर्तमान समय मे कोई गुप्त शक्ति मानव-हृदय मे इन प्रवृत्तियो का पोषण कर रही है और यदि इन प्रवृत्तियो पर प्रतिबंध नहीं लगाया जाता है तो वे उस पर पूर्णतया अधिकार कर लेंगी।

मुझे यह भी दर्शाने का अवसर मिला है कि उस प्रकार कल्याण के लिए बढ़ता हुआ प्रेम और सम्पत्ति का परिवर्त्तनशील रूप प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो को सभी हिंसात्मक उपद्रवों से भयभीत करता है। सार्वजनिक शांति का प्रेम प्रायः एकमात्र ऐसा आवेग है जिसे ये राष्ट्र निरंतर बनाये रखते हैं और यह उन अन्य समस्त आवेगो के अनुपात मे, जो सुप्त और समाप्त हो जाते हैं, अधिक सक्रिय और शक्तिशाली रहता है। परिणामस्वरूप समुदाय के सदस्य केन्द्रीय शक्ति को निरन्तर अतिरिक्त अधिकार देने या समर्पित करने के लिए स्वभावतः पहले से ही तैयार रहते हैं। केन्द्रीय शक्ति उनकी उन्हीं साधनों से रक्षा करती हुई प्रतीत होती है, जिनका प्रयोग वह स्वयं अपनी रक्षा के लिए करती है।

समानता के युग मे चूँकि कोई भी मनुष्य अपने साथियो की सहायता करने के लिए बाध्य नहीं है और किसी को भी उनसे अधिक सहायता प्राप्त करने की आशा रखने का कोई अधिकार नहीं है, अतः प्रत्येक मनुष्य स्वाधीन भी है एवं शक्तिहीन भी। इन दोनों परिस्थितियों पर कभी भी न तो अलग से विचार करना चाहिए और न उन्हें एक साथ मिलाना ही चाहिए, क्योंकि प्रजातान्त्रिक देश के नागरिक ऐसी ही प्रतिकूल प्रवृत्तियों से प्रेरित होते हैं। व्यक्ति की स्वाधीनता उसमे आत्मविश्वास जगाती है और उसके समकक्ष लोगों में गौरव उत्पन्न करती है। उसकी अयोग्यता समय-समय पर उसे अनुभव कराती है कि उसे किसी बाहरी सहायता की आवश्यकता है, जिसकी वह उनमे से किसी से आशा नहीं कर सकता क्योंकि वे सभी निर्बल और असहानुभूतिपूर्ण हैं। इस विषम स्थिति में वह सहज ही में उस प्रभावशाली शक्ति की ओर

देखने लगता है, जो उसे सर्वव्यापक नैराश्यता के स्तर से ऊँचा उठाती है। उसकी आवश्यकताए और विशेषत. उसकी इच्छाएँ उसे निरन्तर उस शक्ति की याद दिलाती रहती ह और अततः वह यह दृष्टिकोण अपना लेने के लिए बाध्य हो जाता है कि वही शक्ति उसकी स्वय की दुर्बलताओ के लिए एकमात्र और आवश्यक सहारा है।

प्रजातान्त्रिक देशो में प्राय. जो कुछ घटित होता है, इसके द्वारा उसकी अधिक पूर्णता से व्याख्या की जा सकती है। प्रजातान्त्रिक देशों के जो लोग अपने से उच्च व्यक्तियो के प्रति असहिष्णु होते हैं वे ही अपना गर्व और अपनी दासता प्रदर्शित करते हुए किसी स्वामी को अपने को समर्पित कर देते है। विशेपाधिकार जैसे-जैसे क्षीण और उपेक्षणीय होते जाते हैं, उसी के अनुपात से उनके प्रति मनुष्यों की घृणा भी बढती जाती है। परिणामतः उनमे प्रजातान्त्रिक भावावेग उस समय अधिक तेजी से प्रज्वलित होता हुआ प्रतीत होगा जबकि उनमे शक्ति अल्पतम मात्रा मे होगी। इस विलक्षण घटना के कारण का मै पहले ही उल्लेख कर चुका हूँ। जब सारी परिस्थितियाँ असमान रहती हे उस समय कोई भी असमानता इतनी अधिक नहीं होती कि आखों को खटकने लगे, परन्तु सामान्य एकरूपता के बीच न्यूनतम असमानता बुरी लगने लगती है। यह समरूपता जितनी अधिक पूर्ण रहती है उतनी ही अधिक इस प्रकार की विभिन्नता अग्राह्य होती है। अतः स्वाभाविक रूप से समानता का प्रेम स्वय समानता के साथ ही निरतर बढता रहना चाहिए और जिससे वह पोषित होता है उसी से उसका विकास होना चाहिए।

यह अमर और सदा प्रज्वलित रहने वाली घृणा, जो प्रजातान्त्रिक लोगो को छोटे विशेषाधिकारो का विरोधी बनाती है, सारे राजनीतिक अधिकारो को केवल राज्य के प्रतिनिधियो के हाथों मे क्रमशः केन्द्रित करने के लिए विशेषतः अनुकूल होती है। सार्वभौम शासक अनिवार्यतः और निर्विवाद रूप से समस्त नागरिको के ऊपर रहता है। वह उनकी ईर्ष्या को उत्तेजित नहीं करता और उनमे से प्रत्येक यह सोचता है कि वह अपने समकक्षो को उन विशेषाधिकारो से वचित करता है, जो उसने सर्वोच्च सत्ता को सुपुर्द किये हे। प्रजातान्त्रिक युग मे रहने वाला मनुष्य अपने समकक्ष पडोसी की आज्ञा का पालन करने के लिए नितात अनिच्छुक रहता है। वह ऐसे व्यक्ति की उच्च योग्यता को स्वीकार करने से इन्कार करता है, उसके न्याय मे अविश्वास करता है, उसकी शक्ति को ईर्ष्या की दृष्टि से देखता है, वह उससे डरता हें, उसका तिरस्कार करता है और उसे

यह बात प्रिय है कि वह एक ही स्वामी की सामान्य अधीनता की उसे निरन्तर याद दिलाता रहे, जिसके आश्रित वे दोनो ही हैं।

प्रत्येक केन्द्रित शक्ति, जो अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों का अनुकरण करती है, समानता के सिद्धान्त को बढ़ावा एव प्रोत्साहन देती है, क्योकि समानता ही केन्द्रीय शक्ति के प्रभाव को विचित्र ढंग से सुगम बनाती है, विस्तृत करती है और उसे सुरक्षित रखती है।

इसी प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक केन्द्रीय सरकार समरूपता की उपासना करती है; समरूपता उसे बडी बारीकी से जॉच करने से मुक्त करती है। यदि नियमो को विभिन्न लोगो पर लागू करना है तो बजाय इसके कि सभी को बिना किसी भेदभाव के एक ही डडे से हाका जाय, यही समरूपता प्रतिष्ठित करनी चाहिए। इस प्रकार सरकार वही चाहती है जो नागरिक चाहते हैं और स्वाभाविक रूप से नागरिक जिन बातों से घृणा करते हैं, उनसे सरकार भी घृणा करती है। ये सामान्य भाव प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में सार्वभौम शासक और समुदाय के प्रत्येक सदस्य को निरतर एक ही विश्वास मे आबद्ध करते हैं और उनके मध्य गुप्त तथा स्थायी सहानुभूति उत्पन्न करते हैं। सरकार के दोष उसकी प्रवृत्तियों के कारण क्षमा कर दिये जाते हैं, उसकी अति और उसकी त्रुटियो के बीच भी लोगों का विश्वास अनिच्छापूर्वक ही टूटता है और प्रथम पुकार के साथ ही वह पुनः प्रतिष्ठित हो जाता है। प्रजातान्त्रिक राष्ट्र प्रायः उन लोगों से घृणा करते हैं जिनके हाथो मे केन्द्रीय सत्ता निहित रहती है, परन्तु स्वय उस सत्ता से वे सर्वदा प्रेम रखते हैं।

इस प्रकार मैं दो विभिन्न मार्गों से एक ही निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ। मैंने यह स्पष्ट किया है कि समानता का सिद्धात मनुष्यो के मस्तिष्क में एकमात्र समरूप और शक्तिशाली सरकार की धारणा उत्पन्न करता है। मैंने यह दर्शाया है कि समानता का सिद्धात उनमे सरकार के प्रति अभिरुचि जाग्रत करता है। इसलिए हमारे युग के राष्ट्र इस प्रकार की सरकारों की तरफ झुक रहे हैं। मस्तिष्क और हृदय के स्वाभाविक झुकाव के द्वारा वे उधर आकृष्ट होते हैं और उस परिणाम तक पहुँचने के लिए यह पर्याप्त है कि वे अपने मार्ग में स्वयं अपने ऊपर प्रतिबंध नहीं रखते।

मेरा यह मत है कि प्रजातान्त्रिक युग मे, जो हम पर स्पष्ट होता जा रहा है, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और स्थानीय स्वाधीनता की उत्पत्ति अपने युग से होगी और केन्द्रीकरण ही स्वाभाविक सरकार बनेगी।

५५. कतिपय विशिष्ट और आकस्मिक कारण जो या तो लोगों को सरकार के केन्द्रीकरण की ओर प्रवृत्त करते हैं या उन्हें उससे विमुख करते हैं

यदि समस्त प्रजातान्त्रिक राष्ट्र स्वाभाविक रूप से सरकार के केन्द्रीकरण की ओर प्रवृत्त होते हैं तो वे इस परिणाम पर जुदा-जुदा प्रकार से पहुँचते हैं। यह अविशिष्ट परिस्थितियों पर निर्भर है जो समाज की उस स्थिति के प्राकृतिक परिणामो की वृद्धि या रोकथाम कर सकती हैं। इस प्रकार को परिस्थितियों की सख्या बहुत अधिक है, परन्तु मै उनमे से केवल कुछ ही का यहाँ उल्लेख करूँगा।

समान होने के बहुत पहिले स्वतत्र रहनेवाले मनुष्यो ने स्वतत्र संस्थाओं से इस प्रकार की प्रवृत्तियाँ सघर्ष द्वारा प्राप्त की थी, कुछ सीमा तक इन प्रवृत्तियों को समानता के सिद्धान्त ने बढावा दिया और यद्यपि ऐसे समाज मे केन्द्रित शक्ति उसके विशेषाधिकारो को बढ़ा सकती है, फिर भी ऐसे समाज के निजी सदस्य कभी भी अपनी स्वतत्रता को पूर्णतः नहीं खोयेगे। परन्तु जब परिस्थितियो की समानता ऐसे लोगों मे बढती है, जिन्होंने यह कभी जाना ही नहीं अथवा जिन्होंने बहुत दिनो से यह भुला दिया है कि स्वतत्रता क्या है (यूरोप के महाद्वीप मे इसी प्रकार की स्थिति है), जब राष्ट्र की पूर्ववर्ती प्रवृत्तियाँ अचानक किसी प्रकार के स्वाभाविक आकर्षण द्वारा, समाज की परिस्थिति द्वारा उत्पन्न नयी प्रवृत्तियों और सिद्धान्तों से घुलमिल जाती है, उस समय ऐसा प्रतीत होता है मानो सारी शक्तियाँ अन्तःप्रेरित होकर केन्द्र की ओर दौड रही हैं। यही नहीं, ये शक्तियाँ वहाँ विस्मयजनक तीव्रता से एकत्र हो जाती है और राज्य तुरन्त ही अपनी शक्ति की सर्वोच्च सीमाओ को प्राप्त कर लेता है, जबकि निजी व्यक्ति दुर्बलता के निम्नतम अश मे एकाएक अपने आपको डुबा लेने को तैयार हो जाते है।

तीन सौ वर्ष पूर्व अग्रेजो ने नयी दुनिया के तटों पर प्रजातान्त्रिक राष्ट्रमण्डल बसाने के लिए प्रवास किया था और उन सब ने अपने मातृदेश मे ही सार्वजनिक कार्यों मे भाग लेना सीख लिया था। वे जूरी द्वारा की जाने वाली सुनवाई से परिचित थे, वे सभापण और प्रेस की स्वतत्रता के, व्यक्तिगत

स्वतन्त्रता, अधिकारों की भावना और उनके व्यवहार के अभ्यस्त थे। वे अपने साथ उन स्वतंत्र सस्थाओ और मानवीय प्रथाओ को अमरीका ले गये और इन सस्थाओ ने उन्हे राज्य के हस्तक्षेप से सुरक्षित रखा। इस प्रकार अमरीकियो मे स्वतन्त्रता ही पुरानी है, समानता उसकी तुलना मे आधुनिक समय की है। यूरोप मे ठीक इसके विपरीत परिस्थिति है, जहाँ समानता का प्रवेश निरकुश शक्ति द्वारा और राजाओं के शासन के अन्तर्गत हुआ और यह समानता स्वतंत्रता के बहुत पहले राष्ट्रों के स्वभावों मे और उनके विचारो मे प्रवेश कर चुकी थी।

मैं कह चुका हूँ कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो में सरकार की धारणा स्वाभाविक रूप से मस्तिष्क के सामने अपने को एकमात्र और केन्द्रित शक्ति के रूप मे उपस्थित करती है और मध्यवर्ती शक्तियो की धारणा से वह अपरिचित होती है। यह स्थिति विशेषतः उन प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो के लिए लागू होती है, जिन्होंने हिंसात्मक क्राति के माध्यमों से समानता के सिद्धान्त की विजय को देखा था। चूँकि स्थानीय कार्यों की व्यवस्था करने वाले वर्ग एकाएक आधी मे बह गये और किकर्तव्यविमूढ जनसमूह मे जो शेष रहा उसमे न तो सगठन की शक्ति रही और न वह स्वभाव रहा जो उन्हे इन कार्यो के उत्तरदायित्व को धारण करने के योग्य बनाता। अकेला राज्य ही सरकार के छोटे से छोटे कार्य को अपने ऊपर लेने के योग्य प्रतीत होता है और केन्द्रीयकरण देश की अनिवार्य स्थिति हो जाती है।

नेपोलियन की, जिसने फ्रास के प्रायः सारे प्रशासन को अपने हाथों मे केन्द्रित कर लिया था, न तो प्रशसा की जा सकती है और न निंदा ही, क्योंकि कुलीन और मध्यवर्गों की उच्च श्रेणियों के अचानक लोप हो जाने के बाद ये सारी शक्तियाँ उत्तराधिकार मे उसे प्राप्त हो गयी थीं, परन्तु उस समय उसके लिए उन अधिकारो को अस्वीकृत करना प्रायः उतना ही कठिन होता, जितना उन्हें ग्रहण करना। किन्तु ऐसी आवश्यकता अमरीकियों द्वारा कभी भी महसूस नहीं की गयी, जिनको क्राति का अनुभव न होने के कारण और प्रारम्भ से ही अपने आप प्रशासन चलाने के कारण, कभी भी राज्य को कुछ समय के लिए अपना सरक्षक बनने के लिए नहीं कहना पडा। अतः प्रजातान्त्रिक समाज में केन्द्रीयकरण की प्रगति न केवल समानता की प्रगति पर निर्भर करती है, अपितु उस तरीके पर भी निर्भर करती है, जिससे यह समानता स्थापित हुई है।

महान प्रजातान्त्रिक क्राति का श्रीगणेश होने पर जब समाज की विभिन्न श्रेणियों के मध्य शत्रुता का अकुर फूट पड़ता है, तब जनता सार्वजनिक प्रशासन

को सरकार के हाथों मे केन्द्रित करने का प्रयास करती है ताकि कुलीनतंत्र से स्थानीय कार्यों के प्रबंध को छीन कर वह अपने हाथो मे ले सके। इसके विपरीत, इस प्रकार की क्रांति की समाप्ति के समय प्रायः विजित कुलीनतंत्र सारे कार्यों के प्रबंध को सौप देने का प्रयत्न करता है, क्योंकि इस प्रकार की कुलीनता उन लोगों की निरंकुशता से भय खाती है, जो उसकी बराबरी के हैं, और प्रायः उनके स्वामी बन जाते हैं। इस प्रकार हमेशा समाज का एक ही वर्ग नहीं है जो सरकार के परमाधिकार मे वृद्धि करने का प्रयत्न करना है, प्रत्युत जब तक प्रजातांत्रिक क्रांति बनी रहती है, राष्ट्र मे हमेशा ऐसा वर्ग पाया जाता है जो संख्या या धन की दृष्टि से सशक्त होता है, जो विशिष्ट आवेगो या हितो से सार्वजनिक प्रशासन को केन्द्रित करने के भाव से प्रेरित होता है और यह कार्य वह किसी पड़ोसी से शासित होने से उत्पन्न उस घृणा से मुक्त हो कर करता है, जो प्रजातांत्रिक राष्ट्रो मे पायी जाने वाली सामान्य और स्थायी भावना होती है।

वर्तमान समय मे यह कहा जा सकता है कि इंगलैण्ड के निम्न श्रेणी के लोग अपनी सारी शक्ति से स्वायत्त शासन को नष्ट करने और प्रशासन को सभी दृष्टियो से केन्द्र को हस्तांतरित करने के लिए प्रयत्नशील हैं, जबकि उच्चतर श्रेणियों के लोग इस प्रशासन को उसकी प्राचीन मर्यादाओ के भीतर बनाये रखने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। मै यह साहस के साथ भविष्यवाणी करता हूँ कि एक ऐसा समय आयेगा जब कि ठीक इसके विपरीत परिस्थिति उत्पन्न होगी।

इन बातो से स्पष्ट हो जाता है कि एक प्रजातांत्रिक राष्ट्र मे जिसे समानता की स्थिति तक पहुँचने के लिए दीर्घकालीन संघर्ष करना पड़ा था, एक लोकतांत्रिक समुदाय की अपेक्षा, जिसमे प्रत्येक नागरिक प्रारम्भ से ही समान होता है, सर्वोच्च सत्ता सर्वदा प्रबल होती है और निजी व्यक्ति निर्बल होते हैं। अमरीकियो का उदाहरण पूर्णतः इस तथ्य को सिद्ध करता है। संयुक्त-राज्य अमरीका के निवासी विशेषाधिकारो से कभी विभाजित नहीं रहे और न उन्हे कभी उच्च और निम्न के पारस्परिक सम्बंध का ज्ञान ही हुआ। चूँकि वे एक दूसरे से भय या घृणा नहीं करते, अत. उन्होंने अपने कार्यों की व्यवस्था के लिए सर्वोच्च शक्ति की शरण मे जाने की कभी आवश्यकता नहीं समझी। अमरीकियो का भाग्य विचित्र है। उन्होंने इंगलैण्ड के कुलीनतंत्र से निजी अधिकारों की धारणा और स्थानीय स्वतंत्रता के प्रति रुचि प्राप्त की है और वे दोनों को बनाये रखने मे सफल हुए हैं, क्योंकि अमरीका मे उन्हे किसी कुलीनतंत्र से संघर्ष नहीं करना पड़ा।

सभी युगों मे यदि शिक्षा मनुष्यों को अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए समर्थ बनाती है तो यह बात प्रजातान्त्रिक युगो के लिए विशेष रूप से लागू होती है। जब सभी मनुष्य समान हैं, तब एकमात्र और सर्वशक्तिशाली सरकार की, केवल अन्तःप्रवृत्ति की सहायता से स्थापना करना आसान है। परन्तु मनुष्यों को समान परिस्थितियो के अन्तर्गत गौण शक्तियो को सघटित और बनाये रखने के लिए बड़ी बुद्धिमानी और ज्ञान की आवश्यकता है, ताकि नागरिकों की स्वतंत्रता और व्यक्तिगत दुर्बलताओ के बीच ऐसी स्वतत्र सस्थाओं का निर्माण हो सके, जो उन्हे निरकुशता के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए बिना सार्वजनिक व्यवस्था को भग किये समर्थ बना सके।

इसलिए प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में शक्ति का केन्द्रीयकरण और व्यक्तियो की अधीनता न केवल उनकी समानता के अनुपात मे, अपितु उनके अज्ञान के अनुपात में होगी। यह सही है कि अपूर्ण सभ्यता के युगो मे सरकार में लोगो पर निरंकुशता लादने के लिए आवश्यक ज्ञान का प्रायः उतना ही अभाव रहता है, जितना समाज में उस सरकार को हिला देने के लिए ज्ञान का अभाव होता है, परन्तु दोनों ओर एक ही प्रकार का प्रभाव नहीं होता है। प्रजातान्त्रिक राष्ट्र कितना ही असभ्य क्यों न हो, उस पर शासन करने वाली केन्द्रीय शक्ति कभी भी सभ्यता से पूर्णतः वंचित नहीं रहती, क्योकि देश मे थोड़ी-बहुत जो सभ्यता उपलब्ध है, उसका वह शीघ्र ही अपने लिए प्रयोग कर लेती है और यदि आवश्यकता पडती है तो वह अन्यत्र से सहायता प्राप्त कर सकती है। अतः उस राष्ट्र मे, जो अज्ञानी है और साथ ही प्रजातान्त्रिक भी है, शासक और शासित की बौद्धिक क्षमता के बीच शीघ्र ही आश्चर्यजनक विभिन्नता पैदा हुए बिना नहीं रह सकती। इससे शासक के हाथों में सारी शक्ति का सरल केन्द्रीकरण पूर्ण हो जाता है और राज्य के प्रशासकीय कार्य निरंतर विस्तृत होते हैं, क्योंकि देश का शासन-सचालन करने के लिए केवल राज्य ही योग्य है।

महान कार्यों को निश्चित समय और एक विशिष्ट लक्ष्य के साथ सुविधापूर्वक निष्पादित करने मे समर्थ हो सकती है। यह बात विशेषतः युद्ध के लिए सही है, जिसमे राष्ट्र के सारे साधनों को, बजाय फैलाने के, एक ही बिन्दु पर केन्द्रित कर देने पर ही सफलता पूर्ण रूप से निर्भर करती है। इसलिए मुख्यतः युद्ध में राष्ट्र केन्द्रीय सरकार की शक्तियों मे वृद्धि करना चाहते हैं और बहुधा उन्हें इसकी आवश्यकता रहती है। सैनिक प्रतिभाओं के सभी पुरुष केन्द्रीयकरण चाहते हैं, जो उनकी शक्ति मे वृद्धि करता है और केन्द्रीयकरण के सारे प्रतिभाशाली पुरुष युद्ध के प्रेमी होते हैं, जो राष्ट्र को अपनी शक्तियों को सरकार के हाथों में सौप देने के लिए विवश करता है। इस प्रकार प्रजातान्त्रिक प्रवृत्ति मनुष्यो को राज्य के विशेषाधिकारो को बहुगुणित करने के लिए और निजी व्यक्तियो के अधिकारों को मर्यादित करने की ओर ले जाती है। यह प्रवृत्ति अन्य राष्ट्रो की अपेक्षा उन प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो में बहुत अधिक शीघ्रगामी और निरतर बनी रहती है, जिन्हें अपनी स्थिति के कारण प्रायः महान युद्धो का मुकाबला करना पडता है।

मै यह बता चुका हूॅ कि किस प्रकार उपद्रव का भय और कल्याण का प्रेम प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो को केन्द्रीय सरकार के कार्यों की वृद्धि करने के लिए प्रेरित करता है, क्योकि यही ऐसी शक्ति है जो अराजकता से उनकी रक्षा करने के लिए वस्तुतः प्रबल, प्रगतिशील और सुरक्षित प्रतीत होती है। अब मै यहॉ यह भी कहूॅगा कि सभी विशिष्ट परिस्थितियॉ, जो प्रजातान्त्रिक समुदाय की स्थिति को आदोलित और खतरनाक बनाने मे प्रवृत्त होती हैं, इस सामान्य प्रवृत्ति को विकसित करती हैं और निजी व्यक्तियो को अपनी शाति के लिए अपने अधिकारों का अधिकाधिक त्याग करने के लिए प्रेरित करती हैं।

इसलिए राष्ट्र केन्द्रीय सरकार के कार्यो को बढ़ाने के लिए कभी भी इतना तत्पर नहीं रहता जितना कि दीर्घकालिक रक्तरजित राज्यक्राति के अंत मे होता है। यह राज्यक्राति सम्पत्ति को उसके पूर्व मालिको से छीन लेने के बाद, सारे विश्वासों को हिला देती है और राष्ट्र को भयानक घृणा, सघर्षमय स्वार्थो और गुटबन्दियो से भर देती है। ऐसे समय मे सार्वजनिक शाति का प्रेम अविवेकपूर्ण आवेग बन जाता है और समाज के सदस्य व्यवस्था के प्रति अत्यत अमर्यादित भक्ति धारण कर सकते हैं।

शक्ति के केन्द्रीयकरण की वृद्धि के लिए जो भी घटनाऍ घटित हो सकती हैं, उनमे से कुछ का मै पहले ही वर्णन कर चुका हूॅ, परन्तु मूल कारण अभी देखना बाकी है। उन प्रासगिक कारणो में, जो प्रजातान्त्रिक देशो मे सारे कार्यो

की व्यवस्था को शासक के हाथो मे सौप सकते है, अत्यंत महत्त्वपूर्ण कारण स्वय उस शासक का मूल और उसकी प्रवृत्तियॉ हैं। जो मनुष्य समानता के युग मे रहते है, वे स्वभावतः केन्द्रीय शक्ति चाहते है और उसके विशेषाधिकारो को विस्तृत करना चाहते है परन्तु यदि ऐसा होता है कि वही शक्ति विश्वसनीय रूप से उनके हितों का प्रतिनिधित्व करती है और उनकी स्वय की प्रवृत्तियों की हू-ब-हू नकल करती है, तो उनके विश्वास की, जो वे उसके प्रति रखते हैं, कोई सीमा नहीं रहती और वे सोचते हैं कि उन्होंने उसे जो कुछ अर्पित किया है, अपने को ही अर्पित किया-है।

केन्द्र की ओर प्रशासनिक शक्तियों का आकर्षण उन राजाओं के शासनकाल मे सर्वदा अपेक्षाकृत कम सरल और कम द्रुतगामी होगा, जो अभी भी किसी न किसी प्रकार प्राचीन कुलीनतात्रिक व्यवस्था से सम्बन्धित है, बनिस्बत उनके उत्तराधिकारी नये नरेशो के शासन-काल मे, जिनके जन्म, पूर्वाग्रह, प्रवृत्तिया और स्वभाव उन्हें समानता के हित के साथ अत्यन्त दृढता से बाधे हुए प्रतीत होते हैं। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं है कि कुलीनतात्रिक मूल के जो नरेश प्रजातात्रिक युगों मे रहते हैं, वे केन्द्रीयकरण के लिए प्रयास नहीं करते। मै विश्वास करता हूॅ कि वे इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए दूसरो की भॉति ही प्रयत्नशील होते हैं। उनके लिए समानता का एकमात्र लाभ उसी दिशा मे निहित है, परन्तु उनके अवसर कम महान हैं, क्योकि समाज उनकी इच्छाओ की स्वेच्छा से पूर्ति करने के बजाय, बहुधा अनिच्छा से उनकी आज्ञा का पालन करता है। प्रजातात्रिक समुदायो का यह नियम होता है कि केन्द्रीयकरण मे उसी अनुपात से वृद्धि होती है, जिस अनुपात से सार्वभौम शासक कम कुलीनतात्रिक होता है।

जब राजाओ की एक प्राचीन जाति कुलीनतत्र की मुखिया होती है, क्योंकि सार्वभौम शासक के स्वाभाविक पूर्वाग्रह कुलीनतत्र के स्वाभाविक पूर्वाग्रहों के पूर्णतः अनुकूल होते हैं, तब कुलीनतात्रिक समुदायो में अंतर्निहित दुर्गुण उन्मुक्त हो जाते हैं और उनका कोई सुधार नहीं होता। जब सामन्तो का वर्ग किसी प्रजातात्रिक राष्ट्र का मुखिया बन जाता है, तब उसका परिणाम विपरीत होता है। सार्वभौम शासक निरन्तर अपनी शिक्षा, अपने स्वभाव और अपने ससर्ग से स्थितियो की असमानता से उत्पन्न भावनाओ को अंगीकार करने के लिए प्रेरित होता है और जनता अपनी सामाजिक स्थिति से निरन्तर उन आचरणों की ओर प्रवृत्त होती है, जो समानता द्वारा उत्पन्न होते हैं। ऐसे समय मे, प्रायः ऐसा हाता है कि नागरिक केन्द्रीय शक्ति को एक कुलीनतात्रिक शक्ति के

बजाय निरकुश शक्ति के रूप में कहीं कम नियत्रित करने का प्रयत्न करते हैं। वे अपनी स्वतत्रता की दृढ़ सुरक्षा के लिए प्रयत्नशील रहते हैं, न केवल इसलिए कि वे स्वतत्र रहेंगे, बल्कि विशेषरूप से इसलिए कि उन्होंने समान रहने का दृढ सकल्प कर लिया है।

जो क्रान्ति प्रजातात्रिक राष्ट्र का नेतृत्व नये व्यक्तियों के हाथों में सौपने के उद्देश्य से प्राचीन राजपरिवार को उखाड़ फेकती है, वह अस्थायी रूप से केद्रीय शक्ति को दुर्बल बना सकती है, परन्तु इस प्रकार कीं क्राति प्रारम्भ मे चाहे जितनी भी अराजकतापूर्ण प्रतीत हो, हमे यह भविष्यवाणी करने मे सकोच करने की आवश्यकता नहीं कि उसका अन्तिम और निश्चित परिणाम इस क्रान्ति के विशेषाधिकारों को विस्तृत और सुरक्षित करना होगा।

प्रजातात्रिक समाज मे सर्वोच्च शक्ति के केन्द्रीयकरण मे सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक मुख्य या वस्तुतः एकमात्र शर्त यह है कि समानता से प्रेम किया जाय या लोगों मे ऐसा विश्वास उत्पन्न किया जाय कि आप समानता से प्रेम करते हैं। इस प्रकार, निरकुशता का विज्ञान, जो कभी इतना जटिल था, सरल बन जाता है और एक ही सिद्धान्त में परिणत हो जाता है।

५६. किस प्रकार की निरंकुशता से प्रजातांत्रिक राष्ट्रों को भयभीत होना चाहिए

संयुक्त-राज्य अमरीका मे अपने प्रवासकाल के समय मैंने कहा था कि अमरीकियों से मिलती-जुलती समाज की प्रजातात्रिक स्थिति निरकुशता की स्थापना के लिए विशेष सुविधाएँ प्रदान कर सकती है और यूरोप मे लौटने पर मैंने देखा कि हमारे अधिकाश शासकों द्वारा, इस समान सामाजिक स्थिति से उत्पन्न धारणाओं, भावनाओ और आवश्यकताओं का अपनी शक्ति के दायरे को विस्तृत करने के उद्देश्य से, पहले से ही किस प्रकार पर्याप्त उपयोग कर लिया गया था। इससे मै इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि ईसाई समाज के राष्ट्रों को सम्भवतः अत मे असाधारण क्रूरता का उसी प्रकार से अनुभव करना पडेगा, जिस तरह कि प्राचीन विश्व के अनेक राष्ट्रो को अनुभव हुआ था।

विषय का अधिक सूक्ष्मता से परीक्षण करने और उसके पश्चात् पाच वर्ष निरन्तर उस पर चितन करने के बाद भी मेरे भय कम नहीं हुए है, बल्कि उन्होंने अपना उद्देश्य बदल लिया है।

प्राचीन समय मे कोई भी सार्वभौम शासक कभी इतना निरकुश या इतना शक्तिशाली नहीं रहा कि उसने अपने स्वयं के अभिकरण द्वारा और मध्यवर्ती शक्तियो की सहायता के बिना विशाल साम्राज्य के समस्त भागो पर प्रशासन करने का उत्तरदायित्व सम्भाला हो। और न किसी ने अधिनियमो की एकरूपता को सीमित करने के उद्देश्य से सारी प्रजा पर अविवेक से शासन करने का और समुदाय के प्रत्येक सदस्य को साक्षात् रूप से शिक्षा और निर्देश देने का कभी प्रयत्न ही किया। इस प्रकार कार्य करने की धारणा कभी मानव-मस्तिष्क मे पैदा नहीं हुई और यदि किसी मनुष्य ने ऐसी कल्पना की तो तत्सम्बन्धी ज्ञान के अभाव ने, प्रशासकीय पद्धति की अपरिपूर्णता ने, और सर्वोपरि परिस्थितियों की असमानता से उत्पन्न स्वाभाविक कठिनाइयो ने शीघ्र ही इतने विशाल उद्देश्य की पूर्ति पर रोक लगा दी होगी।

जब रोम के सम्राट अपनी शक्ति के उच्च शिखर पर विराजमान थे, तब भी साम्राज्य के विभिन्न राष्ट्रो ने भिन्न आचरणो और रीतिरिवाजो को सुरक्षित रखा। यद्यपि वे एक ही राजतंत्र के अधीन थे, फिर भी अधिकाश प्रातो का शासन अलग से होता था, जिनमे शक्तिशाली और क्रियाशील नगर-पालिकाओ की संख्या अधिक थी। यद्यपि साम्राज्य की सारी सरकार अकेले सम्राट के हाथों में केन्द्रित थी और वह हमेशा आवश्यकता पड़ने पर, सभी विपयो मे सर्वोच्च निर्णायक माना जाता था, फिर भी सामाजिक जीवन और व्यक्तिगत उद्योगों की सूक्ष्म बाते अधिकतर उसके नियत्रण से परे थी। यह सही है कि सम्राटों के पास विशाल और अनियंत्रित शक्ति थी, जिसकी सहायता से वे अपनी मनमानी अभिरुचियों को पूर्ण कर लिया करते थे और उस उद्देश्य की पूर्ति मे राज्य की समस्त शक्ति को लगा दिया करते थे। उन्होंने प्रायः अपनी प्रजा को सम्पत्ति या जीवन से वचित करने के लिए मनमाने ढग से उस शक्ति का दुरुपयोग किया। उनकी क्रूरता कुछ लोगो के लिए बडी कष्टप्रद थी, परन्तु वह सभी तक नहीं पहुँच सकी। वह कुछ अशेष उद्देश्यो की पूर्ति के लिए ही निर्धारित थी और शेष सभी के प्रति उपेक्षित थी। वह क्रूरता निश्चय ही हिंसात्मक थी, परन्तु उसका क्षेत्र सीमित था।

यदि हमारे युग के प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे निरकुशता स्थापित की जाय तो

ऐसा प्रतीत होगा कि वह भिन्न रूप धारण कर सकती है। वह अधिक व्यापक और अधिक मृदु होगी, वह बिना सताप पहुँचाये मनुष्यों का अध पतन करेगी। मुझे इस बात में सन्देह नहीं कि हमारी तरह के शिक्षा और समानता के युग मे सार्वभौम शासक समस्त राजनीतिक शक्ति को अपने हाथों में केन्द्रित करने में अधिक सुगमता से सफलता प्राप्त कर सकता है और व्यक्तिगत हितों के क्षेत्र मे अधिक स्वाभाविक प्रकृति और दृढ़ता से हस्तक्षेप कर सकता है, जितना कि प्राचीनकाल का कोई सार्वभौम शासक कभी कर नहीं सकता था। परन्तु समानता का वही सिद्धान्त, जो निरकुशता को सुगम बनाता है, उसकी कठोरता के प्रभाव को कम कर सकता है। हम यह देख चुके हैं कि जैसे-जैसे मनुष्य अधिक समान और एकरूप बनते हैं, उसी के अनुपात में समाज का आचरण अधिक समान और कोमल बनता है। जब समाज के किसी भी सदस्य के पास अधिक शक्ति और सम्पत्ति नहीं रहती, क्रूरता को, वह जिस रूप में है, कार्रवाई करने का अवसर और क्षेत्र नहीं मिलता। चूँकि सारी सम्पत्ति कम मात्रा मे रहती है, इसलिए मनुष्यों के आवेग स्वाभाविक रूप से मर्यादित रहते हैं। उनकी कल्पना स्वय सार्वभौम शासक को उदार बना देती है और कुछ निश्चित सीमाओं के भीतर उसकी इच्छाओं के असाधारण विस्तार पर अकुश लगा देती है।

स्वयं समाज की स्थिति की प्रकृति के आधार पर उपरोक्त तर्क प्रस्तुत किये गये हैं, परन्तु मै उनसे स्वतंत्र अन्य तर्क प्रस्तुत कर सकता हूँ। वे तर्क उन कारणों के आधार पर प्रस्तुत किये जा सकते हैं जो इस विषय के अन्तर्गत नहीं आते, परन्तु मैंने जो अपने विषय की सीमा निर्धारित की है, उसीके भीतर उसे सीमित रखूँगा।

प्रजातात्रिक सरकार हिंसात्मक हो सकती है और यहाँ तक कि चरम उत्तेजना के कुछ काले मे या महान सकट की स्थिति मे वह क्रूर भी बन सकती है, परन्तु ये सकट दुर्लभ और थोडे ही समय के लिए होंगे। जब मै अपने समकालीन लोगो के तुच्छ आवेगों, उनके आचरणों की कोमलता, उनकी शिक्षा की व्यापकता, उनके धर्म की पवित्रता, उनकी नैतिकता की मृदुलता, उनकी नियमित और श्रमशील प्रवृत्तियों और उनके सयम पर, जिसका प्रयोग प्राय वे अपने गुणों के लिए जितना करते हैं, उतना ही अपने दुर्गुणों के लिए भी करते हैं, विचार करता हूँ, तो मुझे किंचित् भी भय नहीं रहता कि वे अपने शासकों को अत्याचारी के रूप मे पायेंगे अथवा सरक्षक के रूप मे।

इसलिए मै सोचता हूँ कि जिस प्रकार की क्रूरता से प्रजातात्रिक राष्ट्र भयभीत रहते है, वह विश्व में पहले कभी भी विद्यमान नहीं थी। हमारे समकालीन अपनी स्मृतियो का मंथन करने पर भी, इसका मूलरूप नहीं खोज पायेंगे। इस क्रूरता की जो कल्पना मेरे मस्तिष्क मे घूम रही है, उसे पूर्णतः सही रूप में व्यक्त किया जा सके, ऐसी वाणी मेरे पास नहीं है। निरकुशता और क्रूरता के पुराने शब्द इसके लिए अनुपयुक्त हैं, यह स्वयं एक नयी वस्तु है और चूँकि मैं उसका नाम नहीं ले सकता, इसलिए मै उसकी व्याख्या करने का प्रयत्न करूँगा।

मै उन नये लक्षणो का निरूपण करने का प्रयत्न करता हूँ जिनके अन्तर्गत निरकुशता विश्व मे दृष्टिगोचर हो सकती है। निरीक्षण को आकर्षित करनेवाली प्रथम वस्तु समान और समरूप मनुष्यो का एक विशाल जनसमूह है, जो तुच्छ और निम्न कोटि का आनन्द प्राप्त करने के लिए, जिससे वह जीवन को तृप्त करता है, अविराम प्रयत्न कर रहा है। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति अलग रहता है, जैसे शेष सभी के भाग्य से उसका कोई सरोकार नहीं है। वह अपने बच्चों और अपने निजी मित्रो को ही सारी मानव-जाति समझने लगता है। जहाँ तक शेष सहनागरिको का सम्बन्ध है, वह उनके निकट रहता है, परन्तु उन्हें नहीं देखता, वह उनका स्पर्श करता है, किन्तु उनका अनुभव नहीं करता, वह अपने मे ही और केवल अपने लिए जीवित रहता है और यदि उसके कुटुम्बवाले उसके पास बने रहते हैं तो कहा जा सकता है, कि उसका अपने देश से कोई सम्बन्ध नहीं रह गया है।

मनुष्यो की इस जाति के ऊपर एक विशाल और रक्षा करने वाली शक्ति होती है, जो अकेली स्वयं, उनकी तृप्ति की और उनकी सम्पत्ति की देखरेख का बीड़ा उठाती है। यह शक्ति पूर्ण, सूक्ष्म, नियमित, उदार और कोमल होती है। इसकी तुलना मातापिता की सत्ता से की जा सकती है, यदि उस सत्ता की भाँति उसका उद्देश भी मनुष्यो को पुरुषत्व के लिए तैयार करना हो, परन्तु इसके विपरीत वह उन्हे निरन्तर शैशवावस्था मे बनाये रखने का प्रयत्न करती है। वह इसी मे सन्तुष्ट रहती है कि लोग आनन्द करे, बशर्ते वे आनन्द के अतिरिक्त और किसी चीज की कल्पना न करे। उनकी प्रसन्नता के लिए इस प्रकार की सरकार स्वेच्छा से प्रयत्न करती है, परन्तु वह उस प्रसन्नता की एकमात्र अभिरुचि और एकमात्र निर्णायक हो जाती है। वह उनकी सुरक्षा की व्यवस्था करती है, उनकी आवश्यकताओं को समझती और उनकी पूर्ति करती है,

उनके आनन्द के लिए सुविधा प्रदान करती है, उनके मुख्य कार्यों की व्यवस्था करती है, उनके उद्योग का निर्देशन करती है, उनकी सम्पत्ति के उत्तराधिकार को नियमित करती है और उन्हे विभाजित करती है। अब जीवन के सारे कष्टो और चिन्ताओ के अतिरिक्त उनके लिए शेष क्या रह जाता है?

इस प्रकार, वह शक्ति मनुष्य के स्वतत्र अभिकरण का प्रयोग प्रतिदिन कम उपयोगी और कुठित कर देती है। वह मनुष्य की इच्छाशक्ति को सकीर्ण क्षेत्र मे परिसीमित कर देती है और धीरे-धीरे मनुष्य से उसके समस्त उपयोगों को छीन लेती है। समानता के सिद्धान्त ने मनुष्यों को इस प्रकार की स्थिति के लिए तैयार किया है। इस सिद्धान्त के कारण ही मनुष्य उन्हें सहन करने और उन्हे हितकारी वस्तुओं के रूप में देखने के लिए प्रेरित हुए हैं।

इस प्रकार सर्वोच्च शक्ति समाज के प्रत्येक सदस्य को शनैः शनैः अपने शक्तिशाली चगुल मे फॅसा कर और उसे अपनी इच्छानुकूल बना कर अपने प्रभुत्व को सारे समाज पर व्याप्त कर देती है। वह छोटे-छोटे जटिल, सूक्ष्म और समान नियमों के जाल से समाज के धरातल को ढक लेती है। यह जाल इतना मजबूत होता है कि कोई भी अत्यन्त मौलिक मस्तिष्क और अत्यन्त शक्तिशाली पात्र भीड़ से ऊपर उठने के लिए उसमे प्रवेश नहीं कर सकता। मनुष्य की इच्छाशक्ति नष्ट नहीं होती, प्रत्युत वह कोमल, विनम्र और अनुयायिनी हो जाती है। वह शायद ही कभी मनुष्यो को कार्य के लिए विवश करती है, बल्कि उन्हें निरन्तर कार्य करने से रोकती है। दबाव डाला जाता है, फिर भी वे निरन्तर कार्य करने से विमुख रहते हैं। इस प्रकार की शक्ति विनाश नहीं करती, किन्तु अस्तित्व को रोकती है, वह अत्याचार नहीं करती, बल्कि राष्ट्रों को दबाती, निर्बल बनाती, क्षीण और किंकर्तव्यविमूढ बनाती है, जब तक कि प्रत्येक राष्ट्र भीरु, परिश्रमी पशुओं के एक झुड से अच्छा नहीं रह जाता, जिसका चरवाहा सरकार होती है।

मेरा हमेशा यही विचार रहा है कि नियमित, शात और विनम्र दासता, जिसका मैने अभी वर्णन किया है, स्वतत्रता के कतिपय बाह्य स्वरूपो के साथ इतनी अधिक सुगमता से घुलमिल सकती है, जितना सामान्यतया विश्वास नहीं किया जाता और यहाँ तक कि वह जनता की सार्वभौमता की छत्रछाया मे अपने को प्रतिष्ठित कर सकती है।

हमारे समकालीन निरन्तर दो परस्पर-विरोधी आवेगो से उत्तेजित होते रहते हैं, वे अपना नेतृत्व भी चाहते हें और स्वतंत्र रहने की इच्छा भी रखते हैं।

चूँकि वे इन विपरीत प्रवृत्तियों मे से किसी का भी नाश नहीं कर सकते, इसलिए वे एक साथ ही दोनो को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न करते है। वे एकमात्र, सरक्षकीय और सर्वशक्तिमान सरकार की योजना बनाते हैं, जो जनता द्वारा निर्वाचित हो। वे केन्द्रीयकरण और लोकप्रिय सार्वभौमता के सिद्धान्तों को मिला देते हैं, इससे उन्हे संतोष मिलता है। वे इस विचार से, कि उन्होने स्वय अपने अभिभावकों का चुनाव किया है, उनके संरक्षण मे आत्म-सन्तोष प्राप्त करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति खुद ही उस शृखला से अपने को आबद्ध कर लेता है, जिसे वह देखता है कि उसका अंतिम छोर किसी एक व्यक्ति या व्यक्तियो के किसी एक वर्ग के हाथों में न होकर साधारण जनता के हाथो में है।

इस पद्धति से लोग अपने स्वामी के चुनाव के लिए पर्याप्त समय तक अपनी पराधीनता की स्थिति से छुटकारा पा लेते हैं और फिर उसे ही ग्रहण करते हैं। वर्तमान समय में अनेक व्यक्ति प्रशासकीय निरकुशता और जनता की सार्वभौमता के मध्य इस प्रकार के समझौते से पूर्ण सतुष्ट रहते हैं और सोचते हे कि उन्होंने स्वतत्र राष्ट्र की शक्ति के सामने व्यक्तिगत स्वतत्रता को समर्पित कर उसकी सुरक्षा के लिए पर्याप्त कार्य कर लिया है। इससे मुझे संतोष नहीं होता। वलात् आज्ञाकारिता के तथ्य की अपेक्षा उसकी यह प्रकृति जिसकी आज्ञा का मुझे पालन करना है, मेरे लिए कम महत्त्वपूर्ण है।

फिर भी, मै इस बात से इन्कार नहीं करता कि इस प्रकार का सविधान निश्चय ही उससे कहीं अच्छा प्रतीत होता है, जो सरकार की समस्त शक्तियो को केन्द्रित करने के बाद उन्हे गैरजिम्मेदार व्यक्ति या व्यक्तियो की संस्था के हाथों में सौप देता है। प्रजातान्त्रिक निरकुशता के जितने भी स्वरूप हो सकते हैं, उनमे यह पिछला स्वरूप निश्चय ही सबसे निकृष्ट होगा।

जब सार्वभौम शासक निर्वाचित होता है अथवा उस पर विधान-मण्डल का, जो वस्तुतः निर्वाचित और स्वतंत्र होता है, सूक्ष्म नियत्रण रहता है, तब वह व्यक्तियो से जिस क्रूरता का व्यवहार करता है उसकी मात्रा कभी-कभी ज्यादा होती है, किन्तु वह हमेशा कम अपमानजनक होती है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति पीडित और निस्सहाय होते हुए भी यह कल्पना करता है कि वह जिस आज्ञा के सामने झुकता है, वह आज्ञा अपनी ही है और वह उसकी स्वयं की प्रवृत्तियो मे से एक है जिसे अन्य सब स्वीकार करते है। इसी तरह, मै समझ सकता हूँ कि जब सार्वभौम शासक राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है और जनता पर निर्भर रहता है तब जिन अधिकारों और सत्ता से प्रत्येक नागरिक वचित रहता है, वे न केवल

राज्य के प्रधान का, अपितु स्वयं राज्य का हित करते हैं और निजी व्यक्ति जनता के लिए अपनी स्वतंत्रता का जो कुछ त्याग करते हैं, उसके बदले कुछ प्राप्त करते हैं। इसलिए प्रत्येक देश मे, जहा केन्द्रीकरण है, जनता के प्रतिनिधित्व का निर्माण करना उस बुराई को घटाना है जो अति केन्द्रीकरण द्वारा उत्पन्न हो सकती है, परन्तु इससे मुक्ति नहीं मिल सकती।

मै यह स्वीकार करता हूँ कि इस साधन से अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण विषयों मे, व्यक्तियों के हस्तक्षेप के लिए मार्ग खुल जाता है, परन्तु अपेक्षाकृत छोटे और अधिक निजी कार्यों के क्षेत्र में यह हस्तक्षेप किसी प्रकार कम नहीं होता। यह नहीं भूलना चाहिए कि जीवन के छोटे-छोटे मामलों में मनुष्यों को गुलाम बनाना विशेष रूप से खतरनाक होता है। जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मेरे विचार से छोटे कार्यों की अपेक्षा बडे कार्यो मे स्वतंत्रता की कम आवश्यकता होती है, यदि एक को, बिना दूसरे को प्राप्त किये, सुरक्षित रखा जाना सम्भव हो।

छोटे कार्यों में जो अधीनता रहती है, वह प्रतिदिन दृष्टिगोचर होती है और सारा समाज बिना किसी भेदभाव के उसका अनुभव करता है। वह मनुष्यों को प्रतिरोध के लिए प्रोत्साहित नहीं करती, किन्तु हर बार उनसे मिलती रहती है, जब तक कि वे स्वय अपनी इच्छा के प्रयोग का त्याग नहीं कर देते। इस प्रकार धीरे-धीरे उनकी भावना क्षीण हो जाती हैं और उनका चरित्र गिर जाता है, जब कि वह आज्ञा-पालन जो कुछ महत्वपूर्ण और दुर्लभ अवसरों पर बलात् कराया जाता है, वह कतिपय अवसरों पर ही दासता का प्रदर्शन करता है और उसका बोझ थोडे से लोगों पर डालता है। जो लोग केन्द्रीय शक्ति पर इतने आश्रित बन चुके हैं, उन्हे समय पर उस शक्ति के प्रतिनिधियों के निर्वाचन के लिए बुलाना निरर्थक है। उनके स्वतंत्र मत का यह दुर्लभ और सक्षिप्त प्रयोग, चाहे वह कितना ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हो, सोचने, अनुभव करने और अपने लिए कार्य करने की उनकी शक्तियों को धीरे-धीरे नष्ट हो जाने से नहीं रोक सकेगा और इस प्रकार धीरे-धीरे वे मानवता के स्तर से नीचे गिर जायेंगे।

इसके अतिरिक्त, मेरा यह भी कहना है कि शीघ्र ही वे इस महान और एकमात्र विशेषाधिकार का, जो उनके पास है, प्रयोग करने मे भी असमर्थ हो जायगे। वे प्रजातात्रिक राष्ट्र, जिन्होंने अपने राजनीतिक सविधानों मे स्वतन्त्रता को उस समय स्थान दिया, जब वे अपने प्रशासकीय सविधान की निरकुशता की वृद्धि कर रहे थे, विचित्र उलझनों मे फँस गये। उन छोटे-छोटे कार्यो के

लिए, जिनमे अच्छी भावना ही आवश्यक है, मनुष्यों को उत्तरदायित्व सम्भालने के लिए अयोग्य समझा जाता है; परन्तु जब देश की सरकार सकट मे होती है तब लोगो को असीम शक्तियाँ सौप दी जाती हैं और बारी-बारी से उन्हें क्रमशः राजाओं से अधिक और मनुष्यों से कम, अपने शासक और अपने प्रभुओं की कठपुतली बना दिया जाता है। निर्वाचन के विभिन्न स्वरूपों का प्रयोग कर लेने के बाद और उनमे से किसी को भी अपने उद्देश्य के अनुकूल न पाकर वे आज भी आश्चर्यान्वित हैं और इस मामले में आज भी आगे बढ़ने के लिए कृत-सकल्प हैं, मानो वह बुराई, जिसकी ओर उनका ध्यान आकर्षित हुआ है, देश के सविधान से उत्पन्न न होकर निर्वाचित सस्था से उत्पन्न हुई हो।

वस्तुतः यह समझना कठिन है कि किस प्रकार मनुष्य, जिन्होने पूर्णतः स्वशासन की प्रवृत्ति का परित्याग कर दिया है, जिनके द्वारा उन्हें शासित होना है, उनका उपयुक्त निर्वाचन करने में सफलता प्राप्त कर सकेगे। और कोई भी कभी यह विश्वास नहीं कर सकता कि पराधीन जनता के मताधिकार से उदार, बुद्धिमान और शक्तिशाली सरकार का जन्म हो सकता है।

ऐसा सविधान, जो अपने प्रधान मे प्रजातान्त्रिक हो और अपने अन्य भागों मे अति राजतान्त्रिक हो, मुझे हमेशा अल्पजीवी दैत्य-सा दृष्टिगोचर होता है। नियमो के दुर्गुण और लोगो की अयोग्यता शीघ्र ही उसका सर्वनाश कर देगी और राष्ट्र अपने प्रतिनिधियों तथा स्वय अपने से ऊब कर मानो अधिक स्वतत्र सस्थाओं का निर्माण करेगा या शीघ्र ही एकमात्र स्वामी के चरणों मे अपने को फिर से डाल देगा।

मैं विश्वास करता हूँ कि ऐसे लोगों के मध्य, जिनके समाज की स्थितियाँ समान होती हैं, अन्य की अपेक्षा निरकुश और स्वेच्छाचारी सरकार की स्थापना करना सरल है और मै यह भी सोचता हूँ कि ऐसे लोगों के मध्य यदि इस प्रकार की सरकार की स्थापना एक बार हो जाती है, तो वह न केवल मनुष्यों का दमन करेगी, अपितु अन्ततोगत्वा उनमे से प्रत्येक को मानवता के कतिपय उच्चतम गुणों से वंचित कर देगी। इसलिए मेरी दृष्टि मे निरकुशता प्रजातान्त्रिक युग के लिए विशेषतः खतरनाक है। मेरा विश्वास है कि मैंने सभी युगों मे स्वतत्रता से प्रेम किया होता, परन्तु जिस युग मे हम रहते हैं उसमे तो मैं उस स्वतंत्रता की पूजा करने को तैयार हूँ।

दूसरी ओर, मै इस बात से सहमत हूं कि जो लोग इस युग में, जिसमें हम प्रवेश कर रहे हैं, स्वतंत्रता को कुलीनतान्त्रिक विशेपाधिकारों के आधार पर

स्थापित करने का प्रयास करेंगे, विफल होंगे और जो लोग एक ही वर्ग के हाथों में सत्ता को केन्द्रित करने का प्रयत्न करेंगे, वे भी विफल होंगे। इस समय कोई भी शासक इतना चतुर और शक्तिशाली नहीं है कि वह अपनी प्रजा में श्रेणियों के स्थायी भेदों को पुनर्स्थापित कर निरकुशता की स्थापना कर सके और कोई विधायक इतना बुद्धिमान और शक्तिशाली नहीं है कि वह स्वतत्र सस्थाओं को सुरक्षित रख सके, यदि उसका प्रथम सिद्धान्त समानता को अपनाना नहीं है। हमारे समस्त समकालीन लोगों को, जो स्वतत्रता और अपने साथियों की प्रतिष्ठा की स्थापना या सुरक्षा करेंगे, स्वयं अपने को समानता का समर्थक सिद्ध करना पड़ेगा और उन्हें यह सिद्ध करने के लिए स्वय वैसा बनना पडेगा। इसी बात पर उसके पवित्र कार्य की सफलता निर्भर करती है। इसलिए प्रश्न यह नहीं है कि कुलीन-तान्त्रिक समाज की पुनर्रचना किस प्रकार की जाय, प्रत्युत यह है कि समाज की प्रजातान्त्रिक स्थिति मे, जो ईश्वर ने हमे प्रदान की है, किस प्रकार स्वाधीनता को आगे बढ़ाया जाय।

ये दोनों सत्य, परिणामो की दृष्टि से मुझे सरल, स्पष्ट और उपयोगी प्रतीत होते हैं और दोनो ने स्वाभाविक रूप से मुझे इस बात पर विचार करने के लिए प्रेरित किया है कि किस प्रकार की स्वतत्र सरकार उस समाज मे स्थापित की जा सकती है, जहाँ सामाजिक परिस्थितियाँ समान हैं।

प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के सविधानों से और उनकी आवश्यकताओं से यह परिणाम निकलता है कि उनकी सरकार की शक्ति अन्य देशों की सरकारो की अपेक्षा अधिक समरूप, अधिक केन्द्रित, अधिक व्यापक, अधिक शोधनशील और अधिक कुशल होगी। स्वतत्र समाज स्वभावतः अधिक शक्तिशाली और सक्रिय होता है, व्यक्ति अधिक आश्रित और दुर्बल होते हैं, समाज अधिक कार्य करता है और व्यक्ति कम, और यही अनिवार्य स्थिति है।

इसलिए यह आशा नहीं करनी चाहिए कि व्यक्तिगत स्वतत्रता का विस्तार कुलीनतान्त्रिक देशों की भाति प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे भी व्यापक होगा। और न ऐसी इच्छा ही रखनी चाहिये, क्योंकि कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों मे जनता को व्यक्ति के लिए बलिदान कर दिया जाता है और अधिक लोगों की समृद्धि को थोडे से लोगो की महत्ता के लिए बलिदान कर दिया जाता है।

प्रजातान्त्रिक राष्ट्र की सरकार को सक्रिय और शक्तिशाली होना चाहिए, यह आवश्यक और वाछनीय भी है और हमारा उद्देश्य भी यह होना चाहिए कि हम उसे निर्बल और निष्क्रिय बनाने का प्रयत्न न करे, परन्तु उसकी प्रवृत्ति और

और उसकी शक्ति के दुरुपयोग से उसको रोकने का पूर्णतः प्रयत्न करें।

जिस परिस्थिति ने कुलीनतान्त्रिक युगों में निजी व्यक्तियों की स्वाधीनता को सुरक्षित रखने के लिए सर्वाधिक योगदान दिया, वह यह थी कि सर्वोच्च सत्ता ने सरकार और समाज के प्रशासन के बोझ को अकेले ही अपने ऊपर उठाने का प्रयत्न नहीं किया। अनिवार्यतः उन कार्यों का उत्तरदायित्व आंशिक रूप से कुलीनतन्त्र के सदस्यों पर छोड़ दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप सर्वोच्च सत्ता ने कभी भी अपनी पूरी शक्ति से कार्य नहीं किया और प्रत्येक व्यक्ति के साथ एक ही तरह से व्यवहार नहीं किया, क्योंकि वह सर्वदा विभाजित रही।

इतना ही नहीं कि सरकार ने अपना प्रत्येक कार्य अपने तात्कालिक अभिकरण द्वारा नहीं कराया, बल्कि उसके कार्यों को पूरा करने वाले अधिकांश अभिकर्ता निरन्तर उसके नियन्त्रण में नहीं रहते थे, क्योंकि उन्हें अपनी शक्ति राज्य से प्राप्त नहीं थी, बल्कि उनके जन्म की परिस्थिति से प्राप्त थी। सरकार उन्हें क्षणमात्र में मनमाने ढंग से बना या बिगाड़ नहीं सकती थी, अथवा अपने क्षणिक उमंग में उन्हें कठोर समरूपता की ओर मोड़ सकती थी। यह व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की एक और गारण्टी थी।

जो सरकार के सम्बन्ध में सार्वजनिक अधिकारियों की स्वतंत्रता को उसी प्रकार सुरक्षित रखता है, जिस प्रकार कुलीनतात्रिक राष्ट्रों में आनुवशिक पदों को सुरक्षित रखा जाता है, बल्कि उससे भी अधिक।

कुलीनतात्रिक देशों मे धनी और प्रभावशाली व्यक्तियों की प्रचुरता रहती है, जो स्वय अपने जीवकोपार्जन की व्यवस्था करने के योग्य होते हैं और जो सुगमता से या गुप्त रूप से क्रूरता के शिकार नहीं हो सकते। इस प्रकार के व्यक्ति सरकार को सयम और शाति की सामान्य प्रवृत्तियों द्वारा सीमित रखते हैं। मैं भली प्रकार जानता हूँ कि स्वाभविक रूप से प्रजातात्रिक राष्ट्रो मे इस प्रकार के व्यक्ति नहीं मिलते, परन्तु कृत्रिम साधनों से उनसे मिलती-जुलती कोई चीज पैदा की जा सकती है। मेरा यह दृढ विश्वास है कि कुलीनतत्र को विश्व मे फिर से स्थापित नहीं किया जा सकता। परन्तु मैं सोचता हूँ कि निजी व्यक्ति परस्पर मिल कर कुलीनतत्र के व्यक्तियो की भाँति प्रचुर धन, प्रभाव और शक्ति की संस्थाओं का निर्माण कर सकते हैं। इस माध्यम से कुलीनतत्र के अनेक महान राजनीतिक लाभ, बिना उसके अन्याय या उसके खतरे के उठाये जा सकते हैं। राजनीति, वाणिज्य, या निर्माण कार्य के के उद्देश्यों के लिए, यहाँ तक कि विज्ञान और साहित्य के उद्देश्यों के लिए भी जिस सघ का निर्माण किया जाता है, वह समाज का शक्तिशाली और प्रगतिशील सदस्य होता है। इस प्रकार के सघ को न तो स्वेच्छा से भग किया जा सकता है और न बगैर विरोध के दबाया जा सकता है। ये सघ सरकार के अतिक्रमण के विरुद्ध अपने अधिकारो की रक्षा करके देश की सामान्य स्वाधीनता की रक्षा करते है।

कुलीनतंत्र के युग मे प्रत्येक मनुष्य सर्वदा अपने अनेक साथी नागरिकों से इतनी घनिष्ठता से बंधा रहता है कि उस पर आक्रमण होने पर उसके सारे साथी सहायता के लिए दौड पडेगे। समानता के युगों मे प्रत्येक मनुष्य स्वभावतः अकेला होता है। उसके वशपरम्परानुगत मित्र नहीं होते जिनसे वह सहायता की माग कर सके और न ऐसा कोई वर्ग रहता है जिसकी सहानुभूति पर वह पूर्ण भरोसा रख सके। वह सरलता से मुक्त हो जाता है और बिना दण्ड भय के उसे रौदा जाता है। वर्तमान समय मे समाज के उत्पीडित के लिए आत्मरक्षा का एकमात्र साधन यही है कि वह सारे राष्ट्र से अपील कर सकता है और यदि सारा राष्ट्र उसकी शिकायत के प्रति मौन रहे तो वह सारी मानव जाति से अपील कर सकता है। इस प्रकार की अपील करने का एकमात्र

साधन प्रेस है। अतः प्रजातात्रिक राष्ट्रों में अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा प्रेस की स्वतंत्रता अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। यही उन बुराइयों के निराकरण का, जो समानता द्वारा उत्पन्न हो सकती है, एकमात्र साधन है। समानता मनुष्यों को विलग करती है और उन्हे दुर्बल बनाती हैं; परन्तु प्रेस प्रत्येक मनुष्य की पहुँच के भीतर एक शक्तिशाली अस्त्र होता है, जिसका उपयोग अत्यन्त दुर्बल और एकाकी व्यक्तियों द्वारा भी किया जा सकता है। समानता मनुष्य को उसके सम्बन्धियो के समर्थन से वंचित रखती है, परन्तु प्रेस उसे उसकी सहायता के लिए उसके साथियों और देशवासियों का आवाहन करने योग्य बनाता है। मुद्रण ने समानता की प्रगति को बढावा दिया है और साथ-ही-साथ वह उसका सर्वोत्तम सुधारक भी है।

मैं सोचता हूँ कि कुलीनतंत्रों में रहनेवाले लोक वस्तुतः प्रेस की स्वाधीनता के बिना भी अपना कार्य चला सकते हैं, परन्तु प्रजातात्रिक देशों मे रहने वाले लोगो के लिए यह बात नहीं है। उनकी व्यक्तिगत स्वाधीनता को सुरक्षित रखने के लिए मै महान राजनीतिक विधान-मण्डलों, संसदीय विशेषाधिकारों या लोकप्रिय सार्वभौमता के बल मे विश्वास नहीं करता। ये सब चीजे कुछ अंशों में व्यक्तिगत परवशता से समझौता कर लेती हं, परन्तु यदि प्रेस स्वतत्र है तो परवशता कभी पूर्ण नही हो सकती। प्रेस ही स्वतंत्रता का मुख्य प्रजातात्रिक माध्यम है।

न्यायिक शक्ति के सम्बन्ध में कुछ इसी प्रकार का उल्लेख किया जा सकता है। व्यक्तिगत हितो की ओर ध्यान देना और विचार के लिए प्रस्तुत सूक्ष्म विषयों पर ध्यान केन्द्रित करना न्यायिक शक्ति के मूल तत्त्व का ही भाग है। न्यायिक शक्ति का एक अन्य आवश्यक गुण यह है कि वह कभी पीड़ित व्यक्ति की सहायता स्वेच्छा से नहीं करती, परन्तु वह सर्वदा उन नम्र व्यक्तियो की मर्जी पर होती है, जो उसकी माग करते हैं। वे कितने ही निर्बल क्यों न हो, उनकी शिकायत सुनी जायगी और उसे दूर किया जायगा, क्योंकि न्यायालयों के विधान मे ही यह तत्व अन्तर्निहित है।

इसलिए इस प्रकार की शक्ति विशेष रूप से उस समय स्वतंत्रता की आवश्यकताओं के अनुकूल अपना स्वरूप निर्धारित करती है, जब सरकार की दृष्टि और अंगुलि निरन्तर मानव कार्यों की सूक्ष्मताओ मे जबर्दस्ती प्रवेश करने लगती हे और जब निजी व्यक्ति अपने को सुरक्षित रखने के लिए अत्यन्त निर्बल हो जाते हैं तथा अपने साथियों से नितान्त विलग रहने के कारण उनकी सहायता

की आशा से वंचित रहते हैं। न्यायालयों की शक्ति व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अधिकतम सुरक्षा प्रदान करती है, परन्तु यह बात और भी विशेषता से प्रजातान्त्रिक युग के लिए लागू होती है। यदि न्यायिक शक्ति परिस्थितियों की बढ़ती हुई समानता के अनुकूल अधिक व्यापक और अधिक शक्तिशाली नहीं होती है तो ऐसी स्थिति में निजी अधिकार और हित निरन्तर खतरे में रहेंगे।

समानता मनुष्यों में अनेक ऐसी प्रवृत्तियों को जाग्रत करती हैं, जो स्वतंत्रता के लिए नितान्त खतरनाक होती हैं। इस बात की ओर विधायक का निरन्तर ध्यान आकर्षित किया जाना चाहिए। मैं उनमें से अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों का पाठकों को केवल स्मरण दिलाऊँगा।

प्रजातान्त्रिक युगों में रहने वाले व्यक्ति स्वरूपों की उपयोगिता को शीघ्रता से ग्रहण नहीं करते। वे उनके लिए आन्तरिक तिरस्कार का अनुभव करते हैं। ऐसा किन कारणों से होता है, उन पर मैं अन्यत्र प्रकाश डाल चुका हूँ। स्वरूप उनके तिरस्कार को और प्राय. उनकी घृणा को उत्तेजित करते हैं। चूँकि वे सामान्यतः केवल सुगम और वर्तमान सुखों का उपभोग करने के इच्छुक रहते हैं, इसलिए वे मनोवांछित पदार्थ की ओर दौड़ते हैं और थोड़ा-सा भी विलम्ब हो जाने पर चिढ़ जाते हैं। यही स्वभाव उनके राजनीतिक जीवन में भी जाता है और उन्हें स्वरूपों का शत्रु बना देता है। ये स्वरूप उनकी कतिपय योजनाओं में सर्वदा बाधक बने रहते हैं।

फिर भी यही आपत्ति, जो प्रजातंत्रों के लोग स्वरूपों के प्रति उठाते हैं, वस्तुत वही चीज है, जो उन स्वरूपों को स्वतंत्रता के लिए अत्यन्त उपयोगी बना देती हैं। कारण यह है कि उनका मुख्य गुण यही है कि वे प्रबल और दुर्बल के बीच, शासक और शासित के बीच दीवार का काम करते हैं। वे एक को नियंत्रित करते हैं और दूसरे को अपने सम्बन्ध में विचार करने के लिए समय देते हैं। स्वरूप अधिक आवश्यक उसी अनुपात से बनते हैं जिस अनुपात से सरकार अधिक सक्रिय और शक्तिशाली होती है, जबकि गैर-सरकारी व्यक्ति अधिक निष्क्रिय और अधिक शक्तिहीन हो जाते हैं। इस प्रकार प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों को स्वाभाविक रूप से अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा स्वरूपों की अधिक आवश्यकता रहती है और स्वाभाविक रूप से वे उनका सम्मान कम करते हैं। इस तथ्य पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है।

स्वरूप के प्रश्न पर हमारे अधिकांश समकालीन उद्दण्डतापूर्वक तिरस्कार प्रकट करते हैं, इससे अधिक दयनीय और क्या बात हो सकती है? क्योंकि

स्वरूप के छोटे-से-छोटे प्रश्नो ने हमारे युग में वह महत्ता प्राप्त कर ली है जो उन्हें पहले कभी प्राप्त नहीं थी। मानव-जाति के अनेक महानतम हित उन्हीं पर निर्भर करते हैं। मैं सोचता हूँ कि यदि कुलीनतान्त्रिक युग के राजनीतिज्ञ कुछ समय के लिए आत्महानि के बिना स्वरूपो के प्रति घृणा प्रकट कर सकते और प्रायः उनसे ऊपर उठ सकते, तो वे राजनीतिज्ञ, जिन पर आज राष्ट्रों की सरकार इस समय विश्वास करती है, इनके प्रति कम से कम सम्मान प्रकट करते और अत्यधिक आवश्यकता के बिना उनकी उपेक्षा नहीं करते। कुलीन-तंत्रो मे स्वरूपों की ओर ध्यान देना अन्धविश्वास समझा जाता था। हमें उन्हें सतर्कता से और जानबूझ कर आदर प्रदान कर कायम रखना चाहिए।

दूसरी प्रवृत्ति, जो प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के लिए नितान्त स्वाभाविक और निरन्तर खतरनाक है, वह है जो गैर-सरकारी व्यक्तियों के अधिकारो का तिरस्कार करने और उनके महत्व को कम करने के लिए प्रेरित करती है। अधिकार के प्रति मनुष्य जो मोह और आदर रखते हैं वह सामान्यतः उसके महत्व या उसके कार्यकाल की अवधि के अनुपात में, जिसमे उन्होंने उसका उपयोग किया है, होता है। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों मे गैर-सरकारी लोगों के अधिकार सामान्यतः कम महत्व के होते हैं और बडे ही खतरनाक होते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि बिना खेद व्यक्त किये उनका त्याग किया जाता है और प्रायः हमेशा बिना पश्चात्ताप के उनका उल्लंघन किया जाता है।

परन्तु होता यह है कि एक समय और एक ही प्रकार के राष्ट्रों मे, जहाँ लोग गैर-सरकारी व्यक्तियों के अधिकारों के प्रति स्वाभाविक तिरस्कार प्रकट करते हैं, स्वतंत्र समाज के अधिकार स्वाभाविक रूप से विस्तृत और सुगठित हो जाते हैं। दूसरे शब्दो मे, मनुष्यों का निजी अधिकारों के प्रति मोह कम हो जाता है, ठीक उसी समय जबकि उनके पास जो कुछ बचा रहता है, उसे कायम रखना और सुरक्षित रखना आवश्यक होता है। इसलिए सर्वाधिक विशेषरूप से वर्तमान प्रजातान्त्रिक समय मे, स्वाधीनता के सच्चे मित्रों और मानव की महानता को, सरकार की शक्ति को अपने कार्यों के सामान्य निष्पादन के लिए व्यक्ति के निजी अधिकारों का सरलता से बलिदान कर देने से रोकने के लिए, निरन्तर सतर्क रहना चाहिए।

ऐसे समय में, कोई भी नागरिक इतना अनभिज्ञ नहीं होता कि उस पर दमन करना अत्यन्त खतरनाक नहीं सिद्ध होगा और न निजी अधिकार इतने तुच्छ होते है कि वे सरकार की मर्जी पर बिना किसी भय के समर्पित किये

जा सकते हैं। कारण स्पष्ट है। यदि व्यक्ति के निजी अधिकार का उल्लघन उस समय किया जाता है जब कि मानव-मस्तिष्क इस प्रकार के अधिकारों की महत्ता और पवित्रता से पूर्णतः प्रभावित है, तो घातक प्रभाव उस व्यक्ति तक ही सीमित रहता है, जिसका अधिकारापहरण किया जाता है, परन्तु वर्तमान समय में अधिकार का हरण किया जाना राष्ट्र के आचरणो को गहन रूप से भ्रष्ट करना और समस्त समुदाय को सकट मे डालना है, क्योंकि अधिकार की इसी प्रकार की धारणा हम मे निरन्तर क्षीणता और विनाश की ओर प्रवृत्त होती है।

किसी भी राज्यक्राति की स्थिति के लिए कतिपय प्रवृत्तियाँ, कतिपय धारणाएँ और कतिपय दुर्गुण विचित होते हैं और दीर्घकालिक राज्यक्राति उन्हे उत्पन्न करने और उनका प्रसार करने मे कभी असफल नहीं हो सकती, भले ही उसकी प्रकृति, उसका उद्देश्य और उसका रगमच, जिस पर वह अपना प्रदर्शन करती है, कुछ और प्रकार का क्यों न हो? जब कोई भी राष्ट्र, एक छोटी-सी अवधि के भीतर बराबर अपने नियमों, अपने मतों और अपने कानूनों को बदलता है तो उसके मनुष्यों मे अन्ततोगत्वा परिवर्तन की प्रवृत्ति आ जाती है और वे आकस्मिक हिसा से उत्पन्न परिवर्तनो को देखने के अभ्यस्त हो जाते हैं। इस प्रकार स्वाभाविक रूप से उन लोगों मे स्वरूपों के प्रति, जो प्रतिदिन अप्रभावकारी सिद्ध होते हैं, घृणा उत्पन्न हो जाती है और वे नियमों के नियत्रण को, जिसका वे प्रायः उल्लघन होते देखते हैं, बिना अधीरता के समर्थन नहीं करते।

चूँकि समानता और नैतिकता की साधारण धारणाएँ पहले की तरह राज्य-क्राति द्वारा प्रतिदिन उत्पन्न होनेवाले समस्त नये परिवर्तनों की व्याख्या और औचित्य बताने के लिए पर्याप्त नहीं हैं, इसलिए सार्वजनिक उपयोगिता के सिद्धान्त पर विचार किया जाता है और राजनीतिक आवश्यकता के सिद्धान्त की कल्पना की जाती है तथा मनुष्य स्वय बिना किसी सकोच के निजी हितों का परित्याग करने और व्यक्तियो के अधिकारों को कुचल देने के अभ्यस्त हो जाते हैं, ताकि वे किसी सार्वजनिक उद्देश्य की पूर्ति अधिक शीघ्रता से कर सके।

ये प्रवृत्तियाँ और धारणाएँ, जिन्हे मैं क्रातिकारी कहूँगा, क्योकि समस्त राज्यक्रातियो द्वारा वे उत्पन्न होती हैं, कुलीनतंत्र मे भी प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों की भाति पनपती हैं, परन्तु वहाँ वे बहुधा कम शक्तिशाली और हमेशा कम स्थायी होती हैं, क्योंकि वहा उन्हे अनेक ऐसी प्रवृत्तियों, धारणाओं, दोषों और बाधाओं का सामना करना पडता है, जो उनका प्रतिकार करती हैं। परिणामतः राज्यक्राति के समाप्त होते ही वे भी विलुप्त हो जाती हैं

और राष्ट्र पुनः अपने पूर्व राजनीतिक स्थिति में आ जाता है। इस प्रकार की स्थिति प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो मे हमेशा नही होती, जहाँ सर्वदा इस बात का भय रहता है कि क्रातिकारी प्रवृत्तियाँ अधिक कोमल और अधिक नियमित बन कर, समाज से पूर्णतः लुप्त हुए बिना, धीरे-धीरे सरकार की प्रशासकीय सत्ता की अधीनता की प्रवृत्ति मे बदल जायगी। मै ऐसे देशो से परिचित नही हूँ, जहाँ राज्यक्रातियाँ प्रजातान्त्रिक राष्ट्रो से अधिक खतरनाक होती हैं, क्योंकि आकस्मिक और क्षणिक बुराइयों से स्वतन्त्र, जो निश्चय ही उनके पीछे लगी रहती हैं, वे हमेशा कुछ ऐसी बुराइयाँ पैदा कर सकती हैं, जो स्थायी और अनन्त होती हैं।

मै विश्वास करता हूँ कि न्यायसंगत प्रतिरोध और उचित विद्रोह जैसी चीजे भी हैं। इसलिए मै पूरी सहमति से ऐसे प्रस्ताव पर बल नहीं देता कि प्रजातान्त्रिक युग के मनुष्यो को कभी राज्यक्रातियों का आश्रय नहीं लेना चाहिए, परन्तु मैं सोचता हूँ कि उनमे कूदने के पूर्व उन पर सोच-विचार करने के लिए विशिष्ट कारण है और उनकी वर्तमान स्थितियो में इतने खतरनाक साधन को अपनाने के बजाय अनेक अभाव अभियोगो को सहन करना कहीं अच्छा है।

मैं अब एक सामान्य विचार द्वारा उपसंहार करूँगा, जिसमे न केवल वे सारे विशिष्ट विचार सम्मिलित है, जिन्हे वर्तमान अध्याय मे व्यक्त किया गया है, अपितु वे अधिकाश विचार सन्निहित हैं, जो इस पुस्तक का उद्देश्य है। हमारे पूर्व के कुलीनतान्त्रिक युग में महान शक्तिवाले गैर-सरकारी व्यक्ति थे और नितान्त दुर्बल सामाजिक सत्ता थी। स्वयं समाज की रूपरेखा सरलता से दिखाई नहीं पडती थी और वह समाज पर शासन करने वाली विभिन्न शक्तियों के साथ निरन्तर घुलमिल गयी थी। सर्वोच्च सत्ता को सुदृढ बनाने, विस्तृत करने और सुरक्षित रखने के लिए उस युग के मनुष्यों के मुख्य प्रयासों की आवश्यकता थी और दूसरी ओर व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को सकीर्ण सीमाओ में परिसीमित करने और व्यक्तिगत हितों को सार्वजनिक हित के अधीन बनाने की आवश्यकता थी। हमारे युग के मनुष्यों के लिए अन्य प्रकार के खतरे और अन्य चिन्ताएँ भी हैं। अधिकाश आधुनिक राष्ट्रों में सरकार का मूल कुछ भी हो, परन्तु उसका सविधान, या उसका नाम प्रायः सर्वशक्तिशाली हो गया है और निजी व्यक्ति अधिकाधिक दुर्बलता और पराधीनता की निम्नतम स्थिति में गिरते जा रहे हैं।

प्राचीन समाज में, प्रत्येक चीज भिन्न थी। एकता और समरूपता कहीं भी नहीं थी। आधुनिक समाज मे प्रत्येक वस्तु इतना समान बन जाने को लालायित है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने विशिष्ट गुणों को शीघ्र ही विश्व के सामान्य रूप मे पूर्णतः खो देगा। हमारे पूर्वज इस धारणा का, कि निजी अधिकारो का आदर करना चाहिए, सर्वदा अनुचित प्रयोग करने की ओर प्रवृत्त थे और दूसरी ओर हमने स्वाभाविक रूप से इस विचार की अति कर दी है कि निजी व्यक्ति के हित को हमेशा 'बहुजनहिताय' समर्पित कर देना चाहिए।

राजनीतिक जगत मे नये परिवर्तन हो रहे हैं। इसलिए नयी अव्यवस्थाओं के लिए नये उपाय ढूंढ निकालने चाहिए। सरकार के कार्यों के लिए व्यापक परन्तु स्पष्ट और सुनिश्चित सीमाएँ निश्चित करना, निजी व्यक्तियों को कति-पय अधिकार देना और उन अधिकारों के निर्विवाद उपभोग के लिए व्यवस्था करना, निजी व्यक्ति को उस योग्य बनाना कि वह अपनी अब तक की स्वतत्रता, बल और मूल शक्ति को सुरक्षित रख सके तथा व्यक्ति को समाज के स्तर पर लाना और उसे उसी स्थिति मे कायम रखना—ये कार्य मेरी दृष्टि मे, उस युग मे जिसमे अब हम प्रवेश कर रहे हैं, विधायको के मुख्य लक्ष होने चाहिए।

ऐसा प्रतीत होगा, मानो हमारे युग के शासक मनुष्यो का उपयोग केवल महान कार्य करने के लिए करते हैं, मै चाहता हूँ कि वे मनुष्यो को अधिक महान बनाने का कुछ अधिक प्रयत्न करें, कार्य की अपेक्षा कार्यकर्ता को अधिक महत्त्व दे।

उन्हे यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि राष्ट्र बहुत दिनो तक शक्तिशाली नहीं रह सकता, जब तक उस राष्ट्र मे रहनेवाला प्रत्येक मनुष्य व्यक्तिगत रूप से निर्बल है और अभी तक भीरु और दुर्बल व्यक्तियो के समाज से एक शक्ति-शाली राष्ट्र के निर्माण के लिए सामाजिक व्यवस्था का कोई रूप या सगठन नहीं निर्धारित किया गया है।

मैं अपने समकालीनो मे दो विपरीत धारणाएँ पाता हूँ जो समान रूप से घातक हैं। मनुष्यो का एक वर्ग समानता के सिद्धान्त मे उससे उत्पन्न अराजक प्रवृत्तियों के अतिरिक्त और कुछ नहीं देख सकता। वह अपने ही स्वतंत्र अभिकरण से डरता है और स्वयं अपने से भी डरता है। अन्य विचारक, जो सख्या मे कम और बुद्धि मे अधिक होते हैं, भिन्न दृष्टिकोण रखते हैं।

उस मार्ग के अतिरिक्त, जो समानता के सिद्धान्त से प्रारम्भ होकर अराजकता में समाप्त होता है, अंत में उन्होंने उस मार्ग को भी ढूँढ लिया है, जो मनुष्यों को अनिवार्य दासता की ओर ले जाता हुआ प्रतीत होता है। वे पहले से ही अपनी आत्माओं को इस आवश्यक स्थिति के अनुकूल बना लेते हैं और स्वतंत्र रहने से निराश होकर वे पहले ही से शीघ्र ही प्रकट होनेवाले अपने स्वामी के प्रति अपने हृदय में सम्मान रखते हैं।

प्रथम वर्ग के लोग स्वतन्त्रता का परित्याग इसलिए करते हैं कि वे इसे खतरनाक समझते हैं और दूसरे इसलिए कि वे इसे असम्भव समझते हैं।

यदि मैं दूसरे विचार का समर्थन करता तो यह पुस्तक नहीं लिखता, बल्कि मैंने गुप्त रूप से मानवता के भाग्य को कोसने तक ही अपने को सीमित रखा होता। मैंने उन खतरों को बताने का प्रयत्न किया है, जो समानता के सिद्धान्त के कारण मनुष्य की स्वाधीनता के लिए हो सकते हैं, क्योंकि मेरा दृढ़ विश्वास है कि ये खतरे, भविष्य के सभी खतरों में सबसे अधिक भयानक हैं और कम से कम दिखायी पड़ने वाले हैं, किन्तु मेरे विचार में वे अजेय नहीं हैं।

५७. विषय का सामान्य सर्वेक्षण

जिस विषय पर मैने अभी चर्चा की है, उसे पूर्णतः समाप्त करने के पूर्व आधुनिक समाज के विभिन्न लक्षणों का उपसहार के रूप में सर्वेक्षण करने और मानवता के भाग्य पर समानता के सिद्धान्त के सामान्य प्रभाव का अतिम मूल्याकन करने मे मुझे प्रसन्नता का अनुभव होगा, परन्तु इस महान कार्य की असाध्यता से और इतने गहन विषय की उपस्थिति में न तो मेरी दृष्टि काम देती है, न मेरा तर्क ही।

आधुनिक विश्व का समाज, जिसकी रूपरेखा मैने खींची है और जिसके विषय मे मुझे निर्णय करना है, अभी-अभी अस्तित्व मे आया है। समय ने उसे अभी परिपूर्ण स्वरूप प्रदान नहीं किया है, उसका निर्माण करने वाली राज्यक्रातियाँ अभी तक समाप्त नहीं हुई हैं और हमारे युग की घटनाओ के बीच यह ज्ञात करना प्रायः असम्भव है कि राज्यक्राति के समाप्त होने के साथ किन बातों की समाप्ति हो जायगी और उसका अत होने पर कौन सी बाते जीवित रहेंगी। वह विश्व, जो अस्तित्व में आ रहा है, अभी तक उस जगत के अवशेषो के बोझो से, जिनका ह्रास हो रहा है, पूर्ण रूप से मुक्त नहीं हुआ है और वर्तमान मानवीय कार्यो की व्यापक उलझन मे कोई यह नहीं कह सकता कि प्राचीन सस्थाओ और पूर्व के आचरणो मे कितना शेष रह जायगा और कितना पूर्णतः नष्ट हो जायगा।

यद्यपि जो क्रान्ति सामाजिक परिस्थितियों, कानूनो, मतो और लोगो की भावनाओं मे हो रही हैं, उसकी समाप्ति के लक्षण अभी दिखायी नहीं देते, तथापि उसके जो परिणाम निकल चुके हैं, उनकी तुलना विश्व की किसी वस्तु से नहीं की जा सकती। मै प्रत्येक युग का, एक के बाद एक, विचार करता हुआ अत्यन्त प्राचीन काल तक पहुँच जाता हूँ, परन्तु मेरी आखों के सामने जो कुछ घटित हो रहा है, उसके समानान्तर मुझे कोई वस्तु दृष्टिगोचर नहीं होती। जब से भूत ने भविष्य पर प्रकाश डालना छोड दिया है, मानव मस्तिष्क भ्रमित अवस्था मे डोलता रहता है।

फिर भी, इतनी व्यापक, इतनी विलक्षण और इतनी जटिल सम्भावना के बीच कतिपय प्रमुख विशिष्टताओ को पहले ही देखा और समझा जा सकता है। जगत मे जीवन की अच्छाइयाँ और बुराइयाँ दोनों ही समान रूप से

बँटी हुई हैं; विशाल सम्पत्तियाँ लुप्त होती जाती हैं और लघु सम्पत्तियो में वृद्धि होती है; इच्छाएँ और उपभोग बढ़ते जा रहे हैं, परन्तु असाधारण समृद्धि और असाध्य दरिद्रता समान रूप से अज्ञात हैं। महत्वाकाक्षा की भावना सर्वव्यापक होती है; पर उसका विस्तार शायद ही कभी व्यापक होता है। प्रत्येक व्यक्ति एकान्त दुर्बलता के कारण विलग खड़ा रहता है, परन्तु स्वतत्र समाज क्रियाशील, दूरदर्शी और शक्तिशाली होता है, निजी व्यक्तियो के कायो का विशेष महत्त्व नहीं होता, परन्तु राज्य के कार्यों की महत्ता बहुत अधिक होती है।

चरित्र की शक्ति कम रहती है, परन्तु आचरण कोमल और कानून मानवोचित रहते हैं। यदि गौरवपूर्ण शौर्य के या उच्चतम, उज्ज्वलतम और पवित्रतम स्वभाव के कतिपय उदाहरण मिलते हैं, तो साथ ही साथ मानव की आदते सयमित होती हैं, हिंसा शायद ही होती है और क्रूरता प्रायः अज्ञात-सी रहती है। मानव का अस्तित्व दीर्घकाय हो जाता है और सम्पत्ति अधिक सुरक्षित। जीवन को चमकीले पारितोषिकों के उपकरणों से नही सजाया जाता, परन्तु वह नितान्त सरल और शात रहता है। कुछ ही आनन्द या तो अत्यन्त परिमार्जित या अत्यन्त भद्दे होते हैं। अत्यन्त सभ्य आचरण रुचियों की भीषण क्रूरता की भाति असाधारण होते हैं। न तो महान विद्वान मिलते हैं और न नितान्त अज्ञानी समाज। प्रतिभाशाली व्यक्ति और भी कम दिखायी पड़ते हैं, पर साधारण ज्ञान अधिक विस्तृत होता है। मानव-मस्तिष्क समस्त मानवता के लघु प्रयत्नों से प्रोत्साहित होता है, न कि कतिपय लोगों की उत्साहवर्धक क्रिया से। कलाओं के सभी उत्पादनों में परिपूर्णता कम किन्तु प्रचुरता अधिक रहती है। जाति, पद और देश के बन्धन शिथिल हो जाते हैं, परन्तु मानवता के महान बन्धन अधिक दृढ हो जाते हैं।

यदि इन विभिन्न लक्षणों मे अत्यन्त सामान्य और अत्यन्त विशिष्ट लक्षण को ढूँढ निकालने का मै प्रयत्न करता हूँ तो मुझे ज्ञात होता है कि मनुष्यों के भाग्य में जो कुछ क्रिया होती है, वही स्वय अन्य हजारो स्वरूपो मे प्रकट होती है। प्रायः सभी उग्रताएँ या तो मृदु हो जाती हैं या कुठित। जो कभी सबसे प्रमुख माना जाता था, उसका स्थान कोई मध्य भाव ले लेता है, जो, एक ही साथ पहले से ही विश्व में जो कुछ विद्यमान था, उसकी तुलना में कम उन्नत और कम निम्न, कम तेजोमय और कम अस्पष्ट होता है।

जब मै, एक-दूसरे से मिलते-जुलते लोगों के अपार जनसमूह का सर्वेक्षण करता हूँ तो मालूम पड़ता है कि उनमें कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसने अधिक

उन्नति की हो या जिसने अधिक अवनति की हो। इस प्रकार की सर्वव्यापी समरूपता देखकर मेरा मन उदास और निराश हो जाता है और मुझे समाज की उस स्थिति के प्रति, जो अब बदल चुकी है, खेद अभिव्यक्त करना पडता है। जब विश्व महान और अत्यन्त तुच्छ पुरुषों से, विशाल सम्पत्ति और नितान्त दरिद्रता से, महान विद्वत्ता और नितान्त अज्ञान से परिपूर्ण था. मैं अपने ध्यान को दूसरी बातों की अपेक्षा प्रथम बातो की ओर प्रवृत्त करता हूँ, जिनसे मेरी सहानुभूति की तृप्ति हुई थी, परन्तु मैं यह स्वीकार करता हूँ कि इस प्रकार की तृप्ति मेरी अपनी दुर्बलता की उत्पत्ति थी। इसका कारण यह है कि मैं उन सब को, जो मेरे चारों ओर हैं, एक साथ देखने मे असमर्थ हूँ। इसलिए मुझे इतनी अधिक वस्तुओं मे से अपने पूर्वानुराग की चीजो को चुनना और विलग करना पडता है। यह स्थिति परम पिता परमात्मा के लिए लागू नहीं होती, जिसकी दृष्टि के सामने सारे चराचर रहते हैं और जो मानवता और मानव का स्पष्टतः सर्वेक्षण एक साथ ही कर लेता है।

हम स्वाभाविक रूप से विश्वास कर सकते हैं कि मनुष्यों के स्रष्टा और पालनकर्ता को कतिपय लोगो की असाधारण समृद्धि के स्थान पर समस्त लोगों का कल्याण अधिक प्रिय हैं। मेरी दृष्टि मे जो मनुष्य की अवनति प्रतीत होती है, वही उसकी दृष्टि मे प्रगति है, जो बात मुझे चुभती है, वह उसे स्वीकार्य है। समानता की स्थिति सम्भवतः कम उन्नत है, परन्तु अधिक न्यायसगत है और उसकी न्यायपरता उसकी महानता और उसकी सुन्दरता का निर्माण करती है। इसलिए मै दैविक कल्पना के इस दृष्टिकोण को अपनाने का प्रयत्न करूँगा और उसके बाद ही मनुष्यों के कार्यो के प्रति दृष्टिकोण और राय कायम करूँगा।

इस पृथ्वी पर कोई भी मनुष्य सर्वथा और सामान्य रूप से अभी तक यह प्रमाणित नहीं कर सकता कि विश्व की नयी स्थिति अपने पूर्वकाल की स्थिति से श्रेष्ठ है, परन्तु यह देखना पहले ही से आसान है कि यह स्थिति भिन्न है। कुलीनतात्रिक राष्ट्र के सविधान मे कुछ दुर्गुण और कुछ गुण इतने अन्तर्निहित हैं और आधुनिक युग के लोगों के चरित्र से इतने विपरीत हैं कि उनका उनमे कभी प्रवेश नहीं किया जा सकता। कुछ अच्छी प्रवृत्तियाँ और कुछ बुरी प्रवृत्तियाँ जोपूर्व के लोगो को अज्ञात थी, वे आधुनिक लोगो के लिए स्वाभाविक हैं। कुछ विचार स्वतः किसी एक की कल्पना मे उभर कर सामने आ जाते हैं, परन्तु वे दूसरे के मस्तिष्क के लिए सर्वथा प्रतिकूल होते हैं। वे मानव की दो विभिन्न पद्धतियों की तरह हैं, जिनमे से प्रत्येक के अपने गुण और दोष अपने स्वय के

उनके देश की मिट्टी और जलवायु से उत्पन्न होती है। इस प्रकार के सिद्धान्त झूठे और भीरुतापूर्ण हैं। इस प्रकार के सिद्धान्त केवल दुर्बल व्यक्तियो और कायर राष्ट्रों को ही जन्म देते हैं। ईश्वर ने मानव-जाति को पूर्णतः स्वतत्र उत्पन्न नहीं किया है। यह बात सही है कि प्रत्येक मनुष्य के चारों ओर एक घातक रेखा खींची हुई है जिसको वह पार कर बाहर नहीं जा सकता, परन्तु उस रेखा की विस्तृत परिधि मे वह शक्तिशाली और स्वतत्र है। जो स्थिति मनुष्य की है, वही समुदाय की भी है। हमारे युग के राष्ट्र मनुष्यो की परिस्थितियों को समान होने से नहीं रोक सकते, परन्तु समानता का सिद्धान्त उन्हें किस ओर प्रवृत्त करता है—दासता या स्वतत्रता की ओर, ज्ञान या असभ्यता की ओर, समृद्धि या दरिद्रता की ओर—यह बात स्वय उन पर ही निर्भर होती है।